

दिगम्बर जैन साधु परिचय

लेखक व सम्पादक :

ब्र० पं० धर्मचन्द्रजी शास्त्री

ज्योतिषाचार्य

(संघस्थ : आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज)



द्रव्य दाता



श्री लाला श्यामलालजी ठेकेदार

फर्म : श्यामलाल एण्ड सन्स

दिल्ली

सेठ श्री पूनमचन्दजी गंगवाल

झरिया वाले

पचार (सीकर) राज०



प्रकाशक :

आचार्य धर्मश्रुत ग्रन्थमाला



ग्रन्थ प्राप्ति स्थान :

(१) ब्र० धर्मचन्द्रजी शास्त्री जैन

गोधा सदन

समारचन्द्र रोड अलसीसर हाउस

जयपुर (राज०)

(२) श्री श्यामलालजी ठेकेदार

४, टोडरमल रोड, नई दिल्ली

(३) श्री पूनमचन्दजी गंगवाल

धर्मशाला रोड, भरिया (बिहार)



२० अक्टूबर १९८[illegible]

प्रथम संस्करण

प्रति : १०००



मूल्य : [illegible]१)



मुद्रक :

पाँचूलाल जैन

कमल प्रिन्टर्स

मदनगंज-किशनगढ़ (राज०)

फोन : ८३

मंगलाचरण

अरहन्त

इंदसदवंदियाणं तिहुअणहिदमधुरविसदवक्काणं।
अंतातीदगुणाणं णमो जिणाणं जिदभवाणं ॥१॥

त्रिलोकस्थ जीवों के लिए हितकारी मधुर एवं विशद वचनों से युक्त, अनन्त गुणों के धारक, चतुर्गतिरूप संसार के विजेता, शतेन्द्र वन्दनीय जिन-अरहन्त भगवान को मैं नमस्कार करता हूँ।

सिद्ध -

अट्ठविहकम्ममुक्के, अट्ठगुणड्ढे अणोवमे सिद्धे।
अट्ठमपुढविणिविट्ठे, णिट्ठियकज्जे य वंदिमो णिच्चं ॥२॥

अष्टकर्मों से मुक्त, अष्टगुण संयुक्त, अनुपम, अष्टमपृथ्वी में स्थित, कृतकृत्य (करने योग्य कार्य [illegible]) सिद्ध भगवान को मैं नित्य नमस्कार करता हूँ।

आचार्य -

गयणमिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्व मुणिवसहा।
एरिसगुणणिलयाणं पायं पणमामि सुद्धमणो ॥३॥

[illegible] निर्लेप एवं [illegible] क्षोभ से रहित मुनिवृषभ-श्रेष्ठ आचार्य परमेष्ठी के [illegible] शुद्ध मन से नमस्कार करता हूँ।

उपाध्याय

जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवदेसणे णिरदो।
सो उवज्झाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स ॥४॥

[illegible] धर्मोपदेश में [illegible], मुनिवरों में प्रधान, रत्नत्रय संयुक्त उपाध्याय [illegible]

साधु -

दोदोसविप्पमुक्के तिदंडविरदे तिसल्लपरिसुद्धे।
तिण्णिमगारवरहिदे, पंचिंदियणिज्जिदे वंदे ॥५॥

राग-द्वेष से विप्रमुक्त, (मन-वचन काय की प्रवृत्ति रूप) त्रिदंड से विरहित, (माया-मिथ्या-निदान रूप) त्रिशल्य से परिशुद्ध (अत्यन्त विरहित), (रस, ऋद्धि, गारवरूप) त्रिगारव से रहित, पंचेन्द्रिय विजेता मुनिजनों को मैं नमस्कार करता हूँ।

परमेष्ठी -

अरुहा सिद्धाइरिया उवज्झाया साहु पंचपरमेट्ठी।
एयाण णमुक्कारो भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥६॥

अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु, इन पंचपरमेष्ठी के लिए किया गया नमस्कार मुझे भव भव में सुख देवे।

समर्पण

जो तीर्थंकर परम्परा के समुज्ज्वल नक्षत्र हैं, जिनका अद्भुत जीवन अध्यात्म की पवित्र प्रेरणा प्रदान करता है, जिनके नियत विचार भूले भटके जीवन-राहियों का पथ-प्रदर्शन करते है, उन्ही श्रद्धालोक के देवता, आचार्य प्रवर दिगम्बर जैनाचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के कर-कमलों में समर्पित करते हुए मैं अपने आपको धन्य समझ रहा हूं। आचार्यश्री ने जन कल्याण की भावना से हजारों भव्य जीवों को सुमार्ग में लगाया है, आपके माध्यम से जैनागम की निर्मल ज्योति सदा-सदा जलती रहे ऐसी कामना करता हूं। आचार्यश्री के अनन्य अनुराग, आशीर्वाद, अनुकम्पा और औदार्य के कारण ही मुझे लौकिक झंझटों से मुक्त होकर आत्मोत्थान करने वाली उज्ज्वल अभिलाषा के अनुसार जैन धर्म और संस्कृति की सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

आपके चरणों में नमोस्तु करते हुए निर्ग्रन्थ गुरुओं के जीवन परिचय की यह ज्योति रूप प्रथम भेंट आपके कर-कमलों में सविनय सादर समर्पित है।



आश्विन शुक्ला ७
वी० नि० स० २५११
लूणवां (नागौर)

श्रद्धावनत :
ब्र० धर्मचन्द्र शास्त्री
ज्योतिषाचार्य

परमपूज्य प्रशान्त मुद्राधारी आचार्यवर्य

१०८ श्री धर्मसागरजी महाराज



धर्मसागर आचार्यो धर्मसागर वर्द्धने ।
चन्द्रवत् वर्त्तते योऽसौ नमस्यामि त्रिशुद्धतः ॥

चारित्रचक्रवर्ती समाधिसम्राट परमपूज्य श्री १०८ दिगम्बर जैन
आचार्य शान्तिसागरजी महाराजका

❀ अन्तिम दिव्य सन्देश ❀



ओं नमः सिद्धेभ्यः। ओं नमः सिद्धेभ्यः। पञ्च भरत, पञ्च ऐरावतके भूत भविष्यत्-वर्तमान काल सम्बन्धी भगवानको नमस्कार हो। तीस चौबीसी भगवानको नमस्कार हो। सीमन्धर आदि बीस तीर्थंकर भगवानको नमस्कार हो। ऋषभादि महावीर पर्यन्त चौदहसौ बावन गणधर देवाय नमः। चारण ऋद्धि धारी मुनियोंको नमस्कार हो। चौंसठ ऋद्धि-धारी मुनीश्वराय नमो नमः। अन्तकृत्केवलिभ्यो नमो नमः प्रत्येक तीर्थंकरके तीर्थमें होने वाले १०, १० घोरोपसर्ग विजेता मुनीश्वरोंको नमस्कार हो।

(महाराजने पूछा) – मराठी मध्ये बोलूँ का ? (जनताने कहा हां,)।

११ अङ्ग १४ पूर्व प्रमाण शास्त्र महा समुद्र है। उसका वर्णन करनेवाले श्रुतकेवली भी नहीं हैं। उसके ज्ञाता श्रुत केवली भी नहीं हैं। उसका हमारे सदृश तुच्छ मनुष्य क्या वर्णन कर सकते हैं। जिनवाणी, सरस्वती देवी. श्रुत देवी अनन्त समुद्र तुल्य है, उसमें कहे गये जिन धर्मको जो धारण करता है, उसका कल्याण होता है। अनन्त सुख मिलता है। उससे मोक्षकी प्राप्ति होती है, ऐसा नियम है। एक अक्षर, एक ओं अक्षर, एक ओं अक्षर धारण करके जीवका कल्याण हुआ है। दो बन्दर लड़ते-लड़ते सम्मेदशिखरसे स्वर्ग गये। सेठ सुदर्शनने सद्‌गति पाई। सप्त व्यसनधारी अञ्जन चोर मोक्ष गया। कुत्ता महा नीच जातिका जीव जीवन्धरमुनि-जीवन्धर कुमारके उपदेशसे देव हुआ इतनी महिमा जैन धर्मकी है किन्तु जैनियोंकी श्रद्धा अपने धर्ममें नहीं है। अनन्त काल से जीव पुद्‌गलसे भिन्न है, यह सब लोग जानते हैं। पर विश्वास नहीं करते हैं। पुद्‌गल भिन्न है जीव अन्य है। तुम जीव हो, पुद्‌गल जड़ है। उसके ज्ञान नहीं है। ज्ञान दर्शन चैतन्य जीवमें है। स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण पुद्‌गलमें है। दोनोंके गुण धर्म अलग २ हैं। पुद्‌गलके पीछे पड़नेसे जीवकी हानि होती है। मोहनीय कर्म जीवकी क्षति करता है। जीवके पक्षसे पुद्‌गलका अहित है। पुद्‌गलसे जीवका घात होता है। अनन्त सुखरूप मोक्ष जीवको ही होता है, पुद्‌गलको नहीं, सब जग इसको भूला है। जीव पञ्च पापोंमें पड़ा है। दर्शन मोहनीयके उदयने सम्यक्त्वका घात किया है। चारित्र मोहनीयके उदयने संयमका घात किया है सुख प्राप्तिकी

इच्छा है तो दर्शन मोहनीयका नाश करो। सम्यक्त्व धारण करो। चारित्र मोहनीयका नाश करो, संयम धारण करो। दोनों मोहनीयका नाश करो। आत्माका कल्याण करो हमारा यह आदेश है, उपदेश है। मिथ्यात्व कर्मके उदयसे जीव संसारमें फिरता है। मिथ्यात्व को नाश करो, सम्यक्त्वको प्राप्त करो, सम्यक्त्वको प्राप्त करो। सम्यक्त्व क्या है? सम्यक्त्वका वर्णन समयसार, नियमसार पञ्चास्तिकाय, अष्टपाहुड, गोम्मटसार आदि बडे २ ग्रन्थोंमें है। पर इन पर श्रद्धान कौन करता है? आत्म कल्याण करने वाला ही इसपर श्रद्धान करता है मिथ्यात्वको धारण मत करो यह हमारा आदेश है, उपदेश है। ओं सिद्धाय नम। तुम्हें क्या करना चाहिए? दर्शन मोहनीय कर्मका क्षय करो आत्मचिन्तनसे दर्शन मोहनीयका क्षय होता है। निर्जरा भी आत्म चिन्तनसे होती है।

दान-पूजासे, तीर्थ यात्रासे पुण्यबन्ध होता है। हर धर्म कार्यसे पुण्य बन्ध होता है। किन्तु केवलज्ञानका साधन आत्म-चिन्तन है। अनन्त कर्मोंकी निर्जराका साधन आत्म-चिन्तन है। आत्म-चिन्तनके बिना कर्म निर्जरा नहीं होती है कर्म निर्जराके बिना केवलज्ञान नहीं होता। केवलज्ञान बिना मोक्ष नहीं होता। क्या करें? शास्त्रोंमें आत्माका ध्यान उत्कृष्ट से ६ घडी है, मध्यमसे ४ घड़ी है और जघन्यसे २ घड़ी है। कमसे कम १०-१५ मिनट ध्यान करना चाहिये। हमारा कहना यह है कि ५ मिनट तो आत्म-चिन्तन करो। आत्म-चिन्तन करो। इसके बिना सम्यक्त्व नही होता। सम्यक्त्व के बिना ससार भ्रमण नहीं टूटता। जन्म-जरा-मरण नहीं छूटता। सम्यक्त्व धारण करो। सम्यक्त्वके होने पर चारित्र मोहनीयके उदय होनेसे ६६ सागर रहोगे। चारित्र मोहनीय का क्षय करनेके लिये संयम धारण करना चाहिए। उसके बिना चारित्र मोहनीयका क्षय नहीं होता। संयम धारण करना चाहिए। डरो मत। संयम धारण किये बिना ७ वां गुणस्थान नही होता ७ वें गुणस्थान बिना आत्मचिन्तन नहीं होता। वस्त्रमें ७ वां गुणस्थान नहीं होता।

समाधि दो प्रकारकी होती है—१. निर्विकल्प समाधि और २. सविकल्प समाधि। गृहस्थ सविकल्प समाधि धारण करता है। मुनि हुए बिना निर्विकल्प समाधि नहीं होती। बाबानो भीऊ न का (भाइयों, डरो मत)। मुनि पदवी धारण करो। इसके बिना निर्विकल्प समाधि नहीं होती। निर्विकल्प समाधि हो तो सम्यक्त्व होता है ऐसा कुन्दकुन्द स्वामी ने कहा है। व्यवहार सम्यक्त्व खरा नहीं है। फूल जैसे फलका कारण है वैसे ही व्यवहार सम्यक्त्व आत्माके अनुभवका कारण है। आत्म अनुभव होनेपर खरा सम्यक्त्व होता है। निर्विकल्प समाधि मुनि पद धारण करने पर होती है। ७ वें से १२ वें गुणस्थान पर्यन्त निर्विकल्प समाधि होती है। १३ वें गुणस्थानमें केवलज्ञान होता है, ऐसा शास्त्रमें कहा है। आप लोग डरो मत। क्या करें? संयम धारण करो, सम्यक्त्व धारण करो, इसके

सिवाय कल्याण नहीं है। सम्यक्त्व और संयमके बिना कल्याण नहीं है। पुद्गल और आत्मा भिन्न हैं, यह ठीक-ठीक समझो। तुम सामान्य रूपसे जानते हो। भाई-बन्धु, माता-पिता पुद्गलसे सम्बन्धित हैं। उनका जीव से कोई सम्बन्ध नहीं। जीव अकेला है। बाबा, जीवका कोई नहीं है। जीव भव-भवमें अकेला जायेगा।

(मशीन बन्द हो गई)

देव पूजा, गुरुपास्ति, स्वाध्याय, संयम तप और दान ये ६ क्रिया कही हैं। असि, मसि, कृषि, शिल्प, विद्या, वाणिज्य ये ६ धन्धे कहे गये हैं। इनसे होनेवाले पापोंको क्षय करनेके लिये उक्त धर्म क्रिया कही गई है। इनसे मोक्ष नहीं मिलता। मोक्ष किसको मिलेगा? केवल आत्मचिन्तनसे मोक्ष मिलेगा और कोई क्रियासे मोक्ष नहीं होता। भगवानकी वाणीपर पूर्ण विश्वास करो। इसके एक शब्दके विश्वाससे मोक्ष जाओगे। सत्यवाणी कौन है? एक आत्मचिन्तनसे सब साध्य है। और कुछ नहीं है, बाबा! राज्य सुख, सम्पत्ति, सन्तति सब मिलते हैं, मोक्ष नहीं मिलता। मोक्षका कारण एक आत्म-चिन्तन है, इसके सिवाय वह गति प्राप्त नहीं होती।

सारांश 'धर्मस्य मूलं दया' प्राणीका रक्षण करना दया है, जिन धर्मका मूल क्या है? सत्य और अहिंसा है। मुखसे सब सत्य-अहिंसा बोलते हैं। मुखसे भोजन-भोजन कहनेसे क्या पेट भरता है? भोजन किये बिना पेट नहीं भरता। क्रिया करना चाहिये। बाकी सब काम छोड़ो। सत्य अहिंसा पालो, सत्यमें सम्यक्त्व है और अहिंसामें दया है। किसीको कष्ट मत दो, यह व्यवहारकी बात है। सम्यक्त्व धारण, धारण करो, इसके बिना कल्याण नहीं होता। (सल्लेखनाके २६ वें दिवस, गुरुवार दिनांक ९-८-५५) को श्री कुन्थलगिरि सिद्ध क्षेत्रपर आचार्य श्री द्वारा दिया गया अन्तिम सन्देश)



जैन कुलभूषण

श्री लाला महावीरप्रसादजी ठेकेदार

—: संक्षिप्त जीवन परिचय :—





देहली समाज के गणमान्य लब्ध-प्रतिष्ठित जैन कुलभूषण स्व० लाला महावीरप्रसादजी ठेकेदार ऐसे ही पुण्यात्मा और धार्मिक नर रत्न थे। किस-प्रकार उन्होंने अपने पुरुषार्थ और बुद्धि चातुर्य से धर्मयश और सुख की प्राप्ति की। नवयुवकों को उनका जीवन अनुकरणीय है।

उनका जन्म बैसाख बदी १४ विक्रम सम्वत् १६३५ में हुआ। माता पिता धार्मिकवृत्ति नीति-वान शीलवान है तो बच्चे उसे देखकर वैसे ही बन जाते हैं। बाल्यकाल से मनुष्य को अपने जीवन के प्रारम्भ में धार्मिक शिक्षा, अच्छी संगति, शुभ संस्कार सदुपयोग-सदुपदेश का लाभ मिला तो उसका मधुर फल आगामी जीवन मे चखने को मिलेगा। बचपन में आपको धार्मिक शिक्षा मिली गुरुओं का उपदेश मिला फलस्वरूप जीवन एक आदर्श बन गया।

पहले आपने म्यूनिस्पल कमेटी के टैक्स डिपार्टमेंट में बीस रुपये माहवार पर कार्य किया वहां डिपार्टमेंट में गबन हो जाने के कारण आपने सर्विस छोड़ दी और स्वतन्त्र रीति से ठेकेदारी का कार्य करना आरंभ कर दिया।

महावीर प्रसाद एण्ड संस के नाम से १६१२ में दुकान खोलकर शुष्क सीमेंट सतना लाईन लोहे व चीनी के पानी के नल टाईल मारबल सेनेटरी सामान का कार्य किया जिससे आपको काफी आर्थिक लाभ हुआ। भवन बनवाने और सड़क निर्माण में भी आपकी रुचि थी।

परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागरजी महाराजका संघ सहित १६३० में दिल्लीमें पदार्पण हुआ । आपने उनको आहार देने के लिए अशुद्ध जल का त्याग कर दिया और समस्त मुनिराजों की शक्तिभर वैयावत्ति की जिससे आपको अधिक आनंद आया और आचार्य श्री के उपदेश से ठेकेदारी छोड़ दी । गृहस्थ जीवन में चार विवाह किये दो से कोई सन्तान नहीं हुई । तीसरी धर्मपत्नी से श्री श्यामलालजी और एक कन्या उत्पन्न हुई । कन्या का असमय में ही स्वर्गवास हो गया ।

चौथी धर्मपत्नी से दस सन्ताने हुईं ६ लड़कियां और चार लड़के उत्पन्न हुये । इनमें से एक बहिन की मृत्यु हो गई । शेष सभी अपने पिताजी के गौरव और प्रतिष्ठा के अनुकूल धार्मिक कार्यों में उत्साह से भाग लेते हैं और दिल्ली के सामाजिक और धार्मिक संस्थाओं की देख रेख करते हैं ।

लाला महावीरप्रसादजी ठेकेदार ने सम्मेदशिखर, गिरनार, आदि तीर्थों की सपरिवार वन्दना की महावीरजी स्टेशन पर एक्सप्रेस ट्रेन ठहरती नही थी । आपने प्रतिमाह २५-३० टिकटें लेकर और सरकार को प्रेरणा देकर महावीरजी पर एक्सप्रेस ट्रेन ठहराने का पूर्ण प्रयत्न किया । जिसमें आपने पूर्ण सफलता प्राप्त की । आप समाज के पंच वर्षो तक रहे । जैन मित्र मंडल जो दिल्ली की सुप्रसिद्ध साहित्य सस्था है उसके भी अध्यक्ष रहे ।

भारतवर्षीय दि० जैन अनाथ रक्षक सोसायटी के अन्तर्गत जो जैन बाल आश्रम है उसे हिसार से यहां लाने और उसको समुचित व्यवस्था करने में आपका पूर्ण सहयोग रहा ।

जब आप अस्वस्थ हुए और बीमारी बढ़ती गई तो आपके मन में आचार्य रत्न श्री देशभूषणजी महाराज से जो उस समय दिल्ली मे विराजमान थे । उनसे धर्म उपदेश सुनने का भाव उत्पन्न हुआ आचार्य श्री ने घर जाकर आपसे सबोधन और धर्मोपदेश दिया । ऐसा सौभाग्य विरले ही जनों को प्राप्त होता है । १० जून १९५७ में समाधिमरण पूर्वक आपका स्वर्गवास हो गया ।

दिल्ली समाज के लोकोपकारी पुरुषों में आप अग्रणी थे । सौभाग्य की बात है कि आपके सभी पुत्र और पुत्रियां इसीप्रकार धार्मिक कार्यों में भाग लेकर मुक्तहस्त से सामाजिक संस्थाओं को दान देते हैं तथा देवगुरु शास्त्र के अनन्य भक्त हैं ।



जैन कुलभूषण–धर्म परायरण

श्री लाला श्यामलालजी जैन ठेकेदार

दिल्ली

———————————— ————————संक्षिप्त जीवन परिचय——

जीवन को सुख शांतिमय बनाने का मुख्य साधन धर्म है। धर्म के कारण यह प्राणी संसार के कष्टों को दूरकर सच्ची शांति प्राप्त कर सकता है। परिशुद्ध जाति, कुल उत्तम, वंश निरोग, शरीर दीर्घायुष्य, परोपकार निरत बुद्धि, देवशास्त्र गुरु की भक्ति धर्म वृद्धि की चिन्ता आदि बातें मनुष्य को पूर्व संस्कार से प्राप्त होती हैं और गुरुजनो के आशीर्वाद और सम्यक् पुरुषार्थ से उत्तम गुणों की वृद्धि होती है।



धर्म का पालन दो प्रकार से होता है मुनिधर्म और गृहस्थ धर्म। जैसे तप त्याग और अाध्यात्म विकास का साधन मुनिधर्म है ऐसे ही दान शील पूजा स्वाध्याय आदि का साधन गृहस्थ धर्म है। मुनिधर्म का प्रधान लक्ष्य मोक्ष पुरुषार्थ है। उसीप्रकार गृहस्थ अाश्रम में रहकर धर्म अर्थ काम इन तीन पुरुषार्थों को भली प्रकार पालन किया जा सकता है। सफल जीवन धर्म यश और सुख के पालन करने से ही हो सकता है।

दिल्ली महानगरी एक महत्व पूर्ण स्थान है। व्यापारिक नगरों में मुख्य तथा सांस्कृतिक गति विधियों का केन्द्र है। यहां पर जैन धर्म पालन करने वाले श्रावकों में अनेक प्रतिभाशाली उदार और लोक सेवी धनी परोपकारी भावना सम्पन्न राज्य मान्य स्त्री पुरुष हुए हैं। जिनके द्वारा देश धर्म अौर समाज की बड़ी सेवा हुई है। स्वनाम धन्य सेठ सुगनचन्दजी जिन्होंने अनेक मन्दिरों का निर्माण कराया, हस्तिनापुर में भगवान शान्तिनाथ का, दिल्ली में कला अौर सौन्दर्य का प्रतीक अत्यन्त भव्य भगवान आदिनाथ का नया मन्दिर निर्माण कराया जिसकी कारीगरी और पच्चीकारी का काम

देखकर आश्चर्य होता है । इसीप्रकार रायबहादुर सेठ पारसदासजी हुए जिनके द्वारा जैनधर्म और समाज की बड़ी सेवा हुई ।

यहीं पर अग्रवाल वंशोद्भव सिंगल गोत्रीय सद् गृहस्थ द्वारकादासजी हुए उनके पुत्र ला० बनारसीदासजी हुए उनके सुपुत्र श्रीमान् ला० महावीरप्रसादजी ठेकेदार हुए वे बडे धर्मात्मा, उदार, देवशास्त्र गुरु के अनन्य भक्त थे, उनकी धर्मनिष्ठा सभी प्रकार से प्रशंसनीय रही ।

भाग्य पुरुषार्थ और सूझबूझ से दिनों दिन लक्ष्मी की प्राप्ति हुई और उसको धार्मिक कार्यों में खर्च करके उन्होंने गृहस्थ जीवन को सुखमय बनाया ।

आपने चार विवाह किये दो धर्म पत्नियों से कोई सन्तान नहीं हुई तीसरी से एक पुत्री और एक पुत्र का जन्म हुआ । पुत्र श्यामलाल का जन्म आसौज बदी ४ विक्रम सम्वत् १९६४ तदनुसार २७ सितम्बर १९०७ ई० को हुआ दो वर्ष पश्चात् माताजी का स्वर्गवास होगया चौथी धर्मपत्नी श्री कलादेवी से चार पुत्र और छह पुत्रियां हुई ।

पुत्रों में श्री अजितप्रसादजी श्री महेन्द्रप्रसादजी श्री विजेन्द्रप्रसादजी और नरेन्द्रप्रसादजी हैं जो अपने पिता के यश और गौरव के अनुसार व्यापारिक कार्यों को भली प्रकार सम्पन्न करते हुए सामाजिक संस्थाओं की उन्नति में प्रयत्न शील रहते हैं ।

श्री श्यामलालजी का विवाह १९१८ में ला० छज्जूमलजी कपडे वालों की पुत्री चम्पावतीजी के साथ हुआ जिससे श्री जिनेन्द्रप्रसादजी और सत्येन्द्रकुमारजी दो पुत्र और सुशीला, सरला, कनक ये तीन पुत्रियां हुई ।

लालाजी का भरा पूरा परिवार है पुत्र और पौत्रों से आप सम्पन्न हैं ।

ला० श्यामलालजी में बचपन से धर्म के विशेष संस्कार पड़े । बचपन के संस्कार जीवन पर्यन्त विकास के साधन बन जाते हैं ।

गृहस्थ के दैनिक कर्तव्यों में ६ कर्तव्य बताए हैं जिनमें दो मुख्य हैं पूजा करना और दान देना देवाधिदेव श्री जिनेन्द्रदेव को पूजा सभी प्रकार के दुःखों को नाश करने वाली है मन के विकारों को दूर करती है और मनोभिलषित पदार्थों को देने वाली है । यही विचार कर आप प्रतिदिन जयसिंहपुरा नई दिल्ली के मन्दिर में पूजन करते हैं नित्य प्रति स्वाध्याय करते हैं ।

आपने समस्त भारत के जैन तीर्थों की यात्रा सपरिवार की है आचार्य शान्तिसागरजी महाराज जब दिल्ली पधारे तो उनसे अशुद्धजल के त्याग का व्रत लिया और अब व्यापारिक कार्यों को छोड़कर आचार्य धर्मसागरजी महाराज से दूसरी प्रतिमा का नियम लिया।

जिन व्रतों को आप भलीप्रकार पालन कर रहे हैं। आप ठाकुरदास बनारसीदास ट्रस्ट, श्री महावीरप्रसादजी ट्रस्ट, श्यामलाल जैन चेरीटेबल ट्रस्ट के अध्यक्ष हैं। जिनके माध्यम से धार्मिक संस्थाओं को दान देते रहते हैं।

घर पर ही श्री महावीरप्रसाद जैन आयुर्वेदिक औषधालय स्थापित कर रखा है, जहां ३१ वर्षों से अनेक रोगी प्रतिदिन औषधि लेकर आरोग्य लाभ प्राप्त करते हैं।

सामाजिक सेवा :

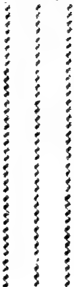
आप सामाजिक संस्थाओं का कार्य उत्साह से करते हैं। भा० दि० जैन धर्म संरक्षिणी महासभा, भा० दि० जैन संघ के आप सदस्य हैं। त्रिलोक शोध संस्थान हस्तिनापुर के अध्यक्ष जैन सभा नई दिल्ली, वीरसेवा मन्दिर आदि संस्थाओं के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष हैं। मुनि-संघ कमेटी के अध्यक्ष हैं। दिल्ली में पधारे आचार्य शांतिसागरजी महाराज, आचार्य देशभूषणजी महाराज, आ० धर्मसागरजी महाराज ऐलाचार्य विद्यानंदजी महाराज तथा समय समय पर पधारे अन्य त्यागी जनों की उत्साह से वैयावृत्ति करते हैं। दि० जैन मन्दिर अयोध्याजी, ग्रीनपार्क फरीदाबाद पांडव नगर आदि स्थानों के मन्दिरों का शिलान्यास आपके ही कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ है।

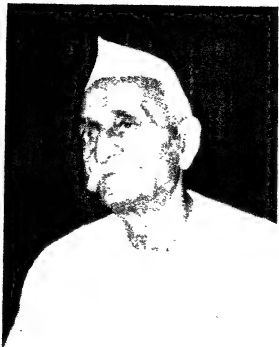
धर्म शिक्षा :

दिल्ली के जैन स्कूलों में पहले धर्म शिक्षा दी जाती थी फिर बन्द होगई जब आपसे इस बात की चर्चा की तो आपने श्री जैन सभा जिसके आप गत वर्ष तक अध्यक्ष थे धर्म शिक्षा शुरु कराई। श्री जैन शिक्षा बोर्ड जिसके अन्तर्गत दो हायर सेकेण्ड्री स्कूल हैं जिनमें २५०० लड़के लड़कियां शिक्षा पाती हैं उनमें धर्म शिक्षा शुरु कराने का श्रेय आपको ही है। जैन प्रेम सभा के प्रयत्न से धर्म शिक्षा का कार्य चालू हुआ है। जिसकी हर एक ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। इसके बाद कई स्कूलों में धर्म शिक्षा शुरु हो गई है।

जीवन में कभी कभी ऐसा मोड़ आता है जो व्यक्ति के विचारों में परिवर्तन कर देता है। उसे उन्नत और शक्तिशाली बना देता है। दक्षिण भारत से सेठ पूनमचन्द घासीलालजी ने चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शांतिसागरजी महाराज के संघ को उत्तर भारत में विहार कराया उस समय जनता

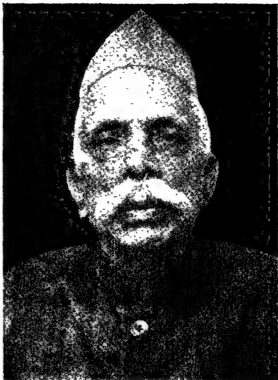
द्रव्य दाता





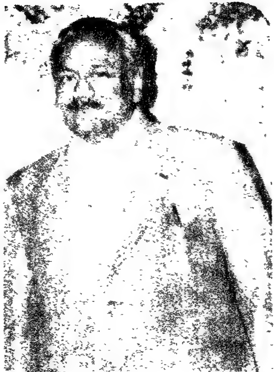
मुनिभक्त सेठ श्री लाला श्यामलालजी

[सुपुत्र श्री महावीरप्रसादजी ठेकेदार, दिल्ली]



लाला महावीरप्रसादजी जैन

[पिता श्री श्यामलालजी ठेकेदार, दिल्ली]



श्री जिनेन्द्रकुमारजी जैन
ठेकेदार







धर्मपत्नि श्री जिनेन्द्रकुमारजी
ठेकेदार



स्व० श्री कलावती जैन

[धर्मपत्नी स्व० लाला महावीरप्रसादजी जैन]





स्व० श्री चम्पोदेवी जैन

[धर्मपत्नी श्री लाला श्यामलालजी ठेकेदार दिल्ली]

मे अपार उत्साह था, लालाजी का यह सोभाग्य हुआ कि उन्होंने सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पर आचार्य शांतिसागरजी श्री वीरसागरजी और नेमसागरजी महाराज के दर्शन किये आपके पिताजी, माताजी और आपने तथा अनेक भाई बहिनों ने नियम लिये।

भ० महावीर स्वामी के २५०० वें निर्वाण महोत्सव पर एक छोटी सी पुस्तक लिखी जिसमें दिल्ली में पधारे चारों सम्प्रदाय के मुनिराज और आचार्यों का परिचय था परमपूज्य ऐलाचार्य विद्यानंदजी महाराज ने उस पुस्तक को पसंद किया और कहा कि जिसमें समस्त दि० जैन समाज के आचार्य मुनिगण त्यागियों का परिचय हो ऐसी पुस्तक छपनी चाहिये। इस सम्बन्ध में लालाजी की प्रबल भावना थी कि आचार्य शांतिसागरजी महाराज से लेकर आजतक हमारे जितने मुनिराज हैं उन सभी का परिचय एक पुस्तक में हो। तदनुरूप ग्रन्थ तैयार किया गया और उसके प्रकाशन का भार लालाजी की ओर से ही वहन किया गया। हमारी श्री जिनेन्द्र देव से प्रार्थना है कि लालाजी सतत जिन शासन की सेवा करते रहें।



दिगम्बर जैनाचार्य परम पूज्य १०८

श्री धर्मसागरजी महाराज

का आशीर्वाद

दिगम्बर चर्या अपने आप में इतनी महान और कठोर है कि सहज कोई व्यक्ति इसको धारण करने का साहस नही कर पाता और इस कलिकाल में तो रत्नत्रय धारी दिगम्बर साधु की चर्या का प्रतिपालन और भी कठिन होता जा रहा है, फिर भी ऐसी पुण्य आत्माएँ हुई हैं, हो रही है और पचम काल के तीन वर्ष साढ़े आठ माह शेष रहने तक होती रहेगी ।

मानव स्वभाव अनुकरणीय है इसी कारण हम अतिशीघ्र पाश्चात्य देशों के वैभव एवं वैज्ञानिक प्रसाधनों का अनुसरण कर अपनी गति को दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ा रहे है ।

दिगम्बर साधु मोक्ष के मूक साधक होते है, ये अपनी ऋद्धियां. शक्तिया, ज्ञान, वैभव एव विशिष्ट चारित्र आदि का प्रसार करने मे उदासीन रहते हैं और उसके फलस्वरूप साधु के समाधिस्थ हो जाने के बाद उनके अनुपम गुणों का प्रायः विलोप सा ही हो जाता है उन महान तपोनिधि तपस्वी की धर्म, धर्मात्मा एवं समाज को जो देन है उसे चिरस्थाई बनाए रखने के उद्देश्य से ही ब्र० धर्मचन्द्र शास्त्री का यह प्रयास प्रशंसनीय है । इनने परिश्रम कर वर्तमान में जितने भी साधु, साध्वियाँ, क्षुल्लक, क्षुल्लिकाये आदि हैं उनकी विशेष उपलब्धियाँ एवं जीवन परिचयादि का संकलन लेखन कर इसे तैयार किया है ।

इस संस्करण से दिगम्बर तपस्वी भी जीवन्त के सदृश प्रत्यक्ष हो रहे हैं । समाज के धर्मप्रेमी बन्धु इसका अनुकरण कर साधु बनने का प्रयास कर सकेंगे, और वे परिवार भी जिनके घर से कुछ पीढ़ियों पहले ये महात्मा निकले हैं उनकी भावी पीढ़ी इस ग्रन्थ के माध्यम से अपने स्मृति पटल पर उन महापुरुषों को अंकित कर स्वयं भी उनका अनुकरण करते हुए उसी मार्ग पर चलने का प्रयास कर सकते हैं । इन सभी दृष्टियो से यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा । इसके संकलनकर्ता, लेखनकर्ता एव प्रकाशक आदि के लिए हमारा यही आशीर्वाद है कि ऐसे उत्तमोत्तम प्रकाशन समय समय पर कराते रहे और मानव प्रकृति के अनुसार, उन्हीं महापुरुषों का अनुकरण कर मोक्ष मार्ग के पथिक बनें ।



अनुक्रमणिका





सम्पादकीय

पुरातन भारत के इतिहास का पर्यवेक्षण करने पर ज्ञात होगा कि यहा श्रवण और वैदिक संस्कृति रूप द्विविध विचारधाराएँ विद्यमान थीं। जैन विचार पद्धति का उदय इस अवसर्पिणी काल में भगवान ऋषभदेव के द्वारा हुवा जिन्हें जैन धर्म अपना प्रथम तीर्थंकर स्वीकार करता है। जैन आगम के अनुसार जैन तत्वचिंतन प्रणाली अनादि है, फिर भी इस युग की अपेक्षा जैन धर्म की स्थापना का गौरव भगवान ऋषभदेव को प्रदान किया जाता है। चौबीस तीर्थंकरों में ऋषभदेव प्रथम तीर्थंकर माने गये हैं।

जैन धर्म अपनी मौलिकता और वैज्ञानिकता के कारण अपने अस्तित्व को शाश्वत धर्म के रूप में अभिव्यक्ति दे रहा है। भगवान महावीर इस युग के अन्तिम तीर्थंकर थे। उनके बाद आचार्यों की एक बहुत लम्बी श्रृंखला कडी से कड़ी जोड़ती रही है। सब आचार्य एक समान वर्चस्व वाले नहीं हो सकते नदी की धारा में जैसे क्षीणता और व्यापकता आती है वैसे ही आचार्य परम्परा में उतार-चढ़ाव आता रहा है। फिर भी उस श्रृंखला की अविच्छिन्नता अपने आपमें एक ऐतिहासिक मूल्य है। पच्चीस सौ वर्षों के इतिहास का एक सर्वांगीण विवेचन महत्वपूर्ण कार्य है। हमारे दूरदर्शी आचार्यों ने अपने ग्रन्थों मे मूल्यवान ऐतिहासिक सामग्री को संरक्षित कर रखा है अन्यथा जैन धर्म के इतिहास को कोई ठोस आधार नहीं मिल पाता।

दिगम्बर मुद्रा सयम, तप, त्याग और अहिंसा की भूमिका पर अधिष्ठित है अनन्त आलोक पुञ्ज महाबली तीर्थंकर की अनुपस्थिति में इस महत्वपूर्ण दायित्व का निर्वहन आचार्य करते है।

आचार्य व मुनि वृन्द विशुद्धतम आचार सम्पदा के स्वामी होते हैं। वे छत्तीस एवं अट्ठाईस मूलगुणों से अलंकृत होते हैं। दीपक की तरह स्वयं प्रकाशमान बनकर जन-जन के पथ को आलोकित करते हैं और तीर्थंकरों की पतवार को लेकर सहस्रों सहस्रों जीवन नौकाओं को भवाब्धि के पार पहुंचाते हैं।

बहुत से लोगों की यह धारणा है कि वर्तमान पचम काल में मुनि ही नहीं हुवा करते हैं। परन्तु उनका विचार स्ववचन व आगम बाधित है वे भाई जरा आगमों की तरफ अपनी दृष्टि डालें तो उनको मालूम होगा कि यह श्रद्धा आगम से विपरीत है। पंचमकाल में गौतम गणधर मुक्ति को गये हैं। गौतम स्वामी के बाद सुधर्म स्वामी ने कैवल्य धाम को प्राप्त किया है। तदनन्तर क्रमसे विष्णु, नंदिमित्र, अपराजित, गोवर्धन और भद्रबाहु ये पांच श्रुतकेवली इस पंचमकाल में हुए हैं। गौतम स्वामी व सुधर्माचार्य का काल पंचम काल प्रारम्भ होने के बाद ६२ वर्ष तक का है। अर्थात् पांच श्रुतकेवलियों के अस्तित्व तक पंचमकाल मे १६२ वर्ष बीत गये।

भद्रबाहु के बाद में आ० धरसेन स्वामी, आ० पुष्पदन्त, आ० भूतबली, आ० कुन्दकुन्द, आ० यतिवृषभ, आ० उमास्वामी, आ० पद्मनंदि, आ० पूज्यपाद, आ० जिनसेन, आ० संमतभद्र, आ० अकलंक, आ० नेमीचन्द्र, आ० गुणभद्र, आ० शुभचन्द्र आदि शान्तिसागराचार्य पर्यन्त सैंकड़ों आचार्य एवं मुनि हो गये हैं जिन्होंने अपने दिव्य विहार से धर्म का अपूर्व उद्योत किया है।

भगवान भद्रबाहु के परम शिष्य सम्राट चन्द्रगुप्त को जो सोलह स्वप्न हुए थे, उनमें एक स्वप्न यह था कि एक बछड़ा बड़े रथ को खींच कर ले गया। इसका फल आ० भद्रबाहु ने बताया था कि पंचम काल में तारुण्यावस्था में ही मुनिदीक्षा लेकर महाव्रत रथ का सचालन किया जावेगा। वृद्धावस्था में उसके लिए सामर्थ्य का अभाव रहेगा।

गुणभद्राचार्य ने उत्तरपुराण में कल्कियों का वर्णन करते हुए स्पष्ट बतलाया है कि एक हजार वर्ष मे एक कलकी होगा इस प्रकार २० कलकी होगे। अन्तिम कलकी राजा जलमंथन के शासन में चन्द्राचार्य के शिष्य वीरांगज नामक मुनि होंगे। ये अंतिम मुनि होंगे। इसी प्रकार अंतिम अर्जिका सर्व श्री, श्रावक अग्निल एवं श्राविका फाल्गुसेना होगी। ये चारों ही पंचम काल के ३ वर्ष ८।। माह बाकी रहते हुए शुभ भावना से भर कर पहले स्वर्ग में चले जावेंगे। क्या इससे स्पष्ट नहीं होता है कि पचम काल के अत तक चतु:संघ विद्यमान रहेगा। इसलिए इसके विपरीत पंचमकाल में मुनि हो ही नहीं सकते, इस प्रकार की श्रद्धा आगम कथन से विपरीत है।

पू० आचार्य शान्तिसागरजी महाराज ने स्पष्ट रूप से कहा कि कलियुग में भी सतयुग के समान ही मुनि हो सकते हैं। इस पंचमकाल के मुनियों का भी पूर्व मुनियों के समान ही आदर करना चाहिए।

आगम में लिखा है—

विन्यस्यैदं युगीनेषु, प्रतिमासु जिनानिव।
भक्त्या पूर्व मुनीनर्चेत्, कुतः श्रेयोति चर्चिनाम् ।। आशाधरजी ।।

जिस प्रकार रत्न पाषाणादिक की मूर्ति में साक्षात् जिनेन्द्र की स्थापना कर उपासना करते हैं इसी प्रकार इस काल के जैन मुनियों को भी पूर्व के मुनियों के समान ही मान कर भक्ति से उपासना करनी चाहिये ।

आचार्य श्री शांतिसागरजी के विहार से दक्षिण के कोने से लेकर उत्तर प्रान्त प्रत्येक स्थान पर जो धर्म जागृति संघ के प्रसाद से हुई वह स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है आचार्य श्री के द्वारा लाखों भव्य जीव संस्कार से संस्कृत हुए । हजारों ने रात्रि भोजन का त्याग किया, सैकड़ों ने मिथ्यात्व का त्याग किया, हजारों जीवों ने व्रत नियम संयम लेकर आत्म विशुद्धि की । इस प्रकार के क्रियात्मक चारित्र का प्रचार सैकडों विद्वान् मिल कर सैकड़ों वर्षों तक करते तो भी शायद ही सफल होते । क्योंकि चारित्र व ज्ञान का जो प्रभाव पड़ता है, वह केवल ज्ञान से नहीं पड़ता है । भगवान महावीर की विशाल संघ सम्पदा को जैनाचार्यों ने सम्भाला । जैनाचार्य विराट् व्यक्तित्व एवं उदात्त कृतित्व के धनी थे । वे सूक्ष्म चिन्तक एवं सत्यद्रष्टा थे । धैर्य, औदार्य और गाम्भीर्य उनके जीवन के विशेष गुण थे । सहस्रों-सहस्रों श्रुत-सम्पन्न मुनियों को लील लेने वाले विकराल काल का कोई भी क्रूर आघात एवं किसी भी वात्याचक्र का तीव्र प्रहार उनके मनोबल की जलती मशाल को न मिटा सका न बुझा सका और न उनकी विराट ज्योति को मंद कर सका । प्रसन्नचेत्ता जैनाचार्यों की धृति मंदराचल की तरह अचल थी ।

परमागम प्रवीण, भवाब्धिपतवार, करुणा कुबेर एवं जन जन हितैषी जैनाचार्यों की असाधारण योग्यता से एवं उनकी दूरगामी पद यात्राओं से अनेक राज्य एवं जन मानस प्रभावित हुए । शासन शक्तियों ने उनका भारी सम्मान किया । विविध मानद उपाधियों से जैनाचार्य विभूषित किये गये पर किसी प्रकार की पद-प्रतिष्ठा उन्हें दिग्भ्रान्त न कर सकी । पूर्ण विवेक के साथ उन्होंने साधना जीवन की मर्यादा के अनुरूप जितना साहित्य लिखा जा सका लिखा । जैन शासन का महान् साहित्य जैनाचार्यों की मौलिक सूझ-बूझ एवं उनके अनवरत परिश्रम का परिणाम है ।

वर्तमान जैन शासन की परम्परा भगवान महावीर से सम्बन्धित है महावीर स्वामी का निर्वाण हुए २५१० वर्ष हो गये । १६-२० वीं शताब्दी में आचार्य शान्तिसागरजी ने जो वृक्ष लगाया वह आज भी आपके ही पट्टाचार्य शिष्य आचार्य श्री धर्मसागरजी बराबर संभाल रहे हैं । आचार्य शान्तिसागरजी महाराज लोकोत्तर महापुरुष व जगद्वंद्य आदर्श महात्मा थे । आपके अनेकों शिष्यों ने भारत वर्ष में सर्वत्र विहार कर धर्मध्वजा फहराई है । आचार्य श्री के प्रथम दीक्षित शिष्य आचार्य वीरसागरजी एवं चन्द्रसागरजी, कुन्थुसागरजी, सुधर्मसागरजी, पायसागरजी आदि मुनिवृन्दों से धर्म जागृति हुई वह अवर्णनीय है । इसी शृंखला में आचार्य श्री शान्तिसागरजी छाणी व आचार्य शिव-

सागरजी, आ० महावीर कीर्तिजी आदि आचार्य एवं मुनि वृन्द हुए हैं। वर्तमान में आचार्य शिरोमणि श्री धर्मसागरजी, आचार्य देशभूषणजी, आचार्य विमलसागरजी, आचार्य विद्यासागरजी, आ० सनमति-सागरजी, आ० क० श्रुतसागरजी, ऐलाचार्य श्री विद्यानन्दजी, मुनि दयासागरजी मुनि वर्धमानसागरजी आदि सैकड़ों साधु वृन्द हैं जो आत्म साधना के साथ जन कल्याण भी कर रहे हैं। धन्य हैं ऐसे वीतरागी साधुगण।

हमारे देश में आज से १०० वर्ष पूर्व जैन मुनियो के दर्शन उतने ही दुर्लभ थे जितने कि एक निर्धन के लिए भूभाग से निकला धन। उसका कारण था कि जैन सम्प्रदाय अपनी दुर्बलताओं के कारण अपने कर्तव्य के साथ धर्म की मर्यादा को लुप्त करता जा रहा था। लोगों में धर्म के प्रति आस्था कम होती जा रही थी। मुनियो के दर्शन दुर्लभ थे। लोग त्याग शब्द से कोसों दूर रहते थे। ऐसे समय मे आचार्यवर श्री चारित्र चक्रवर्ती तपोनिधि परम पू० समाधि सम्राट श्री शान्तिसागरजी महाराज ने अनेको विपत्तियों, उपसर्गों को सहन करते हुए ज्ञान, चारित्र और तप के माध्यम से धर्म की मर्यादा को सुदृढ और कायम बनाकर जैन सम्प्रदाय मे ऐसे आत्म कल्याणकारी मन्त्र को फूंका जिसके द्वारा जैन सम्प्रदाय की बढ रही पथ-भ्रष्टता आदर्श की ओर अग्रसर होने लगी। लोगों में जिन, जिनवाणी, दिगम्बर साधुओं एवं जैन धर्म के प्रति सच्ची आस्था जागृत हुई।

धर्म प्रचार की दृष्टि से भी आचार्य शान्तिसागरजी ने महान कार्य किया दक्षिण भारत से उत्तर-भारत मे उनका आगमन हुआ। यह उनकी दिगम्बर इतिहास में उल्लेखनीय यात्रा थी। इस यात्रा से पूर्व कई शताब्दियों तक दिगम्बर मुनियों का मुख्य विहार-स्थल दक्षिण भारत ही बना हुआ था। अतः उत्तर भारत में वर्षों से अवरुद्ध दिगम्बर मुनियो के आवागमन के मार्ग को उद्घाटित करने का श्रेय आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज को ही है।

आचार्य शान्तिसागरजी के तपोमय जीवन ने दिगम्बर परम्परा को तेजस्विता प्रदान की है एवं उनके श्रमनिष्ठ जीवन से नए इतिहास का निर्माण हुआ है।

आचार्य श्री की कठोर तप-साधना के साथ आदर्श चारित्र की छाप का प्रभाव अनेकों भव्य आत्माओं पर पडा। फलतः आचार्यवर वीरसागरजी जैसे पुण्य पुरुषों ने आपके श्री चरणों में झुककर उस पथ का अनुसरण किया जिस कल्याणकारी पथ पर आप चल रहे थे।

गुरु परम्परानुसार आचार्यवर श्री वीरसागरजी महाराज ने जिस आदर्श ज्ञान और चारित्र की निर्मलता को स्वयं धारण कर धर्म की ज्योति को चमत्कृत किया उसका मूर्तिमान रूप आज उनके द्वारा दीक्षित परम पूज्य दिगम्बर जैनाचार्य श्री शिवसागरजी महाराज मे देखने को मिला था।

चारित्र चक्रवर्ती तपोनिधि परम पूज्य दिगम्बर जैनाचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज ने जिस ज्ञान और चारित्र की उज्ज्वलता को अपनी तप: साधना के द्वारा दर्शाया था उसीको तद्रूप बनाये रखने वाले इस परम्परा के तृतीय आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज हैं।

संयमी जीवन की निर्मल साधना, विनम्र-विवेक का जागरण, सहनशीलता, गम्भीरता आदि विविध विशेषताओं की अभिव्यक्ति के साथ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज दिगम्बर जैन समाज को असाधारण नेतृत्व प्रदायक एवं उनके प्रगतिगामी कर्तव्य के परिचायक हैं।

दिगम्बर साधु परिचय ग्रन्थ की रूप रेखा पूर्व में कई बार बनाई गई पर कार्य अपूर्ण रहा। भा० दि० जैन महासभा ने प्रथम बार आज से २५ वर्ष पूर्व योजना बनाई पर कार्य बीच में ही रुक गया, करुणा दीप के सम्पादक श्री जिनेन्द्रकुमारजी ने भी इस कार्य में रुचि ली परन्तु वह कार्य भी मन्द हो गया। भगवान महावीर स्वामी के ६५सौं वे निर्वाण वर्ष के समय आचार्य धर्मसागरजी महाराज ससंघ दिल्ली विराजमान थे उस पुण्य अवसर पर दिल्ली के समाज शिरोमणि मुनिभक्त सेठ श्री श्यामलालजी ठेकेदार ने भी प्रयास किया पर यह प्रयास भी बीच में रुक गया। तत् पश्चात् औरंगाबाद से साप्ताहिक पत्र के सम्पादकजी ने भी पूर्ण प्रयत्न किया किन्तु अर्थाभाव के कारण रुक गया। श्री त्रिलोक शोध संस्थान हस्तिनापुर की ओर से भी प्रकाशित करने की योजना बनी पर कार्य अधूरा रहा। शां० वी० सिद्धांत संरक्षणी सभा की ओर से भी कार्य करने की योजना बनी पर अधूरी रही। श्री लाला श्यामलालजी ठेकेदार ने पुनः प्रयास किया, पं० सुमेरचन्दजी दिल्ली वालों ने भी इसको आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया पर वह बीच में ही रुक गया। ठेकेदारजी ने मुझे भी कई बार इस कार्य को पूर्ण करने के लिये कहा, उनके विशेष आग्रह से मुझे स्वीकृति देनी पड़ी।

मैंने सारी सामग्री अवलोकन की तो उस समय कुल ८२ साधुओं के जीवन परिचय प्राप्त थे। मैंने परिचयों को देखने पर विचार किया तथा मेरी जानकारी के अनुसार ५०० से अधिक साधु-वृन्द हो गये। मैंने भी यह महसूस किया कि आज भारत वर्ष में सैकड़ों साधु वृन्द यत्र तत्र विहार करके जैन धर्म की प्रभावना कर रहे हैं इनके जीवन परिचय छपें ताकि आगामी पीढ़ी को भी जानकारी हो सके कि हमारे देश में कौन-कौन आचार्य हुए तथा उनके द्वारा कितने शिष्य दीक्षित हुए तथा आज के युग में कितने साधु वृन्द हैं।

पूर्व तथा वर्तमान के ५०० से अधिक साधु वृन्द हो गये इनका जीवन परिचय लिखना कठिन था सारे देश में फैले हुए मुनिराजों और त्यागियों का परिचय पाना सरल कार्य नहीं था परन्तु विभिन्न स्थानों के मुनि संघ कमेटियों के मंत्रियों और समाज के मूर्धन्य कार्यकर्त्ताओं के सहयोग से यह कृति तैयार की जा सकी।

धर्म की मर्यादा को अक्षुण्ण बनाये रखने का श्रेय इन अपरिग्रही वीतरागी मुनिवरों को ही है जिन्होंने सिद्धत्व की प्राप्ति के लिए विशुद्ध दिगम्बरत्व को अंगीकार किया। आज जब कि इस कलिकाल में भौतिकवाद का ताडव हो रहा है। परम तपस्वी वीतराग स्वरूप संत सांसारिक भोगाकांक्षा, यशोलिप्सा आदि प्रिय प्रतीत होने वाली प्रवृत्तियों से विरत हो आत्म कल्याण हेतु आध्यात्मिक अखण्ड ज्योति के सहारे धर्म पथ पर चलकर जग के अज्ञानी एवं मोही जीवों को कल्याण का मार्ग दर्शा रहे हैं।

मुनिवर स्वयं उदाहरण रूप संसार के सामने आकर ससार की नश्वरता एवं वस्तुस्थिति का प्रत्यक्ष दर्शन करा रहे हैं। इनका यह उज्ज्वल चरित्र कह रहा है कि शरीर का सौंदर्य क्या, यह तो नश्वर है। अपने आत्म सौदर्य की ओर तो दृष्टिपात करो। इसकी अनन्त शक्ति को तो पहिचानो। लेकिन हम मोही जीवों की आंखों पर रागद्वेष एव स्वार्थ का इतना मोटा परदा पड़ गया है कि हम सन्मार्ग की वांछा हो नहीं करते। इनका चरित्र मानव जीवन की पराकाष्ठा की महानतम झांकी है, जिससे प्रेरणा लेकर हम अपने चरित्र को ऊंचा उठा सकते है। सच्चे सुख के अन्वेषक, आत्म-शान्ति के पुजारी ऐसे पूज्य मुनिवरों के जीवन चरित्र हमारे लिए उस पुण्य पुस्तक की भाति है जिनमें हमारे कल्याण के अनन्त मत्र, अध्यायों के रूप मे लिखे हुए हैं।

मुनिश्री एवं त्यागी वृन्द के चरणों में बैठकर जो सुना, संघस्थ ब्रह्मचारी गणों से जो जाना एवं पुस्तकों अथवा पत्रिकाओं में मुनि जीवन के सम्बन्ध में जो देखा, इन सबके योग से ही इन परिचयों का लेखन सम्भव हुआ। मेरे द्वारा इस परिचय ग्रंथ को रूखे-सूखे भोजन की भांति ही तैयार किया गया है। ग्रथ जैसा जिस रूप में प्रकाशित है वह पाठकों के हाथ में है। इसमें बहुत सी त्रुटियां रही होंगी, जैसे जीवन परिचय सही है या नही, ब्लाक सही लगा है या नहीं, पर हमने अपनी जानकारी के अनुसार सही समझकर लिखा है यदि कुछ त्रुटियां रही हों या मिथ्या लिखा गया हो तो पाठक गण क्षमा करेंगे।

जिन जिन महानुभावों को परिचय पत्र, पत्रावलियां और पत्रादि भेजे गये थे उन्हें स्मरण पत्र, प्रतिस्मरण पत्र, आग्रह पत्र और बार बार विनय पत्र लिख लिख कर भेजे। समाज के दैनिक साप्ताहिक पत्रों में अनेक बार सूचनाएं प्रकाशित कराई फिर भी अनेक साधुवृन्दों के परिचय अप्राप्त रहे। अतः मात्र पत्राचार के माध्यम से ही भटकता रहा। बहुत से बन्धुओं ने पुराने सन्दर्भों को दुहराते हुए उन्होंने हमें मना भी किया, बहुत बन्धुओं ने लम्बी-चौड़ी भूमिकाएं विज्ञापित कर परिचयात्मक ग्रंथ प्रणयन की योजना बनाई पर बीच में ही रह गया। यह ग्रंथ तैयार हो जाने पर तो

प्रकाशन व्यवस्था उतनी टेढ़ी खीर नहीं रह जाती जितनी उसके निर्माण मे आने वाले प्रारम्भिक कार्य की ।

परिचय पत्रावलियों के आधार पर गद्यात्मक लेखन करने में हमें कठोर श्रम और अधिक समय व्यय करना पड़ा । एक साधु के परिचय को पत्रावलि के आधार पर पढ़ना-अंकित संकेतों को क्रमबद्ध लगाकर गद्यात्मक रूप में लिखना पुन: आवश्यक संशोधन, परिवर्धन करके तैयार करना । मेरा अनुमान है कि जितने श्रम, साधना और समय में यह मात्र परिचय ग्रंथ तैयार हुआ है उतने श्रम में २-४ ग्रंथों का सम्पादन बड़ी ही सुगमता से हो सकता था ।

दिगम्बर साधु महान आदर्श महापुरुष व उच्चकोटि के साधु हैं-जिन पर हम सबको महान गौरव है और ऐसे ही महासतों से श्रमण सस्कृति सदैव गौरवान्वित होती रहेगी । हमने यथा शक्य प्रयत्न किया है कि इस ग्रथ में सभी साधुओं के भाव चित्रों का दर्शन पाठकों को मिले परन्तु प्रयत्न करने पर भी कुछ साधुओं के चित्र हमें प्राप्त नहीं हो सके इसके लिये हमें खेद है ।

कृतज्ञता के सर्वोत्कृष्ट भाजक समाज रत्न !

ग्रथ के प्रकाशन का कार्य पूर्ण होने पर विचार आता है कि श्री श्यामलालजी ठेकेदार सा० की भावना कितनी उत्तम है जो ऐसे महानतम कार्य के सम्पादन कराने का कार्यभार अपने कन्धों पर लिया । आपने दीर्घकाल तक समाज सेवा की है और कर रहे हैं आप कोटि कोटि धन्यवाद के पात्र हैं । भगवान से प्रार्थना है कि आप दीर्घायु होकर समाज एवं धर्म की सेवा करे ।

साधु परिचय ग्रंथ का कार्य प्रगति से चल रहा था कि बीच में पुनः इस कार्य को अर्थाभाव के कारण रोकना पड़ा । इस ग्रन्थ का प्रकाशन होना ही था । अत: ब्र० मोतीचन्दजी शास्त्री हस्तिनापुर वालों ने ग्रंथ को पूर्ण रूप से सहयोग देने की स्वीकृति दी परन्तु कुछ दिनों बाद मुझे कई बार पत्राचार करने के पश्चात् उनकी असहमति ही जाहिर हुई तथा कार्य जो प्रगति पर था पूर्ववत पुन: रुक गया । यह कार्य लगभग ४ माह तक रुका रहा तत्पश्चात् शुभ संयोग से इस ग्रंथ के प्रकाशन हेतु श्रीमान् सेठ पूनमचन्दजी गंगवाल झरिया वालों से सम्पर्क किया । श्रीमान् सेठ पूनमचन्दजी गंगवाल सा० ने इस महानतम ग्रंथ जो आर्थिक परिस्थितियों वश काफी समय से रुका हुआ था । उसे स्व द्रव्य से संपूर्ण कराने की स्वीकृति प्रदान की । ग्रंथ प्रकाशन की विषम परिस्थितियों में आपका आवांछनीय सहयोग पाकर मैं अत्यन्त हर्षित हुआ मेरी हार्दिक इच्छा थी कि इतने परिश्रम के द्वारा एकत्रित दि० जैन साधु परिचय ग्रन्थ का कार्य आर्थिक कारण वश अपूर्ण न रह जाय । इस आर्थिक

संकट में आप जैसे दानवीर समाज सेवी धर्मानुरागी मुनि भक्त व्यक्ति का मैं अत्यन्त आभारी हूं जिनके आर्थिक सहयोग से काफी समय से रुका हुआ इस ग्रन्थ के प्रकाशन का कार्य पूर्ण हो सका।

इसी प्रसंग में ग्रंथ के मुद्रक श्री पाँचूलालजी मालिक कमल प्रिन्टर्स को कोटिश: धन्यवाद देता हूं जिन्होंने इस विशाल ग्रन्थ को कला पूर्ण ढंग से मुद्रित किया है प्रेस की अपनी कुछ असुविधाएं रहती हैं तथा वायदे के अनुसार अन्य मुद्रण कार्य भी करने होते हैं उन सबसे समय निकाल कर इस ग्रन्थ को उन्होंने प्रकाशित किया और हमारी प्रतिष्ठा को बढ़ाया।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन का कार्य सबके सहयोग से हुआ है अतः प्रत्यक्ष व परोक्ष सभी महानुभावों का साधुवाद करता हूं भविष्य में भी इसी प्रकार सबका सहयोग मिलता रहेगा ऐसी कामना करता हूं।

विनम्र :
ब्र० धर्मचन्द्र शास्त्री
ज्योतिषाचार्य
(संघस्थ : आचार्य धर्मसागरजी महाराज)

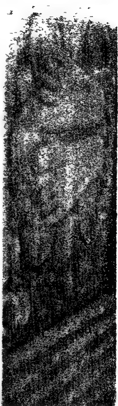




चरण-पादुका
स्व० क्षुल्लक श्री नेमीसागरजी
पचार वाले
कुचामन सिटी, पुरानी नशियांजी स्थित







चरण-पादुका
स्व० १०८ मुनि श्री सिद्धसागरजी महाराज
पचार वाले
मोहन बाड़ी, जयपुर स्थित

द्रव्य दाता





दानवीर सेठ श्री पूनमचन्दजी गंगवाल
झरिया प्रवासी
पचार (सीकर) राज०



श्रीमती कमलादेवी जैन
धर्मपत्नी श्री पूनमचन्दजी गंगवाल
पचार (सीकर) राज०

आदर्श जीवन के धनी

श्रीमान् पूनमचन्दजी सा० गंगवाल



श्रीमान् समाजरत्न दानवीर श्रेष्ठि श्री पूनमचन्दजी गगवाल पचार निवासी से जैन समाज का ऐसा कौनसा व्यक्ति है जो अपरिचित होगा आपका जन्म फाल्गुन शुक्ला १५ वि० सं० १६८५ में राजस्थान प्रान्त के अन्तर्गत सीकर जिले के सुप्रसिद्ध पचार नगर में जैन धर्म परायण श्रेष्ठिवर श्री नेमीचन्दजी सा० गगवाल की धर्मानुरागिनी धर्मपत्नी लादी बाई की कुक्षि से ऐसे परिवार में हुवा है, जो दान और त्याग में आदर्शमयी रहे हैं।

आपके पूज्य पितामह धर्मवत्सल देव शास्त्र गुरु उपासक श्रीमान् स्व० श्री गौरीलालजी साहब ने न्यायोपार्जित द्रव्य कमाते हुये धर्म ध्यान में समय व्यतीत किया और अन्त में परमपूज्य घोर तपस्वी आगम प्रवीण आचार्य कल्प श्री १०८ चन्द्रसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा लेकर आत्म कल्याण किया तथा जयपुर में समाधिमरण कर उत्तम गति को प्राप्त किया, जिनकी पावन स्मृति में श्रीमान् पूनमचन्दजी सा० ने मोहन बाड़ी जयपुर मे बहुत सुन्दर छतरी बनवाई है। इसीप्रकार आपके पूज्य पिता श्री नेमीचन्दजी सा० का भी पूर्ण धार्मिक जीवन रहा, वे भी पूर्ण धर्माचरण में समय व्यतीत करते थे—जिसप्रकार न्यायोपार्जित द्रव्य कमाने का लक्ष्य था उसीप्रकार दान और त्याग में भी आपकी पूर्ण अभिरुचि थी–आपने अपने सानिध्य में अनेक धार्मिक और लौकिक संस्थाओं की स्थापना की तथा अपने पिता श्री के पद चिह्नों पर चलते हुये गृह विरत हो क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर आत्म कल्याण का मार्ग अपनाया। आपकी पुण्य स्मृति में भी श्रीमान् श्रेष्ठिवर पूनमचन्दजी साहब ने कुचामन सिटी पुरानी नसियां में एक भव्य छतरी का निर्माण कराया है।

श्रीमान् सेठ पूनमचन्दजी ने कुचामन में शिक्षा प्राप्त की–आपने अपना व्यवसाय व्यापारिक क्षेत्र को चुना, १६ वर्ष की युवावस्था में आसाढ़ शुक्ला ६ सं० २००१ में कुचामन निवासी श्रीमान्

धर्मभूषण सेठ रिखबचन्दजी पहाड़िया की सुपुत्री श्रीमती कमला बाई के साथ आपका शुभ विवाह संस्कार होगया । आप व्यवसाय में लग गये—पति पत्नी दोनों पूर्ण धार्मिक वृत्ति के होने के कारण तीर्थ बंदना, मुनि संघों के दर्शन और जगह २ दान आदि में भी आपका विशेष उत्साह रहा । आपने बिहार में बहुत विशाल स्तर पर कोयला उद्योग प्रारंभ किया जो अब तक पूर्ण अभिवृद्धि के साथ चल रहा है धार्मिक भावनाओं से ओत प्रोत इस दम्पत्ति ने सादा जीवन उच्च विचार वाली कहावत को चरितार्थ करते हुए सदैव निरभिमानता के साथ धार्मिक कार्य किये हैं और कर रहे हैं आपको श्रमण संघों का पूरा २ आशीर्वाद रहा है । धर्म दिवाकर १०५ स्व० क्षुल्लक रत्न श्री सिद्धसागरजी महाराज के आप अनन्य भक्त रहे है उन्हीं की सद् प्रेरणा से श्री बाहुबली सहस्राब्दि समारोह पर श्री शांतिकुमारजी बडजात्या और श्री उम्मेदमलजी पांड्या (शांति रोडवेज) के परामर्श और सहयोग से एक हजार यात्रियों का २ माह का यात्रा संघ पूज्य क्षुल्लकजी महाराज के सानिध्य में पूर्ण सफलता के साथ निकाला जिसमें समस्त यात्रियों के मार्ग व्यय भोजनादि को सारी व्यवस्था उक्त श्रीमानों की ओर से थी—इस शताब्दी का यह एक ऐतिहासिक यात्रा संघ था इसमें भी जगह २ श्री पूनमचन्दजी ने यथेष्ट दान दिया और इसीप्रकार श्री शांतिकुमारजी कामदार तथा श्री उम्मेदमलजी पांड्या का योगदान रहा । श्रीमान् श्रेष्ठिवर श्री पूनमचन्दजी ने अपनी चचला लक्ष्मी का धार्मिक कार्यों में अधिक से अधिक उपयोग किया है और कर रहे हैं । श्री दि० जैन अतिशय क्षेत्र लूणवां में तो आप तन मन धन से पूरा २ सहयोग कर ही रहे हैं—साथ ही आपने श्री दि० जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी स्थित आदर्श महिला विद्यालय के अन्तर्गत मंदिर में काच का कलात्मक कार्य इतना सुन्दर कराया है जो दर्शनीय है । इसीप्रकार श्री दि० जैन अतिशय क्षेत्र तिजारा, पदमपुरा, सीकर देवीपुरा में, और अनेक क्षेत्रों में आपने कई कार्य कराये हैं श्री दि० जैन अतिशय क्षेत्र लूणवां में दि० १५-११-८० से २७-११-८० तक पूज्य क्षुल्लक श्री सिद्धसागरजी महाराज के सानिध्य मे श्री सिद्धचक्र विधान का विशाल आयोजन कर उसी मागलिक शुभावसर पर पीछे की दोनों वेदियो की वेदी प्रतिष्ठा रथयात्रादि महान कार्य कराये और भी अनेक स्थानों पर बड़े २ विधानादि आप कराते रहे हैं कई पंचकल्याणक प्रतिष्ठाओं में आपने सौधर्मेन्द्रादि पदो को भी प्राप्त किया है । आपके चारों भाई श्री ताराचन्दजी, प्रकाशचन्दजी, धरमचन्दजी, कैलाशचन्दजी और पूज्य रत्न श्री हसराजजी, गजराजजी, दिलीप-कुमारजी, प्रदीपकुमारजी, और ललितकुमारजी एवं दो पुत्रियां सौ० अंजनाकुमारी और सौ० मंजू-कुमारी भी आपके विचारानुसार धर्मानुरागी हैं ।

जिसप्रकार आपकी धार्मिक भावनाएँ हैं उसीप्रकार आपका साहित्य प्रकाशन में भी पूरा २ योगदान रहता है । आपने—मानव मार्गदर्शन के तृतीय चतुर्थ एवं स्वास्थ्य बोधामृत आदि अनेक साहित्य प्रकाशन में योग दान दिया है ।

स्व० १०८ मुनिश्री सिद्धसागरजी महाराज



पूर्व नाम : श्री गौरूलालजी गंगवाल

पचार (सीकर) राजस्थान

जन्म : पचार (सीकर)

समाधि : जयपुर

दीक्षागुरु : आ० क० चन्द्रसागरजी महाराज

स्व० १०५ क्षुल्लक श्री नेमीसागरजी महाराज



पूर्व नाम : श्री नेमीचन्दजी गंगवाल

पचार (सीकर) राजस्थान



समाधि : कुचामन सिटी

दीक्षागुरु : क्षु० सिद्धसागरजी, कुचामन सिटी

वर्तमान समय में इस वर्ष वि० सं० २०४२ का वर्षायोग परम पूज्य आचार्य शिरोमणि प्रातः स्मरणीय १०८ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के विशाल संघ का (जिसमें १२ मुनिराज और १८ आर्यिका माताजी हैं) श्री दि० जैन अतिशय क्षेत्र लूणवां में होरहा है। आपका सपरिवार पूरा २ सहयोग है—आहार दानादि देकर महान पुण्य बंध कर रहे हैं। श्रेष्ठिवर श्री पूनमचन्दजी सा० को समाज की ओर से दानवीर, समाजरत्न, गुरु भक्त आदि पदों से अलंकृत किया है। आपने सपत्नीक पर्यूषण पर्व के दश लक्षण उपवासोपरान्त उद्यापन के पुण्य अवसर पर शास्त्र दान स्वरूप इस साधु परिचय ग्रंथ का प्रकाशन कराया है। हम आपके दीर्घायु सुखी और धार्मिक जीवन की मंगल कामना करते हैं।

ब्र० धर्मचन्द्र शास्त्री
ज्योतिषाचार्य



दिगम्बर जैंन साधु परिचय



प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव

अनन्तानन्त आकाश में मध्य के ३४३ राजु प्रमाण पुरुषाकार लोकाकाश है। इसमें जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और काल ये द्रव्य पाये जाते है। यह लोक अकृत्रिम अनादिनिधन है। इसके तीन भेद है—अधोलोक, तिर्यग्लोक और ऊर्ध्वलोक। इस लोक के मध्य में तिर्यग्लोक में जम्बूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप और समुद्र एक दूसरे को वेष्टित किये हुए हैं। प्रारम्भ में एक लाख योजन विस्तृत जम्बूद्वीप है। उसको वेष्टित करके दो लाख योजन व्यास वाला लवण समुद्र है। इसके अनन्तर धातकीखंड द्वीप, कालोदधि समुद्र आदि द्वीप समुद्र दूने-दूने विस्तार वाले होते चले गये हैं अन्त में स्वयंभूरमण समुद्र है।

इस जम्बूद्वीप के बीच में एक लाख चालीस योजन ऊँचा और दस हजार योजन विस्तृत सुमेरु पर्वत है। अन्त में इसका अग्रभाग चार योजन मात्र रह गया है। इस जम्बूद्वीप में हिमवन, महाहिमवन, निषध, नील, रुक्मि और शिखरी ये छह पर्वत हैं। इनसे विभाजित भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत ये सात क्षेत्र हैं। सबसे प्रथम भरतक्षेत्र का विस्तार ५२६ ६/१९ योजन है आगे विदेह तक दूना-दूना होकर उससे आगे आधा-आधा होता गया है। विदेह के बीचोंबीच में मेरु पर्वत के होने से विदेह के पूर्व विदेह और पश्चिम विदेह ऐसे दो भेद एवं मेरु के दक्षिण में देवकुरु और उत्तर में उत्तर कुरु माने गये हैं।

भरत ऐरावत में कर्मभूमि, हैमवत और हैरण्यवत क्षेत्र में जघन्यभोग भूमि, हरि और रम्यक क्षेत्र में मध्यम भोग भूमि तथा देवकुरु और उत्तर कुरु में उत्तम भोगभूमि होती है। पूर्व विदेह एवं पश्चिम विदेह में शाश्वत कर्मभूमि की व्यवस्था है।

छह द्रव्य :—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छह द्रव्य हैं। इसमें जीव द्रव्य चेतन है बाकी पांच अचेतन हैं।

काल द्रव्य :—प्रत्येक द्रव्य में परिणमन के लिये निमित्त भूत वर्तना लक्षण काल द्रव्य है। समय, आवली, घड़ी, घंटा आदि व्यवहार काल की पर्यायें हैं। उस व्यवहार कालके दो भेद हैं—अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी। इन दोनों कालों के छह-छह भेद हैं। अवसर्पिणी के—सुषमा सुषमा, सुषमा, सुषमा दु:षमा, दु:षमा सुषमा, दु:षमा और दु:षमा दु:षमा। उत्सर्पिणी के—दु:षमा दु:षमा, दु:षमा, दु:षमा सुषमा, सुषमा दु:षमा, सुषमा और सुषमा सुषमा।

प्रथम सुषमा सुषमा काल :—चार कोड़ा कोड़ी सागर का, द्वितीय काल तीन कोड़ा कोड़ी सागर का, तृतीय काल दो कोड़ा कोड़ी सागर का, चतुर्थ काल ब्यालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ा कोड़ी सागर का, पंचम इक्कीस हजार वर्ष का और छठा इक्कीस हजार वर्ष का है। ऐसे अवसर्पिणी के दस कोड़ा कोड़ी एवं उत्सर्पिणी के दस कोड़ा कोडी मिलाकर बीस कोड़ा कोड़ी सागर का एक कल्प काल होता है। ये दोनों ही काल चक्रवत् चलते रहते हैं। यह काल परिवर्तन भरत और ऐरावत क्षेत्र के आर्य खण्ड में ही होता है, अन्यत्र नहीं।

भोगभूमि :—जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र के मध्य में आर्य खंड है। उसमें जब अवसर्पिणी का प्रथम काल चल रहा था तब यहाँ देवकुरु सदृश उत्तम भोगभूमि की व्यवस्था थी। मनुष्यों की आयु तीन पल्य, शरीर की ऊँचाई तीन कोस, वर्ण स्वर्ण सदृश था। वे भोगभूमिया मल, मूत्र, पसीने से रहित तीन दिन के बाद कल्पवृक्षों से बदरी फल बराबर भोजन ग्रहण करते थे। वहाँ दस प्रकार के कल्पवृक्ष थे—मद्यांग, तूर्यांग, भूषणांग, माल्यांग, ज्योतिरंग, दीपांग, गृहांग, भोजनांग पात्रांग और वस्त्रांग। ये अपने नाम के अनुसार इच्छित फल देने वाले थे। ये युगल ही जन्म लेते और युगल ही मरते हैं। आयु के अन्त मे पुरुष को जभाई, स्त्री को छींक आने से मरकर देवगति में चले जाते है।

क्रम से मनुष्यों का बल आयु घटते-घटते द्वितीय 'सुषमा' काल आता है इसमें मध्यम भोगभूमि की व्यवस्था रहती है। आयु दो पल्य, ऊँचाई दो कोस और वर्ण चन्द्र सदृश होता है। दो दिन बाद बहेड़े बराबर भोजन ग्रहण करते हैं।

क्रम से आयु बल के घटते-घटते तृतीय काल में जघन्य भोगभूमि रहती है। आयु एक पल्य, ऊँचाई एक कोस और शरीर वर्ण हरित होता है। ये एक दिन के अन्तर से आँवले बराबर भोजन लेते हैं।

कुलकरों की उत्पत्ति :

इस तृतीय काल में पल्य का आठवाँ भाग शेष रहने पर कल्पवृक्षों की सामर्थ्य घट जाने से, 'ज्योतिरंग' कल्पवृक्षों का प्रकाश अत्यन्त मन्द पड़ गया। किसी समय आषाढ़ सुदी पूर्णिमा के दिन सायंकाल में आकाश में पूर्वदिशा में उदित होता हुआ चन्द्र और पश्चिम दिशा में अस्त होता हुआ सूर्य दिखाई दिया। उस समय वहाँ सबसे अधिक तेजस्वी 'प्रतिश्रुति' नाम के कुलकर विद्यमान थे, उनकी आयु पल्य के दसवें भाग और ऊँचाई एक हजार आठ सौ धनुष थी। जन्मान्तर के संस्कार से उन्हें अवधिज्ञान प्रकट हो गया था। सूर्य चन्द्र को देखकर भयभीत हुए भोग भूमिज उनके पास आये तब उन्होंने कहा, हे भद्रपुरुषो ! ये सूर्य, चन्द्र, ग्रह, महाकांति वाले हमेशा आकाश में घूमते रहते हैं अभी तक इनका प्रकाश ज्योतिरंग कल्पवृक्ष से तिरोहित था, अब काल दोष से कल्पवृक्षों का प्रभाव मन्द पड़ने से ये दिखने लगे है तुम इनसे भय मत करो, प्रतिश्रुति कुलकर के इन वचनों को सुनकर सब लोग निर्भय हो गये और बहुत भक्ति से उनकी पूजा की।

इनके बाद क्रमसे असंख्यात करोड वर्षों का अन्तराल बीत जाने पर 'सन्मति' नामक कुलकर हुए। एक समय रात्रि मे तारागण दिखने लगे तब इन्होंने उनका भय दूर कर दिया। ऐसे ही 'क्षेमंकर' आदि कुलकर होते गये। तेरहवें कुलकर 'प्रसेनजित्' अपने माता-पिता से अकेले ही उत्पन्न हुए थे इनके पिता मरुदेव ने विवाह विधि से प्रधान कुल की कन्या से इनका विवाह किया था। अनन्तर अन्तिम चौदहवें कुलकर नाभिराज हुए, इन्होंने जन्मकाल में बालकों की नाल काटने की व्यवस्था की थी। ये सभी कुलकर अपने जातिस्मरण या अवधिज्ञान से प्रजा के हित का उपदेश देने से कुलकर और मनु आदि कहलाते थे। इनमें से आदि के पाँच कुलकरों ने प्रजा के अपराध में 'हा' इस दण्ड की व्यवस्था की थी। उनके आगे के पाँच कुलकरों ने 'हा' 'मा' इन दो दण्डों की व्यवस्था की और शेष कुलकरों ने 'हा' 'मा' और 'धिक्' ऐसे तीन दण्डों की व्यवस्था की थी।

इन नाभिराज के समय कालदोष से मेघ गर्जन, इन्द्रधनुष, जलवृष्टि आदि होने से अनेकों अंकुर, धान्य पैदा हो गये एवं कल्पवृक्षों का अभाव हो गया इससे व्याकुल हुई प्रजा महाराज नाभि-राज की शरण में आई—

हे नाथ ! मनवांछित फल देने वाले तथा कल्पान्त काल तक नहीं भुलाने के योग्य कल्पवृक्षों के बिना अब हम पुण्य हीन अनाथ लोग किस प्रकार जीवित रहें ? हे देव ! इनमें क्या

खाने योग्य है क्या नहीं ? इत्यादि प्रार्थना के अनन्तर श्री नाभिराज ने कहा कि डरो मत । अब कल्पवृक्ष के बाद ये वृक्ष तुम्हारा ऐसा ही उपकार करेंगे । ये विषवृक्ष हैं इनसे दूर रहो । ये इक्षु के पेड़ हैं इनका दाँतों से या यंत्रो से रस निकाल कर पीना चाहिए । उस समय प्रजा का हित करने से नाभिराज कल्प वृक्ष सदृश थे ।

पूर्वभव का वर्णन :

इसी जम्बूद्वीप में मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर विदेह क्षेत्र में एक 'गंधिल' नाम देश है । जो कि स्वर्ग के समान शोभायमान है । उस देश में हमेशा श्री जिनेन्द्र रूपी सूर्य उदय रहता है । इसीलिये वहाँ मिथ्यादृष्टियों का उद्‌भव कभी नही होता । इस देश के मध्य भाग में रजतमय एक विजयार्ध नाम का बड़ा भारी पर्वत है । उस विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी में एक अलका नाम की श्रेष्ठ पुरी है । उस अलकापुरी का राजा अतिबल नाम का विद्याधर था, जिसकी मनोहरा नाम की पतिव्रता रानी थी । उन दोनो के अतिशय भाग्यशाली 'महाबल' नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ ।

किसी समय भोगों से विरक्त हुए महाराज अतिबल ने राज्याभिषेक पूर्वक अपना समस्त राज्य महाबल पुत्र को सौप दिया और आप अनेक विद्याधरो के साथ वन में जाकर दीक्षा ले ली । महाबल राजा के चार मन्त्री थे जो महा बुद्धिमान, स्नेही और दीर्घदर्शी थे । उनके नाम—महामति, सभिन्नमति, शतमति और स्वयंबुद्ध थे । इनमें स्वयंबुद्ध सम्यग्दृष्टि शेष तीनों मिथ्यादृष्टि थे । किसी समय अपने जन्मगाँठ के उत्सव में राजा महाबल सिहासन पर विराजमान थे । उस समय अनेकों उत्सव, नृत्य, गान और विद्वद्‌गोष्ठियाँ हो रही थीं । अवसर पाकर स्वयबुद्ध मन्त्री ने स्वामी के हित की इच्छा से जैन धर्म का मार्मिक उपदेश दिया । उसके वचनों को सुनने के लिये असमर्थ भूतवादी महामति मन्त्री ने चार्वाक मत को सिद्ध करते हुए जीव तत्त्व का अभाव सिद्ध कर दिया । बौद्ध-मतानुयायी संभिन्नमति मन्त्री ने विज्ञानवाद का आश्रय लेकर जीव का अभाव करना चाहा, उसने कहा—ज्ञान ही मात्र तत्त्व है और सब भ्रममात्र है । इसके बाद शतमति मन्त्री ने शून्यवाद का अवलम्बन लेकर सकल जगत् को शून्यमात्र सिद्ध कर दिया ।

इन तीनों की बाते सुनकर स्वयंबुद्ध मन्त्री ने तीनों के एकान्त दुराग्रह को न्याय और आगम के द्वारा खण्डन करके सच्चे स्याद्वादमय अहिंसा धर्म की सिद्धि करके उन्हें निरुत्तर कर दिया और राजा को प्रसन्न कर लिया । इसके बाद किसी एक दिन स्वयंबुद्ध मन्त्री अकृत्रिम चैत्यालय को वन्दना के लिये सुमेरु पर्वत पर गया, वहाँ पहुँच कर उसने पहले प्रदक्षिणा दी फिर भक्तिपूर्वक बार-

बार नमस्कार किया और पूजा की। यथाक्रम से भद्रसाल आदि वन के समस्त अकृत्रिम प्रतिमाओं की वन्दना की और सौमनस वन के चैत्यालय में बैठ गया। इतने में ही विदेह क्षेत्र से आये हुए, आकाश में चलने वाले आदित्य गति और अरिंजय नाम के दो चारण मुनि अकस्मात् देखे, वे दोनों ही मुनि 'युगंधर' भगवान के समवसरणरूपी सरोवर के मुख्य हंस थे। मन्त्री ने उठकर उन्हें प्रदक्षिणा पूर्वक प्रणाम करके पूजा और स्तुति की अनन्तर प्रश्न किया—हे स्वामिन्! विद्याधर का राजा महाबल हमारा स्वामी है। वह भव्य है या अभव्य? मेरे द्वारा सन्मार्ग भी ग्रहण करेगा या नहीं? इस प्रश्न के बाद आदित्यगति नामक अवधिज्ञानी—मुनि कहने लगे हे भव्य! तुम्हारा स्वामी भव्य ही है। वह तुम्हारे वचनों पर विश्वास करेगा और आज से दसवें भव में जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में प्रथम तीर्थंकर होगा। इसके पूर्वभव को तुम सुनो—

जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर विदेह क्षेत्र में 'गंधिला' देश में सिंहपुर नगर है वहाँ के श्रीषेण राजा की सुन्दरी रानी से जय वर्मा और श्री वर्मा ऐसे दो पुत्र हुए थे। पिता ने योग्यता और स्नेह के निमित्त से छोटे पुत्र श्री वर्मा को राज्य दे दिया। तब जय वर्मा विरक्त होकर स्वयप्रभु गुरु से दीक्षा लेकर तपश्चरण करने लगा और किसी समय आकाश मार्ग में जाते हुए महीधर विद्याधर होने का निदान कर लिया। इतने मे ही सर्प के डसने से मरकर तुम्हारा स्वामी महाबल हुआ है। आज रात्रि में उसने दो स्वप्न देखे हैं; तुम जाकर उनका फल कहकर उसके पूर्व भव सुनाओ। [उसका कल्याण होनेवाला है]

गुरु के वचन से मन्त्री वहाँ आकर बोले—राजन्! आपने जो स्वप्न देखा है कि तीनों मन्त्रियों ने कीचड में डाल दिया और मैंने उठाकर सिंहासन पर बैठाया सो यह मिथ्यात्व के कुफल से आप निकलकर जिनधर्म में आ गये हैं। दूसरे स्वप्न में जो आपने अग्नि की ज्वाला क्षीण होते देखी उसका फल आपकी आयु एक माह की शेष रही है। आप इस भव में तीर्थंकर होंगे इत्यादि। सारी बातें सुना दी मन्त्री ने। राजा महाबल ने भी अपने पुत्र अतिबल को राज्य भार सौंपकर सिद्धकूट चैत्यालय में जाकर सिद्ध प्रतिमाओं की पूजा करके गुरु की साक्षी पूर्वक जीवन पर्यन्त के लिये चतुराहार त्याग कर सल्लेखना धारण कर ली और धर्मध्यान पूर्वक मरण करके ऐशान स्वर्ग के श्रीप्रभ विमान में ललितांग नाम का उत्तम देव हो गया। जब उसकी आयु पृथक्त्व पल्य के बराबर रह गयी तब उसे स्वयंप्रभ नाम की एक और देवी प्राप्त हुई। अन्य देवियों की अपेक्षा ललितांग देव को यह देवी विशेष प्यारी थी। जब उस देव की माला आदि मुरझाई तब मृत्यु निकट जानकर शोक करते हुए इसको अनेकों देवों ने सम्बोधन किया जिसके फलस्वरूप इस देव ने पन्द्रह दिन तक जिन चैत्यालयों की पूजा की और अच्युत स्वर्ग की जिन प्रतिमाओं की पूजा करके वहीं पर चैत्यवृक्ष के

नीचे बैठकर उच्चस्वर से महामन्त्र का उच्चारण करते हुए सल्लेखना से मरण को प्राप्त हो गया।

जम्बूद्वीप के महामेरु से पूर्व की ओर विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती देश है उसके उत्पलखेटक नगर के राजा वज्रबाहु और रानी वसुंधरा से वह ललितांग देव 'वज्रजंघ' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। उधर अपने पति के अभाव मे वह पतिव्रता स्वयंप्रभा छह महीने तक बराबर जिनपूजा में तत्पर रही। पश्चात् सौमनस वन सम्बन्धी पूर्व दिशा के जिन मन्दिर में चैत्यवृक्ष के नीचे पंचपरमेष्ठी का स्मरण करते हुए समाधिपूर्वक प्राण त्याग दिये, और विदेह क्षेत्र की पुंडरीकिणी नगरी के राजा वज्रदन्त की महारानी लक्ष्मीमती से 'श्रीमती' नाम की कन्या उत्पन्न हो गयी। कालान्तर में निमित्तवश इस वज्रजंघ और श्रीमती का विवाह हो गया। इनके उन्चास युगल पुत्र उत्पन्न हुए अर्थात् अट्ठानवे पुत्र उत्पन्न हुए। किसी समय वे अपने बाबा के साथ दीक्षित हो गये।

किसी समय श्रीमती के पिता चक्रवर्ती वज्रदन्त ने छोटे से पोते पुंडरीक को राज्याभिषेक कर दिया और विरक्त होकर दीक्षा ले ली। उस समय लक्ष्मीमती माता ने अपनी पुत्री और जमाई को बुलाया। ये दोनो वैभव के साथ पुंडरीकिणी नगरी की ओर आ रहे थे। मार्ग में किसी वन में पड़ाव डाला। वहाँ पर आकाश मे गमन करनेवाले श्रीमान् दमधर और सागरसेन मुनि युगल वज्रजंघ के पड़ाव मे पधारे। उन दोनों ने वन मे ही आहार लेने की प्रतिज्ञा ली थी। वहाँ वज्रजंघ ने श्रीमती सहित भक्ति से नवधाभक्ति सहित विधिवत् आहार दान दिया और पंचाश्चर्य को प्राप्त हुए। अनन्तर उन्हे कचुकी से विदित हुआ कि ये दोनो मुनि हमारे ही अन्तिम पुत्र युगल हैं। राजा वज्रजंघ और श्रीमती ने उनसे अपने पूर्वभव सुने और धर्म के मर्म को भी समझा। अनन्तर पास में बैठे हुए नकुल, सिंह, वानर और सुअर के पूर्व भव सुने। उन मुनियों ने यह भी बताया कि आप आठवें भव में वृषभ तीर्थंकर होवोगे और श्रीमती का जीव राजा श्रेयासकुमार होंगे।

किसी समय वज्रजंघ महाराज रानी सहित अपने शयनागार में सोये हुए थे उसमें नौकरों ने कृष्णअगुरु आदि से निर्मित धूप खेई थी और वे नौकर रात में खिड़कियाँ खोलना भूल गये, जिसके निमित्त धुएँ से कण्ठ रुंधकर वे पति पत्नी दोनों ही मृत्यु को प्राप्त हो गये। आश्चर्य है कि भोग सामग्री प्राणघातक बन गयी। वे दोनों दान के प्रभाव से मरकर उत्तर कुरु नामक उत्तम भोगभूमि में भोगभूमियाँ हो गये। वे नकुल आदि भी दान की अनुमोदना से भोग भूमि को प्राप्त हो गये।

किसी समय दो चारण मुनि आकाश मार्ग से वहाँ भोग भूमि में उतरे और इन वज्रजंघ आर्य और श्रीमती आर्या को सम्यग्दर्शन का उपदेश देने लगे। ज्येष्ठ मुनि बोले, हे आर्य ! तुम मुझे

स्वयंबुद्ध मन्त्री का जीव समझो। मैंने तुम्हें महाबल पर्याय में जैन धर्म ग्रहण कराया था। उन दोनों दम्पत्तियों ने मुनियों के प्रसाद से सम्यग्दर्शन ग्रहण किया और आयु के अन्त में च्युत होकर ईशान स्वर्ग में 'श्रीधर' देव और स्वयंप्रभ नाम के देव हुए। अर्थात् श्रीमती का जीव सम्यक्त्व के प्रभाव से स्त्री पर्याय छोड़कर देव पद को प्राप्त हो गया। एक दिन श्रीधर देव ने अपने गुरु (स्वयंबुद्ध मन्त्री के जीव) प्रीतिकर मुनिराज के समवसरण में जाकर पूछा—भगवन्! मेरे महाबल के भव में जो तीन मन्त्री थे वे इस समय कहाँ हैं? भगवान् ने बताया कि उन तीनों में से महामति और सम्भिन्नमति ये दो तो निगोद स्थान को प्राप्त हुए हैं और शतमति नरक गया है। तब श्रीधरदेव ने नरक में जाकर शतमति के जीव को सम्बोधित किया था तथा निगोद के जीवों को सम्बोधन का सवाल ही नही है।

जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह मे महावत्स देश है उसकी सुसीमा नगरी के सुदृष्टि राजा की सुन्दरनन्दा रानी से वह श्रीधर देव स्वर्ग से च्युत होकर 'सुविधि' नाम का पुत्र हुआ था। कालांतर में सुविधि की रानी मनोरमा से स्वयप्रभ देव (श्रीमती का जीव) स्वर्ग से च्युत होकर केशव नाम का पुत्र हो गया, मतलब वज्रजघ का जीव सुविधि राजा हुआ और श्रीमती का जीव उसका पुत्र हुआ है।

कदाचित् सुविधि महाराज दैगम्बरी दीक्षा लेकर अन्त में मरकर अच्युतेन्द्र हुए और केशव ने भी निर्ग्रन्थ दीक्षा लेकर अच्युत स्वर्ग में प्रतीन्द्र पद प्राप्त किया।

वह अच्युतेन्द्र, जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह में पुष्कलावती देश की पुंडरीकिणी नगरी में वज्रसेन राजा और श्रीकान्ता रानी से वज्रनाभि नाम का चक्रवर्ती पुत्र उत्पन्न हुआ। श्रीमती का जीव केशव जो कि अच्युत स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुआ था वह भी वहाँ से च्युत होकर इसी नगरी में कुबेरदत्तवणिक की अनन्तमती पत्नी से धनदेव नाम का पुत्र हुआ। वज्रनाभि के पिता तीर्थंकर थे और वह स्वयं चक्रवर्ती था, चक्ररत्न से षटखंड वसुधा को जीतकर चिरकाल तक साम्राज्य सुख का अनुभव किया। किसी समय पिता से दुर्लभ रत्नत्रय के स्वरूप को समझकर अपने पुत्र वज्रदन्त को राज्य समर्पण कर सोलह हजार मुकुटबद्ध राजाओं, एक हजार पुत्रों, आठ भाइयों और धनदेव के साथ-साथ पिता वज्रसेन तीर्थंकर के समवसरण में जिन दीक्षा धारण कर ली और किसी समय तीर्थंकर के ही निकट सोलह कारण भावनाओं का चिन्तवन करते हुए तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध कर लिया। ध्यान की विशुद्धि से ग्यारहवें गुणस्थान में पहुंच गये और वहाँ का अन्तर्मुहूर्त काल पूर्ण कर नीचे उतरे, पुनरपि कदाचित् उपशम श्रेणी में चढ़ गये और वहाँ आयु समाप्त होते ही मरण कर सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हो गये।

वृषभदेव का गर्भावतार

भगवान् के गर्भ में आने के छह महीने पहले इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने माता के आंगन में साढ़े सात करोड़ रत्नों की वर्षा की थी। किसी दिन रात्रि के पिछले प्रहर में रानी मरुदेवी ने ऐरावत हाथी, शुभ्र बैल, हाथियों द्वारा स्वर्ण घंटों से अभिषिक्त लक्ष्मी, पुष्पमाला आदि सोलह स्वप्न देखे। प्रातः पतिदेव से स्वप्न का फल सुनकर अत्यन्त हर्षित हुई। उस समय अवसर्पिणी काल के सुषमा दुःषमा नामक तृतीय काल में चौरासी लाखपूर्व तीन वर्ष, आठ मास और एक पक्ष शेष रहने पर आषाढ़ कृष्ण द्वितीया के दिन उत्तराषाढ़ नक्षत्र मे वज्रनाभि अहमिन्द्र देवायु का अन्त होनेपर सर्वार्थसिद्धि विमान से च्युत होकर मरुदेवी के गर्भ में अवतीर्ण हुए। उस समय इन्द्र ने आकर गर्भ-कल्याणक महोत्सव मनाया। इन्द्र की आज्ञा से श्री, ह्री आदि देवियाँ और दिक्कुमारियाँ माता की सेवा करते हुए काव्यगोष्ठी, सैद्धान्तिक चर्चाओं से और गूढ़ प्रश्नों से माता का मन अनुरंजित करने लगी।

वृषभदेव का जन्म महोत्सव :

नव महीने व्यतीत होने पर माता मरुदेवी ने चैत्र कृष्ण नवमी के दिन सूर्योदय के समय मति-श्रुत-अवधि इन तीनों ज्ञान से सहित भगवान् को जन्म दिया। सारे विश्व में हर्ष की लहर दौड़ गई। इन्द्रों के आसन कम्पित होने से, कल्प वृक्षों से पुष्प वृष्टि होने से एवं चतुर्निकाय देवों के यहाँ घंटा ध्वनि, शंखनादि आदि बाजों के बजने से भगवान् का जन्म हुआ है ऐसा समझकर सौधर्म इन्द्र, इन्द्राणी सहित ऐरावत हाथी पर चढ़कर नगर की प्रदक्षिणा करके भगवान् को सुमेरु पर्वत पर ले जाकर १००८ कलशों से क्षीरसमुद्र के जल से भगवान् का जन्माभिषेक किया। अनन्तर वस्त्राभरणों से अलंकृत करके 'वृषभदेव' यह नाम रखा। इन्द्र अयोध्या में वापस आकर स्तुति, पूजा, तांडव नृत्य आदि करके वापस स्वस्थान को चले गये।

वृषभदेव का विवाहोत्सव :

भगवान् के युवावस्था में प्रवेश करने पर महाराजा नाभिराज ने बड़े ही आदर से भगवान् की स्वीकृति प्राप्त कर इन्द्र की अनुमति से कच्छ, सुकच्छ राजाओं की बहन 'यशस्वती' 'सुनन्दा' के साथ श्री वृषभदेव का विवाह सम्बन्ध कर दिया।

भरत चक्रवर्ती आदि का जन्म :

यशस्वती देवी ने चैत्र कृष्ण नवमी के दिन भरत चक्रवर्ती को जन्म दिया, तथा क्रमशः निन्यान्वें पुत्र एव ब्राह्मी कन्या को जन्म दिया। दूसरी सुनन्दा महादेवी ने कामदेव भगवान् बाहुबली

और सुन्दरी नाम की कन्या को जन्म दिया। इस प्रकार एक सौ तीन पुत्र, पुत्रियों सहित भगवान वृषभदेव, देवों द्वारा लाये गये भोग पदार्थों का अनुभव करते हुए गृहस्थ जीवन व्यतीत कर रहे थे।

भगवान द्वारा पुत्र पुत्रियों का विद्याध्ययन :

भगवान वृषभदेव त्रिज्ञानधारी होने से स्वयं गुरु थे। किसी समय भगवान ब्राह्मी सुन्दरी को गोद में लेकर उन्हें आशीर्वाद देकर चित्त में स्थित श्रुतदेवता को सुवर्णपट्ट पर स्थापित कर 'सिद्धं नमः' मंगलाचरणपूर्वक दाहिने हाथ से 'अ आ' आदि वर्णमाला लिखकर ब्राह्मी कुमारी को लिपि लिखने का एवं बाये हाथ से सुन्दरी को अनुक्रम के द्वारा इकाई, दहाई आदि अंक विद्या को लिखने का उपदेश दिया था। इसी प्रकार भगवान ने अपने भरत, बाहुबली आदि सभी पुत्रों को सभी विद्याओं का अध्ययन कराया था।

असि मषि आदि षट् क्रियाओं का उपदेश :

काल प्रभाव से कल्पवृक्षों के शक्तिहीन हो जाने पर एवं बिना बोये धान्य के भी विरल हो जाने पर व्याकुल हुई प्रजा नाभिराज के पास गई। अनन्तर नाभिराज की आज्ञा से प्रजा भगवान वृषभदेव के पास आकर रक्षा की प्रार्थना करने लगी।

प्रजा के दीन वचन सुनकर भगवान आदिनाथ अपने मन मे सोचने लगे कि पूर्व-पश्चिम विदेह में जो स्थिति वर्तमान है वही स्थिति आज यहाँ प्रवृत्त करने योग्य है। उसीसे यह प्रजा जीवित रह सकती है। वहाँ जैसे असि, मषि आदि षट् कर्म हैं, क्षत्रिय आदि वर्ण व्यवस्था, ग्राम नगर आदि की रचना है वैसे ही यहाँ भी होना चाहिये। अनन्तर भगवान ने इन्द्र का स्मरण किया और स्मरण मात्र से इन्द्र ने आकर अयोध्यापुरी के बीच में जिनमन्दिर की रचना करके चारों दिशाओं में जिनमन्दिर बनाये। कौशल, अंग, वंग आदि देश, नगर बनाकर प्रजा को बसाकर प्रभु की आज्ञा से इन्द्र स्वर्ग को चला गया। भगवान ने प्रजा को असि, मषि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प इन छह कर्मों का उपदेश दिया। उस समय भगवान सरागी थे। क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन तीन वर्णों की स्थापना को और अनेकों पाप रहित आजीविका के उपाय बताये। इसीलिये भगवान युगादि पुरुष, ब्रह्मा, विश्वकर्मा, स्रष्टा, कृतयुग विधाता और प्रजापति आदि कहलाये। उस समय इन्द्र ने भगवान का साम्राज्य पद पर अभिषेक कर दिया।

भगवान का वैराग्य और दीक्षा महोत्सव :

किसी समय सभा में नीलांजना के नृत्य को देखते हुए बीच में उसकी आयु के समाप्त होने से भगवान को वैराग्य हो गया। भगवान ने भरत का राज्याभिषेक करके इस पृथ्वी को भारत' इस नाम से सनाथ किया और बाहुबली को युवराज पद पर स्थापित किया। भगवान महाराज नाभिराज आदि को पूछकर इन्द्र द्वारा लाई गई 'सुदर्शना' नामक पालकी पर आरूढ़ होकर 'सिद्धार्थक' वन में पहुंचे। और 'ॐ नमः सिद्धेभ्यः' मन्त्र का उच्चारण कर पंचमुष्टि केशलोंच करके सर्व परिग्रह रहित मुनि हो गये। उस स्थान की इन्द्रों ने पूजा की थी इसीलिये उसका 'प्रयाग' यह नाम प्रसिद्ध हो गया। उसी समय भगवान ने छह महीने का योग ले लिया। भगवान के साथ आये हुए चार हजार राजाओं ने भी भक्तिवश नग्न मुद्रा धारण कर ली।

पाखंड मत की उत्पत्ति :

भगवान के साथ दीक्षित हुए राजा लोग दो-तीन महीने में ही क्षुधा तृषा आदि से पीड़ित होकर अपने हाथ से वन के फल आदि ग्रहण करने लगे इस क्रिया को देख वन देवताओं ने कहा कि मूर्खो! यह दिगम्बर वेष सर्वश्रेष्ठ अरहंत, चक्रवर्ती आदि के द्वारा धारण करने योग्य है। तुम लोग इस वेष मे अनर्गल, प्रवृत्ति मत करो। यह सुनकर वे लोग भ्रष्ट तपस्वियों के अनेकों रूप बना लिये, वरकल, चीवर, जटा, दण्ड आदि धारण करके वे परिव्राजक आदि बन गये। भगवान वृषभदेव का पौत्र मरीचिकुमार इनमे अग्रणी गुरु परिव्राजक बन गया। ये कुमार आगे चलकर अन्तिम तीर्थकर महावीर हुए है।

भगवान का आहार ग्रहण :

जगद्गुरु भगवान छह महीने बाद आहार को निकले परन्तु चर्याविधि किसी को मालूम न होंने से छह माह और व्यतीत हो गये एक वर्ष बाद भगवान कुरुजांगल देश के हस्तिनापुर नगर में पहुचे। भगवान को आते देख राजा श्रेयास को पूर्व भव के स्मरण हो जाने से राजा सोमप्रभ और श्रेयासकुमार दोनों भाइयों ने विधिवत् पड़गाहन आदि करके नवधाभक्ति से भगवान को इक्षुरस का आहार दिया। वह दिन वैशाख शुक्ला तृतीया का था जो आज भी 'अक्षयतृतीया' के नाम से प्रसिद्ध है।

भगवान को केवलज्ञान की प्राप्ति :

हजार वर्ष तपश्चरण करते हुए भगवान को फाल्गुन कृष्णा एकादशी के दिन केवलज्ञान प्रकट हो गया। इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने बारह योजन प्रमाण समवसरण की रचना की। समवसरण में बारह सभाओं में क्रम से १. सप्त ऋषि समन्वित गणधर देव और मुनिजन, २. कल्पवासी देवियाँ, ३. आर्यिकायें और श्राविकायें, ४. भवनवासी देवियाँ, ५ व्यन्तर देवियाँ, ६ ज्योतिष्क देवियाँ, ७. भवनवासी देव, ८. व्यन्तर देव, ९. ज्योतिष्क देव, १०. कल्पवासी देव, ११ मनुष्य और १२. तिर्यंच ये बैठकर उपदेश सुनते थे। पुरिमताल नगर के राजा श्री वृषभदेव भगवान के पुत्र वृषभसेन प्रथम गणधर हुए। ब्राह्मी भी आर्यिका दीक्षा लेकर आर्यिकाओं में गणनी हो गयी। भगवान के समवशरण में ८४ गणधर, ८४००० मुनि, ३५०००० आर्यिकायें, ३००००० श्रावक, ५००००० श्राविकायें, असंख्यात देव देवियाँ और संख्यातों तिर्यंच उपदेश सुनते थे।

वृषभदेव का निर्वाण :

जब भगवान की आयु चौदह दिन शेष रही तब कैलाश पर्वत पर जाकर योगों का निरोध कर माघ कृष्णा चतुर्दशी के दिन सूर्योदय के समय भगवान पूर्व दिशा की ओर मुँह करके अनेक मुनियों के साथ सर्वकर्मों का नाश कर एक समय में सिद्ध लोक में जाकर विराजमान हो गये। उसी क्षण इन्द्रों ने आकर भगवान का निर्वाण कल्याणक महोत्सव मनाया था, ऐसे ऋषभ जिनेन्द्र सदैव हमारी रक्षा करें।

भगवान के मोक्ष जाने के बाद तीन वर्ष आठ माह और एक पक्ष व्यतीत हो जाने पर चतुर्थ काल प्रवेश करता है।



चौबीसवें तीर्थंकर

महावीर

सब द्वीपों के मध्यमें रहने वाले इस जम्बू द्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में सीता नदी के उत्तर किनारे पर पुष्कलावती नामका देश है, उसको पुण्डरीकिणी नगरी में एक मधु नाम का वन है। उसमें पुरुरवा नाम का एक भीलों का राजा रहता है। उसको कालिका नाम की स्त्री थी। किसी एक दिन दिग्भ्रम हो जाने के कारण सागरसेन नाम के मुनिराज उस वन में इधर उधर भ्रमण कर रहे थे। उन्हे देख, पुरुरवा भील मृग समझ कर उन्हें मारने को उद्यत हुआ परन्तु उसकी स्त्री ने यह कह कर मना कर दिया कि 'ये वन के देवता घूम रहे हैं इन्हे मत मारो'। उस पुरुरवा भील ने उसी समय प्रसन्न चित्त होकर मुनिराज के पास जाकर नमस्कार किया और गुरु के उपदेश से मद्य, मांस, मधु इन तीनों का त्याग कर जीवन पर्यन्त व्रत का पालन कर आयु के अन्त में सौधर्म स्वर्ग में एक सागर की आयु वाला देव हो गया।

इसी भरत क्षेत्र के अयोध्या के प्रथम चक्रवर्ती राजा भरत की अनन्तमती रानी से पुरुरवा भील का जीव मरीचि नाम का ज्येष्ठ पुत्र उत्पन्न हुआ। अपने बाबा भगवान वृषभ देव की दीक्षा के समय स्वयं ही गुरुभक्ति से प्रेरित हो मरीचि कुमार ने कच्छ आदि चार हजार राजाओं के साथ दीक्षा धारण कर ली थी। भगवान के छह महीने के योग के समय आहार की विधि से अनभिज्ञ ये सभी साधु क्षुधा, तृषा आदि परीषहों से भ्रष्ट होकर स्वयं तालाब का जल, वन के फल फूल ग्रहण करके खाने लगे। यह देख वन देवताओं ने कहा कि निर्ग्रन्थ वेष धारण करने वाले मुनियों का यह क्रम नही है। यदि तुम्हें ऐसी प्रवृत्ति करना है तो इच्छानुसार दूसरा वेष ग्रहण करो। मिथ्यात्व से प्रेरित मरीचि ने इन वचनों को सुनकर सबसे पहले परिव्राजक दीक्षा धारण कर ली।

जब वृषभ देव को केवलज्ञान प्राप्त हो गया तब समवसरण में सभी भ्रष्ट हुए साधुओं ने पुनः दीक्षा धारण करके आत्म कल्याण कर लिया। किन्तु यह अकेले मरीचि ने तीर्थंकर की दिव्य

ध्वनि को सुनकर भी सच्चा धर्म ग्रहण नहीं किया। वह सोचता था कि जैसे भगवान वृषभ देव ने समस्त परिग्रह का त्याग कर तीन लोक में मोक्ष उत्पन्न करने वाली सामर्थ्य प्राप्त की है उसी प्रकार मैं भी अपने द्वारा चलाये गये दूसरे मत की व्यवस्था करके इन्द्र द्वारा की गई पूजा को प्राप्त करूँगा। इस प्रकार मान कषाय से कल्पित तत्त्व का उपदेश करते हुए आयु के अन्त में मरकर ब्रह्म स्वर्ग में देव हो गया। वहाँ से च्युत हो अयोध्या नगरी के कपिल ब्राह्मण की काली स्त्री से जटिल नाम का पुत्र हुआ। परिव्राजक के मत में स्थित होकर पुनः मरकर सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। वहाँ से च्युत होकर भरत क्षेत्र के स्थूणागार नगर मे भारद्वाज ब्राह्मण की पुष्पदत्ता स्त्री से पुष्पमित्र नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। वहाँ भी संस्कार वश परिव्राजक बनकर प्रकृति पुरुष आदि पच्चीस तत्त्वों का उपदेश देकर आयु के अन्त में मरकर सौधर्म स्वर्ग में एक सागर आयु वाला देव हुआ। वहाँ से आकर इसी भरत क्षेत्र के सूतिका नामक गांव मे अग्निभूत ब्राह्मण की गौतमी स्त्री से अग्निसह नाम का पुत्र हुआ। वहाँ भी मिथ्या पाखण्डी साधु होकर मरकर स्वर्ग प्राप्त किया। वहाँ से आकर इसी भरत क्षेत्र के मन्दिर नामक ग्राम में गौतम ब्राह्मण की कौशिकी ब्राह्मणी से अग्नि मित्र नाम का पुत्र हुआ। वहाँ भी उसने वही पारिव्राजक दीक्षा धारण कर महेन्द्र स्वर्ग को प्राप्त किया। फिर वहाँ से च्युत होकर मन्दिर नामक नगर में शालंकायन ब्राह्मण की मन्दिरा स्त्री से भारद्वाज नाम का पुत्र हुआ। वहाँ वह त्रिदण्ड से सुशोभित त्रिदण्डी साधु बना तदनंतर माहेन्द्र स्वर्ग को प्राप्त किया।

फिर वहाँ से च्युत होकर कुमार्ग के प्रगट करने के फलस्वरूप मिथ्यात्व के निमित्त से समस्त अधोगतियो में जन्म लेकर उसने भारी दुःख भोगे। इस प्रकार त्रस स्थावर योनियों में असंख्यातवर्ष तक परिभ्रमण करता हुआ बहुत ही श्रांत हो गया।

अन्यत्र लिखा है कि "भारद्वाज ब्राह्मण त्रिदण्डी साघु होकर माहेन्द्र स्वर्ग को प्राप्त हुआ पश्चात् वहाँ से च्युत होकर मिथ्यात्व के प्रभाव से इतर निगोद में चला गया वहाँ सागरोपम काल व्यतीत हो गया। अनन्तर अनेकों भव धारण किए उनकी गणना इस प्रकार है—

अढ़ाई हजार आकवृक्ष के भव।	अस्सी हजार सीप के भव।
बीस हजार नीम वृक्ष के भव।	नब्बे हजार केलि वृक्ष के भव।
तीन हजार चन्दन वृक्ष के भव।	पाँच करोड़ कनेर के भव।
साठ हजार वेश्या के भव।	पाँच करोड़ शिकारी के भव।
बीस करोड़ हाथी के भव।	साठ करोड़ गधा के भव।

तीस करोड़ श्वान के भव । साठ लाख नपुंसक के भव ।

बीस करोड़ नारी के भव । नब्बे लाख धोबी के भव ।

आठ करोड़ घोड़ा के भव । बीस करोड़ बिल्ली के भव ।

साठ लाख बार माता के गर्भ से असमय में मरण अर्थात् गर्भपात ।

पचास हजार राजा के भव

इस प्रकार अनेकों भव धारण करते हुए कभी सुपात्र दान के प्रभाव से यह जीव भोगभूमि में गया । अस्सी लाख बार देव पद को प्राप्त हुआ इसलिए आचार्य कहते है कि यह मिथ्यात्व बहुत ही बुरा है, तीन लोक और तीन काल में इससे बढ़कर और कोई भी इस जीव का शत्रु नहीं है । बुद्धिमान पुरुषों का कथन है कि यदि मिथ्यात्व और हिंसादि पापो की तुलना की जावे तो मेरु और राई के समान अंतर मालूम होगा ।

इसके बाद कदाचित् यही जीव कुछ पाप के मन्द होने से राजगृह नगर में स्थावर नाम का ब्राह्मण हो गया ।

तदनन्तर मगध देश के इसी राजगृह नगर में वेद पारंगत शांडिल्य नामक ब्राह्मण को पारशरी ब्राह्मणी से 'स्थावर' नाम का पुत्र हुआ, वह भी वेद पारंगत सम्यक्त्व से शून्य पुनरपि परिव्राजक के मत को धारण कर अन्त में मर कर माहेन्द्र स्वर्ग में सात सागर की आयु वाला देव हो गया । वहाँ से च्युत होकर इसी राजगृह नगर मे विश्वभूति राजा की जैनी नामक रानी से विश्वनन्दी नाम का पुत्र हो गया । इसी विश्वभूति राजा का छोटा भाई विशाखभूति था, उसका पुत्र विशाखनन्दी नाम का था । एक दिन विश्वभूति राजा विरक्त हो अपने छोटे भाई को राज्य पद एव पुत्र विश्वनन्दी को युवराज पद देकर जैनी दीक्षा लेकर कठिन तप करने लगे ।

किसी दिन विश्वनन्दी युवराज के मनोहर नामक बगीचे को देखकर चाचा के पुत्र विशाखनन्दि ने अपने पिता से उसकी याचना की । विशाखभूति राजा ने भी मायाचारी से विश्वनन्दी को शत्रुओं पर आक्रमण के लिए भेज कर उद्यान को अपने पुत्र को दे दिया । विश्वनन्दी को इस घटना का पता लगते ही उसने वापस आकर विशाखनन्दि को पराजित कर दिया और उसको भयभीत देख विरक्त होकर उसको उद्यान सौंपकर आप स्वय दैगम्बरी दीक्षा लेकर तप करने लगा ।

घोर तपश्चरण करते हुए अत्यन्त कृश शरीरी वह विश्वनन्दी मुनिराज एक दिन मथुरा नगरी मे आहार के लिए आए । व्यसनों से भ्रष्ट यह विशाखनदी उस समय किसी राजा का दूत

बनकर वहाँ आया था। और एक वेश्या की छत पर बैठा मुनि को देख रहा था। दैवयोग से वहाँ एक गाय ने मुनिराज को धक्का देकर गिरा दिया। उन्हें गिरता देख, क्रोधित हुआ विशाखनन्दि बोला कि 'तुम्हारा जो पराक्रम हमें मारने को पत्थर का खंभा तोड़ते समय देखा गया था वह अब आज कहाँ गया ?' इस प्रकार खोटे वाक्यों को सुनकर मुनिराज के मन में भी क्रोध आ गया और बोले कि इस हँसी का फल तुझे अवश्य ही मिलेगा। अन्त में निदान सहित सन्यास से मरण कर महाशुक्र स्वर्ग में देव हुए और विशाखभूति चाचा का जीव भी तप करके वही पर देव हुआ। चिरकाल तक सुख भोग कर वे दोनों वहाँ से च्युत होकर सुरम्य देश के पोदनपुर नगर में प्रजापति महाराज की जयावती रानी से विशाखभूति का जीव 'विजय' नाम का बलभद्र पदवी धारक पुत्र हुआ, और उन्हीं की दूसरी मृगावती रानी से विश्वनन्दी का जीव, नारायण पद धारक त्रिपृष्ठ नाम का पुत्र हुआ। एवं विशाखनंदी का जीव चिरकाल तक संसार मे परिभ्रमण कर विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी के अलकापुर नगर मे मयूरग्रीव विद्याधर की नीलाञ्जना रानी से अश्वग्रीव नाम का प्रतिनारायण पद का धारक पुत्र हुआ। पूर्व जन्म के सस्कार से त्रिपृष्ठ नारायण ने अश्वग्रीव प्रतिनारायण को मारकर चक्ररत्न प्राप्त किया। चिरकाल तक राज्य सुख भोगकर अन्त में भोगासक्ति से मरकर सातवे नरक को प्राप्त किया। वहाँ के दुःखो को सागरों पर्यन्त सहकर, इसी भरत क्षेत्र के गंगा नदी तट के समीपवर्ती वन मे सिहगिरि पर्वत पर सिह हुआ। वहाँ भी तीव्र पाप से पुनः प्रथम नरक को प्राप्त किया। वहाँ एक सागर तक दुःख भोगकर जंबू द्वीप में सिहकूट की पूर्व दिशा में हिमवन पर्वत के शिखर पर सिंह हो गया। किसी समय एक हरिण को पकड़ कर मार कर खा रहा था, उसी समय अतिशय दयालु अजितंजय नामक चारण मुनि अमितगुण नामक मुनिराज के साथ आकाश मे जा रहे थे। वे उस सिंह को देखकर तीर्थंकर के वचन स्मरण कर दया वश वहाँ उतर कर सिह के पास जाकर शिलातल पर बैठ गये और जोर-जोर से धर्ममय वचन कहने लगे। उन्होंने कहा हे भव्य मृगराज ! तूने त्रिपृष्ठ नारायण के भव में स्वच्छन्दतापूर्वक पाँच इन्द्रियों के विषयों का अनुभव कर उसके फलस्वरूप नरक में जाकर चिरकाल तक घोर दुःखों का अनुभव किया है। आयु समाप्त कर वहाँ से निकल कर सिंह हुआ और वहाँ भी भूख प्यास आदि की बाधाओं से अत्यन्त दुःखी हुआ, वहाँ तूने प्राणी हिंसा के पाप से आहार करते हुए पुनः पहले नरक को प्राप्त हुआ और वहाँ से निकल कर फिर तू सिंह हुआ है और इस तरह क्रूरता से पाप का संचय कर दुःख के लिए उद्यम कर रहा है, इत्यादि रूप से मुनिराज के वचनों को सुनकर उस सिंह को जातिस्मरण हो गया और उसकी आँखों से अश्रुओं की धारा बहने लगी। मुनिराज ने पुरुरवा भील से लेकर अब तक की पर्यायों का वर्णन किया अनंतर कहने लगे कि हे मुनिराज ! अब तू इस भव से दसवें भव में अंतिम तीर्थंकर महावीर होगा यह सब मैंने श्रीधर तीर्थंकर भगवान के मुख से सुना है। पुनः मुनिराज ने सम्यक्दर्शन और व्रतों का उपदेश दिया।

उस सिंह ने मुनिराज के वचन हृदय में धारण किये और भक्तिभार से दोनों मुनिराजों की बार-बार प्रदक्षिणायें देकर प्रणाम किया। काल आदि लब्धियों के मिल जाने से शीघ्र ही तत्त्व श्रद्धान और श्रावक के व्रत ग्रहण किये। इस प्रकार वह सिंह निराहार रहकर तिर्यंचगति के योग्य संयमासंयम व्रत को स्थिरता से पालन कर व्रत सहित संन्यास धारण कर एकाग्र चित्त से मरा और सौधर्म स्वर्ग में दो सागर की आयु वाला सिंहकेतु नाम का देव हुआ। वहाँ से चयकर धातकी खंड के पूर्व विदेह की मंगलावती देश के विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी में कनकप्रभ नगर के राजा कनकपुंख विद्याधर और कनकमाला रानी के कनकोज्ज्वल नाम का पुत्र हुआ। किसी एक दिन कनकवती नाम की अपनी स्त्री के साथ मंदरगिरी पर प्रियमित्र नामक अवधिज्ञानी मुनि से धर्मोपदेश श्रवण कर जैनेश्वरी दीक्षा लेकर अंत में संन्यास से मरण कर सातवें स्वर्ग में तेरह सागर प्रमाण आयु वाला देव हुआ। वहाँ से च्युत होकर इसी साकेता नगरी के स्वामी वज्रसेन की शीलवती रानी से हरिषेण नाम का पुत्र हुआ और राज्यपद का अनुभव कर श्री श्रुतसागर मुनिराज के समीप जिन दीक्षा लेकर महाशुक्र स्वर्ग में सोलह सागर की आयु वाला देव हुआ। वहाँ से चयकर धातकी खंड के पूर्व विदेह में पुष्कलावती देश की पुंडरीकिणी नगरी के राजा सुमित्र और रानी मनोरमा से प्रियमित्र नाम का पुत्र हुआ। वह चक्रवर्ती के पद को प्राप्त कर भोगों को अनुभव करते हुए किसी दिन अपने सर्वमित्र पुत्र को राज्य देकर हजार राजाओं के साथ दीक्षित हो गया। आयु के अन्त में सहस्रार स्वर्ग में अठारह सागर आयु के धारक सूर्यप्रभ नाम के देव हो गये। उस स्वर्ग से चयकर इसी जंबूद्वीप के छत्रपुर नगर के राजा नदिवर्धन की वीरवती रानी से नद नाम के पुत्र हुए, राज्य का उपभोग कर प्रोष्ठिल नामक गुरु के पास संयम ग्रहण कर ग्यारह अंगों का ज्ञान प्राप्त किया। दर्शन विशुद्धि आदि सोलह कारण भावनाओं के चितवन से उच्च गोत्र के साथ-साथ तीर्थंकर नाम कर्म का बंध कर लिया और सब आराधनाओं को प्राप्त कर आयु के अंत में अच्युत स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान में श्रेष्ठ इन्द्र हुए। ये बाईस सागर की आयु के धारक थे।

जब इनकी आयु छह मास बाकी रह गई तब इस भरत क्षेत्र के विदेह नामक देश संबंधी कुंडपुर नगर के राजा सिद्धार्थ के भवन के आँगन में प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ प्रमाण रत्नों की धारा बरसने लगी। आषाढ़ शुक्ल षष्ठी के दिन रात्रि के पिछले प्रहर में रानी प्रियकारिणी ने सोलह स्वप्न देखे और पुष्पोत्तर विमान से अच्युतेन्द्र रानी के गर्भ में आ गये। प्रातःकाल राजा के मुख से स्वप्नों का फल सुनकर रानी अत्यन्त सन्तुष्ट हुई। तदनंतर देवों ने आकर गर्भ कल्याणक उत्सव मनाकर माता-पिता का अभिषेक करके उत्सव मनाया।

नव मास पूर्ण होने के बाद चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के दिन रानी त्रिशला ने पुत्र को जन्म दिया। उस समय देवों के स्थानों में अपने आप वाद्य बजने लगे, तीनों लोकों में सर्वत्र एक हर्ष की

लहर दौड़ गई । सौधर्म इन्द्र ने बड़े वैभव के साथ सुमेरु पर्वत की पांडुक शिला पर क्षीर सागर के जल से भगवान का जन्माभिषेक किया । इन्द्र ने उस समय उनके वीर और वर्धमान ऐसे दो नाम रखे ।

श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकर के बाद दो सौ पचास वर्ष बीत जाने पर श्री महावीर स्वामी उत्पन्न हुए थे । उनकी आयु भी इसी में शामिल है । कुछ कम बहत्तर वर्ष की आयु थी, सात हाथ ऊँचे, स्वर्ण वर्ण के थे । एक बार संजय और विजय नाम के चारण ऋद्धिधारी मुनियों को किसी पदार्थ में सन्देह उत्पन्न होने से भगवान के जन्म के बाद ही वे उनके समीप आकर उनके दर्शन मात्र से ही संदेह से रहित हो गये तब उन मुनि ने उस बालक का सन्मति नाम रखा । किसी समय संगम नामक देव ने सर्प बनकर परीक्षा ली और भगवान को सफल देखकर उनका महावीर यह नाम रखा ।

तीस वर्ष के बाद भगवान को पूर्वभव का स्मरण होने से वैराग्य हो गया तब लौकान्तिक देवों द्वारा स्तुति को प्राप्त भगवान ने दीक्षा ग्रहण कर ली और तत्काल मनःपर्यय ज्ञान प्राप्त कर लिया । पारणा के दिन कूलग्राम की नगरी के कूल नामक राजा के यहाँ खीर का आहार ग्रहण किया । किसी समय उज्जयिनी के अतिमुक्तक वन में ध्यानारूढ़ भगवान पर महादेव नामक रुद्र भयंकर उपसर्ग करके विजयी भगवान के महति महावीर नाम रखकर स्तुति की । किसी दिन सांकलों में बंधी चंदनबाला ने भगवान को पड़गाहन किया तब उसकी बेड़ी आदि टूट गई और भगवान को आहार दिया ।

छद्मस्थ अवस्था के बारह वर्ष बाद जृंभिक ग्राम की ऋजुकूला नदी के किनारे मनोहर नामक वन में सालवृक्ष के नीचे वैशाख शुक्ला दशमी के दिन भगवान को केवलज्ञान प्राप्त हो गया । उस समय इन्द्र ने केवलज्ञान की पूजा की । भगवान की दिव्य ध्वनि के न खिरने पर इन्द्र गौतम गौत्रीय इन्द्रभूति ब्राह्मण को युक्ति से लाये तब उनका मान गलित होते ही वे भगवान से दीक्षित होकर मनःपर्यय ज्ञान और सप्त ऋद्धि से विभूषित होकर प्रथम गणधर हो गये तब भगवान की दिव्य ध्वनि खिरी । श्रावण कृष्ण एकम के दिन दिव्यध्वनि को सुनकर गौतम गणधर ने सायंकाल में द्वादशांग श्रुत की रचना की । इसके बाद वायुभूति आदि ग्यारह गणधर हुए हैं ।' भगवान के समवसरण में मुनीश्वरों की संख्या चौदह हजार थी, चंदना आदि छत्तीस हजार आर्यिकायें थीं । एक लाख श्रावक, तीन लाख श्राविकायें, असंख्यात देव देवियाँ और संख्यातों तिर्यंच थे । बारह गणों से वेष्टित भगवान ने विपुलाचल पर्वत पर और अन्यत्र भी आर्य खंड में विहार कर सप्ततत्त्व आदि का उपदेश दिया ।

अंत में पावापुर नगर के मनोहर नामक वन में अनेक सरोवरों के बीच शिलापट्ट पर विराजमान होकर कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की रात्रि को अंतिम प्रहर में स्वाति नक्षत्र में एक हजार मुनियों के साथ मोक्ष पद को प्राप्त कर लिया।

भगवान के जीवन वृत्त से हमें यह समझना है कि मिथ्यात्व के फलस्वरूप जीव त्रस स्थावर योनियों में परिभ्रमण करता है। सम्यक्त्व और व्रतों के प्रसाद से चतुर्गति के दुखों से छूटकर शाश्वत सुख को प्राप्त कर लेता है। अतः मिथ्यात्व का त्याग कर सम्यग्दृष्टि बन करके व्रतों से अपनी आत्मा को निर्मल बनाना चाहिए।



आचार्य भद्रबाहु स्वामी

जिनशासन शिरोमणि श्रुतधर आचार्य भद्रबाहु उस युग के महान आस्थावान आचार्य हुए। श्रुतकेवली की परम्परा में आपका क्रम पाँचवाँ था। वे अन्तिम श्रुतकेवली थे। जैन शासन को वीर निर्वाण की द्वितीय शताब्दी के मध्य दु:काल में भयंकर वात्याचक्र से जूझना पड़ा था।

आपके नायकत्व में २४००० हजार मुनि एक साथ रहा करते थे। उज्जयिनी में जब भयंकर अकाल पड़ा तब उस दुष्काल के समय बारह हजार मुनि दक्षिण की ओर बढ़ गए। सम्राट चन्द्रगुप्त को भद्रबाहु आचार्य ने मुनि दीक्षा दी। तथा आपने अपना समाधि साधना स्थल श्रवणबेल गोला की चन्द्रगिरि पर्वत बनाया जहा पर आप शिष्यो सहित विराजे थे। आज भी आपकी चरण चिह्न गुफा में बनी हुई है।



आचार्य धरसैन

आचार्य धरसैन आगम ज्ञान के विशिष्ट ज्ञाता एवं अष्टांग निमित्त के पारगामी विद्वान थे। श्रुत की धारा को अविच्छिन्न रखने के लिए महिमा महोत्सव में एकत्रित मुनि सम्मेलन के प्रमुख आचार्यों के पास पत्र भेजा इस पत्र के द्वारा उन्होंने प्रतिभा सम्पन्न मुनियों की मांग की थी।

आचार्यों ने पत्र पर गम्भीरता पूर्वक चिन्तन किया और समग्र मुनिवर्ग में से दो मेधावी मुनियों को उनके पास सौराष्ट्र में गिरिनार की चन्द्र गुफा में जहा उनका निवास था, वहां उन मेधावी मुनिराज को भेजा। उनमें एक का नाम सुबुद्धि तथा दूसरे का नाम नरबाहन था, दोनों मुनिराज विनयवान, शीलवान, जाति सम्पन्न, कुल सम्पन्न एवं कला सम्पन्न थे। आगमार्थ को ग्रहण और धारण करने में समर्थ थे और वे आचार्यों से तीन बार पूछकर आज्ञा लेने वाले थे।

जब दोनों श्रमण वेणानदी के तट से धरसेनाचार्य के पास आने के लिए प्रस्थित हुए थे उस समय पश्चिम निशा में आचार्य धरसैन ने स्वप्न देखा था—दो धवल ऋषभ उनके पास आए और उन्हें प्रदक्षिणा देकर उनके चरणों में बैठ गए। इस शुभसूचक स्वप्न से आचार्य धरसैन को प्रसन्नता हुई। आचार्य धरसैन का स्वप्न फलवान बना। दोनों मुनि ज्ञान ग्रहण करने के लिए उनके पास आ पहुचे। उन मुनिराज को धरसैन ने मत्र देकर सिद्धि कराई तथा आचार्य धरसैन की परीक्षा विधी में भी उभय मुनि पूर्ण उत्तीर्ण हुए और विनय पूर्वक श्रुतोपासना करने लगे उनका अध्ययन क्रम शुभ तिथि, नक्षत्र, वार में प्रारम्भ हुवा था। आचार्य धरसैन की ज्ञान प्रदान करने की अपूर्व क्षमता एव युगल मुनियो की सूक्ष्मग्राही प्रतिभा का मणि-काचन योग था। अध्ययन का क्रम द्रुतगति से चला। आषाढ़ शुक्ला एकादशी के पूर्वाह्न काल में वाचन कार्य सम्पन्न हुवा। इस महत्वपूर्ण कार्य की सम्पन्नता के अवसर पर देवताओ ने भी मधुर वाद्य ध्वनि की थी। आचार्य धरसैन ने एक का नाम भूतबलि दूसरे का नाम पुष्पदन्त रखा था।

निमित्त ज्ञान से अपना मृत्युकाल निकट जानकर धरसैनाचार्य ने सोचा मेरे स्वर्ग गमन से इन्हें कष्ट न हो। उन्होने दोनों मुनियों को श्रुत की महा उप सम्पदा प्रदान कर कुशलक्षेम पूर्वक उन्हें विदा किया।

आगम निधि सुरक्षित रखने का यह कार्य आचार्य धरसैन के महान दूरदर्शी गुण को प्रगट करता है। जैन समाज के पास आज षट्-खण्डागम जैसी अमूल्य कृति है उसका श्रेय आचार्य धरसैन के इस भव्य प्रयत्न को है।

✿

आचार्य पुष्पदन्त एवं भूतबलि

पुष्पदन्त और भूतबलि महामेधा सम्पन्न आचार्य थे। उनकी सूक्ष्मप्रज्ञा आचार्य धरसैन के ज्ञान पारावार को ग्रहण करने में सक्षम सिद्ध हुई।

आचार्य श्री से ज्ञान सम्पदा लेकर लौटने के बाद दोनों ने एक साथ अकलेश्वर में चातुर्मासिक स्थिति सम्पन्न की। वहाँ से पुष्पदन्त वन की ओर गये तथा भूतबलि का पदार्पण द्रमिल देश में हुवा। तथा आचार्य पुष्पदन्त ने जिनपालित नामक व्यक्ति को दीक्षा प्रदान की।

षट्खण्डागम दिगम्बर साहित्य का महत्वपूर्ण ग्रन्थ है सत्कर्म प्राभृत खण्ड सिद्धान्त तथा षट् खण्ड सिद्धान्त की संज्ञा से भी यह ग्रन्थ पहचाना जाता है। इस ग्रन्थ के रचनाकार आचार्य पुष्पदन्त और भूतबलि थे।

साहित्य को स्थायित्व प्रदान करने की दृष्टि से पुष्पदन्त और भूतबलि के समय में प्रथम बार साहित्य निबद्ध किया गया था। जैन परम्परा में इससे पहले श्रुत पुस्तक निबद्ध नहीं थी।

आचार्य पुष्पदन्त एवं भूतबलि द्वारा प्रसूत नई प्रवृत्ति का जनता के द्वारा विरोध नहीं, स्वागत ही हुवा था। कहा जाता है—पुस्तकारूढ़ साहित्य को ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी के दिन संघ के सामने प्रस्तुत किया गया था। अतः यह पंचमी 'श्रुत पंचमी' के नाम से प्रसिद्ध हुई है। इस प्रसंग पर ग्रन्थ का संघ ने पूजा महोत्सव मनाया।

आचार्य पुष्पदन्त एवं भूतबलि जैन शासन के महान प्रभावी आचार्य हुए उनकी अमर दायिनी कृति आज भी वही याद दिलाती है ऐसे महान आचार्यों को शत-शत वंदन !



आचार्य कुन्दकुन्दस्वामी

जैन साहित्य के अभ्युदय में दाक्षिणात्य प्रतिभाओं का महान योगदान रहा उसमें आचार्य कुन्दकुन्द को सर्वतोग्र स्थान प्राप्त है ।

वे कर्णाटक के कोंडकुंड के निवासी थे । उनके पिता का नाम करमंडू और माता का नाम श्रीमति था । बोधप्राभृत के अनुसार वे श्रुतकेवली भद्रबाहु के परम्परागत शिष्य थे ।

पद्मनन्दी वक्रग्रीव, गृध्रपिच्छ, एलाचार्य और कुन्दकुन्द उनके नाम थे । अध्यात्म ग्रन्थों के प्रमुख व्याख्याकार थे । उनकी आत्मानुभूति पारक वाणी ने अध्यात्म के नए क्षितिज का उद्घाटन किया और आगमिक तत्वों को तर्क सुसंगत परिधान दिया ।

आचार्य कुन्दकुन्द चौरासी प्राभृतो (पाहुड़) के रचनाकार थे, पर वर्तमान में उन चौरासी प्राभृतों में से अनेक पाहुड़ उपलब्ध नहीं हैं ।

आज भी कई उच्चकोटि के ग्रन्थ जैसे समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, मूलाचार, रयणसार, अष्टपाहुड़ आदि अनेकों ग्रन्थ उपलब्ध हैं ।

आचार्य कुन्दकुन्द दर्शन युग में आए पर उन्होंने अध्यात्म प्रसाद को दर्शन की नींव पर खड़ा नहीं किया । प्रस्तुत दर्शन को आगमिक साचे में ढाला ।

दिगम्बर जैनाचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी का नाम बड़े ही आदर के साथ लिया जाता है तथा ऊँचा स्थान है । भगवान महावीर और गौतम के साथ उनका नाम मंगल रूप में अतिशय गौरव के साथ स्मरण किया जाता है ।



आचार्य उमास्वामी

उमास्वामी अपने युग के महान विद्वान साधु हुए थे । संस्कृत भाषा पर उनका अतिशय अधिकार था । जैन दर्शन की विपुल सामग्री को प्राजल सुर भारती में प्रस्तुत करने का सर्व प्रथम श्रेय उन्हीं को था । तत्वार्थ सूत्र आचार्य उमास्वामी की प्रसिद्ध रचना है व जैन तत्वों का संग्राहक ग्रन्थ है । मोक्ष मार्ग के रूप में रत्नत्रय का युक्त पुरस्सर निरूपण षट्द्रव्य और नव तत्व की विवेचना ज्ञान-ज्ञेय की समुचित व्यवस्था और भूगोल-खगोल की परिचर्या से इस ग्रन्थ की जैन समाज में महती उपयोगिता सिद्ध हुई है । आचार्य उमास्वामी बेजोड़ सग्राहक थे । उन्होंने जैन दर्शन से सम्बन्धित कोई भी विषय बाकी नही छोड़ा जिसका इस कृति में उल्लेख न हो । इस संग्राहक वृत्ति से उनको जैन समाज में बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त है ।

संस्कृत साहित्य के धुरंधर इतिहासकारों ने उमास्वामी को जैनाचार्यों में संस्कृत का सर्व प्रथम लेखक कहा है । उनका सस्कृत भाषा पर पूर्ण अधिकार था । ग्रन्थ की शैली संक्षिप्त प्रशस्त और शुद्ध संस्कृत रूप मे है ।

वीर वाणी के सम्पूर्ण पदार्थो का संग्रह तत्वार्थसूत्र में किया है । एक भी महत्वपूर्ण विषय का कथन किये बिना नही छोड़ा है इसी से आचार्य महोदय को सर्वोत्कृष्ट निरूपक कहा है । आपकी रचना पर से अनेकों आचार्यों ने बड़ी बड़ी टीकाऐ की हैं ।

आचार्य उमास्वामी जैन समाज को एक ऐसा चिरस्मरणीय ज्ञान प्रदान कर गये हैं जिसके लिए दिगम्बर जैन समाज चिरऋणी रहेगा ।



आचार्य समंतभद्र स्वामी

आचार्य समन्तभद्र दक्षिण के राजकुमार थे। वे तमिलनाडु उरगपुर नरेश के पुत्र थे। उनका नाम शक्ति वर्मा था। मुनि जीवन में प्रवेश पाकर समंतभद्र स्वामी मुनि संघ के नायक बने।

कवित्व, गमकत्व, वादित्व, वाग्मित्व ये चार गुण उनके व्यक्तित्व के अलंकार थे। आप इन्हीं विरल गुणों के कारण काव्य लोक के उच्चतम अधिकारी, आगम मर्मज्ञ सतत शास्त्रार्थ प्रवृत्त और वाक्पटु बनकर विश्व में चमके। संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, तमिल आदि कई भाषाओं पर उनका अधिकार था भारतीय विद्या का कोई भी विषय संभवतः उनकी प्रतिभा से अस्पृष्ट नहीं रहा। वे स्याद्वाद के संजीवक आचार्य थे। उनका जीवन-स्याद्वाद दर्शन का जीवन था। उनकी अभिव्यक्ति स्याद्वाद की अभिव्यक्ति थी। वे जब भी बोलते अपने प्रत्येक वचन को स्याद्वाद की तुला से तौलते थे। उनके उत्तरवर्ती विद्वान् आचार्य ने उनको स्याद्वाद, विद्यापति, स्याद्वाद विद्यागुरु तथा स्याद्वाद अग्रणी का सम्बोधन देकर अपना मस्तक झुकाया।

वे वाद कुशल आचार्य ही नही वाद रसिक आचार्य भी थे। भारत के सुप्रसिद्ध ज्ञान केन्द्रों में पहुचकर भेरी ताडन पूर्वक वाद के लिए विद्वानों को आह्वान किया था। पाटलिपुत्र, वाराणसी, मालवा, पंजाब, कांचीपुर (काजीवरम) उनके प्रमुख वाद क्षेत्र थे।

आचार्य श्री प्रबल कष्ट सहिष्णु भी थे। मुनि जीवन में उन्हें एक बार भस्मक नामक व्याधि हो गई थी। इस व्याधि के कारण वे जो कुछ खाते वह अग्नि में पतित अन्नकण की तरह भष्म हो जाता था। भूख असह्य हो गई। कोई उपचार न देखकर उन्होंने समाधि को सोची। गुरु से आदेश मागा पर समाधि की स्वीकृति उन्हे न मिल सकी। समन्तभद्र को विवश होकर काँची के शिवालय का आश्रय लेना पडा और पुजारी बनकर रहना पड़ा। वहाँ देव प्रतिमा को अर्पित लगभग ४० सेर चढावा उन्हे खाने को मिल जाता था। कुछ दिनों के बाद मधुर एवं पर्याप्त भोजन से उनकी व्याधि शान्त होने लगी। नैवेद्य बचने लगा एक दिन यह भेद शिवकोटि के सामने खुला। राजा आश्चर्य चकित रह गया, इसे किसी भयंकर घटना का सकेत समझ शिवालय को राजा की सेना ने घेर लिया उस समय समन्तभद्र मन्दिर के अन्दर थे। जब उन्होंने सेना के द्वारा

मन्दिर को घेरे जाने की बात जानी इस भयंकर उपसर्ग के शान्त न होने तक भक्ति में लीन हो गये और जिनेन्द्र देव की स्तुति करने लगे। शिव पिन्डी को राजा ने सांकलों से जकड़ दिया। स्वामी समन्तभद्रजी ने स्वयंभूस्तोत्र के माध्यम से तीर्थंकरों का स्तवन किया जैसे ही आठवें तीर्थंकर का स्मरण किया कि पिण्डी फटी तथा चन्द्रप्रभु भगवान का बिम्ब प्रगट हुवा। शिवकोटि राजा पर इस घटना का आश्चर्यकारी प्रभाव हुवा और उन्होंने स्वामी समन्तभद्र का शिष्यत्व स्वीकार कर लिया।

समन्तभद्र भी पुनः संयम में स्थिर होकर आचार्य पद पर आरूढ हुए एव अपनी प्राञ्जल प्रतिभा से प्रचुर संस्कृत साहित्य का सृजन कर जैन शासन की महनीय श्रीवृद्धि की। आपके द्वारा अनेकानेक ग्रन्थों की रचना हुई है। जो आज भी उपलब्ध हैं।

(१) आप्तमीमांसा, युक्त्यनुशासन, स्वयंभूस्तोत्र, स्तुतिविद्या, रत्नकरण्ड श्रावकाचार आदि।

आचार्य समन्तभद्र की कई रचनाएँ वर्तमान में अनुपलब्ध हैं, अनुपलब्ध रचनाओं में जीव सिद्धि, तत्वानुशासन, प्रमाण पदार्थ, कषाय प्राभृतिका, गन्धहस्ती महाभाष्य आदि ग्रन्थ हैं। आचार्य समन्तभद्र पंडितों के पडित और दार्शनिकों, योगियों, त्यागियों, तपस्वी मुनियों के अग्रणी थे। अतः उनकी प्रख्याति स्वामी शब्द से हुई।



आचार्य अकलंक स्वामी

राष्ट्रकूट राजा शुभतुंग के मंत्री पुरुषोत्तम उनके पिता थे। निष्कलंक उनके भ्राता थे। उनकी माता का नाम जिनमति था। बाल वय में ही ब्रह्मचारी-जीवन जीने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध हो चुके थे। अध्ययन के प्रति उनकी गहरी रुचि थी। दोनों भाइयों ने गुप्त रूप से बौद्ध मठ में तर्कशास्त्र का गम्भीर अध्ययन प्रारम्भ किया। एक दिन भेद खुल गया। अकलंक पलायन में सफलीभूत हो गया और निष्कलंक को वहीं मार दिया।

आचार्य परम्परा में अकलंक प्रौढ़ दार्शनिक विद्वान् थे और जैन न्याय के प्रमुख व्यवस्थापक थे। उनके द्वारा निर्धारित प्रमाण शास्त्र की रूप रेखा उत्तरवर्ती जैनाचार्यों के लिए मार्ग दर्शक बनी है।

आचार्य अकलंक वादकुशल भी थे। वह युग शास्त्रार्थ प्रधान था। एक ओर नालन्दा विश्वविद्यालय के बौद्धाचार्य धर्मपाल के शिष्य धर्मकीर्ति थे, जिन्होंने तर्कशास्त्र के पिता दिङ्नाग के दर्शन को शास्त्रार्थों के बल पर चमका दिया था, दूसरी ओर प्रभाकर, मंडन मिश्र, शंकराचार्य, भट्टजयंत और वाचस्पति मिश्र की चर्चा-परिचर्चाओं से धर्मप्रधान भारतभूमि का वातावरण आन्दोलित था। आचार्य अकलंक भी इनसे पीछे नहीं रहे। उन्होंने अनेक विद्वानों के साथ शास्त्रार्थ किए। मुख्यतः अकलंक बौद्धों के प्रतिद्वन्द्वी थे। आचार्य पदारोहण के बाद कलिंग नरेश हिमशीतल की सभा में बौद्ध विद्वानों के साथ उनका छह महीने तक शास्त्रार्थ हुवा।

आचार्यश्री के विषय में एक रोचक घटना का प्रसंग है, कहा जाता है कि बौद्ध भिक्षु घट मे तारादेवी की स्थापना करके शास्त्रार्थ करते थे। इससे वे दुर्जेय बने हुए थे। आचार्य अकलंक को यह रहस्य ज्ञात हो गया था। उनको शासन देवता ने आकर स्वप्न दिया तथा स्वप्न फल से जानकर प्रातःकाल सभा में जाकर घड़ा फोड़ दिया, आचार्य अकलंक की विजय हुई।

आचार्यश्री ने कई ग्रन्थों का निर्माण किया है। जिसमें आचार्य समन्तभद्रकी आप्त-मीमांसा पर उन्होंने अष्टशती टीका लिखी। तत्वार्थ सूत्र पर राजवार्तिक टीका लिखी। सिद्धि-विनिश्चय, न्याय विनिश्चय, प्रमाणसंग्रह ये तीनों ग्रन्थ उनकी सबल तर्कणा शक्ति के परिचायक हैं।

अजेयवाद शक्ति, अतुल प्रतिभाबल एवं मौलिक चिन्तन पद्धति से आचार्य अकलंक भट्ट कोविद कुल के अलंकार थे।



आचार्य पूज्यपाद स्वामी

पूज्यपाद स्वामी महान प्रतिभाशाली आचार्य और युग प्रधान योगेन्द्र थे । आपकी विद्वत्ता अखंड और अतिशय पूर्ण थी । दिव्यकीर्ति के आप स्तम्भ थे । आपके द्वारा रचित ग्रन्थों से निश्चित रूप से विदित होता है कि आपकी योग्यता असाधारण थी ।

श्रवणबेलगोला नं० १०८ के शिलालेख के आधार पर उन्हे अद्वितीय औषध ऋद्धि प्राप्त थी । एक बार उनके चरण प्रक्षालित जल के छूने मात्र से लोहा भी सोना बन गया । उनके विदेहगमन की बात भी इसी शिलालेख के आधार से सिद्ध होती है ।

पूज्यपाद साहित्य-रसिक और महान् शाब्दिक थे । जिनेन्द्र व्याकरण साहित्य जगत की प्रतिष्ठा प्राप्त कृति है । इस व्याकरण के कर्त्ता जिनेन्द्र बुद्धि पूज्यपाद ही थे । जैन विद्वान द्वारा लिखा गया यह प्रथम संस्कृत व्याकरण है । इसी व्याकरण के आधार पर पाणिनी व्याकरण लिखा गया है ।

तत्वार्थ सूत्र की व्याख्या में उन्होंने सर्वार्थसिद्धि का निर्माण किया । सिद्धि शब्द ही उनके प्रौढ़ ज्ञान का संकेतक है । समाधितत्र तथा इष्टोपदेश ये दोनों पूर्णतः आध्यात्मिक ग्रन्थ है । आपके द्वारा और अनेक ग्रन्थ लिखने का प्रमाण है । द्रविड़ संघ की स्थापना वीर नि० सं० ६६६ (वि० सं० ५२६) में हुई थी इस संघ की स्थापना का श्रेय आचार्य पूज्यपाद के शिष्य प्राभृतवेत्ता वज्रनन्दी को है ।

ज्योतिषियों द्वारा बालक को त्रैलोक्य पूज्य बतलाने के कारण उसका नाम पूज्यपाद रखा । पूज्यपाद ने रसायन, मंत्रविद्या, व्याकरण, वैद्यक, प्रतिष्ठा लक्षण आदि पर कई ग्रन्थ लिखे हैं । पैरों मे साधारण वनस्पति का गगनगामी लेप लगाकर विदेह क्षेत्र को जाया करते थे । पूज्यपाद मुनि बहुत समय तक योगाभ्यास करते रहे फिर एक देव के विमान में बैठकर उन्होंने अनेक तीर्थों की यात्रा की । मार्ग में एक जगह उनकी दृष्टि लोप हो गई थी जिसे उन्होंने शान्त्यष्टक द्वारा ठीक करली । इसके कुछ समय बाद समाधिपूर्वक मरण किया ।



आचार्य जिनसेन

आचार्यों में एक नाम जिनसेन का भी है आपका कालमान वी० नि० १३६४ (वि० सं० ८९४) का है।

आचार्य जिनसेन वीरसेन के सुयोग्य शिष्य एवं सफल उत्तराधिकारी थे। वे सिद्धान्तों के प्रकृष्ट ज्ञाता तथा कविमेधा से सम्पन्न थे। कर्णवेध संस्कार होने से पूर्व ही उन्होंने मुनिधर्म स्वीकार कर लिया था। सरस्वती की उन पर अपार कृपा थी। विनय-नम्रता के गुणों से उनकी विद्या विशेष रूप से शोभायमान थी। गुणभद्र की दृष्टि में हिमालय से गंगा, उदयाचल से भास्कर की भाँति वीरसेन से जिनसेन का उदय हुवा था।

आचार्य वीरसेन की प्रारम्भ की हुई जय धवला टीका कार्य को आचार्य जिनसेन ने पूर्ण किया था। इस ग्रन्थ मे साठ हजार श्लोक परिमाण स्वरूप इस ग्रन्थ का महत्वपूर्ण स्थान है। आचार्य वीरसेन ने इस ग्रन्थ के बीस हजार श्लोक रचे अवशिष्ट चालीस हजार श्लोकों की रचना आचार्य जिनसेन ने की।

मेघदूत काव्य के आधार पर 'मदाक्रांतावृत' में आचार्य जिनसेन ने पार्श्वाभ्युदय काव्य की रचना की। यह संस्कृत में निबद्ध उत्तम खण्डकाव्य है।

आचार्य जिनसेन की ऐतिहासिक रचना महापुराण नामक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ का प्रारम्भ आचार्य जिनसेन ने किया पर वे इसे पूर्ण नही कर पाए। अपने गुरु वीरसेन की भाँति उनका स्वर्गवास रचना पूर्ण होने से पहले ही हो गया था। उनकी अवशिष्ट रचना को शिष्य गुणभद्र ने पूर्ण किया। इस महापुराण के दो भाग हैं आदिपुराण एवं उत्तरपुराण। आदि पुराण में १०३८ श्लोकों के कर्त्ता आचार्य जिनसेन हैं। राष्ट्रकूट वश का जैनधर्म से घनिष्ठ सम्बन्ध था। नरेश अमोघवर्ष (प्रथम) इस बंश के महान प्रतापी शासक थे।

आचार्य जिनसेन के प्रतिभाशाली व्यक्तित्व का उन पर अतिशय प्रभाव था।

जिनवाणी के कुशल संगायक आचार्य जिनसेन थे।



आचार्य रविषेण

दिगम्बर कथा साहित्य में बहुत प्राचीन ग्रन्थ हैं। जिनमें प्रमुखतः रविषेण आचार्य द्वारा रचित पद्मपुराण ग्रंथ का भी स्थान महत्वपूर्ण है।

आपने अपने किसी संघ या गच्छ का कोई उल्लेख नहीं किया और न ही स्थानादि की ही चर्चा की है। परन्तु सेनान्त नाम से अनुमान होता है कि सम्भवतः सेन संघ के हों। इनकी गुरु परम्परा के पूरे नाम इन्द्रसेन, दिवाकर, अर्हत्सेन और लक्ष्मणसेन होंगे, ऐसा जान पड़ता है। अपनी गुरु परम्परा का उल्लेख इन्होंने इसी पद्मपुराण के १२ वें पर्व के १६ वें श्लोक के उत्तरार्ध में किया है।

ये किस प्रान्त के थे इनके माता पिता आदि कौन थे तथा इनका गार्हस्थ जीवन कैसा रहा ? इन सब का पता नही है। ऐसा ज्ञात हुवा है कि भगवान महावीर के निर्वाण होने के १२०३ वर्ष ६ माह बीत जाने पर पद्ममुनि का चरित्र निबद्ध किया गया। इस प्रकार इनकी रचना ७३४ विक्रम सं० में पूर्ण हुई।

राम कथा भारतीय साहित्य में सबसे अधिक प्राचीन, व्यापक, आदरणीय और रोचक रही है। यदि हम प्राचीन संस्कृत प्राकृत साहित्य को इस दृष्टि से मापें तो सम्भवतः आधे से अधिक साहित्य किसी न किसी रूप में इसी कथा से सम्बद्ध, उद्भूत या प्रेरित पाये जावेंगे।

पद्म पुराण की रचना कर श्री रविषेणाचार्य ने जन जन का बहुत कल्याण किया है। महान आचार्य ने भारत भूमि को अलंकृत किया। सुदीर्घकाल व्यतीत हो जाने पर भी ये प्रत्येक भारतीय की श्रद्धा के पात्र है। इसे आबाल-वृद्ध सभी लोग बड़ी श्रद्धा से पढ़ते हैं। बिरला ही ऐसा कोई मन्दिर होगा जहां पद्मपुराण की प्रति न हो।



भारतीय संस्कृति में—
—दिगम्बर साधुओं का स्थान

[ब्र० धर्मचन्द शास्त्री, संघस्थ]

भारत में मुनि-परम्परा और ऋषि परम्परा ये दो परम्पराएँ प्राचीन काल से रही हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से प्रथम परम्परा का सम्बन्ध आत्मधर्मी दिगम्बर मुनिवरों से रहा है। श्रमण मुनि मोक्ष मार्ग के उपदेष्टा रहे हैं, द्वितीय का सम्बन्ध लोक धर्म से रहा है।

भारत वर्ष का क्रमबद्ध इतिहास भगवान आदिनाथ (वृषभनाथ) से प्रारम्भ हुवा तथा जैन धर्म के अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर धर्म तीर्थ के अन्तिम प्रवर्तक थे।

भारतीय संस्कृति में आर्हत संस्कृति का प्रमुख स्थान है। इसके दर्शन, सिद्धान्त, धर्म और उनके प्रवर्तक तीर्थंकरों तथा उनकी परम्परा का महत्वपूर्ण अवदान है। आदि तीर्थंकर से लेकर अन्तिम चौबीसवें तीर्थंकर महावीर और उनके उत्तर-वर्ती आचार्यों, मुनियों ने अध्यात्म विद्या का सदा उपदेश दिया और भारत की चेतना को जागृत एवं ऊर्ध्वमुखी रखा है। आत्मा से परमात्मा की ओर ले जाने तथा शाश्वत सुख की प्राप्ति के लिए उन्होंने अहिंसा, अनिन्द्रियनिग्रह, त्याग और समाधि (आत्मलीनता) का स्वयं आचरण किया और पश्चात् उनका दूसरों को उपदेश दिया। सम्भवतः इसी से वे अध्यात्म-शिक्षा दाता और श्रमण संस्कृति के प्रतिष्ठाता कहे गये हैं। आज भी उनका मार्ग दर्शन निष्कलुष एवं उपादेय माना जाता है।

जैन धर्म अपनी मौलिकता और वैज्ञानिकता के कारण अपने अस्तित्व को एक शाश्वत धर्म के रूप में अभिव्यक्ति दे रहा है। भगवान महावीर इस युग के अन्तिम तीर्थंकर थे। उनके बाद आचार्यों की एक बहुत लम्बी शृंखला कड़ी से कड़ी जोड़ती रही है। सब आचार्य एक समान वर्चस्व वाले नहीं हो सकते। नदी की धारा में जैसे क्षीणता और व्यापकता आती है वैसे ही आचार्य-परम्परा में उतार-चढ़ाव आता रहा है। फिर भी उस शृंखला की अविच्छिन्नता अपने आपमें एक ऐतिहासिक मूल्य है।

अध्यात्म प्रधान भारत :

भारत अध्यात्म की उर्वर भूमि है, यहां के कण-कण में आत्म निर्झर का मधुर संगीत है, तत्वदर्शन का रस है और धर्म का अंकुरण है। यहां की मिट्टी ने ऐसे नररत्नों को प्रसव दिया है जो अध्यात्म के मूर्तरूप थे। उनकी हृदय की हर धड़कन अध्यात्म की धड़कन थी। उनके ऊर्ध्वमुखी चिन्तन ने जीवन को समझने का विशद दृष्टिकोण दिया। भोग में त्याग की बात कही और कमल-दल की भाँति निर्लेप जीवन जीने की कला सिखाई।

तीर्थंकर परम्परा :

दिगम्बर जैन परम्परा मे तीर्थकरों का स्थान सर्वोपरि होता है। तीर्थकर सूर्य की भाँति ज्ञान रश्मियों से प्रकाशमान और अपने युग के अनन्य प्रतिनिधि होते हैं। चौबीस तीर्थकरों की क्रम व्यवस्था के अनुस्यूत होते हुए भी उनका विराट व्यक्तित्व किसी तीर्थंकर-विशेष की परम्परा के साथ आबद्ध नही होता, मानवता के उपकारी तीर्थकर होते हैं।

परम्परा प्रवहमान सरिता का प्रवाह है। उसमें हर वर्तमान क्षण अतीत का आभारी होता है। वह ज्ञान-विज्ञान, कला, सभ्यता, संस्कृति, जीवन-पद्धति आदि गुणों को अतीत से प्राप्त करता है और स्व-स्वीकृत एवं सहजात गुण सत्व को भविष्य के चरणो में समर्पण कर अतीत में समाहित हो जाता है।

भगवान महावीर की विशाल संघ सम्पदा को जैनाचार्यो ने सम्भाला। जैनाचार्य विराट् व्यक्तित्व एव उदात्त कृतित्व के धनी थे। वे सूक्ष्म चिन्तक एवं सत्यदृष्टा थे। धैर्य, औदार्य और गम्भीरता उनके जीवन के विशेष गुण थे। सहस्रों सहस्रों श्रुत सम्पन्न मुनियों को कील लेने वाला विकराल काल का कोई भी क्रूर आघात एवं किसी भी वात्याचक्र का तीव्र प्रहार उनके मनोबल की जलती मशाल को न मिटा सका, न बुझा सका और न उसकी विराट ज्योति को मंद कर सका। प्रसन्नचेता जैनाचार्यो की वृत्ति मदराचल की तरह अचल रही। जैनाचार्यो की ज्ञानाराधना विलक्षण थी। भगवान महावीर की वाणी को जीवन सूत्र बनाकर ज्ञान विज्ञान का गम्भीर अध्ययन किया। दर्शन के महासागर में उन्होने गहरी डुबकियाँ लगाई, फलतः जैनाचार्य दिग्गज विद्वान बने। संसार का विरल विषय ही होगा जो उनकी प्रतिभा से अछूता रहा हो। ज्ञान, विज्ञान, धर्म, दर्शन, न्याय, साहित्य, संगीत, इतिहास, गणित, रसायन शास्त्र, आयुर्वेद, ज्योतिष शास्त्र आदि विभिन्न विषयों के ज्ञाता, अन्वेष्ठा एवं अनुसंधाता जैनाचार्य थे।

भारतीय ग्रन्थ राशि के जैनाचार्य पाठक ही नहीं स्वयं निर्माता थे। उनकी लेखनी अविरल गति से चली। संस्कृत, प्राकृत, शेरसैनी, अपभ्रंश आदि से युक्त विशाल साहित्य का निर्माण कर उन्होंने सरस्वती के भंडार को भरा। उनका साहित्य स्तवन प्रधान एवं गीत प्रधान ही नहीं था। प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग से युक्त काव्य, महाकाव्य, विशालकाय पुराणों, सिद्धान्त ग्रन्थों की संरचना की।

दर्शन क्षेत्र में जैनाचार्यों ने गम्भीर दार्शनिक दृष्टियाँ प्रदान की एवं योग के सम्बन्ध में नवीन व्याख्याएं भी प्रस्तुत की, न्याय शास्त्र के स्वयं प्रस्थापक बन कर्म सिद्धान्त शास्त्रों की महान टीकाएं की ऐसे जैन शासन का महान साहित्य जैनाचार्यों की मौलिक सूझ-बूझ एवं उनके अनवरत परिश्रम का परिणाम है।

परमागम प्रवीण बुद्धि उजागर भवाब्धि पतवार कर्मनिष्ठ, करुणा, कुबेर एवं जन-जन हितैषी जैनाचार्यों की असाधारण योग्यता से एवं उनकी दूरगामी पद यात्राओं से समस्त जन समुदाय को प्रभावित किया, शासन शक्तियों ने उनका भारी सम्मान किया। विविध मानद उपाधियों से जैनाचार्य विभूषित किये गए, पर किसी प्रकार की पदप्रतिष्ठा उन्हें दिग्भ्रान्त न कर सकी। पूर्व विवेक के साथ उन्होंने महावीर स्वामी की परम्परा को संरक्षण एवं विस्तार दिया, आज भी दिगम्बर जैनाचार्यों के समुज्ज्वल एवं समुन्नत इतिहास के सामने प्रबुद्ध व्यक्ति नतमस्तक हो जाते हैं।

सागर गहरा होता है, ऊँचा नहीं, शैल उन्नत होता है, गहरा नहीं, अतः इन्हें मापा जा सकता है, पर उभय विशेषताओं से समन्वित होने के कारण महापुरुषों का जीवन अमाप्य होता है।

वर्तमान में भारत भूमि पर महावीर का सम्प्रदाय ही गौरव के साथ मस्तक ऊँचा किए है। यह श्रेय विशिष्ट क्षमताओं और प्रतिभाओं को है। भगवान महावीर की उत्तरवर्ती आचार्य परम्परा में प्रखर प्रतिभा सम्पन्न तेजस्वी, वर्चस्वी, मनस्वी, यशस्वो अनेक आचार्य हुए।

जैन शासन की श्री वृद्धि में उनका अनुदान अनुपम है। वे त्याग-तपस्या के उत्कृष्ट उदाहरण हैं, यम नियम संयम के लिये भव्यजनों के उद्बोधनार्थ अर्थागम प्रदान किया। प्राणोत्सर्ग

करके भी श्रुत सम्पदा को क्रूर दुष्काल में विनिष्ट होने से बचाया। उन्होंने दूरगामिनी पद यात्रा से अध्यात्म को विस्तार दिया और भगवान महावीर के भवसंतापहारी सन्देश को जन जन तक पहुंचाया।

भगवान महावीर से अब तक के आचार्यों का युग महान गरिमा मय है। जो इस युग में अध्यात्मक योगियों की धारा भी गतिशील बनी हुई है।



जैनाचार्यों का समाज व राष्ट्र को योगदान

[डॉ० सुशीलचन्द्र जैन, मैनपुरी]

दशों दिशाओं में प्राची दिशा का एक विशेष ही महत्व है जिसका नाम लेते ही हृदय कमल प्रस्फुटित होने लगता है। उसी प्राची दिशा का मेरा देश भारत। भारत का नाम लेते ही याद आती है एक महत्वपूर्ण संस्कृति की जिसमें श्रमण संस्कृति का विशेष योगदान रहा है। संस्कृति के साथ जुड़े श्रमण शब्द का अर्थ ही है, "साधु" नग्न दिगम्बर साधु जिसके लिये आचार्य समन्तभद्र ने कहा—

> विषयाशावशातीतो निरारंभोऽपरिग्रहा।
> ज्ञानध्यान तपो शक्तिस तपस्वी स प्रशस्यते ॥"

अनादि काल से चली आ रही श्रमण संस्कृति का इस काल में प्रवर्धन हुआ, आदिनाथ से वीर पर्यन्त २४ तीर्थंकरों व असंख्य श्रमणों द्वारा और तत्पश्चात् पंचमकाल में इस संस्कृति को प्रवाहित करने का पूर्ण उत्तरदायित्व दिगम्बर मुनिराजों पर आगया। भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात् आचार्यों ने ज्ञान व चारित्र के पहियों से इस रथ को आगे बढ़ाया। वर्तमान समय में इस रथ के सारथी बने आ० शांतिसागरजी और उन्ही की परम्परा में पट्टाधीश आचार्य धर्मसागरजी के अभिवंदन ग्रन्थ समारोह के विमोचन अवसर पर आचार्य वंदना दिवस के रूप में इन समस्त आचार्यों के प्रति हम अपनी भक्ति प्रदर्शित कर रहे हैं।

जीव उद्धार :—

जैनधर्म का प्रथम लक्ष्य रहा है जीव उद्धार।

> "कला बहत्तर पुरुष की तामें दो सरदार।
> एक जीव की जीविका एक जीव उद्धार ॥"

जीव उद्धार के लिये किये जाने वाले सतत् प्रयत्नों का नाम ही जैनधर्म है और इस जीव उद्धार की परम्परा में भी आत्म हित, स्वजीव उद्धार प्रमुख है, उसके बाद पर की बात आती है। आचार्यों ने कहा है—

आदहिदं कादव्वं जं सक्कइ परहिदं च कादव्वं।
आदहिदपरहिदादो आदहिदं सुट्ठु-कादव्वं ।। भगवती आराधना

इसी भावना के फलस्वरूप आचार्यों का मूल उद्देश्य आत्मकल्याण ही रहा है पर जिस प्रकार सूर्य के निकलते ही अंधकार नष्ट हो जाता है, कमल खिल जाते हैं, उसी प्रकार जीवन में भी गति आ जाती है। क्या सूर्य इन सबको करने की भावना से उगता है, नहीं न ! सूर्य को तोसमय पर उदय होना ही है उससे जो भी कार्य हो जावे; इसी भाँति दिगम्बर गुरु भी ऐसे ही सूर्य हैं जिनके दर्शन से मिथ्यात्व अंधकार नष्ट हो ज्ञान का प्रकाश फैलता है, लोगों का हृदय कमल खिल उठता है, सोते समाज व राष्ट्र में एक नवीन चेतना स्फूर्ति आ जाती है। गुरु तो स्वय आत्महित में लगा होता है यह तो अनायास ही हो जाता है। हा कही गुरु को पुरुषार्थ पूर्वक भी कार्य करना पड़ता है।

श्रमण संस्कृति का परिवर्धन :

पंचम काल के अंत तक दिगम्बरत्व को जीवित रखने का कार्य इन्ही दिगम्बर गुरुओं के माध्यम से ही होना है। इस प्रकार श्रमण सम्कृति को गतिशील बनाये रखने का भार प्रमुखतया हमारे आचार्यों पर ही है। धर्मोपदेश के द्वारा गृहस्थों को गृहस्थ धर्म के प्रति अपने कर्तव्य का बोध कराते हुए समाज व राष्ट्र के प्रति स्व कर्तव्यका बोध इन्ही आचार्यों के द्वारा ही होता है। आचार्यों के माध्यम से ही धर्म प्रभावना का महत् काय सम्पन्न होता है जो एक विद्वान् से कदापि सभव नही है। जिसप्रकार रिले रेस मे एक धावक अपनी दौड़ पूरी करके आगे बढ़ा देता है उसी प्रकार एक आचार्य दीक्षित होने के बाद श्रमण संस्कृति का परिवर्धन करते हुये इस ज्योति को जलाये रखने का भार अपने शिष्यों पर सौप कर इस परम्परा को बनाये रखता है। धर्म प्रभावना का महत्वपूर्ण कार्य जो इन दिगम्बर गुरुओं के माध्यम से हुआ वह अविस्मरणीय है।

पुरातत्व तीर्थों का विकास :

जैनाचार्यों के माध्यम से देश की पुरातत्व संस्कृति को बहुत बल मिला है। विश्व का ८ वा आश्चर्य श्रवण बेलगोल में बाहुबली की मूर्ति नेमिचन्द्र आचार्य की प्रेरणा से ही बनी।

ऐसे एक नहीं अनेकों उदाहरण हैं और वर्तमान में भी इस पुरातत्व की वृद्धि उसी प्रकार हो रही है। धर्मस्थल, फिरोजाबाद की विशालकाय मूर्तियों में एलाचार्य मुनिश्री विद्यानंदजी की जो प्रेरणा रही है वह पुरातत्व के इतिहास में एक विशिष्ट अध्याय बनेगा। चातुर्मास के समय जिन स्थानों पर ये सत रहे, रहते हैं वहां कितनी प्रगति होती है किसी से छिपी नहीं। मध्यभारत के पिछड़े तीर्थों के विकास में ज्ञान संत आचार्य विद्यासागरजी का योगदान तीर्थों के विकास में एक महत्वपूर्ण मील के पत्थर के रूप में स्मरणीय रहेगा। इन आचार्यों की प्रेरणा से ही कला का अत्यधिक विकास हुआ और श्रावकों ने कलाकारों का सम्मान किया।

समन्वय एवं सर्वधर्मसमभाव

सर्वधर्मसमभाव में मुनिवरों का विशेष योगदान रहा है। किसी भी धर्म का कोई भी छोटा या बड़ा व्यक्ति मुनि के लिये समान है। मुनिवरों के उपदेश मानव मात्र के लिये हैं अपनी सभाओं मे विभिन्न धर्मावलम्बियो को एकत्र कर एलाचार्य श्री ने जैनधर्म को विश्वधर्म के रूप में प्रतिष्ठित कर अनोखा कार्य किया है। जैनाचार्यों के जीवन, तप, त्याग से ही प्रभावित होकर अन्य अनेक मतावलबी जैन धर्म के प्रति आकृष्ट हुये। राधाकृष्णनजी की जैनधर्म पर रुचि इतिहासकारों के लिये भी प्रेरणा स्रोत बनी। श्री लालबहादुर शास्त्रीजी ने आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज से आशीर्वाद प्राप्त किया और सर्व श्रेष्ठ प्रधानमन्त्री के रूप में छवि छोड़ गये। समन्वय का साक्षात् उपदेश देते हुये 'मनुष्य जन्म से नही कर्म से महान होता है' की बात कह कर कुल के स्थान पर कर्म को महत्व देकर वर्ग विभेद को समाप्त करने की ओर प्रकाश डाला गया।

हृदय परिवर्तन :

गजकुमार सुकुमाल सुकौशल भवसेन भावसेन जैसे अनेकों उदाहरण आगम में भरे पड़े हैं जहां मुनिवरों की प्ररणा से उस व्यक्ति का हृदय ही परिवर्तित हो गया, जीवन ही बदल गया। अतीत ही नहीं वर्तमान में भी यह कार्य सतत् जारी है, इसके साक्षात् उदाहरण है आचार्य धर्मसागरजी जिन्होंने पट्टाचार्य पदासीन होते ही उसी दिन ११ दीक्षाये दीं और आज तक लगभग ५० व्यक्ति अपना जीवन परिवर्तित कर धर्मसागर से धर्म के सागर में डुबकी लगा चुके हैं।

पर्यटन, सारे देश को एक सूत्र में बांधना :

जैन दर्शन में तीर्थयात्रा का विशेष महत्व रहा है। ये यात्रायें प्राय: आचार्यों के संघ सान्निध्य में होती रही हैं। वर्तमान में प्रात:स्मरणीय आचार्य श्री शांतिसागरजी की संघ यात्रा ऐतिहासिक

धरोहर रही है, पर्यटन देश के वर्तमान उद्योगों में प्रमुख है। जैन मतानुयायी तीर्थयात्रा के रूप में इसमें महत्वपूर्ण योगदान देते रहे हैं। भगवान बाहुबली महामस्तकाभिषेक के साथ ही वहां लगभग ५० मुनिवरों का एकत्र होना इस समय की महत्वपूर्ण घटना थी और लगभग १० लाख लोगों ने इस अवसर पर तीर्थयात्रा की या पर्यटन करके इस उद्योग को बहुत सहायता दी। जहाँ भी कोई जैन मुनि पहुंचता है या चातुर्मास करता है हजारों की संख्या में लोग वहां पहुंचते ही रहते हैं जिससे हर वर्ग को लाभ होता है। अपने पैदल विहार द्वारा तथा साथ में चातुर्विध संघ के साथ रहने से उत्तर से दक्षिण, पूर्व से पश्चिम तक देश को एक सूत्र में बांधने, एक दूसरे की संस्कृति से परिचित करने विभिन्न भाषाओं का विकास करने में इन आचार्यों के माध्यम से महत्वपूर्ण कार्य हुआ है।

नैतिकता व सदाचार को प्रोत्साहन :

मुनिवरों ने अपने धर्मोपदेश द्वारा मानव मात्र को नैतिकता, सदाचार, चारित्र, तप, त्याग, सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, अचौर्य का उपदेश देते हुये भारतीय जन-जीवन में उत्थान का महत्वपूर्ण कार्य किया। जो व्यक्ति वास्तव में इन गुरुओं के समीप जाता है उनका जीवन निश्चय ही बदल जाता है। सप्त व्यसनों के त्याग द्वारा मद्यपान, मांस सेवन, व्यभिचार आदि पर बड़ा ही, प्रभावी अंकुश जैनाचार्यों ने लगाया। पैदल विहार के कारण अधिकाधिक लोगों से संपर्क होने से बहुत लोगों पर इनका प्रभाव पड़ता है। "बहुजन हिताय बहुजन सुखाय" का चरितार्थ दिगम्बर मुनिवरों द्वारा ही हुआ है।

साहित्य क्षेत्र में :

साहित्य क्षेत्र में तो जैनाचार्यों ने महत् कार्य न केवल स्वयं ही किया अपितु इनके सान्निध्य में भी बहुत साहित्य रचा गया। यह गोष्ठी का अलग विषय है ही अतः अन्य विद्वद्जन इस पर प्रकाश डालेंगे।

अपरिग्रह व समाजवाद :

जैनधर्म में परिग्रह को पापों में गिना गया है। मुनि के लिये महाव्रत व गृहस्थ के लिये अणुव्रत के रूप में इसका उपदेश देते हुये प्रत्येक गृहस्थ को अपने परिग्रह की सीमा निर्धारित करने का उपदेश है "परिग्रह परिमाण व्रत" से। अगर वास्तव में व्यक्ति इसे अंगीकार करे तो आज जिन विभिन्न वादों—समाजवाद, लेनिनवाद, मार्क्सवाद आदि का उद्देश्य इसी एक अपरिग्रह से ही पूरा हो सकता है। मुनिवर समस्त परिग्रह को त्याग कर दिखा देते हैं कि इनका त्याग करना भी सरल है फिर परिमाण करने में क्यों डरते हो।

इस प्रकार अनेकानेक क्षेत्रों में, जीवन के हर क्षेत्र में जैनाचार्यों का अमूल्य योगदान रहा है, जीवन परिवर्तित करके व्यक्ति का सुधार व्यक्ति का समूह ही समाज है और समाजों का समूह ही राष्ट्र।

इन सब परिप्रेक्ष्य में आचार्यों का महत् योगदान रहा है। यदि कहीं कमी दिखती है तो वह हममें है। यदि हमारा रेडियो या टी० वी० खराब हो तो स्टेशन से प्रसारित होने वाले कार्यक्रम उसमें नहीं दिखते या नहीं सुनाई पड़ते। ऐसे में हम स्टेशन का दोष न देकर अपने सैट की कमी ही निकालने का प्रयत्न करते हैं। आज के गृहस्थों में यदि अपेक्षित सुधार नहीं दिखता तो दोष आचार्यों का नहीं हमारा है, व्यक्ति का है, राष्ट्र के नागरिकों का है, जो हम उनके सान्निध्य में जाते नहीं, जाते हैं तो सुनते नही और सुनते हैं तो जीवन में उतारते नही। वर्षा हो रही हो व पात्र उल्टा रखा हो तो झील तो भर जावेगी पर बर्तन कदापि न भरेगा। आज हमारा पात्र ही उल्टा है। धर्मामृत की वर्षा तो निरन्तर हो रही है पात्र जिनके सीधे हैं वह भर रहे हैं, ऐसे शताधिक मुनिवर आज स्वयं का कल्याण करते हुये, बदल रहे हैं समाज को, राष्ट्र को।

ऐसे इन श्रमणों को हमारा शत-शत वंदन नमन अर्चन।



दिगम्बर मुनिराज स्तवनांजलि !

भव्य दिगम्बर मुनिपुंगव तुम, वंदूं नित ही तुमको मैं;
मन, वच, काया विशुद्ध करके करूं नमोऽस्तु सदैव मैं ।।

जातरूप तुम नग्न, दिगम्बर, योगी, ममताशून्य सदा;
हिंसादूर, अकच्छ, अकिंचन, अनगारी, अह्लीक सदा ।।

तुम निर्ग्रन्थ, अपरिग्रही नित, अतिथि, अचेलक, आर्य, गणी;
तुम शृंगार रहित, जिनलिंगी, अनागार, निश्चेल, मुनि ।।

पाणिपात्र, भिक्षुक, माहण, यति, वातवसन, निष्परिग्रही;
विवसन, संयत, थविर, श्रमण तुम, एकाकी संन्यस्थ सही ।।

महाव्रती, नितवंद्य, निरम्बर, ऋषि, गुरु, अलोभ, सुसंयमी;
साधु, तपस्वी, परीषहसही, गृहसंत्यक्त, मलिनदेही ।।

निष्कषायमन, मलाच्छन्नतन, सन्यमहाव्रतधारी तुम;
महा अहिंसा-अस्तेयांकित, महा ब्रह्मचारी हो तुम ।।

त्यक्तपरिग्रह, धर्म-शुक्ल-सद्ध्यानपरायण, तप-तत्पर;
पंचसमितिरत, पंचेन्द्रियजित, क्षपणक तुम कौपीनोत्तर ।।

सामायिकरत, ज्ञान-ध्यान-तप-मग्न सदा, जिनस्तुतिगायक;
स्नानविवर्जित, अदन्तधावक, पृथिवीशायी, स्थितिभोजक ।।

एक भक्त, सर्वेन्द्रियजेता, कायोत्सर्गी, जिनवन्दक;
हेयविवर्जित, उपादेयरत, विवेक-आभूषण धारक ।।

सर्वसंगत्यागी, आशागत, विषयवशातीत, समबुद्धि;
शान्ति-क्षान्तिके महान सागर; आशारहित महाउदधि ।।

स्वात्मसुखान्वित, परोपकारक, कर्मशत्रु, निस्संग महा;
महाधैर्यधारी, निर्भय नित, स्वतंत्र, समतामूर्ति अहा ।।

दैन्यदूर, नित कर्म-सुभजक, धर्मरत्न, संयम प्रतिमा,
ग्रनुपमचरित्र, चारित्रांकित, त्यागभावकी बहु गरिमा ।।

क्षमामूर्ति, स्वात्मोपयोगरत, सौम्यमूर्ति, ग्रतिपूज्यचरण;
स्वैराचारविरोधक सविता, परमाराध्य, सदैवशरण ।।

महाग्रहिंसक, संसृतितारक, निजात्मचरमोन्नतिसाधक,
विरागमूर्ति, ऋजुबालकवत्, कर्मशत्रुके परिहारक ।।

धैर्यपुत्र तुम, क्षमातनय तुम, शान्तिपति हे सत्यसखा,
दयाभ्रात तुम, जगद्बन्धु तुम, महासंयमी सर्वसखा ।।

ज्ञानाहारी, धर्मविहारी, ग्रष्टाविंशति गुणधारी,
हितोपदेशक, मुक्तिसुदर्शक, जीवमात्रके हितकारी ।।

जैनधर्मके सूर्यराज तुम, त्रिलोकके तुम सत्यगुरू,
मुक्तिमार्ग के पथिक श्रेष्ठ तुम, सदापूज्य हे जगद्गुरु ।।

नमोऽस्तु गुरु हे ! नमोऽस्तु मुनि हे ! नमोऽस्तु जिनपथसञ्चालक;
जय हो ! जय हो !! जय हो !!! सतत जैनधर्मके सद्धारक ।।



मुनियों का जीवन

श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन 'सरोज' जावरा

मुनियों के आदर्श जीवन के विषय में, यदि हम पंडित प्रवर दौलतरामजी से परामर्श चाहें तो वे अपनी अमरकृति 'छहढ़ाला' से उद्धरण प्रस्तुत कर कहेंगे—

"अर्घावतारन असिप्रहारन में सदा समता धरन।"

इससे यह तो सहज ही ज्ञात किया जा सकता है कि मुनि जन समभाव के साधक होते हैं। वे बाहरी-भीतरी आडम्बरो या परिग्रहों से रहित निर्ग्रन्थ होते हैं। मुनियों के उदात्त जीवन के उत्कृष्ट शब्द चित्र प्रस्तुत करने वाली अनेको कहानियाँ जैन वाङ्मय मे पढने के लिये मिलती हैं। उनमें से कुछ को एक क्षीण झलक देने का प्रयत्न आगे की लघु कथाओं में होगा, जिससे जिज्ञासु जानेंगे कि मुनि मान-अपमान से परे होते है और अध्ययन के इच्छुक समझेंगे कि जिनवाणी का मूलाधार भी मुनि (अर्हंत) ही है।

(१) जब चौबेजी छब्बेजी बनने गये।

बढते हुये भस्मक रोग को देखकर और प्रसव के उपरान्त विकल नागिनी सी क्षुधा को बढ़ते हुये देखकर समन्तभद्र ने अपने गुरुदेव से कहा—"अब तो आप मुझे समाधिमरण के लिये आज्ञा दीजिये। धर्म-रहित जीवन मुझे प्रिय नही लगता और मुनियों मा क्षुधा परीषह जीतना अब सभव नहीं रहा।" "सो तो ठीक है।" आचार्य बोले—"तुम्हारे द्वारा निकट भविष्य में अतीव धर्म प्रभावना होगी। अतएव मै सल्लेखना के लिये स्वीकृति नहीं दूंगा। पर तुम किसी भी प्रकार अपने रोग का दमन करो, यही मुझे इष्ट है कि जैन धर्म आगे बढे।"

समन्तभद्र ने गुरुदेव का आदेश शिरोधार्य किया। वे कांची से पुण्ड्र और दशपुर होते हुये वाराणसी में आ गये। वहाँ के राजा शिवकोटि को प्रभावित करके, पक्के शैव प्रमाणित होकर, शिवजी के स्थान में स्वयं हो भोग लगाकर भस्मक व्याधि का निवारण करने लगे। पर जब एक दिन कपट की कलई खुल ही गई तो शिवकोटि ने क्रोधित होकर शिवजी को नमस्कार करने के लिये कहा।

समन्तभद्र ने समझाया कि मेरा नमस्कार सहन करने की शक्ति आपके शिवजी में नहीं है। शिवकोटि ने कहा—'तुम तो शिव को नमस्कार करो, भले मूर्ति रहे या न रहे।'

दूसरे दिन, शासन देवी अम्बिका की प्रेरणा से—समन्तभद्र ने स्वयंभुवा भूत हितेन भूतले……"से प्रारंभ कर चौबीसों तीर्थंकरों की प्रार्थना की। जैसे ही उन्होंने आठवें तीर्थकर चन्द्रप्रभु भगवान को प्रणाम करने के लिये सिर झुकाया तो शिवजी की मूर्त्ति फटी और चन्द्रप्रभु भगवान की प्रतिमा सबने देखी।

शिवकोटि ने भी समन्तभद्र का वास्तविक परिचय और उनकी विद्वत्ता जान ली तो अपनी लज्जा और ग्लानि मिटाने के लिये उनकी शिष्यता स्वीकार कर ली। कहा जाता है कि बहुत दिनों तक काशी में फटे महादेव का मन्दिर प्रसिद्ध रहा है।

(२) जब एक मुनि गृहस्थ बना

"प्रस्तुत प्रश्न का उत्तर तो बखूबी एक ही व्यक्ति दे सकता है और वह है माघ।" एक आचार्य ने मर्माहत होकर कहा—"पर अब तो उसे भी मुनि से गृहस्थ बने ग्यारह वर्ष हो गये, इसलिये शायद कहीं वह भी न भूल गया हो।" "आचार्य श्री दुखी न हों। हम लोग माघ के पास जाकर ही अपनी शंका का समाधान कर लेंगे। वे मुनि से गृहस्थ भले बन गये हों पर उनकी बुद्धि और विवेक का तो हमें अभी भी बड़ा भरोसा है।"

यह कहकर जब जिज्ञासु शिक्षार्थी माघ के पास आये तब वे अपने परिवार सहित गोत्र कर्म के प्रतिनिधि कुम्भकार बने घड़ों का निर्माण कर रहे थे। जिज्ञासुओं ने माघ के सम्मुख अपनी शंका रखी और माघ ने वह समाधान दिया कि वे भी निरुत्तर और सहमत हो गये।

जिज्ञासु चले गये और माघ के हृदय में हलचल कर गये। माघ ने विचारा—"कहाँ तो लोग मुझे आज भी माघ मुनि के रूप में स्मरण करते हैं और कहाँ मैं माघ मुनि पथ-पद-भ्रष्ट होकर माघ गृहस्थ बन बैठा हूं। फिर मोह की जंजीर बांधे—संसार के उसी जाल में फँस गया हूं जिससे निकलने के लिये मनमार मुनि बना था, जिनदीक्षा ली थी, अब तो लगभग ग्यारह वर्ष गृहस्थ बने हो गये……खैर, अब मैं अपनी भूल को ऐसा सुधारूंगा कि लोग युग युगों तक मुझे न भुला सकेंगे।

माघ फिर मुनि हुये। तय किया, जब ग्यारह गृहस्थ मुनि बना लूंगा तब ही आहार ग्रहण करूंगा। जब तक वे अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार ग्यारह गृहस्थों को मुनि न बना लेते तब तक

भूखे-प्यासे ही लौटते । उनके मोही भक्त थोडे विचलित होते पर वे नहीं । वे तो अपनी प्रतिज्ञा का पालन करके ही रहते ।

माघ का महीना आकर, प्रतिवर्ष मुझसे माघ मुनि की कथा कह जाता है और उनकी पवित्र स्मृति हृदय मे पुन. सजीव कर जाता है और तब ही मैं मन्दबुद्धि विचार नही पाता—'आज मेरे समाज मे माघ मुनि कहाँ ?'

(३) जब देव वैद्य बन कर आया

जब सौधर्म स्वर्ग के इन्द्र ने भी सनत्कुमार मुनिराज के चारित्र की प्रशसा की तो मदनकेतु देव ने उनकी परीक्षा लेने की ठानी । दूसरे ही क्षण, वह उस वन मे आ गया, जहाँ सनत्कुमार मुनिराज आत्मसाधना कर रहे थे । "मै वह वैद्य हू, जो भयकर से भयकर और असाध्य से असाध्य रोगो को क्षण भर मे दूर कर सकता हू ।' मदन केतु ने जोर जोर मे चिल्लाते हुये कहा । सनत्कुमार मुनिराज ने उसे बुला लिया और कहा—"बडा अच्छा हुआ, जो अनायास आप इधर आ निकले, मुझ प्यासे को तो सरोवर ही मिल गया" उन्होने अपनी बात को बढाते हुये कहा—' मैं एक भयकर रोग से पीडित हू, अगर आप उसे दूर कर देगे तो मैं जन्म जन्मान्तर तक भी उपकार नही भूलू गा ।"

"आप विश्वास रखिये ' देव ने कहा—"मैं आपके सुन्दर शरीर को गलाने वाले कुष्ट रोग को पलक मारते ही दूर कर दू गा । सिर्फ आपकी आज्ञा की देर है ।"

"नही ! नही ! ! आप नही समझे । कुष्ट रोग का तो मुझे कुछ भी कष्ट नही है । कष्ट तो मुझे ससार मे परिभ्रमण का है । अगर आप मेरा यह रोग दूर कर दे तो मै आपका तीर्थंकर ही समझ लू और श्रद्धा से नमस्कार कर लू ।'

"नही ! मुनिराज ! ! " मदन केतु ने लज्जा से सिर झुकाकर कहा—' इस जन्म-जरा-मरण जैसे विषम रोग की दवा मेरे पास नही है, वह तो आप जैसे निरीह मुनियों के ही पास है ।"

(४) जब चारो ओर से तलवारे उठी ।

"तुम वाद-विवाद मे विजयी हुये । यह तो अच्छी बात है पर तुम्हे अधर्मात्मा मन्त्रियो से तत्वचर्चा मे उलझना नही था । अब भी अगर तुम सघ की सुरक्षा चाहो तो उसी स्थान पर जाकर आत्म साधना करो, जहाँ मन्त्रियो मे तुम्हारा विवाद हुआ था ।" आचार्य अकम्पन ने श्रुतसागर से कहा । "जैसी आचार्य की आज्ञा ।" श्रुतसागर ने बिना नुक्ता चीनी किये कहा—"मैं भले रहू या न रहू पर मेरा सघ अवश्य सुरक्षित रहे ।'

श्रुतसागर, अपने विवाद के स्थल पर आकर साधना करने लगे। धीरे धीरे दिन बीता और रात आगई। सन्ध्या की सुन्दरी ने तारे बिखेर दिये।

"आज जिस नंगे साधु ने राजा के सम्मुख अपना अपमान किया था, उसे संघ सहित मारकर अपने अपमान का बदला न लिया तो अपना मन्त्रित्व निष्फल है।" चारों मन्त्रियों ने विचार किया।

बलि, बृहस्पति, प्रहलाद और नमुचि—सुदृढ सुमेरु सा विचार कर हाथों में चमचमाती तलवारें लेकर निकल पडे और वहीं आ गये, जहाँ श्रुतसागर ध्यान कर रहे थे। एक क्षण ठहर कर उन्होंने सोचा—"असली शत्रु तो यही है, पहले इसे ही समाप्त करें। इसके संघ वालों को फिर देखा जायेगा।"

चारों मन्त्रियों ने एक साथ श्रुतसागर पर प्रहार करना चाहा। पर यह क्या? उनके तलवार वाले हाथ ज्यो के त्यो उठे के उठे ही रह गये। अब वे आगे-पीछे भी नहीं होते थे। मन्त्री, इस अप्रत्याशित घटना को देखकर विस्मित थे।

धीरे धीरे रात भी बीती। प्रातःकाल होते ही सूर्य के प्रकाश सी यह खबर भी नगर में फैल गई कि चारों मन्त्रियों ने मुनि को मारने की कोशिश की। श्रीवर्मा ने भी आकर देखा और चारों ही मन्त्रियों को नगर से बाहर निकाल दिया।

लोगो ने कहा—"यह है सत्ता का सदुपयोग और धर्म का फल पुण्य।"

(५) जब छुरी द्वारा कूँख ही चीरी जाने लगी।

जब मुनि नागदत्त वन में चलते चलते चोरों के अड्डे के पास पहुंच गये तो वे घबडाये। उन्हें पकड़कर वे अपने प्रमुख सूरदत्त के समीप ले गये। प्रमुख ने कहा—"इन्हें छोड़ दो, इनसे कुछ भी अपना अनिष्ट नहीं होगा।"

थोडी देर बाद—नागदत्ता (मुनि की मां) अपनी बेटी सहित आई। वह कौशाम्बी जाकर, जिनदत्त के सुपुत्र धनपाल से अपनी बेटी का विवाह करने जा रही थी; अतएव उसके पास काफी वस्त्राभूषण भी थे। अपनी जान और माल की सुरक्षा की दृष्टि से वह कुछ रुकी। उसने मुनि नागदत्त को प्रणाम करने के बाद पूछा—"प्रभो! आगे का मार्ग स्वच्छ और सुरक्षित तो है?"

प्रत्युत्तर में मुनि मौन रहे । उन्होंने हाँ ना कुछ भी नहीं कहा । नागदत्ता ने इसे ही उनकी सहमति समझी । मुनि साधना करते ही रहे ।

आगे जाने पर, नागदत्ता को चोरों ने पकड़ लिया और वस्त्राभूषण तथा विवाह की अन्य सामग्री के साथ उसकी बेटी को भी पकड़ लिया ।

"यह है दिगम्बर मुनि की निष्काम साधना और वीतरागता की ज्वलंत भावना ।" सूरदत्त ने साथियों से कहा—"हमने मुनि को पीड़ित किया, तब भी उन्होंने कुछ नही कहा और इस स्त्री ने उनकी प्रार्थना की–भक्ति की तब भी कुछ नही कहा । उनकी दृष्टि में शत्रु-मित्र सब ही बराबर हैं ।"

तब ही नागदत्ता ने सूरदत्त से कहा—"भाई ! जरा तुम अपनी छुरी तो मुझे दे दो ताकि मैं अपनी कूँख को चीरकर ही कुछ शान्ति पालूं । तुम जिस मुनि की इतनी प्रशंसा कर रहे हो, वह और कोई नहीं, मेरा बेटा ही है, अगर वह अणु सा भी संकेत कर देता तो मेरी यह दुर्दशा नही होती ।"

"माँ, तुम हमें क्षमा करो ।" सूरदत्त ने कहा—"हमें नही मालूम था कि तुम उन महर्षि की मां हो । तुम्हारे सभी वस्त्राभूषण ले लो और विवाह की सामग्री तथा बेटी को भी, अन्यथा नरक में भी हमारी आत्मा को शान्ति नहीं मिलेगी ।"

नागदत्ता ने गई वस्तुयें और बेटी को पाकर अपना सौभाग्य समझा तथा सम्मान पाकर अपने बेटे की पुनः वन्दना की ।

(६) जब बाप ने बेटे को मारने की आज्ञा दी ।

मगध सुन्दरी के प्रेम के आगे विद्युत् चोर झुक गया । वह श्रीकीर्त्ति श्रेष्ठि के महल की ओर बढा । मार्ग में विचारा—"जब स्त्री के क्षेत्र में साधक तक पराजित होते हैं, तब फिर मैं तो चोर हू और फिर मेरी तो हार भी जीत अभी होगी ।"

चोर ने चोरी तो कर ली पर वह हार की कान्ति को नही छिपा सका, जो उसके साथ चाँदनी सी चमक रही थी । सिपाहियों ने उससे रुकने को कहा पर वह भागा, उतना भागा, जितना भी उससे भागते बना, जब और भागते न बना तो श्मशान में वारिषेण के पास हार को फेंक दिया और अदृश्य होकर ही अपने लिये निरापद समझा पर उसकी आत्मा उसे धिक्कार रही थी ।

सिपाहियों ने हार को ले लिया और वारिषेण को पकड़ लिया तथा सम्राट श्रेणिक के सम्मुख उपस्थित कर दिया। वारिषेण बन्दी बना चुप रहा।

"तुम्हारा यही धर्मात्मापन है? तुम यही श्मशान में ध्यान करते हो? मै तो तुम्हें युवराज बनाना चाहता था पर अब तुम्हें यमराज को सौपूंगा।"

श्रेणिक ने क्रोधित होकर कहा—"ले जाओ इसे और तलवार के एक ही वार से काम तमाम कर दो। भगवान! ऐसा नालायक बेटा किसी को न दें।"

"जल्लादों ने जो खोचकर जोर से अपनी तलवारें वारिषेण की गर्दन पर मारीं तो वे फूल की मालायें बन गई।" यह बात जब राजा श्रेणिक ने सुनी तो वे वारिषेण से क्षमा मांगने लगे। पछतावा तो उन्हे पहले से ही था। "नही! पिताजी!! आपने जो किया, वह ठीक ही था, अगर आप मुझे सजा न देते तो प्रजा के प्रतिनिधि आपको अन्यायी कहते।" वारिषेण ने कहा। श्रेणिक को लगा कि आज उनका मान-मन्दिर ढह गया और तब ही विद्युत् चोर ने कहा—"अपराधी ये नही बल्कि मैं हूं। राजन्! मैं विश्वास दिलाता हू कि अब कभी अपराध नहीं करूंगा।"



आदिमुनि भगवान ऋषभदेव के प्रति

(लक्ष्मीचन्द्र जैन 'सरोज', जावरा)

ऋषभदेव किसका न देवता, जैनधर्म न किसका है ?
जो उदार चेता वह कहता, देव-धर्म यह सबका है ।।

सत्य प्रथम श्री ऋषभदेव ने, अपनी सबकी आँख खोली ।
जीना सिखलाया दिये कला, असि मसि-कृषि-शिल्प-बनिज बोली ।।
भोग भूमि सा कर्म भूमि पर, भी अपना अधिकार बताया ।
ध्वस झझटो को कर सत्वर, स्वावलम्ब सत्कार सिखाया ।।

कल्पलता अन्तर्तृष्णा से, होता सघर्ष न किसका है ?
जो उदार चेता वह कहता यह सघर्ष सभी का है ।।

तपो भूमि की आत्म साधना मे त्याग भाग मे बढ देखा ।
कार्यों के उत्तु ग शिखर पर चढ जीवन को उज्ज्वल लखा ।।
जीवन दिया श्रमण सस्कृति को आचरणो को दी वाणी ।
अनुपम ज्ञानामृत वितरण कर विकसित की दश दिशि मे वाणी ।।

आध्यात्मिकता सत्य समीक्षा, यह अधिकार न किसका है ?
जो उदारचेता वह कहता, यह अधिकार सभी का है ।।

सत्य दिगम्बर औ श्वेताम्बर मात्र न इसके अधिकारी है ।
बल्कि बौद्ध-हिन्दू ईसाई मुस्लिम खग-पशु नर-नारी हैं ।।
जीवन है कुन्दन सा जिसका, वह क्या आव ताव देखेगा ?
चरित चन्द्र सा निर्मल जिसका, वह क्या भेद भाव लेखेगा ?

सत्य सनातन का दर्शन स्थाई उत्कर्ष न किसका है ?
जो उदार चेता वह कहता, यह तो भाई सभीका है ।।

नाभिराय का तनय एक वह, जिसकी प्रतिकृति पुजती जन से ।
मरुदेवी का लाल नेक वह, जिसको जनता सुनती मन से ।।
यह असीम अपनी सीमा में, जब देता सबको वांछित वर ।
अति उदार बन सरित मेघ सा, पुलकित होता अवनी अम्बर ।।

पिता भरत औ बाहुबली का, ब्राह्मी तथा सुन्दरी का ।
धर्म-पिता को देख देखकर, बढ़ता हर्ष न किसका है ??
जो उदार चेता वह कहता, बढ़ता हर्ष सभी का है ।

हे आदिनाथ ! ब्रह्मा बनकर, तुमने युग का निर्माण किया ।
हे ऋषभदेव ! विष्णु बनकर, तुमने जग जन का त्राण किया ।।
हे आदिदेव ! हो महादेव, तुमने जग का कल्याण किया ।
हे विश्ववन्द्य ! हो कला-स्रोत, तुमसे सच जग म्रियमाण जिया ।।

रचना की आदर्श अनोखी, रक्षा का भाव न किसका है ?
जो उदारचेता वह कहता, यह तो भाव सभी का है ।।

वीतरागता की विराटता तू लेख रहा निज अन्तर में ।
सर्वदर्शिता की समानता तू देख रहा निज मन्तर में ।।
हितोपदेशिता की महानता पहिचान रहा तू मति-मन में ।
विश्वबन्धुता की स्वतन्त्रता अनुमान रहा तू मति-मन में ।।

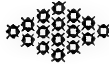
तेरे पावन चरणों पर कर का स्पर्श न किसका है ?
जो उदार चेता वह कहता, कर स्पर्श सभी का है ।।

सागर सी लेकर मर्यादा, गम्भीर बना तू अन्तर में ।
दीप-शिखा सी लेकर ज्वाला, उन्नत सु धीर तू मन्तर में ।।
प्रकृति जगत का रम्यदेव बन, बैठा निश्चल दिक् अम्बर में ।
जीवन-दर्शन ले सार सना, अनुभव करता तन प्रस्तर में ।।

तू रवि सा कवि का अमर काव्य, सुनने का चाव न किसका है ?
जो उदार चेता वह कहता, सुनने का भाव सभी का है ।।



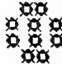
आचार्य श्री शांतिसागरस्तुतिः



यः श्री सर्वगुणाकरोऽस्ति विबुधः यं साधुवर्यं भजे,
येनैवात्र सुदर्शित मुनिपथः यस्मै नमः शान्तये।
यस्माज्ज्ञानतपोधनं प्रमुदितं यस्य प्रभा शान्तिदा,
यस्मिन् ध्यानसुखाब्धिरस्ति स सुधीः शान्तिमुंनिः पातु नः ॥

यस्य ज्ञान तपोबलं त्वनुपमं स्तुत्यो मुनीशैः सदा,
यो नागादिकृतोपसर्गविजयी चारित्रसूर्यो महान्।
ये नैवात्र हि भारते च बहवः सत्वाः समुद्बोधिताः,
सोऽयं काममदादिभोगविरतः सूरीश्वरः पातु नः ॥



१६-२० वीं सदी के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य

चारित्र चक्रवर्ती, तपस्वी सन्त

आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज

द्वारा दीक्षित साधुवृन्द





आ० शांतिसागरजी जीवन परिचय
आ० वीरसागरजी महाराज
मुनि चन्द्रसागरजी महाराज
आ० नमिसागरजी महाराज
मुनि नेमिसागरजी महाराज
आ० कुन्थुसागरजी महाराज
आ० पायसागरजी महाराज
मुनि मल्लिसागरजी महाराज
मुनि चन्द्रकीर्तिजी महाराज
मुनि वर्द्धमानसागरजी (दक्षिण)

आ० सुधर्मसागरजी महाराज
मुनि धर्मसागरजी महाराज
मुनि नेमसागरजी महाराज
क्षुल्लक चन्द्रकीर्तिजी महाराज
क्षुल्लक धर्मसागरजी महाराज
आर्यिका विद्यावती माताजी
आर्यिका चन्द्रवती माताजी
आर्यिका सिद्धमती माताजी
क्षुल्लिका गुणमती माताजी
क्षुल्लिका अजितमती माताजी

१६-२० वीं सदी के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य

आध्यात्मिक ज्योतिर्धर चारित्र चक्रवर्ती परमपूज्य १०८ महर्षि

आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज



हमारा भारत एक आध्यात्म प्रधान देश है। अपनी आध्यात्मिक संस्कृति के कारण ही यह जगत मे सम्मानित, प्रतिष्ठित और श्रेष्ठ स्वीकार किया जाता है। रत्न प्रसवा भारत-भूमि ने विश्व को महान् तेजस्वी, देदीप्यमान और वन्दनीय-नमस्करणीय अनेक नर-रत्न दिए है। आज से लगभग २५८० वर्ष पहल इस पुण्य भूमि पर चौबीसव तीर्थंकर भगवान महावीर का जन्म हुआ। उन्होने अपनी उत्कृष्ट आत्म साधना तथा तप और त्याग के प्रभाव से दुनिया को हिंसा के पतन-मार्ग मे प्रवृत्त होने से बचाया तथा अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकात का सम्यक् मार्ग दिखाकर जीने की-जीवनयापना की सही विधि बताई।

तीर्थंकर महावीर की परम्परा मे उन्ही के पद चिन्हो का अनुकरण करने वाले भगवान कुन्दकुन्द, जिनसेन, समन्तभद्र, विद्यानन्दि, नेमिचन्द्र, अकलकदेव, पद्मनन्दी आदि अनेक महान् विद्वान् सच्चरित्र तपस्वी साधु सन्त हुए जिन्होने अपने-अपने युग मे महावीर प्रभु के आध्यात्मिक सन्देश और सच्चे धर्म का प्रसार किया।

इसी आदर्श दिगम्बर साधु सन्त परम्परा मे वर्तमान युग मे जो तपस्वी सन्त हुए उनमे आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज एक ऐसे प्रमुख साधुश्रेष्ठ तपस्वीरत्न हुए हैं जिनकी अगाध-विद्वत्ता, कठोरतपश्चर्या, प्रगाढ़ धर्मश्रद्धा, आदर्शचारित्र और अनुपमत्याग ने धर्म की यथार्थ ज्योति प्रज्ज्वलित की। आपने लुप्तप्राय, शिथिलाचारग्रस्त मुनि परम्परा का पुनरुद्धार कर उसे जीवन्त किया, वह परम्परा अनवरतरूप से अद्यावधि प्रवहमान है।

दक्षिण भारत के प्रसिद्ध नगर बेलगांव जिले के चिकोड़ी तालुका में भोजग्राम है। भोज-ग्राम के समीप लगभग चार मील की दूरी पर विद्यमान येलुगल गांव में नाना के घर आषाढ़ कृष्णा ६ संवत् १९२९ सन् १८७२ बुधवार की रात्रि को जन्म हुआ। ज्योतिषी से जन्म पत्रिका बनवाने पर उसने बताया था कि यह बालक अत्यन्त धार्मिक होगा, जगत भर में प्रतिष्ठा प्राप्त करेगा और संसार के मायाजाल से दूर रहेगा।

पिता भीमगौड़ा और माता सत्यवती के ये तीसरे पुत्र थे इसीसे मानो प्रकृति ने इन्हें रत्नत्रय और तृतीय रत्न सम्यक्चरित्र का अनुपम आराधक बनाया। आदिगौडा और देवगौडा नामके आपके दो बड़े भाई थे। कुमगौडा आपके अनुज थे। बहिन का नाम कृष्णा बाई था। इनके शान्त भावों के अनुरूप इन्हें सातगौड़ा कहते थे। गौड़ा शब्द भूमिपति-पाटिल का द्योतक है।

आचार्य श्री के जीवन पर उनके माता-पिता की धार्मिकता का बड़ा प्रभाव था। माता सत्यवती अत्यधिक धार्मिक थी। अष्टमी चतुर्दशी को उपवास करती तथा साधुओं को आहार देती थीं। बहुत शान्त तथा सरल प्रकृति की थी। व्रताचरण, परोपकार, धर्मध्यान उनके जीवन के मुख्य अंग थे। पिता भीमगौडा प्रभावशाली, बलवान, रूपवान प्रतिभाशाली ऊँचे पूरे क्षत्रिय थे। उन्होंने १६ वर्ष पर्यन्त एक बार ही भोजन पानी के नियम का निर्वाह किया था। १६ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य व्रत रखा था। उन जैसा धर्माराधना पूर्वक सावधानी सहित समाधिमरण होना कठिन है। आचार्य महाराज के बड़े भाई देवगौडा पाटिल ने भी दिगम्बर साधुराज का पद ग्रहण किया था। उन्हें वर्धमानसागर महाराज कहते थे। छोटे भाई कुमगौडा भी दीक्षा लेने का विचार रखते थे पर असमय में ही वे काल कवलित हो गए। ऐसे धर्मनिष्ठ परिवार में चरित्रनायक ने जन्म लिया। सातगौडा बचपन से ही निवृत्ति की ओर बढ़ते गए। बच्चों के समान गन्दे खेलों में उनकी कोई रुचि नहीं थी। वे व्यर्थ की बात नहीं करते थे। पूछने पर संक्षेप में उत्तर देते थे। लौकिक आमोद-प्रमोद से सदा दूर रहते थे, धार्मिक उत्सवों मे जाते थे। घर में बहिन कृष्णा बाई की शादी में तथा छोटे भाई कुमगौडा की शादी में सम्मिलित नहीं हुए थे। वे वीतराग प्रवृत्ति वाले थे। बाल्यकाल से ही वे शान्ति के सागर थे।

"मुनियों पर उनकी बडी भक्ति थी। वे अपने कन्धे पर एक मुनिराज को बैठाकर वेद-गंगा तथा दूध गंगा नदियों के संगम के पार ले जाते थे। वे कपड़े की दुकान पर बैठते थे, मुख्य कार्य छोटा भाई करता था। छोटे भाई की अनुपस्थिति में वे ग्राहकों से कहते—"कपड़ा लेना है तो मन से चुन लो, अपने हाथ से नाप कर फाड़ लो और बही में लिख दो।" इस प्रकार उनकी निस्पृहता थी। वे कुटुम्ब के झंझटों में नही पड़ते थे। उनका आत्मबल अद्भुत था। उन्होंने माता-पिता की खूब

सेवा की और उनका समाधिमरण कराया किन्तु उनके स्वर्गारोहण के बाद भी उनके नेत्रों में अश्रु नहीं थे। उनका मनोबल महान् था, वे वैराग्यमूर्ति थे।

जब उनके विवाह का प्रसंग आया तो उन्होंने कहा "मी ब्रह्मचारी राहणार" मैं ब्रह्मचारी रहूंगा। इन शब्दों को सुनते ही माता-पिता के नेत्रों में अश्रु आ गए। पिताश्री ने कहा—' माझा जन्म तुम्हो सार्थककेला" बेटे। तुमने हमारा जीवन और जन्म कृतार्थ कर दिया।

"महाराज के परिणाम छोटी अवस्था में ही मुनिदीक्षा लेने के थे परन्तु माता-पिता ने आग्रह किया कि बेटा। जब तक हमारा जीवन है तब तक तुम दीक्षा न लेकर धर्मसाधन करो। इसलिये वे घर में रहे।

माता पिता के स्वर्गारोहण के बाद ४१ वर्ष की अवस्था में आपने मुनिदीक्षा के लिये दिगम्बर साधु देवप्पा स्वामी के पास जाकर याचना की, विनय की। गुरुदेव ने दिगम्बर मुनि की दीक्षा न देकर इनके कल्याणार्थ विक्रम संवत् १९७२ जेठ सुदी तेरस सन् १९१५ को इन्हें पहले क्षुल्लक दीक्षा दी। नाम शान्तिसागर रखा था। इन्होंने कोगनोली गांव में क्षुल्लकरूप में प्रथम चातुर्मास किया। उस समय ये तपसाधना में विशेष संलग्न थे। कोगनोली में मन्दिर वेणी में वे ध्यान हेतु बैठे थे कि एक छह हाथ लम्बा सर्प मन्दिर में घुसा और उसने यहां-वहा घूमने के बाद महाराज के शरीर पर चढ़ना प्रारम्भ किया और वह उनके शरीर पर लिपट गया। वहा मन्दिर में दीपक जलाने को उपाध्याय घुसा और उसकी निगाह सर्प पर पड़ी तो वो घबरा कर भागा। इस समाचार को सुनकर बहुत लोग वहां एकत्र हो गए। वे किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो रहे थे, क्योकि गड़बड़ी के कारण सर्प कही काट देगा तो अनर्थ हो जाएगा। बहुत समय के बाद सर्प धीरे-धीरे उतरा और बाहर चला गया। प्रतीत होता है कि वह यमदूत महाराज की परीक्षा लेने आया था कि इनमें धैर्य, निर्भीकता तथा स्थिरता कितनी है। इस परीक्षा में महाराज सुस्वर्ण निकले। इन समाचारों से सर्वत्र महाराज की महिमा का प्रसार हो गया।

यों भी महाराजश्री के जीवन में अनेक उपसर्ग आए। परन्तु 'यथा नाम तथा गुण" आपने सबको समभाव से सहन किया। धौलपुर राजा खेडा में तो छिद्रि ब्राह्मण गुण्डों सहित नंगी तलवारें लेकर मारने आ गया था, उसको भी आपने क्षमा प्रदान की। सर्पराज से भी अनेक बार साक्षात्कार हुआ। शेर से भी मुलाकात हुई। एक बार असंख्य चींटियों ने आपके शरीर को अपना भोज्य बनाया फिर भी आप सामायिक में लीन रहे। एक चींटी आपके पुरुष लिंग से चिपट कर काटती रही, खून बहता रहा परन्तु आप ध्यान से विचलित नहीं हुए।

जब आप क्षुल्लक अवस्था में थे उस समय आपको कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा था, क्योंकि तब मुनिचर्या भी शिथिलताओं से परिपूर्ण थी । साधु आहार के लिए उपाध्याय द्वारा पूर्व निश्चित गृह मे जाते थे । मार्ग में एक चादर लपेट कर जाते थे । गृहस्थ के घर जाकर स्नान कर दिगम्बर हो आहार करते थे । घण्टा बजता रहता था ताकि अन्तराय का शब्द भी सुनाई न पड़े और भोजन में किसी तरह का विघ्न न आवे ।

महाराज ने यह प्रक्रिया नहीं अपनाई, क्योंकि साधु को अनुदिष्ट आहार लेना चाहिए अतः वे निमंत्रित घर में न जाकर चर्या को निकलते । कभी-कभी आठ दिन पर्यन्त भोजन नही मिलने से उपवास हो जाता था । शनैः शनैः लोगों को पता चला कि साधु को आमंत्रण स्वीकार न कर वहाँ आहार लेना चाहिए जहाँ सुयोग वास हो तब शास्त्रानुसार चौके लगाकर आहार की व्यवस्था की गई । उनके जीवन से मुनियों को भी प्रकाश प्राप्त हुआ था ।

नेमिनाथ भगवान के निर्वाणस्थान गिरनार पर्वत की वन्दना के पश्चात् इसकी स्थायी स्मृतिरूप आपने ऐलक दीक्षा ग्रहण कर ली । ऐलक रूप में आपने नसलापुर में चातुर्मास किया वहां से चलकर ऐनापुर ग्राम में रहे । उस समय यरनाल में पंचकल्याणक महोत्सव होने वाला था वहाँ जिनेन्द्र भगवान के दीक्षा कल्याणक दिवस पर आपने अपने गुरुदेव देवेन्द्रकीर्ति स्वामी से मुनि दीक्षा ग्रहण की । अब तो ये साधुराज ध्यान, तत्वचिन्तन, अहिंसापूर्ण जीवन में निरन्तर प्रगति करने लगे । इससे इनमें अद्भुत आत्मशक्तियों का नव जागरण होने लगा । बहिर्जगत् से कम सम्पर्क रख अन्तर्जगत् में स्थिर रहने वाले इन महात्मा के ज्ञान में भविष्य की अनेक घटनाओं का प्रतिबिम्ब पहले से आ जाया करता था । ऐसे अनेक प्रसंगों पर आपके कथन अक्षरशः सही सिद्ध हुए हैं । सन्त पुरुष अन्तरात्मा की आवाज को महत्व दिया करते है । कालिदास ने कहा है—"सतां हि सन्देहपदेषु वृत्तिषु प्रमाणमन्तः करणप्रवृत्तयः" ।

महाराज कठोर तप रूप अग्नि में अपनी आत्मा को शुद्ध बना रहे थे । जब वे कुम्भोज बाहुबली में संघ सहित बिराजमान थे तो उदीयमान पुण्यशाली सेठ पूनमचन्द घासीलाल जवेरी, बम्बई के मन मे इच्छा जगी कि यदि गुरुदेव शिखरजी की यात्रार्थ संघ सहित चलें, तो हम सब प्रकार की व्यवस्था करेंगे और संघ की सेवा भी करते रहेंगे । उन्होंने गुरुदेव के सम्मुख अपनी इच्छा व्यक्त की । सुयोग की बात, महाराज ने प्रार्थना स्वीकार कर ली । सबको अपार आनन्द हुआ । सन् १९२७ के कार्तिक माह के अन्त में अष्टाह्निका के बाद संघ का विहार हुआ । लगभग दो सौ व्यक्ति संघ में थे ।

समडोली में नेमिसागरजी की ऐलक दीक्षा व वीरसागरजी की मुनिदीक्षा के अवसर पर समस्त संघ ने महाराज को "आचार्य पद" से अलंकृत कर अपने को कृतार्थ किया। अपूर्व प्रभावना करता हुआ संघ सन् १९२८ के फाल्गुन में शिखरजी पहुच गया। वहा अष्टाह्निका महापर्व, पंचकल्याणक महोत्सव वैभव सहित सम्पन्न हुआ। लाखों जैनों ने एकत्र होकर महान् पुण्य संचय किया। संघ ने समस्त उत्तर भारत में विहार करके जीवों का अवर्णनीय कल्याण किया। महाराज के पुण्य से कही भी संघ के विहार में किसी तरह की बाधा नही आई।

गजपंथा में चातुर्मास के बाद पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ। उस अवसर पर उपस्थित धार्मिक संघ ने महाराज को "चारित्र चक्रवर्ती" पद से अलंकृत किया। विशुद्ध श्रद्धा, महान् ज्ञान और श्रेष्ठ संयम की समाराधना द्वारा महाराजश्री की आत्मा अपूर्व हो रही थी। सम्यक् चारित्र रूप चक्र का प्रवर्तन कर महाराज ने चारित्र चक्रवर्ती का ही तो काम किया था। महाराज कहते थे—

"सम्यक्त्व और चारित्र का घनिष्ठ सम्बन्ध है, तब एक की ही प्रशंसा क्यों की जाती है? सम्यक्त्व की प्राप्ति देव के अधीन है, चारित्र पुरुषार्थ के आधीन है।"

सयम यदि सम्यक्त्व सहित है तो वह मोक्ष का कारण है तथा यदि वह सम्यक्त्व रहित है तो वह नरकादि दुर्गतियों से जीव को बचाता है अतः जब तक काललब्धि आदि साधन सामग्री नहीं प्राप्त हुई है तब तक भी संयम की शरण लेना हितकारी है। सदाचरण रूप प्रवृत्ति कभी भी पतन का कारण नहीं होगी। व्रताचरण के द्वारा समलंकृत जीव देवगति में जाकर महाविदेह में विद्यमान सीमन्धर आदि तीर्थंकरों के समवसरण में पहुच सकता है तथा उनकी दिव्यध्वनि सुनकर मिथ्यात्व परिणति का त्याग करके वह सम्यक्त्व द्वारा आत्मा का उद्धार कर सकता है।

आचार्यश्री का प्राण जिनागम था। उसके विरुद्ध वे एक भी बात न कहते थे और न करते थे। समाज में प्रचलित आगम विपरीत प्रवृत्तियों के विरुद्ध उपदेश देने मे आचायश्री को तनिक भी सकोच नही होता था। जन समुदाय के विरोध की उन्हे तनिक परवाह नहीं थी। आचार्य श्री अपने तप: पुनीत जीवन तथा उपदेशों द्वारा जन साधारण का जितना कल्याण किया उतना हजारों उपदेशक तथा बड़े-बड़े राज्य शासन भी कानून द्वारा सम्पन्न नहीं कर सकते थे।

बम्बई सरकार ने हरिजनों के उद्धार के लिये एक हरिजन मन्दिर प्रवेश कानून सन् १९४७ में बनाया इसका आश्रय लेकर ४ अगस्त १९४८ को कुछ मेहतरों, चमारों ने जैन मन्दिर में जबरन घुसने का प्रयास किया। यह ज्ञातकर अनुभवी आचार्य महाराज की अन्तरात्मा ने उन्हें कड़ा

कदम उठाने की प्रेरणा की । महाराज ने प्रतिज्ञा कर ली कि "जब तक पूर्वोक्त बम्बई कानून से आई हुई विपत्ति जैन मन्दिरों से दूर नहीं होती है तब तक मैं अन्न ग्रहण नहीं करूंगा ।" २८ नवम्बर सन् १९५० को अकलूज पहुंच कर सोलापुर के कलेक्टर ने रात्रि के समय दिगम्बर जैन मन्दिर का ताला तुड़वा कर उसके भीतर मेहतरों, चमारों का प्रवेश कराया । जैन बन्धुओं ने आपत्ति की तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया । मुकदमा चला । २४ जुलाई १९५१ को हाईकोर्ट के प्रधान न्यायाधीश श्री चागला ने फैसला सुनाया—"बम्बई कानून का लक्ष्य हरिजनों को सवर्ण हिन्दुओं के समान मंदिर प्रवेश का अधिकार देना है । जैनियों तथा हिन्दुओं में मौलिक बातों की भिन्नता है । उनके स्वतन्त्र अस्तित्व तथा उनके धर्म के सिद्धान्तों के अनुसार शासित होने के अधिकारों के विषय में कोई विवाद नहीं है । अतः हम एडवोकेट जनरल की यह बात अस्वीकार करते हैं कि कानून का ध्येय जैनों तथा हिन्दुओं के भेदों को मिटा देना है ।"

"दूसरी बात यह है कि यदि कोई हिन्दू इस कानून के बनने के पूर्व जैन मन्दिरों में अपने पूजा करने के अधिकार को सिद्ध कर सके, तो वही अधिकार हरिजन को भी प्राप्त हो सकेगा । अतः हमारी राय में प्राथियों का यह कथन मान्य है कि जहां तक इस सोलापुर जिले के जैन मन्दिर का प्रश्न है, हरिजनों को उसमें प्रविष्ट होने का कोई अधिकार नहीं है, यदि हिन्दुओं ने यह अधिकार कानून, रिवाज या परम्परा के द्वारा सिद्ध नहीं किया है ।"

अपने अनुकूल निर्णय से बडा हर्ष हुआ । धर्मपक्ष की विजय हुई । इस सफलता का श्रेय पूज्य चारित्र चक्रवर्ती ऋषिराज को है जिन्होंने जिनशासन के अनुरागवश तीन वर्ष से अन्न छोड़ रखा था । आचार्य महाराज का अन्नाहार ११०५ दिनों के बाद हुआ था ।

आचार्यश्री को श्रुतसंरक्षण की बड़ी चिन्ता थी । आपकी प्रेरणा से धवल महाधवल जय-धवल रूप महान् शास्त्रों को ताम्रपत्र में उत्कीर्ण करवाया गया । तीनों सिद्धांत ग्रंथो के २६६४ ताम्रपत्रों का वजन लगभग ५० मन है । वे ग्रन्थ फलटण के जिनमन्दिर में रखे गए हैं । आचार्य महाराज की दृष्टि यह रही है कि शास्त्र द्वारा सम्यग्ज्ञान होता है अतः समर्थ व्यक्तियों को मन्दिरों में ग्रन्थ बिना मूल्य भेंट करने चाहिये ताकि सार्वजनिक रूप से सब लाभ ले सकें । वे कहते थे "स्वाध्याय करो । यह स्वाध्याय परम तप है । शास्त्रदान महापुण्य है । इसमें बड़ी शक्ति है ।"

जीवन पर्यंत निर्दोष मुनिचर्या का पालन करते हुए आचार्यश्री ने अगस्त १९५५ के तीसरे सप्ताह में कुन्थलगिरि पर यम सल्लेखना ले ली । २६ अगस्त शुक्रवार को उन्होंने वीरसागर महाराज को आचार्यपद प्रदान किया, उन्होंने कहा—"हम स्वयं के सन्तोष से अपने प्रथम निर्ग्रंथ शिष्य वीर-

सागर को आचार्य पद देते हैं ।" वीरसागर महाराज को यह महत्त्वपूर्ण सन्देश भेजा था, "आगम के अनुसार प्रवृत्ति करना, हमारी ही तरह समाधि धारण करना और सुयोग्य शिष्य को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करना, जिससे परम्परा बराबर चले ।" वीरसागर महाराज उस समय खानियाँ जयपुर मे विराजमान थे ।

महाराजश्री की समाधि-स्थिति की आनन्दोपलब्धि की कल्पना आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान के जाल मे फंसा गृहस्थ कैसे कर सकता है । महान् कुशल वीतराग योगीजन ही उस परमामृत की मधुरता को समझते हैं । महाराज उत्कृष्ट योगसाधना मे सलग्न थे । घबराहट वेदना का लेश भी नही था । जैसे ३५ दिन बीते, ऐसे रात्रि भी व्यतीत हो गई । रविवार का दिन था । अमृतसिद्धि योग था । १८ सितम्बर भादो सुदी द्वितीया नभोमण्डल मे सूर्य का आगमन हुआ, घडी में छह बजकर पचास मिनट हुए थे कि चारित्र चक्रवर्ती साधु शिरोमणि, क्षपकराज ने स्वर्ग को प्रयाण किया ।

आचार्य महाराज ने सल्लेखना के २६ व दिन के अपने अमर सदेश मे दिनाक ८-९-५५ को कहा था—

'सुख प्राप्ति जिसको करने की इच्छा हो उस जीव को हमारा आदेश है कि दर्शन मोहनीय कर्म का नाश करके सम्यक्त्व प्राप्त करो । चारित्रमोहनीय कर्म का नाश करो । सयम को धारण करो ।

सयम के बिना चारित्रमोहनीय कर्म का नाश नही होता । डरो मत, धारण करने मे डरो मत । सयम धारण किए बिना सातवा गुणस्थान नही होता है । सातवे गुणस्थान के बिना आत्मानुभव नही होता है । आत्मानुभव के बिना कर्मों की निर्जरा नही होती । कर्मों की निर्जरा के बिना केवलज्ञान नही होता । ॐ सिद्धाय नम ।

साराश धर्मस्य मूल दया । जिनधर्म का मूल क्या है ? सत्य, अहिसा । मुख से सभी सत्य अहिसा बोलते हैं, पालते नही । रसोई करो, भोजन करो—ऐसा कहने से क्या पेट भरेगा ? क्रिया किए बिना, भोजन किए बिना पेट नही भरता है बाबा । इसलिये क्रिया करने की आवश्यकता है । क्रिया करनी चाहिये, तब अपना कार्य सिद्ध होता है ।

सम्यक्त्व धारण करो, सयम धारण करो तब आपका कल्याण होगा, इसके बिना कल्याण नही होगा ।

उन साधुराज के चरणो में कोटि-कोटि नमन ।



आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज





स जातो येन जातेन, याति धर्मं समुन्नतिम् ।
परिवर्तिनि संसारे मृत. को वा न जायते ।।

जीते तो सभी जीव हैं परन्तु जीना उन्ही का सार्थक है जिनके जीवन मे धर्म का उद्योत हो, धार्मिकता का विकास हो । आध्यात्मिक ज्योतिर्धर परम पूज्य १०८ चारित्र चक्रवर्ती शान्तिसागरजी महाराज के प्रधान शिष्य आचार्य वीरसागरजी महाराज ऐसे ही पुरुषो मे से थे जिन्होने न केवल अपना ही जीवन सार्थक बनाया अपितु कई भव्यजीव भी आपके निमित्त से 'स्व धर्म' की ओर मुडे

ऐसी इस दिव्य विभूति का जन्म निजाम प्रान्त हैदराबाद स्टेट औरगाबाद (दक्षिण) जिले के अन्तर्गत वीरग्राम मे खण्डलवाल जातीय गंगवाल गोत्रीय श्रीमान् श्रेष्ठिवर रामसुखजी की धर्मपत्नी सौ० भाग्यवती की दक्षिण कुक्षि से विक्रम सवत १९३२ आषाढ शुक्ला पूर्णिमा की प्रात शुभ वेला मे हुआ था । जब आप गर्भ मे थे तब माता कुछ-न-कुछ शुभ स्वप्न देखा करती थी और उनकी भावना दान-पूजा, तीर्थवन्दनादि कार्यो को करने की रहा करती थी । माता-पिता ने बच्चे का नाम हीरालाल रखा । बालक के सुभग नाम कर्म के उदय के कारण उसे गोद मे लेकर खिलाने वाला प्रत्येक स्त्री-पुरुष अपार हर्ष का अनुभव करता था ।

शैशवावस्था बीती, बचपन आया, पाठशाला में पढ़ने हेतु भेजे गए। अध्ययन की रुचि जाग्रत हुई पर घर के धार्मिक वातावरण ने आपको संस्कारवान बनने में बहुत सहायता की। देव-दर्शन किये बिना आप भोजनादि नहीं करते थे। १६ वर्ष की अवस्था में माता-पिता ने आपका पाणिग्रहण संस्कार सम्पन्न करना चाहा परन्तु आपने उसे स्वीकार नहीं किया। आप अपना अधिकांश समय जिनालय में पूजन, पाठ, स्वाध्यायादि में बिताते, उदासीन रूप से व्यापारादि भी करते, तभी आपके सौभाग्य से विहार करते हुए ऐलक श्री पन्नालालजी महाराज नांदगांव पधारे। ऐलक महाराज ने आपकी प्रवृत्ति देखकर आपको व्रत ग्रहण करने के लिए प्रेरित किया। आपने महाराज श्री से सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण कर लिये। कुछ दिन ऐलक जी के साथ रहकर ही आपने धर्म-ध्यान साधा।

व्यापार में आपका मन नहीं लगा तो आपने अतिशय क्षेत्र कचनेर में समाज के बालकों में धार्मिक संस्कार डालने हेतु एक नि:शुल्क पाठशाला चलाई, पाठशाला खूब चली। बड़े योग्य विद्यार्थी निकले जिन्होने अपने गुरु के समान ही गौरव अर्जित किया। आचार्य १०८ श्री शिवसागरजी महाराज और मुनि श्री सुमति सागरजी महाराज आपकी इसी पाठशाला के प्रारम्भिक शिष्य रहे थे। आपकी धार्मिक शिक्षा से प्रेरणा प्राप्त कर इसी प्रकार अनेक जीवों ने अपना कल्याण किया।

शनैः शनैः आपको पाठशाला से भी अरुचि होने लगी—मन किसी और साधना के लिए उत्सुक था, तभी आपके कानों में चा० च० आचार्य शान्तिसागरजी की कीर्त्ति पहुंची कि वे चारित्र-धारी भी हैं और उत्कृष्ट विद्वान् भी तब वे कोहनूर (महाराष्ट्र) में विराज रहे थे। यह जानकर आप (ब्र० हीरालालजी) तथा नांदगांव निवासी सेठ श्री खुशालचन्दजी पहाड़े (पूज्य १०८ श्री चन्द्र-सागरजी महाराज) जिन्हें सातवी प्रतिमा के व्रत चरितनायक ने ही दिए थे—दोनों कोहनूर पहुंचे। वहाँ महाराजश्री के दर्शन से दोनों को अपार हर्ष और सन्तोष हुआ। आप दोनों वहाँ तीन चार दिन रुककर महाराज की चर्या और अन्यगतिविधियों का निरीक्षण करते रहे परन्तु महाराज की चर्या में कोई त्रुटि निकाल पाने में दोनों ही असफल रहे।

अब तो दोनों ने सोचा कि ऐसे गुरुदेव को छोडकर अन्यत्र नही जाना चाहिए। यह अपना परम सौभाग्य एवं असीम पुण्योदय है कि ऐसे गुरु मिले। दोनों ब्रह्मचारी गुरुदेव के पास पहुचे और उनसे अपने जैसा बनाने की प्रार्थना करने लगे। महाराज श्री ने दोनों का परिचय प्राप्त किया और कहा कि पहले आप दोनों अपने घरेलू और व्यापार सम्बन्धी कार्यों से निवृत्त हो जाओ, फिर दीक्षा की बात सोचेंगे। गुरु की आज्ञा पाकर दोनों अपने-अपने स्थानों को आए और शीघ्र ही गृहस्थ

सम्बन्धी अपने सारे उत्तरदायित्वो से मुक्त होकर आचार्य श्री के पास वि० स० १६७६ में कुम्भोज जा पहुंचे। वहां फिर दीक्षा की याचना की। महाराज ने दीक्षा की गुरु गम्भीरता और कठोरता के बारे में तथा उपसर्ग, परीषहो व व्रत उपवासो के सम्बन्ध मे खूब कहकर इन्हे अपने सकल्प से विरत करना चाहा परन्तु ये दोनो डटे रहे। दोनो का दृढ सकल्प जानकर वि० स० १६८० भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को दोनो को क्षुल्लक दीक्षा दी गई। ब्र० हीरालालजी अब महाराज वीरसागरजी हो गए और ब्र० खुशालचन्द्रजी चन्द्रसागर बन गए। दोनो ने वर्षों तक गुरु महाराज के सान्निध्य मे रहकर ध्यानाध्ययन किया। कुछ ही समय बाद फिर क्षु० वीरसागरजी महाराज ने मुनिदीक्षा हेतु प्रार्थना की। आचार्य श्री ने इन्हे योग्य पात्र समझ कर ७ माह के बाद ही वि० स० १९८१ मे आश्विन शुक्ला ११ को समडोली नगर मे कर्मोच्छेदिनी दैगम्बरी दीक्षा दे दी। दिगम्बर वेष धारण कर आप अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा अपने मनुष्य जन्म को धन्य समझने लगे।

आचार्यश्री के साथ ही आपने सब सिद्धक्षेत्रो व अतिशय क्षेत्रो की वन्दना की। १२ चातुर्मास भी आपने साथ ही किए। आपकी गुरुभक्ति अनुपम थी।

सघ के विशाल हो जाने के कारण सघस्थ सर्व मुनियो को आचार्यश्री ने अलग-अलग विहार करने की आज्ञा दे दी। पूज्य वीरसागरजी और मुनि आदिसागरजी-दोनो को साथ रखकर स्वतन्त्र कर दिया। पृथक् होने के बाद आपका प्रथम वर्षा योग वि० स० १६६३ मे ईडर (वेथपुर) मे हुआ। अनन्तर क्रमश टाका टूका, इन्दौर (२), कचनेर, कन्नड, कारजा, खातेगाँव, उज्जैन, झालरापाटन, रामगज मण्डी नैनवा सवाई माधोपुर, नागौर, सुजानगढ, फुलेरा, ईसरी, निवाई, टोडारायसिह और जयपुर खानिया (३) मे आपके चातुर्मास हुए। सर्वत्र अभूतपूर्व धर्मप्रभावना हुई। आपने अपने साधु जीवन मे छह क्षुल्लक दीक्षाएँ ८ क्षुल्लिका दीक्षाएँ, ११ आर्यिका दीक्षाएँ और ७ मुनिदीक्षाएँ प्रदान कर इन्हे धर्ममार्ग मे योजित किया तथा परम्परा को गति प्रदान करते हुए आने वाली सन्तति के लिए आदर्श प्रस्तुत किया।

विक्रम सम्वत २०१२ मे जब महाराजश्री सघ सहित खानियाँ जयपुर मे विराज रहे थे। तब आपके गुरुदेव चा० च० आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज ने कुन्थलगिरि मे अपनी यम सल्लेखना के अवसर पर अपना आचार्य पद वहां उपस्थित विशाल जनसमुदाय के बीच आपको प्रदान करने की घोषणा की थी। आचार्यश्री द्वारा प्रदत्त पीछी-कमण्डलु आपको जयपुर मे एक विशाल आयोजन मे विशाल चतुर्विधसघ के समक्ष विधिपूर्वक अर्पित किए गए।

आपके सान्निध्य मे स० १६६७ मे कचनेर मे, स० १६६८ मे मागी तु गी मे, स० १६६६ मे सिद्धक्षेत्र मुक्तागिरि मे, स० २००१ मे पिडावा मे पचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ तथा स० २०११ में

निवाई, में मानस्तम्भ प्रतिष्ठा सानन्द सम्पन्न हुई। आचार्यश्री ने संघ सहित भारत के अनेक प्रान्तों—राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र—में निर्भीकतापूर्वक विहार किया। विहार में कभी किसी प्रकार की विपत्ति नहीं आई। मुक्तागिरि से खातेगांव का रास्ता बड़ा भयानक है, ऐसे मार्ग में भी महराज के तप के प्रभाव से कोई अप्रिय घटना नही घटी। आपके सदुपदेश से प्रभावित होकर कई मांसाहारियों ने मांस भक्षण का त्याग किया, रात्रि भोजन का त्याग किया।

महाराजश्री साधुचर्या के इतने पाबन्द थे कि अस्वस्थ दशा में भी कभी प्रमाद नहीं करते थे। अपस्मार और कम्पन रोगों ने भी आप पर आक्रमण किया किन्तु आपके तपोबल व पुण्यप्रभाव से वे शीघ्र दूर हो गए। नागौर में आपकी पीठ पर नारियल के आकार का एक भयानक फोड़ा हो गया फिर भी महाराज ने अध्ययन-अध्यापन सम्बन्धी अपनी क्रियाओं में कभी प्रमाद नहीं किया।

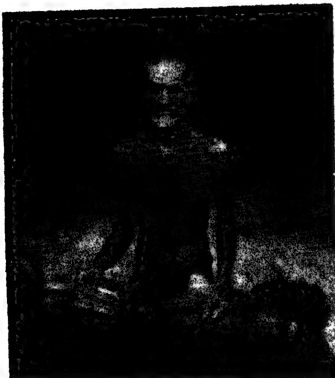
वि० सं० २०१४ का वर्षायोग जयपुर खानियां में था। आप अस्वस्थ तो नहीं थे किन्तु आपकी शारीरिक दुर्बलता बढती जा रही थी कि अचानक ही आश्विन कृष्णा अमावस्या को प्रातः १० बजकर ५० मिनट पर आप इस लोक और नश्वर देह को छोड़कर सुरलोक को प्रयाण कर गए।

आचार्यश्री परमदयालु, स्वाध्यायशील, तपस्वी, अध्यात्मयोगी, निस्पृह साधु शिरोमणि थे। आपके आदर्श जीवन ने हजारों को त्याग मार्ग की ओर उन्मुख किया।

ऐसे परमपावन, आचार्यप्रवर के चरणों में सश्रद्ध नमन।



मुनि श्री चन्द्रसागरजी महाराज



जन्म :

भारत देश के महाराष्ट्र प्रान्त मे नादगाव नामक एक नगर है। वहा **खण्डेलवाल** जाति मे जैनधर्म परायण नथमल नामक श्रावकरत्न रहते थे। उनकी भार्या का नाम सीता था। वास्तव मे, वह सीता ही थी अर्थात् शीलवती और पति की आज्ञानुसार चलने वाली थी। सेठ नथमलजी और सीताबाई का सम्बन्ध जयकुमार सुलोचना के समान था। शालिवाहन सवत् १६०५ विक्रम सवत् १६४० मिती माघ कृष्णा त्रयोदशी, शनिवार की रात्रि को पूर्वाषाढा नक्षत्र म सीताबाई की पवित्र कुक्षि मे एक पुत्ररत्न ने जन्म लिया। जिसकी रूप-राशि लखकर सूर्य चन्द्रमा भी लज्जित हुए। पुत्र क मुखदर्शन से माता को अपार हर्ष हुआ। पिता ने हर्षित होकर कुटुम्बी जनो को उपहार दिये। सभी पारिवारिक जन हर्षित थे। दसवे दिन बालक का नामकरण सस्कार किया गया। जन्म नक्षत्रानुसार तो जन्म नाम भूरामल, भीमसेन, आदि होना चाहिये था परन्तु पुत्रोत्पत्ति मे माता पिता को अपूर्व खुशी हुई थी अत उन्होने बालक का नाम खुशालचन्द्र रखा हो ऐसा अनुमान लगाया जाता है। महाराजश्री के हस्तलिखित गुटके मे जो जन्म तिथि

पौष कृष्णा त्रयोदशी शनिवार पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में रात्रि के समय लिखी गई है वह महाराष्ट्र देश की अपेक्षा है। मरुस्थलीय और महाराष्ट्र के कृष्ण पक्ष में एक माह का अन्तर है। शुक्ल पक्ष दोनों के समान हैं अतः माघ कृष्णा त्रयोदशी कहो या पौष कृष्णा त्रयोदशी, दोनों का एक ही अर्थ है।

बालक खुशालचन्द्र द्वितीया के चन्द्रवत वृद्धिगत हो रहा था। जिस प्रकार चन्द्रमा की वृद्धि से समुद्र वृद्धिगत होता है उसी प्रकार खुशालचन्द्र की वृद्धि से कुटुम्बी जनों का हर्ष रूपी समुद्र भी बढ़ रहा था।

विवाह : पत्नी वियोग : ब्रह्मचर्यव्रत :

अभी खुशालचन्द्र ८ वर्ष के भी नहीं हुए थे कि पूर्वोपार्जित पाप कर्म के उदय से पिता की छत्रछाया आपके सिर से उठ गई। पिताश्री के निधन से घर का सारा भार आपकी विधवा माताजी पर आ पड़ा। उस समय आपके बडे भाई की उम्र २० वर्ष की थी। और छोटे भाई की चार वर्ष की। घर की परस्थिति नाजुक थी, ऐसी परिस्थिति में बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था कैसे हो सकती है, इसे कोई भुक्त भोगी ही जान सकता है। बालक खुशालचन्द्र की बुद्धि तीक्ष्ण थी किन्तु शिक्षण का साधन नही होने के कारण उन्हें छठी कक्षा के बाद १४ वर्ष की अवस्था में ही अध्ययन छोड़कर व्यापार के लिए उद्यम करना पड़ा। पढ़ने की तीव्र इच्छा होते हुए भी पढना छोड़ना पड़ा—ठीक ही है, कर्मों की गति बड़ी विचित्र है। इस संसार में किसी की भी इच्छाएँ पूरी नहीं होती हैं। युवक खुशालचन्द्र की इच्छा के विपरीत कुटुम्बी जनों ने बीस वर्ष की अवस्था होने पर उसकी शादी कर दी। विवाह से आपको सन्तोष नहीं था, पत्नी रुग्ण रहती थी। डेढ साल बाद ही आपकी पत्नी का स्वर्गवास हो गया। आपके लिये मानो "रवात् नो रत्नवृष्टि" आकाश से रत्नों की वर्षा ही हो गई, क्योंकि आपकी रुचि भोगों में नहीं थी। इस समय आप इक्कीस वर्ष के थे। अंग अंग में यौवन फूट रहा था, भाल देदीप्यमान था। तारुण्यश्री से आपका शरीर समलंकृत था अतएव कुटुम्बी-जन आपको दूसरे विवाह बंधन में बांधकर सासांरिक विषय भोगों मे फँसाने का प्रयत्न करने लगे। परन्तु खुशालचन्द्र की आत्मा अब सब प्रकार से समर्थ थी, सांसारिक यातनाओं से भयभीत थी अतः आपने मकड़ी के समान अपने मुख की लार से अपना जाल बना कर और उसी में फँसकर जीवन गँवाने की चेष्टा नहीं की। आपने अनादिकालीन विषयवासनाओं पर विजय प्राप्त कर आत्मतत्त्व की उपलब्धि के लिए दुर्बलता के पोषक, दुःख और अशान्ति के कारण गृहवास को तिलाञ्जलि देकर दिगम्बर मुद्रा अंगीकार करने का विचार किया। अतः आपने ज्येष्ठ शुक्ला नवमी विक्रम संवत् १९९२ के दिन आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत स्वीकार कर लिया। खिलते यौवन में ब्रह्मचर्यव्रत धारण कर आपने अद्‌भुत एवं महान वीरता का काम किया।

पांचवीं प्रतिमा :

वीर संवत् २४४६ में श्री १०५ ऐलक पन्नालालजी का चातुर्मास नांदगांव में हुआ तब आपने आषाढ़ शुक्ला दशमी के दिन तीसरी सामायिक प्रतिमा धारण की। श्री ऐलक महाराज के प्रसाद से आपकी विरक्ति प्रतिदिन बढती गई। भाद्रपद शुक्ला पंचमी को आपने सचित्तत्याग नाम की पांचवीं प्रतिमा धारण की।

चातुर्मास पूरा होने के बाद आपने ऐलक महाराज के साथ महाराष्ट्र के ग्रामों और नगरों में चार माह तक भ्रमण कर जैन धर्म का प्रचार किया, फिर आपने समस्त तीर्थक्षेत्रों की यात्रा की। क्षेत्रों मे शक्त्यनुसार दान भी किया।

उस समय इस भू तल पर दिगम्बर मुनियों के दर्शन दुर्लभ थे। महानिधि के समान दिगम्बर साधु कहीं कहीं दृष्टिगोचर होते थे। आपका हृदय मुनिदर्शन हेतु निरन्तर छटपटाता रहता था। आप निरन्तर यही विचार करते थे कि अहो! वह शुभ घडी कब आएगी जिस दिन मै भी दिगम्बर होकर आत्मकल्याण में अग्रसर हो सकूंगा।

आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज के दर्शन :

एक दिन आपने आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज की ललित कीर्ति सुनी। आपका मन गुरुवर के दर्शनों के लिए लालायित हो उठा। उनके दर्शनों के बिना आपका मन जल के बिना मछली के समान तड़फने लगा। इसी समय ब्र० हीरालालजी गंगवाल आचार्यश्री के दर्शनार्थ दक्षिण की ओर जाने लगे। यह वार्ता सुनकर आपका मन मयूर नृत्य करने लगा और आपने भी उनके साथ प्रस्थान किया। आचार्यश्री उस समय ऐनापुर के आस पास विहार कर रहे थे। आप दोनों महानुभाव उनके पास चले गये। तेजोमय मूर्त्ति शान्तिसागरजी महाराज के चरण कमलों में आपने अतीव भक्ति से नमस्कार किया, आपके चक्षु पटल निर्निमेष दृष्टि से उस सौम्यमूर्ति की ओर निहारते ही रह गये। आपका मानस आनन्द की तरंगों से व्याप्त हो गया। आपने आचार्यश्री की शान्त मुद्रा को देखकर निश्चय कर लिया कि यदि ससार में कोई मेरे गुरु हो सकते हैं तो यही महानुभाव हो सकते हैं और कोई नहीं। आपका चित्त आचार्यश्री के पादमूल मे रहने के लिये ललचाने लगा। आप गोम्मट स्वामी की यात्रा कर वापस आये और उनसे सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। कुछ दिन घर में रहकर आचार्यश्री के पास वीर निर्वाण संवत २४५० फाल्गुन शुक्ला सप्तमी के दिन क्षुल्लक के व्रत ग्रहण किये। अब आप निरन्तर आचार्यश्री के समीप ही ध्यान अध्ययन में रत

रहने लगे । आचार्य श्री ने समडोली में चातुर्मास किया । आश्विन शुक्ला एकादशी वीर निर्वाण संवत् २४५० में आपने ऐलक दीक्षा ग्रहण की । आपका नाम चन्द्रसागर रखा गया । वास्तव में आप चन्द्र थे । आपका गौर वर्ण उन्नत भाल चन्द्र के समान था । आपके धवल यश की किरणें चन्द्रमा के समान समस्त संसार में फैल गई । वीर संवत २४५० में आचार्यश्री ने सम्मेदशिखरजी की यात्रा के लिए प्रस्थान किया । ऐलक चन्द्रसागरजी भी साथ में थे । संघ फाल्गुन में शिखरजी पहुंचा, तीर्थराज की वन्दना कर सबने अपने को कृतकृत्य समझा । तीर्थराज पर संघपति पूनमचन्द घासीलाल ने पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करवाई । लाखों नर नारी दर्शनार्थ आये । धर्म की अपूर्व प्रभावना हुई । वहां से विहार कर, कटनी, ललितपुर, जम्बूस्वामी सिद्धक्षेत्र मथुरा में चातुर्मास करके अनेक ग्रामों में धर्मामृत की वर्षा करते हुए सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पर पहुंचे । वहाँ पर आपने वीर संवत २४५६ मार्गशीर्ष शुक्ला १५ सोमवार मृग नक्षत्र मकर लग्न में दिन के १० बजे आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज के चरणसान्निध्य में दिगम्बर दीक्षा ग्रहण की । समस्त कृत्रिम वस्त्राभूषण त्याग कर आपने पंच महाव्रत, पंच समिति, तीन गुप्तिरूप आभूषण तथा २८ मूलगुणरूप वस्त्रों से स्वयं को सुशोभित किया ।

दिगम्बर मुद्रा धारण करना सरल और सुलभ नही है, अत्यन्त कठिन है । धीर वीर महापुरुष ही इस मुद्रा को धारण कर सकते हैं । आपने इस निर्विकार मुद्रा को धारण कर अनेक नगरों व ग्रामों में भ्रमण किया तथा अपने धर्मोपदेश से जन जन के हृदय पटल के मिथ्यान्धकार को दूर किया । सुना जाता है कि आपकी वक्तृत्व शक्ति अद्भुत थी । आपका तपोबल, आचारबल, श्रुतबल, वचनबल, आत्मिकबल और धैर्य प्रशंसनीय था ।

सिंहवृत्तिधारक :

जिसप्रकार सिंह के समक्ष श्याल नही ठहर सकते उसीप्रकार आपके समक्ष वादीगण भी नही ठहर सकते थे । श्याल अपनी मण्डली में ही हु हु कर शोर मचा सकते है परन्तु सिंह के सामने चुप रह जाते हैं, वैसे ही दिगम्बरत्व के विरोधी जिन शास्त्र के मर्म को नही जानने वाले अज्ञानी दूर से ही आपका विरोध करते थे परन्तु सामने आने के बाद मूक के समान हो जाते थे ।

सुना है कि जिस समय आचार्यश्री का संघ दिल्ली में आया था । उस समय एक सरकारी आदेश द्वारा दिगम्बर साधुओं के नगर विहार पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था । जब यह वार्ता निर्भीक चन्द्रसिन्धु के कानों में पड़ी तो उन्होंने विचार किया अहो ! ऐसे तो मुनि मार्ग रुक ही जाएगा इसलिये उन्होंने आहार करने के लिये शुद्धि की, और वीतराग प्रभु के समक्ष कायोत्सर्ग कर हाथ में

कमण्डलु लेकर शहर मे जाने लगे। श्रावक चिन्तित हो गए—क्या होगा ? परन्तु महाराजश्री के मुखमण्डल पर अपूर्व तेज था। आप सिंह के समान निर्भय और शान्त भाव से चले जा रहे थे। जब अंग्रेज साहब की कोठी के पास से निकले तो बाहर खड़ा साहब इनकी शान्त मुद्रा को देखकर नतमस्तक हो गया, इनकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगा। सत्य ही है महापुरुषों का प्रभाव अपूर्व होता है।

रत्नत्रय की मूर्तिमन्त प्रतिमा :

वास्तव मे मुनिराज श्री चन्द्रसागरजी को देखकर रत्नत्रय की मूर्तिमन्त प्रतिमा को देखने का सन्तोष प्राप्त होता था। महाराजश्री का जीवन हिमालय की तरह उत्तुंग सागर की तरह गम्भीर, चन्द्रमा की तरह शीतल तपस्या मे सूर्य की तरह प्रखर स्फटिक की तरह अत्यन्त निर्दोष आकाश की तरह अन्तर्बाह्य खुली किताब महाव्रतो के पालन मे वज्र की तरह कठोर मेरु सदृश अडिग एव गगा की तरह अत्यन्त निर्मल था।

वे साधुओ मे महासाधु तपस्वियो मे कठोर तपस्वी योगियो मे आत्मलीन योगी महाव्रतियो मे निरपेक्ष महाव्रती और मुनियो मे अत्यन्त निर्मोही मुनि थे। वास्तव मे ऐसे निर्मल निःस्पृह और स्थितिप्रज्ञ साधुओ से ही धर्म की शोभा है। विश्व के प्राणी ऐसे ही सत्साधुओ के दर्शन, समागम और सेवा से अपने जीवन को धन्य बना पाते हैं।

पूज्य तरणतारण महामुनिराज श्री चन्द्रसागरजी महाराज अपने दीक्षा गुरु परम पूज्य श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी महाराज की शिष्य परम्परा मे और साधु जीवन मे न केवल ज्येष्ठता मे श्रेष्ठ थे वरन् श्रेष्ठता मे भी श्रेष्ठ थे। उनके पावन पद विहार से धरा धन्य हो गई। सूच्चा अध्ययन जगमगा उठा और आत्महितार्थियो का आत्मपथ पर चलने के लिए प्रकाशस्तम्भ मिल गया। वास्तव मे वे लोग महाभाग्यशाली है जिन्हे ऐसे लोकोत्तर असाधारण महानतपस्वी सच्चे आगम निष्ठ साधु के दर्शन का सुयोग मिला।

आपकी यही भावना रहती थी कि सर्वे भवन्तु सुखिनः। आप संसारी जीवो को धर्माभिमुख करने हेतु सतत प्रयत्नशील रहते थे। गुरुदेव की तपस्या केवल आत्मकल्याण के लिए ही नही अपितु इस युग की धर्म और मर्यादा का विरोध करने वाली दूषित प्रवृत्तियो को रोकने के लिए भी थी। मानव की पापवृत्तियो को देखकर उनका चित्त आशंकित था। महाराजश्री ने इनका नाश करने का प्रयत्न असीम साहस और धैर्य के साथ किया। धर्मभावनाशून्य मूढ लोगो ने इनके पथ मे पत्थर बरसाने मे कोई कमी नही रखी परन्तु मुनिश्री ने एक परम साहसी सेनानी की भांति

अपनी गति नही बदली । धन और वैभव को ठुकराने वाले क्या कभी विरोधियो की परवाह कर सकते हैं, कभी नही ।

महाराज श्री हमेशा ही सत्य, सिद्धान्त और आगमपथ के अनुयायी रहे । सिद्धान्त के आगे आप किसी को कोई महत्व नही देते थ । यदि शास्त्र की परिपालना मे प्राणो की भी आवश्यकता होती तो आप नि संकोच देने को तैयार रहते थे । जिनधर्म के मर्म को नही जानने वाले द्वषाग्नि दग्ध अज्ञानियो ने महाराजश्री पर वर्णनातीत अत्याचार किए जिन्हे लेखनी से लिखा भी नही जा सकता । परन्तु धीर वीर मुनिश्री ने इतने घोरोपसर्ग आने पर भी न्यायमार्ग एव अपन सिद्धान्त को नहीं छोडा । सत्य है 'न्यायात्पथ प्रविचलन्ति पद न धीरा' घोरोपसर्ग आने पर भी धीर-वीर न्यायमार्ग से विचलित नही होते । आपत्तियों को दृढता से सहन करने पर ही गुणो की प्रतिष्ठा होती है । गुरुदेव ने घोर आपत्तियो का सामना किया जिससे आज भी उनका नाम अजर अमर है ।

मारवाड के सुधारक

जिस समय हमारे श्रावक गण चारित्र मे च्युत हो धर्मविहीन बनते जा रहे थे । उस समय आपने जैन समाज को धर्मोपदेश देकर सन्मार्ग मे लगाया । आप अनेको ग्रामो और नगरो मे भ्रमण करके अपने वचनामृत के द्वारा धर्मपिपासु भव्यप्राणियो को सन्तुष्ट करते हुए राजस्थान प्रान्त के सुजानगढ नगर मे पधारे । वि० स० १९९२ मे आपने यहा चातुर्मास किया । इस मारवाड देश की उपमा आचार्यो ने ससार से दी है । यहा उष्णता भी अधिक है तो ठण्ड भी अधिक पडती है । गर्मी के दिनो मे भीषण सूय किरणो से तप्तायमान धूलि से ज्वाला निकलती है । आपने जिस समय राजस्थान मे प्रवास किया उस समय यहाँ के निवासी मुनियो की चर्या से अनभिज्ञ थे, खान-पान अशुद्ध हो चला था । आपने अपने मार्मिक उपदेशो से श्रावको को सम्बोधित किया, उनके योग्य आचार से उन्हे अवगत कराया, आपके सदुपदेश से कई व्रती बने । मारवाड प्रान्त के लोगो के सुधार का श्रेय आपको ही है ।

डेह मे प्रभावना

लाडनू से मगसिर सुदी चतुर्दशी को आचार्यकल्पश्री ने विहार किया । साथ मे थ मुनि निर्मलसागरजी, एलक हेमसागरजी क्षुल्लक गुप्तिसागरजी और ब्र० गौरीलालजी ।

मिती पौष कृष्णा दूज वि० स० १९९२ के प्रात ९ बजे मुनिसघ का डेह मे प्रवेश हुआ । सारा ग्राम मानो उलट पडा, विशाल शोभायात्रा निकाली गई । जागीरदार का सरकारी लवाजमा तथा बैण्ड भी जुलूस मे सम्मिलित था । लगभग २००० स्त्री पुरुष और बच्चे सोत्साह जय जयकार

कर रहे थे। साधुओं ने पहले श्री पार्श्वनाथ नसियाँजी के दर्शन किए, अनन्तर प्राचीन मन्दिर और नवीन मन्दिर के दर्शन करते हुए संघ श्री दिगम्बर जैन पाठशाला में पहुंचा। आचार्यकल्पश्री के उद्बोधन के बाद सभा विसर्जित हुई।

सैकड़ों वर्षों से इस प्रदेश मे दिगम्बर जैन साधुओं का आगमन न होने से सब लोग साधुओं की क्रियाओं से अनभिज्ञ थे। संघ की चर्या देख देखकर सब लोग आश्चर्यान्वित होते थे। पूज्य चन्द्रसागरजी महाराज ने श्रावकों की शिथिलता और अशुद्ध खानपान को भांप लिया था अतः आपके उपदेश का विषय प्रायः यही होता था। आपके उपदेशों से प्रभावित होकर और सच्चा मार्ग ज्ञात कर अनेक श्रावक श्राविकाओं ने दूसरी प्रतिमा के व्रत ग्रहण किए, जिनमें मोहनीबाई (अधुना आर्यिका इन्दुमतीजी) व इनके भाई-भाभी भी थे। अनेकानेक ने मद्य मांस का त्याग किया। रात्रि भोजन छोड़ा तथा जल छान कर पीने का नियम लिया। यों कहना चाहिये कि आपके आगमन से डेह वासियों का जीवन सर्वथा परिवर्तन हो गया सबके सब शुद्ध खान पान और नियमों की ओर आकृष्ट हुए।

उत्कृष्ट धर्म प्रचारक :

गुरुओ की गरिमा गाथा गाई नहीं जा सकती। आपके वचनों में सत्यता और मधुरता, हृदय में विवक्षा, मन में मृदुता, भावना मे भव्यता, नयन में परीक्षा, बुद्धि मे समीक्षा, दृष्टि में विशालता, व्यवहार में कुशलता और अन्तःकरण मे कोमलता कूट कूट कर भरी हुई थी। इसलिये आपने मनुष्य को पहचान कर अर्थात् पात्र की परीक्षा कर व्रत दिये, जन जन के हृदय मे संयम की सुवास भरी।

गगन का चन्द्र अन्धकार को दूर करता है। परन्तु चन्द्रसागरजी रूपी निर्मल चन्द्र अज्ञानियों के मन मन्दिर में ज्ञान का प्रकाश फैलाता था। आपने धर्मोपदेश देकर जन जन का अज्ञान दूर किया। देश-देशान्तरों में विहार कर जिनधर्म का प्रचार किया। उनका यह परमोपकार कल्पान्त काल तक स्थिर रहेगा। उनके वचनों मे ओज था। उपदेश की शैली अपूर्व थी। मधुर भाषणों से उनके जैन सिद्धान्त के अभूतपूर्व मर्मज्ञ होने की प्रखर प्रतिभा का परिचय स्वतः ही मिलता था आपके सरल वाक्य रश्मियो से साक्षात् शान्ति सुधारस विकीर्ण होता था जिसका पान कर भक्त जन झूम उठते और अपूर्व शान्ति लाभ लेते थे।

अपूर्व मनोबल :

महाराजश्री की वृत्ति सिंहवृत्ति थी अतएव उनके अनुशासन तथा नियंत्रण में माता का लाड न था बल्कि सच्चे पिता की सी परम हितैषिणी कट्टरता थी। जिसके लिये उन्होंने अपने जीवनोपार्जित यश की बलि चढ़ाने में जरा सा भी सकोच नहीं किया।

इन्दौर में सरसेठ हुकमीचन्दजी ने आचार्यश्री को हथकड़ी पहनाने की पूर्ण कोशिश की पर सेठ सा० की कोशिश व्यर्थ गई तथा आचार्यश्री की सिहवृत्ति से सरकारी वर्ग के विशिष्ट लोग आपके चरणों में नतमस्तक हो गए तथा सेठ जी के मायाजाल का भण्डा फूट गया।

अनेक क्षेत्रों और स्थानों में विहार करते हुए मुनिश्री संघ सहित संवत् २००१ फाल्गुन सुदी अष्टमी के सायंकाल बावनगजा में पधारे। उस समय आपके इस भौतिक शरीर को ज्वर के वेग ने पकड़ लिया था। इसलिये आपका शरीर यद्यपि दुर्बल हो गया था फिर भी मानसिक बल अपूर्व था। बड़वानी सिद्धक्षेत्र में श्री चांदमल धन्नालाल की ओर से मानस्तम्भ प्रतिष्ठा थी। आपने रुग्णावस्था मे भी अपने हाथ से प्रतिष्ठा कराई।

पूज्य गुरुदेव की शारीरिक स्थिति अधिकाधिक निर्बल होती गई तो भी महाराजश्री ने फाल्गुन सुदी १२ को फरमाया कि मुझे चूलगिरि के दर्शन कराओ।

लोगों ने कहा :

"महाराज ! शरीर स्वस्थ होने पर पहाड पर जाना उचित होगा, गुरुदेव बोले "शरीर का भरोमा नही। यदि शरीर ही नहीं रहा तो हमारे दर्शन रह जायेगे।"

महाराज श्री दर्शनार्थ पर्वत पर पधारे। उस समय उन्हें १०५ डिग्री ज्वर था, निर्बलता भी काफी थी। महाराजश्री ने बड़े उत्साह और हर्ष पूर्वक दर्शन किये। संन्यास भी ग्रहण कर लिया। अर्थात् अन्न का त्याग कर दिया। फाल्गुन शुक्ला १३ को मात्र जल लिया।

अन्तिम सन्देश :

त्रयोदशी को ही अन्न जल त्याग कर संन्यास धारण करते समय आपने पूछा था कि अष्टाह्निका की पूर्णता परसों ही है न ?

लोगो के हाँ करने पर महाराज ने फरमाया "सब लोग धर्म का सेवन न भूले। आत्मा अमर है।"

फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशी को शक्ति और भी क्षीण हो गई। डाक्टरों ने महाराजश्री को देखकर कहा कि महाराज का हृदय बडा दृढ़ है। औषधि लेने पर तो शर्तिया स्वस्थ हो सकते है परन्तु गुरुदेव कैसी औषधि लेते ? उनके पास तो मुक्ति में पहुंचाने वाली परम वीतरागतारूप आदर्श महौषधि थी।

शरीर त्याग :

फाल्गुन शुक्ला १५ के दिन बारह बजकर बीस मिनट पर गुरुदेव ने इस विनाशशील शरीर को छोड़कर अमरतत्व प्राप्त कर लिया। यह सन् १९४५ की २६ फरवरी का दिन था। इस दिन अष्टाह्निका की समाप्ति थी। दिन भी चन्द्रवार था। परमाराध्य गुरुदेव चन्द्रसागर ने पूर्ण चन्द्रिका चन्द्रवार के दिन सिद्धक्षेत्र पर होलिका की आग में अपने कर्मों को शरीर के साथ फूंक दिया। समस्त भक्तजन बिलखते रह गये, सबकी आंखे भर आई।

चरण वन्दना :

दृढ़ तपस्वी, शीर्षमार्ग के कट्टर पोषक, वीतरागी, परम विद्वान्, निर्भीक, प्रसिद्ध उपदेशक, आगम मर्मस्पर्शी, अनर्थ के शत्रु, सत्य के पुजारी, मोक्ष मार्ग के पथिक, संसारी प्राणियों के तारक, आत्मबोधी, स्वपर-उपकारी, अपरिग्रही, तारण-तरण, सन्तापहरण स्व० गुरुदेव के चरण कमलों में शत-शत वन्दन ! शत-शत वन्दन !!



आचार्य श्री नमिसागरजी महाराज



पूज्य आचार्यश्री का जन्म विक्रम १६४५ ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्थी मंगलवार तदनुसार ता० २६ मई सन् १८८८ को दक्षिण प्रान्त के शिवपुर नगर जिला बेलगांव में हुआ था। इनके पिताजी का नाम श्री यादवराय तथा मातेश्वरी का नाम श्रीमती कलादेवी था। ये दक्षिण प्रान्तीय प्रसिद्ध जैन क्षत्रिय पंचम जाति के व्यापारी थे। श्री यादवरायजी के कुल तीन संतान उत्पन्न हुई, जिनमें पहली संतान कुछ दिन जीवित रहकर चिर निद्रित हो गई। द्वितीय पूज्य आचार्य महाराज हैं, जिनका तत्कालीन नाम होनप्पा रखा गया। इनके पीछे प्रायः दो ढ़ाई वर्ष बाद एक छोटा भाई और हुआ। ये दो वर्ष के भी पूर्ण न होने पाये थे कि इनके पिताजी दिवगत हो गये और उनकी छत्र-छाया इनके ऊपर से सदैव के लिये उठ गई। उस समय इनके छोटे भाई की अवस्था प्रायः ३ मास की थी इनकी विदुषी माता ने दोनों का लालन-पालन किया तथा शिक्षित बनाने के लिये उसी गांव की राजकीय शाला में बैठा दिया। दो तीन कक्षा तक ही प्रारम्भिक शिक्षा ले पाये थे कि अभाग्यवशात् विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा और इनकी माताजी का भी स्वर्गवास हो गया। उस समय इनकी आयु १२ वर्ष की होगी, घर में कोई बड़ा न होने से खर्च का सारा बोझ इन्हीं के ऊपर आ पड़ा, समस्या बड़ी विकट थी, आजीविका का और कोई उपाय न था, अतः इच्छा न होते हुए भी पढ़ाई का काम छोड़ना पड़ा। फिर भी अपने भाई को पढ़ाने का पूरा ध्यान रखा।

इनका पैतृक व्यापार बर्तनों की दुकान का था। अपने पूर्वजों की छोड़ी हुई पर्याप्त जमीन भी थी कुछ समय तक तो अभ्यास न होने से कुछ कष्ट रहा, पर बाद में अपनी कुशलता से उन दोनों कार्यों को बड़ी सावधानी से सम्भाल लिया।

२६ वर्ष की आयु अर्थात् सन् १९१४ में आपका विवाह हो गया। चार वर्ष बाद द्विरागमन (गोना) हुआ। उससे आपके पुत्र उत्पन्न हुआ किन्तु तीन महीने बाद ही वह काल कवलित हो गया। इस दुःख को भूल भी न पाये थे कि उनके तीन मास पीछे ही आपकी धर्मपत्नी का भी सदैव के लिये वियोग हो गया। इस प्रकार प्राय: डेढ़ वर्ष तक ही आपको स्त्री का संयोग रहा अब आपने दूसरा विवाह न करने का निश्चय कर लिया।

हम पहिले ही लिख चुके हैं कि ये व्यापार में बडे कुशल थे तथा समय समय पर अन्य व्यापार भी करते थे। एक बार कपास (रुई) के व्यापार निमित्त आपको सेरदाड़ राज्यान्तर्गत जाम्बागी नामक गांव में जाना पड़ा। वहां पर इनको व्यापार सम्बन्धि कार्याधिक्य से दिन में भोजन बनाने का अवकाश न मिला। दक्षिण प्रान्त मे अपने ही हाथ से भोजन बनाकर खाने की प्रथा है। अत: रात्रि में ही इन्होंने अपने हाथ से भोजन बनाना प्रारम्भ कर दिया। उन दिनों तक जैन कुल में उत्पन्न होते हुए भी शिक्षा के अभाव से धार्मिक भावना जागृत नही हुई थी, अत: रात्रि में भी भोजन कर लेते थे। इन्होंने भात बनाने के लिए उबलते हुए पानी में चावल डाले। स्मृति-दोष से उसका ढक्कन न रख पाये। दूध, दही, मीठा लेने के लिये नौकर को बाजार भेज दिया, उधर न मालूम कब दो बड़े बड़े कीड़े उसमें गिर पडे। जब भोजन करने बैठे तब भात परोसने के साथ वे दोनों कीड़े भी उस थाल में परस गये। उनको देखकर इनके मन में बड़ी ग्लानि उत्पन्न हुई। विचारने लगे कि अपने पेट भरने के लिये मेरे द्वारा इन दो जीवों का व्यर्थ में वध हो गया, अगर मैं रात्रि को भोजन न करता तो वह जीवों की हिंसा न होती। बहुत पश्चाताप किया तथा आत्मनिन्दा और गर्हा भी की। उस समय तो भोजन किया ही नहीं बल्कि रात्रि भोजन को महान् हिंसा का कारण जान जन्म पर्यन्त के लिये त्याग कर दिया।

इस घटना से ही इनके जीवन में परिवर्तन हो गया। कार्यभार अपने छोटे भाई को सौंप दिया और आप गृह से उदास हो गये। तीन वर्ष तक संवेगी श्रावक दशा में रहे, आपका यह समय तीर्थ-यात्रा और सत्संगति में ही व्यतीत हुआ। सन् १९२३ में आपने बोर गाव में श्री १०८ पूज्य आदि सागर मुनिराज से विधिवत् क्षुल्लक दीक्षा ले ली और नाम श्री पायसागर रखा गया।

१९२५ में सम्मेद शिखरजी की यात्रा जाने वाले आचार्य शान्तिसागरजी महाराज के विशाल संघ में शामिल होकर आपने इन्ही से विधिपूर्ण ऐलक दीक्षा ले ली। उस समय आपका नाम नमिसागर रखा गया। ऐलक अवस्था में आप पांच वर्ष रहे। और संघ के साथ १९२६ से १९२९ तक जयपुर, कटनी (मध्यप्रान्त) ललितपुर (उत्तर प्रान्त) में आपने चतुर्मास किये। इसी मध्य में संघ ने तीर्थराज की वंदना की

सन् १९२९ में पूज्य आचार्य चारित्र चक्रवर्ति शांतिसागर महाराज से मार्ग शीर्ष सुदी १५ सं १९८६ में सोनागिर पहाड के ऊपर मुनि दीक्षा ली ।

सन् १९३८ में आप आचार्य कुन्थुसागरजी महाराज के संघ में रहने लगे और उनकी अंत अवस्था जानकर उनकी वैयावृत्ति की । आचार्य श्री ने अपना अन्त समय जानकर आचार्य पद के लिये समस्त संघ के मुनियों को आज्ञा दी कि नमिसागरजी को अपना आचार्य मानना । सन् १९४५ में आप आचार्य पद पर आसीन हुए उसके बाद अनेक स्थानों पर भ्रमण करके जनता को सही मार्ग दर्शन दिया ।

ध्यान :

आप जब ध्यान में लीन होते हैं उस समय आपकी मुद्रा दर्शनीय है । आये हुए बड़े से बड़े उपसर्गों को आप बड़ी आसानी से सहन कर लेते हैं, कभी कभी तो ऐसे भी अवसर आ गये हैं जबकि उपवासादिकों के दिनों में अशक्तता के कारण आप गिर भी गये हैं पर फिर भी ध्यान से विचलित नही हुए । बागपत (मेरठ) में जब आप डेढ मास रहे तो वहां शीतकाल में जमुना के किनारे चार-चार घन्टे तक ध्यान में लीन रहे । बडे गाव मेरठ में भी शीत ऋतु में आपने अनेक रात्रियों में मकानों की छतपर बैठकर ध्यान लगाया । ग्रीष्म ऋतु में तारंगा तथा पावागढ़ (बड़ौदा) के पहाड़ों पर जाकर चार-चार घन्टे तक समाधि में रहे ।

ज्ञान :

यह हम पहले ही लिख चुके हैं कि आपकी प्रारम्भिक शिक्षा न कुछ के बराबर थी किन्तु साधु दीक्षा के बाद से आपने इतना अच्छा शास्त्र ज्ञान प्राप्त कर लिया था कि सूक्ष्म से सूक्ष्म विषय को न केवल भली भांति समझ ही लेते थे अपितु दूसरों को भी बहुत अच्छी तरह समझा देते थे । आपने अनेक उच्चकोटि के दार्शनिक सिद्धान्त ग्रन्थों का स्वाध्याय किया था जिस समय आप आध्यात्मिक विषय पर व्याख्यान देते तब ऐसा मालूम होता था कि मानों आपकी अन्तरात्मा ही बोल रही है ।

उपदेश :

आपके उपदेश सार्वजनिक भी होते थे हरिजन समस्या के विषय में आपने अपने भाषणों में अनेक बार कहा था मैं हरिजनों को उतना ही उन्नत देखना चाहता हूं जितना कि और जातियां हैं । उनकी भोजन, वस्त्र, स्थान आदि की समस्या हल होनी चाहिये, पठन पाठन की व्यवस्था भी

ठीक होनी चाहिये जिससे ये शिक्षित हो जायें और खोटे कर्मों से बचकर अच्छे कार्य करने लगें। इनके अन्दर की बुराईयां मसलन, मद्य, मांससेवन, जुआ, शिकार, जीव हिंसा आदि कर्म तथा मैला कुचेला रहना आदि पहिले दूर करना चाहिये। आपका ज्वलत प्रभाव तब प्रकट हुआ, जब भारत सरकार ने एक बिल पार्लियामेन्ट में रखा जिसमें जैन धर्म को हिन्दू धर्म स्वीकार किया जा रहा था। इस बिल पर भारत वर्ष की जैन संस्थायें चिन्तित हो उठीं। परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ति श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी महाराज की दृष्टि पूज्य नमिसागरजी महाराज पर गयी। उन्हें आदेश दिया कि दिल्ली में शासन को प्रभावित कर जैन धर्म को हिन्दू धर्म से पृथक् रखवायें। महाराज ने ऐसा प्रयत्न किया कि उन्हें सफलता मिली और गुरु आदेश की पालना की।

अगस्त १९५५ में पूज्य आचार्य शान्तिसागरजी के कुन्थलगिरि में समाधि मरण लेने के समाचार ज्ञात होते ही आपने फल व मीठे का आजन्म त्याग कर दिया। एक वर्ष तक अन्न का त्याग कर दिया और जो उद्गार आचार्य श्री ने अपने गुरु के प्रति प्रकट किये वह चिरस्मरणीय व स्वर्णाक्षरों में अंकित होने योग्य है।

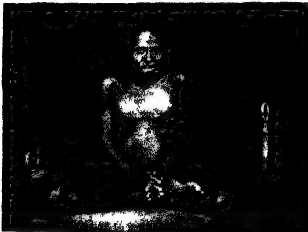
आचार्यश्री का स्वभाव नारियल जैसा था ऊपर से कठोर और अंतरंग में नर्म था। धर्म व धर्मात्मा के प्रति इतने उदार थे कि कभी भी उनका ह्रास देखना पसन्द नहीं करते थे। वे कभी भी संघ में शिथिलाचार नही देख सकते और सदैव संघ पर कड़ी दृष्टि आचरण पालन की ओर रखते। शिक्षण संस्थाओं से उन्हे काफी प्यार था। गरीबों के हितू होने के कारण आपके चरणो में सभी जाति के स्त्री पुरुष भेद भाव भुलाकर आते थे।

आचार्यश्री १९५१ में जब दिल्ली पधारे तब वे एक संकल्प लेकर आये थे। हरिजन-मन्दिर प्रवेश को लेकर पूज्य आचार्य शान्तिसागरजी महाराज ने अनशन कर दिया था उनके अनशन को तुड़वाना और जैन मन्दिरों को हिन्दू मन्दिरों से पृथक् करना यह संकल्प न्यायाचार्य पं० दरबारीलालजी कोठिया के सम्पर्क से पूज्य श्री १०५ गणेशप्रसादजी वर्णी को आचार्य श्री ने अपने संकल्प का साधक माना। फलतः आचार्य श्री अपने मिशन में सफल हुए और पूज्य वर्णीजी के प्रति अनन्य समादर करने लगे। अन्त में आचार्य श्री वर्णीजी के सान्निध्य में बडोत (मेरठ) से प्रस्थान कर ईसरी (सम्मेदशिखर) पहुंचे और इन्ही के निकट सन् १९५७ मे समाधि पूर्वक देह त्याग किया।



मुनिश्री नेमिसागरजी महाराज

जाति	—	पचम
माता का नाम	—	शिवादेवी
पिता का नाम	—	नेमराज
जन्म स्थान	—	कुडची (बेलगाव)
दीक्षा	—	समडोल (बेलगाव)
		कार्तिक सुदी १५ स० १९८१



आचार्य महाराज तपोमूर्ति थे। उनके शिष्य नेमिसागर महाराज भी बहुत सरल थे तथा उनका जीवन तप पुनीत समलकृत था। आचार्य महाराज ने जिनेन्द्र शासन से पूर्ण विमुख नेमण्णा नामक कुडची के व्यापारी की जीवनी को बदल दिया। वे ही आज श्रद्धालु श्रेष्ठ तपस्वी अद्वितीय गुरुभक्त १०८ परमपूज्य नेमिसागर महाराज के रूप मे मुमुक्षु वर्ग का कल्याण कर रहे हैं। उन्हे दीक्षा लिए हुए ४५ वर्ष से अधिक होगए।

एक उपवास एक आहार का क्रम चलता आ रहा है। बाईस वर्षो के ८०३० दिन होते हैं। तीस चौबीसी व्रत के ७२० उपवास किए। कर्मदहन के १५६ तथा चारित्र सिद्धिव्रत के १२३४ उपवास हुए। दशलक्षण में पाच बार दस दस उपवास किए अष्टाह्निका में तीन बार आठ आठ उपवास किए। इसप्रकार २४ उपवास किए। लोहाद में नेमिसागर महाराज ने १६ उपवास किए। इसप्रकार उनकी तपस्या अद्भुत थी। चारित्र चूडामणि नेमिसागरजी को उपवास मे आनन्द आता था।

आचार्य महाराज कोथूर मे विराजमान थे। मैंने उनके सत्संग का लाभ लिया वे बोले "तुम शास्त्र पढा करो। मैं उसका भाव लोगों को समझाऊंगा।" मैं कक्षा ५ तक पढ़ा था। मुझे शास्त्र पढ़ना नहीं आता था। भाषण देना भी नही आता था, धीरे धीरे मेरा अभ्यास बढ़ गया। आचार्य महाराज के सम्पर्क से हृदय के कपाट खुल गए। उनके सत्संग से मेरे मन में मुनि बनने का भाव पैदा होगया।

नेमिसागरजी महाराज का गृहस्थ जीवन बड़ा विचित्र था। मुसलमानों के सम्पर्क के कारण मुस्लिम दरगाह में जाकर पैर पड़ा करते थे। सोलह वर्ष की अवस्था तक वे अगरबत्ती जलाते और शक्कर चढ़ाते थे।

आचार्य महाराज के सम्पर्क के कारण जीवन में परिवर्तन हो गया। वे खेती करते थे।

दोनों जने नेमण्णा और रामू (कुन्थुसागरजी) साथ साथ खेती का कार्य करते थे। आचार्य महाराज के सम्पर्क के कारण वैराग्य का भाव जागृत हो गया।

उन्हें नन्दिमित्र की कथा बड़ी प्रिय थी। जो पलासकूट ग्राम में देविल वैश्य के घर पुण्यहीन पुत्र नदिमित्र ने जन्म धारण किया। माता पिता ने उसे घर से निकाल दिया। वहां से चलकर अवन्ति देश मे विद्यमान वैदेश नगर में पहुंचा, उसने नगर के बाहर कालकूट नामके लकड़ी बेचने वाले को देखा। नन्दिमित्र ने कालकूट से कहा—तुम लकडी का जितना बोझा बाजार में ले जाते हो उससे चौगुना बोझा प्रतिदिन मैं लाकर दूंगा।

यदि तुम मेरे परिश्रम के बदले मुझे भोजन दिया करो तो मैं काम करने को तैयार हूं।

कालकूट ने यह बात स्वीकार करली और उसे रूखा सूखा भोजन देने लगा। एक दिन उसकी स्त्री ने उसे भरपेट खीर का भोजन खिलाया वह उससे नाराज हुआ और नन्दिमित्र को घर से निकाल दिया।

उसने एक मुनिराज को देखा और उनके साथ हो लिया। श्रावकों ने नया शिष्य समझकर भोजन करा दिया। एक दिन महाराज ने उपवास किया, उसने महाराज के पास के कमंडलु और पीछी लेकर चर्या को उठा और भोजन के लिए गया पर यह सोचकर मैं यदि आज भोजन नहीं करूंगा तो श्रावक मेरा विशेष आदर करेंगे। उसने तीन दिन तक ऐसा ही किया। चौथे दिन अवधिज्ञानी मुनि ने कहा—नन्दिमित्र तेरी आयु अन्तर्मुहूर्त शेष रही है। इसलिये तू सन्यास धारण कर। उस भद्र आत्मा ने सन्यास धारण किया वह स्वर्ग में जाकर देव हुआ वहा से चयकर चन्द्रगुप्त के रूप में उत्पन्न हुआ।

यह कथा उन्हें बड़ी प्रिय थी ।

नेमिसागरजी ने ऐलक दीक्षा गोकाक के मन्दिर में ली थी और वहां मूलनायक नेमिनाथ भगवान की मूर्ति थी । इसलिए महाराज ने इनका नाम नेमिसागर रखा । पहले ऐलक दीक्षा ली और पश्चात् मुनिदीक्षा अंगीकार की ।

कटनी के चातुर्मास में महाराज ने सभी साधुओं के पठन पाठन की योजना बनाई और ललितपुर में पठन पाठन शुरु हुआ । नेमिसागर मुनिराज विविध प्रकार के आसन लगाकर ध्यान करते थे । उन्हें ध्यान में ही आनन्द आता था । संकल्प विकल्प त्यागने से शांति मिलती है । ऐसा वे कहा करते थे ।

नेमिसागर महाराज कहा करते थे—

अनुभव शास्त्र तथा व्यवहार इन तीनों को ध्यान में रखकर कार्य करना चाहिये ।

जैनधर्म की प्रभावना के सम्बन्ध में आचार्य महाराज कहा करते थे—

रुचिः प्रवर्तते यस्य, जैन शासन भासते ।
हस्ते तस्य स्थिता मुक्तिरिति सूत्रे निषद्यते ।।

जिसके मन में जिन शासन की प्रभावना की भावना है उसके हाथ में मुक्ति है । महाराज ने बम्बई के पास बोरीबकर में आचार्य शान्तिसागरजी महाराज की पावन स्मृति में स्थान बनाया और वहां उत्तुंग भरत बाहुबलि तथा अन्य तीर्थंकरों की मनोज्ञ मूर्तियां स्थापित कराईं । जो भव्य जीवों को वीतरागता की शिक्षा देती हैं और जिनसे जैन शासन की प्रभावना होती है ।



आ० श्री कुंथुसागरजी महाराज



महर्षि प्रात स्मरणीय आचार्य श्रीकुन्थुसागरजी महाराज आप एक परम प्रभावक वीतरागी, विद्वान आचार्य थे। आपकी जन्मभूमि कर्णाटक प्रान्त है जिसे पूर्व मे कितने ही महर्षियो ने अलकृत कर जैनधर्मका मुख उज्ज्वल किया था। इसलिए "कर्णेषु अटतीति" सार्थक नाम को पाकर सबके कानोमे गू ज रहा है।

कर्णाटक प्रात के ऐश्वर्यभूत बेलगाव जिले मे ऐनापुर नामक सुन्दर नगर है। वहा पर चतुर्थकुल मे ललामभूत अत्यन्त शात स्वभाव वाले सातप्पा नामक श्रावकोत्तम रहते थे। आपकी धर्मपत्नी साक्षात् सरस्वती के समान सद्गुणसम्पन्न थी इसलिए सरस्वती के नाम से ही प्रसिद्ध थी। सातप्पा व सरस्वती दोनो अत्यन्त प्रेम व उत्साह से देवपूजा व गुरुपास्ति आदि सत्कार्य मे सदा मग्न रहते थे। धर्मकार्य को वे प्रधानकार्य समझते थे उनके हृदय मे आतरिक धार्मिक श्रद्धा थी। श्रमती सौ० सरस्वती ने वीर सवत् २४२० मे एक पुत्ररत्न को जन्म दिया। इस पुत्र का जन्म कार्तिक शुक्लपक्ष की द्वितीया को हुआ। माता पिता ने पुत्र का जीवन सुसस्कृत हो इस सुविचार से जन्म से ही आगमोक्त सस्कारो से सस्कृत किया। जातकर्म सस्कार होने के बाद शुभमुहूर्त मे नामकरण सस्कार किया जिसमे इस पुत्र का नाम रामचन्द्र रखा गया। बाद मे चौलकर्म, अक्षराभ्यास, पुस्तकग्रहण आदि आदि सस्कारो से सस्कृत कर सदविद्या का अध्ययन कराया। रामचन्द्र के हृदय मे बाल्यकाल से ही विनय शील व सदाचार आदि भाव जागृत हुए थे। जिसे देखकर लोग आश्चर्ययुक्त व सतुष्ट होते थे। रामचन्द्र को बाल्यावस्था मे ही साधु सयमियो के दर्शन की उत्कट इच्छा रहती थी। कोई साधु ऐनापुरमे जाते तो यह बालक दौडकर उनकी वन्दना के लिए पहुचता था। बाल्यकाल से ही उसके हृदय मे धर्म के प्रति अभिरुचि थी। सदा अपने सहधर्मियो के साथ तत्त्वचर्चा करने मे ही समय बिताता था। इस प्रकार सोलह वर्ष व्यतीत हुए। अब माता पिता ने रामचन्द्र को विवाह कराने का विचार प्रगट किया। नैसर्गिक गुण से प्रेरित होकर रामचन्द्र ने विवाह के लिए निषेध किया एव प्रार्थना की कि पिताजी!

इस लौकिक विवाह से मुझे संतोष नही होगा। मैं आलौकिक विवाह अर्थात् मुक्ति लक्ष्मी के साथ विवाह कर लेना चाहता हूं। माता पिता ने पुनश्च आग्रह किया। माता पिता की आज्ञोल्लंघन भय से इच्छा न होते हुए भी रामचन्द्र ने विवाह की स्वीकृति दी। मातापिता ने विवाह किया। रामचंद्र को अनुभव होता था कि मैं विवाह कर बड़े बन्धनमें पड़ गया हूं।

विशेष विषय यह है कि बाल्यकाल से संस्कारों से सुदृढ़ होने के कारण यौवनावस्था में भी रामचन्द्र को कोई व्यसन नहीं था। व्यसन था तो केवल धर्मचर्चा, सत्संगति व शास्त्रस्वाध्याय का था। बाकी व्यसन तो उससे घबराकर दूर भागते थे। इस प्रकार पच्चीस वर्ष पर्यन्त रामचन्द्र नें किसी तरह घर में वास किया। परन्तु बीच बीचमें यह भावना जागृत होती थी कि भगवन्! मैं इस ग्रहबंधन से कब छूटूं? जिनदीक्षा लेने का सौभाग्य कब मिलेगा? वह दिन कब मिलेगा जब कि सर्वसग परित्याग कर मैं स्वपरकल्याण कर सकूं?

दैववशात् इस बीच में मातापिता का स्वर्गवास हुआ। विकराल काल की कृपा से भाई और बहिन ने भी विदा ली। तब रामचन्द्रजी का चित्त और भी उदास हुआ। उनका बंधन छूट गया। तब संसार की अस्थिरता का उन्होंने स्वानुभवसे पक्का निश्चय करके और भी धर्ममार्गपर स्थिर हुए।

रामचद्र के श्वसुर भी धनिक थे। उनके पास बहुत संपत्ति थी। परन्तु उनको कोई संतान नही थी। वे रामचन्द्र से कई दफे कहते थे कि यह सपत्ति (घर वगैरह तुम ही ले लो, मेरे यहां के सब कारोबार तुम ही चलावो और रामचंद्र अपने श्वसुर को दुःख न हो इस विचार से कुछ दिन रहा भी। परन्तु मन मनमे यह विचार किया करता था कि "मै अपना भी घरबार छोड़ना चाहता हूं। इनकी सपत्ति को लेकर मैं क्या करू"। रामचद्रकी इस प्रकार की वृत्ति से श्वसुर को दुःख होता था परन्तु रामचन्द्र लाचार था। जब उसने सर्वथा गृहत्याग करने का निश्चय ही कर लिया तो उनके श्वसुर को बहुत अधिक दुःख हुआ।

आपने श्रीपरमपूज्य आचार्य श्री शांतिसागर महाराज के पाद मूल को पाकर अपने संकल्प को पूर्ण किया। सन् २५ में श्रवणबेलगोला के मस्तकाभिषेक के समय पर आपने क्षुल्लक दीक्षा ली व सोनगिरी क्षेत्रपर मुनिदीक्षा ली। और मुनि कुंथुसागर के नाम से प्रसिद्ध हुए। जब आप घर छोड़ करके साधु हुए तब आपकी धर्मपत्नी धर्मध्यान करती हुई घर में ही रही थी।

आपने अपनी माता सरस्वती का नाम सार्थक बनाया था। क्योंकि आप अपने नाम तथा काम में सरस्वतीपुत्र ही सिद्ध हुए थे। चतुर्विंशतिजिनस्तुति, शांतिसागर चरित्र, बोधामृतसार, निजात्मशुद्धिभावना, मोक्षमार्गप्रदीप, ज्ञानामृतसार, स्वरूपदर्शनसूर्य, नरेशधर्मदर्पण, मनुष्यकृत्यसार, शांतिसुधा-

सिंधु आदि नीतिपूर्ण तत्त्वगर्भित ४० ग्रन्थरत्नों की उत्पत्ति आपके ही अगाधज्ञानरूपी खानसे हुई थी ।

आपके दुर्लभ संस्कृतभाषा-पांडित्य पर बड़े २ विद्वान पंडित भी मुग्ध हो जाते थे ! आपकी ग्रन्थनिर्माणशैली अपूर्व थी । आपकी भाषण-प्रतिभा शान्त व गम्भीर मुद्राके सामने बड़े २ राजाओं के मस्तक झुकते थे गुजरात प्रात के प्रायः सभी संस्थानाधिपति आपके आज्ञाकारी शिष्य बने हुए हैं । अबतक हजारों की सख्या मे जैनेतर आपके सदुपदेश से प्रभावित होकर मकारत्रय (मद्य, मांस, मधु) के नियमी व संयमी बन चुके हैं ।

गुजरात व बागड़ प्रात में आपके द्वारा जो धर्मप्रभावना हुई है व हो रही है वह इतिहास के पृष्ठों पर सुवर्णवर्णों में चिरकाल तक अंकित रहेगी । गुजरात में कई संस्थानिकोंने अपने राज्यमें इन तपोधन के जन्मदिन के स्मरणार्थ सार्वजनिक छुट्टी व सार्वत्रिक अहिंसादिवस मनाने के फर्मान निकाले हैं । सुदासना स्टेट के प्रजावत्सल नरेश तो इतने भक्त बन गये थे कि महाराज का जहां २ विहार होता था वहां प्रायः उनकी उपस्थिति रहती थी । कभी अनिवार्य राज्यकार्य से परवश होकर महाराज से विदा लेने का प्रसंग आने पर माता को बिछड़ते हुए पुत्र के समान नरेश की आखों मे से आंसू बहते थे धन्य है ऐसी गुरुभक्ति ! युवराज कुमार साहेब रणजीतसिंहजी पूज्यवर्य के परमभक्त थे । वे कई समय महाराज की सेवा में उपस्थित होकर आत्महित के तत्त्वों को पूछते हुए महाराज की सेवा में ही दीर्घ समय व्यतीत करते थे । तारंगाजी से महाराज का विहार होने का समाचार जानकर कुमार साहेब से रहा नही गया, वे पूज्यश्री के चरणों में उपस्थित होकर (अश्रुपात करते हुए) महाराज से निवेदन करते है कि स्वामिन् ! पुनः कब दर्शन मिलेगा ? कितनी अद्भुत भक्ति थी यह ! पूज्यश्री ने आज गुजरात मे जो धर्मजागृति की है वह "न भूतो न भविष्यति" है । गुजरात में जैन क्या, जैनेतर क्या, हिन्दु क्या, मुसलमान क्या, उनके चरणों के भक्त थे । अलुवा, माणिकपुर, पेथापुर, डूंगरपुर, बांसवाडा, खांदु आदि अनेक राज्यों के अधिपति आपके सद्गुणों से मुग्ध थे । पिछले दिनों वड़ोदा राज्य में आपका अपूर्व स्वागत हुआ । राज्य के न्यायमन्दिर में स्टेट के प्रधान सर कृष्णमाचारी की उपस्थिति में आचार्यश्री का सार्वजनिक तत्वोपदेश हुआ था ।

गुजरात से विहार कर महाराज श्री ने राजस्थान के वाग्वर प्रात को पावन किया । विक्रम सं० २००१ में आपका पदार्पण घरियावद हुआ । इसी वर्ष घरियावद में ५१ वर्ष की उम्रमें आषाढ़ कृष्ण ६ रविवार दिनांक १-७-१९४५ को समाधि मरण पूर्वक आपका स्वर्गवास हो गया । ऐसे महान प्रभावशाली आचार्य के निधन से समग्र दिगम्बर जैन समाज को गहरा आघात पहुंचा । दिगम्बर जैन समाज पर यह घटना अनभ्र वज्रपात मानी गई । मै उन महान् त्यागमूर्ति आचार्य श्री के चरणों में अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि समर्पित करता हूं ।

✡

आचार्य श्री पायसागरजी महाराज



आपका जन्म पैनापुर मे फाल्गुन शुक्ला पचमी वीर नि० स० २४१५ शक स० १८९० को हुआ था। आपने गोकाक के जैन मन्दिर मे श्रीमद् आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज से कार्तिक सुदी ४ वीर सं० २४५० सन् १९२३ मे ऐलक दीक्षा ली। सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पर आचार्य श्री से वी० स० २४५६ में मुनि दीक्षा ग्रहण की।

१२-१०-५६ मे आपने अपना आचार्य पद मुनि अनन्तकीर्तिजी को सौंप दिया तथा स्तवननिधी तीर्थक्षेत्र पर समाधि पूर्वक शरीर को छोडा। आप कुशल वक्ता दीर्घ तपस्वी और कुशल आचार्य थे। आपने अनेको श्रावको को दीक्षा देकर सत्पथ मे लगाया। धन्य है आपका जीवन।



मुनिश्री मल्लिसागरजी महाराज

मुनि श्री १०८ मल्लिसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम मोतीलालजी था। आपका जन्म ७७ वर्ष पूव नादगाव मे हुआ था। आपके पिता श्री दौलतरामजी व माता श्रीमती सुन्दरबाईजी हैं। आप खण्डेलवाल जाति के भूषण व सेठी गोत्रज है। आपकी धार्मिक तथा लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। विवाह नही किया, बाल ब्रह्मचारी ही रहे।

ऐलक पन्नालालजी के उपदेश श्रवण के कारण आपमे वैराग्य प्रवृत्ति जागृत हुई। परिणामत आपने विक्रम सवत १९८७ मे सिद्धवरकूटजी क्षेत्रपर आचार्य श्री १०८ शान्तिसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा ले ली। आप घोर तपस्वी, चारित्र शिरोमणि मुनि रत्न है। आपने सिद्धवरकूट, बडवानी आदि स्थानो पर चातुर्मास कर धर्म प्रभावना की।



मुनि श्री चन्द्रकीर्तिजी महाराज

काले कलौ चले चित्ते देहे चान्नादि कीटके ।
एतच्चित्र यदद्यापि जिनरूपधरा नरा ।। सोमदेवाचार्य ।।



भावार्थ—इस कलिकाल मे भी, जब कि लोगो के चित्त मे चचलता है, शरीर अन्न का कीडा है, जिनेन्द्र देव के वीतरागी नग्न स्वरूप को धारण करने वाले महापुरुष मौजूद हैं जो कि एक आश्चर्य ही है ।

भूतपूर्व राजपूताना वर्तमान नाम राजस्थान प्रदेश के अन्तर्गत अलवर नगर मे जो कि वर्षों एक स्वतन्त्र रियासत थी अग्रवाल जातीय दिगम्बर जैन धर्मावलम्बी लाला सेढमलजी निवास करते थे । आपके ४ भाई और थे, जिनके नाम जवाहर-लालजी छोटेलालजी गुलाबचन्दजी और कालूरामजी है । सेढमलजी की धर्मपत्नी का नाम श्री रुक्मिणी देवी था । इन पाच भाइयो मे केवल एक सेढमलजी के ही पुत्र जन्म हुआ । पौष कृष्णा नवमी सवत् १६५० के शुभ दिन मे यह घटना हुई । सारे परिवार में आनन्द छा गया क्योकि एक अपूर्व लाभ हुआ था । नवजात शिशु का नाम श्री कनकमल रक्खा गया और बडे प्यार से इन्हें पाला पोसा गया । कनकमलजी को साधारण शिक्षा ही मिली । अधिक शिक्षा यो न मिल सकी कि वे सारे परिवार के प्रिय थे । लाड प्यार मे बचपन बीता । बालक कनकमल बचपन से ही धर्म साधन मे भी लीन रहते थे । बचपन से ही सारा समय धर्म श्रवण, पूजा और स्वाध्याय आदि मे लगाये रहते थे । विवाह के लिए भी आग्रह आप से किया गया परन्तु आपने उस प्रस्ताव को भी ठुकरा दिया । सदैव धर्म कार्य मे लीन रहना और भरत चक्रवर्ती की तरह घर मे रहते हुये भी उससे उदास रहना इनकी चर्या थी । दैवयोग से पूज्यपाद आचार्य परमेष्ठी श्री १०८ श्रीशान्तिसागरजी महाराज का सघ अलवर के पास तिजारा नगर मे आया । आप वहा पहुचकर सघ को अलवर बडे अनुरोध से

लिवा ले गये और आपने अलवर में ही आचार्य महाराज से ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेली । दो वर्ष बाद ही आपने उदयपुर में क्षुल्लक दीक्षा लेली और थोडे दिन बाद ही आप ऐलक भी बन गये ।

लाला परसादीलालजी पाटनी महामंत्री भारतवर्षीय दि० जैन महासभा ने सीकर में निज द्रव्य से पंच कल्याणक प्रतिष्ठा विक्रम संवत् २००४ में कराई । आप भी वहां गये थे वहीं आपने आचार्य महाराज से परोक्ष आदेश प्राप्त कर दिगम्बर दीक्षा धारण करली । आप सदैव रोग युक्त भी रहते हैं । आपके कंठ से भोजन भी नहीं निगला जाता तो भी आप अपनी तपो निष्ठा मे लीन रहते हैं । अनेक उपवास करते हैं । अनेक कठिन से कठिन सिंहनिःक्रीड़ितादि व्रत करते हैं । आपने अनेक स्थानों में विहार कर धर्म की बड़ी प्रभावना की है । आपका उपदेश बड़ा ही हृदयग्राही होता है । आपका अस्थिमात्र शुष्क निर्बल शरीर किन्तु उसमें रहने वाली महान् आत्मा की विशेषता देखकर दंग रह जाना पड जाता है और दर्शनमात्र से ही अनेक भक्त मुमुक्षु प्राणी धर्म के सन्मुख हो जाते हैं । इस समय आपका विहार नागपुर प्रान्त में हो रहा है । आप बड़े भारी तपोनिष्ठ, वीतरागी, शत्रुमित्र समभाव निश्चित दिगम्बर जैन साधु हैं । मेरी उक्त मुनि महाराज के चरणों मे त्रिविध शुद्धि से बारंबार प्रणमांजलि है ।



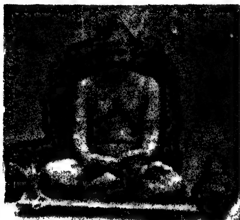
मुनि वर्धमानसागरजी महाराज (दक्षिण)



दक्षिण भारत के प्रसिद्ध नगर बेलगाव जिले के चिकौडी तालुका के भोजग्राम मे पू० मुनि श्री का जन्म हुवा था। आपके पिता का नाम भीमगौडा तथा माता जी का नाम सत्यवती था। आपका पूर्ण नाम कुम्भगौडा था। आप आचार्य श्री शातिसागरजी महाराज के छोटे भाई थे। बचपन से ही धार्मिक वृत्ति के थे। आपने अनेकों उपवास किए तथा आचार्य श्री के समान उग्र तपश्चरण कर समाधिमरण किया। धन्य है उन महान त्यागी को जिन्होने त्याग मार्ग को अपनाया।



मुनि श्री धर्मसागरजी महाराज



मुनि श्री का जन्म स० १६५७ मे पाछापुर जि० वेलगाव, मैसूर स्टेट मे श्री कल्लप्पा के गृह मे हुआ था । आपकी माता का नाम ज्ञानमति था । आपने कानडी मे ही शिक्षा प्राप्त की थी । तीर्थराज सम्मेदशिखरजी की यात्रा को आप गये तब आपके मन मे दीक्षा लेने के भाव हुए तथा तिजारा राजस्थान मे क्षुल्लक दीक्षा ली । आपका नाम क्षु० यशोधर रक्खा गया । गजपन्था तीथक्षत्र पर आपके परिणामो की निर्मलता अधिक देखकर गुरुवर्य ने ऐलक दीक्षा दी । पालीताना क्षेत्र पर आपको मुनिदीक्षा दी, तब आपका नाम धर्मसागर रखा गया । आपके गुरु आ० शान्तिसागरजी थे । आप सस्कृत, मराठी, हिन्दी, कन्नडी तमिल आदि भाषा के अधिकारी विद्वान थे । आपने धर्म प्रचार के लिए सर्वस्व त्याग किया । आप आचार्यश्री के सघ मे तपस्वी साधु थे । अन्त समय तक धर्म प्रचार मे रत रहे । अन्त मे समाधि को धारण कर आत्म कल्याण किया ।



आचार्य श्री सुधर्मसागरजी महाराज



श्री १०८ आचार्य सुधर्मसागरजी महाराज का गृहस्थ अवस्था का नाम नन्दलालजी था। आपका जन्म चावली (आगरा) वि० सं० १९४२ में भाद्रपद शुक्ला दशमी यानी सुगन्ध दशमी के दिन हुआ था।

शिक्षा और विवाह :

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने गांव में ही हुई। इसके बाद आपने दिगम्बर जैन महाविद्यालय मथुरा और सेठ हीराचन्द्र गुमानचन्द्र जैन बोर्डिंग हाउस बम्बई में रहकर शास्त्री (सिद्धान्त, न्याय, व्याकरण, साहित्य) का अध्ययन किया और जैन महासभा तथा बम्बई परीक्षालय की परीक्षा देकर शास्त्री उपाधि प्राप्त की।

सामाजिक-धार्मिक कार्य :

आपने अपने अमित अध्ययन, अनुभव, अभ्यास, अध्यवसाय से हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। आप श्रेष्ठ वक्ता और सुयोग्य लेखक तथा टीकाकार एवं सम्पादक थे। सामाजिक-धार्मिक विषयों पर आपने सुरुचिपूर्ण लघु पुस्तकें भी लिखी। आप कवि थे, आपकी कतिपय पूजन आज भी समाज में अतीव चाव से पढी जाती हैं। आपने ईडर और बम्बई में रह कर वहा के शास्त्र भण्डारों को सम्हाला। आपने ज्ञान का लाभ समाज को दिया। आपने अनेक भीलों से मांस भक्षण छुडाया, शिकार खेलना बन्द करवाया। ठाकुर कुरासिंह को जैन ही नही बनाया बल्कि उनके द्वारा जैन मन्दिर भी बनवाया।

आपने ईडर तारंगा में मनोज्ञ मूर्तियां विराजमान कराई। आप महासभा के सर्वदा सहायक रहे। समाजरत्न, संघभक्त, सुप्रसिद्ध सेठ पूनमचन्द्र घासीलाल जवेरी परिवार को धार्मिक

बनाने का सर्व श्रेय आपको ही है। आपने चारित्रचक्रवर्ति श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी महाराज से द्वितीय प्रतिमा ली थी आपके ही प्रयत्न से सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर आचार्यश्री का ससंघ विहार हुआ था और संघपति सेठ पूनमचन्द्रजी घासीलालजी द्वारा अतीव समारोह पूर्वक पंचकल्याणक महोत्सव भी हुआ था। वि० सं० १६८४ में सम्मेदशिखर में आपने आचार्य शान्तिसागरजी से ब्रह्मचर्य प्रतिमा के व्रत ले लिये। अब आपका नाम ब्रह्मचारी ज्ञानचन्द्र हो गया। इस समय आपने दो घण्टे तक जैन धर्म का धारावाहिक तात्विक विवेचन भी किया था।

कुण्डलपुर क्षेत्र में आपने दशम प्रतिमा के व्रत स्वीकार किये और कुछ काल बाद आचार्यश्री से ही क्षुल्लक दीक्षा ले ली और आपका नाम क्षुल्लक ज्ञानसागर हो गया। आत्मकल्याण के साथ ही आपने कुछ ग्रन्थों की टीकायें लिखीं, जिनमें रयणसागर, पुरुषार्थानुशासन, रत्नमाला, उमास्वामी श्रावकाचार के नाम उल्लेखनीय हैं। आपने गुजराती में जो ग्रन्थ लिखे उनमें जीव-विचार, कर्म विचार प्रमुख हैं। आपके ही आदेश से आपके भाईयों ने पंचपरमेष्ठियों के स्वरूप की बोधक ३ फीट ऊँची प्रतिमाएं गजपन्था में विराजमान कराई तथा देहली के धर्मपुरा में भी अष्ट प्रातिहार्य युक्त ३ फीट ऊँची प्रतिमा आपकी प्रेरणा से भाईयों ने विराजमान कराई।

संघ-हित श्रेष्ठ कार्य :

क्षुल्लक ज्ञानसागरजी ने संघ-हित एक श्रेष्ठ कार्य यह किया कि उन्होंने सभी मुनिराजों को सस्कृत का अध्ययन कराया, क्षुल्लक व ऐलकों को भी संस्कृत शिक्षण लेने के लिए कहा। आचार्य शान्तिसागरजी आपके इस सत्कार्य को सराहना करते थे। तपोनिधि आचार्य कुन्थुसागरजी ने जो संस्कृत में ग्रन्थ लिखे उसकी पृष्ठ भूमि में आपकी मनोभावना थी। अध्यापन के साथ संघ के हित में आपने अनुभवी वैद्य का भी कार्य वैसे ही किया जैसे आपके पिताजी पड़ौसियों के लिए सहज भाव से करते थे।

मुनि और आचार्य :

जब प्रतापगढ़ में सेठ पूनमचन्द घासीलालजी ने पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कराई तब केवलज्ञान कल्याणक के समय आपने फाल्गुन शुक्ला त्रयोदशी वीर निर्वाण संवत् २४६० में श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी से मुक्तिदायिनी मुनि दीक्षा लेली। आचार्यश्री ने आपको सुधर्मसागर कहकर सम्बोधित किया। आपके साथ ही क्षुल्लक नेमिकीर्तिजी, मुनि आदिसागर बने और ब्र० सालिगरामजी क्षुल्लक अजितकीर्तिजी बने थे। यह कार्य लगभग चालीस हजार मानव मेदिनी के समक्ष हुआ। अब आप समन्तभद्र आचार्य के शब्दों में विषयवासना से परे ज्ञान-ध्यान, तप-रत साधु हो गये थे।

संघ के समस्त कार्य आचार्य श्री शान्तिसागरजी ने आपको ही सौंप रखे थे अतएव उन्होंने आपकी अनिच्छा होते हुए भी आपको आचार्य पद सौंप दिया, आपने बहुत अनुनय-विनय की और पद से

मुक्ति चाही, पर आचार्य श्री ने आपको ही अपना उत्तराधिकारी बनाया। पौष शुक्ला दशमी रविवार को आप अनेक मुनिराजो, व्रतियों तथा अनेक स्थानों की समाज के समक्ष आचार्य घोषित किये गये। इस समय अनेक विद्वान, श्रेष्ठ राज्याधिकारी उपस्थित थे। सभी ने ताली बजाकर नाम की जय बोल कर आपको अपना आचार्य माना। कुशलगढ़ जैन समाज के इस कुशलतादायी कार्य की सभी ने सराहना की।

समाधिमरण व शोभा यात्रा :

आपने आचार्य पद पर आसीन रहते संघ को अनुशासनबद्ध किया। झाबुआ निवासियो से आचार्यश्री के रूप में आपने दो माह पहले ही कह दिया था कि अब मेरा शरीर अधिक से अधिक दो माह तक टिकेगा। आप सर्वदा धार्मिक कार्यों मे सावधान रहते थे। समाधिमरण के लिए तैयारी कर रहे थे। पौष शुक्ला द्वादशी सोमवार वि० सं० १९९५ मे, जब दोपहर को संघ के साधु आहारचर्या से आये तब उन्होंने आचार्यश्री की समाधि वेला समीप देखी, आपको क्षयरोग था पर दो दिन से वह था भी; इसमें सन्देह होने लगा था। तीन दिन पहले से आपने खान-पान, प्रमाद-जनित क्रियाओं को त्याग दिया था। अन्तिम समय में आपने जिनेन्द्रदर्शन की इच्छा प्रकट की तो भट्टारक यशकीर्ति ने भगवान आदिनाथ के दर्शन कराये। आपने गद्गद हो भक्ति भाव लिये कहा हे प्रभो! मेरे आठों कर्म नष्ट हों और मुझे मुक्तिश्री मिले। इसी दिन सध्या के समय अत्यन्त सावधानी के साथ आपने समाधिमरण का लाभ लिया।

श्री १०८ आचार्य सुधर्मसागरजी के स्वर्गवास का समाचार क्षणभर में दाहोद, इन्दौर, रतलाम, थोंदला, झाबुआ आदि स्थानों पर पहुंचा। अतीव साज सज्जा के साथ पदमासन में आचार्य का दिव्य शरीर नगर के प्रमुख मार्गों में से निकला। संघ स्नात पं० लालारामजी जलधारा देते विमान के सबसे आगे थे। मुनि और आर्यिका, श्रावक और श्राविका का चतुर्विध संघ साथ था। एक ब्राह्मण ने आचार्य श्री की पूजा की, शंखनाद कर उनको स्वर्गवासी घोषित किया। शास्त्रोक्त पद्धति से दाह-संस्कार हुआ। शोक सभा मे पं० लालारामजी ने भाषण ही नहीं दिया बल्कि उनके पदचिन्हों पर चलने के लिए द्वितीय प्रतिमा के व्रत भी लिये जहा आपका अन्तिम सस्कार हुआ था वहां तीन दिन बाजे बजे, जागरण-भजन कीर्तन हुए, महाराज की पूजा हुई।

घोषणा :

राज्य की ओर से घोषणा हुई कि आचार्य सुधर्मसागरजी का स्मृतिदिवस मनाने के लिए अवकाश रहेगा, हिसा नही होगी। संघ की ओर से घोषणा हुई, आचार्यश्री के स्मृति-दिवस पर प्रतिवर्ष रथोत्सव होगा। मुनिसंघ ने स्वेच्छा से सुधर्मसागर संघ की स्थापना करने का भाव प्रकट किया।



मुनि श्री नेमसागरजी महाराज



पूज्य श्री का जन्म कुडची ग्राम (बेलगांव–दक्षिण) में हुआ था । आपके पिता का नाम अराएा और माता का नाम शिवदेवी था । आप तीन भाई थे, एक भाई की पैदा होते ही मृत्यु हो गई थी, दूसरे भाई की मृत्यु सात आठ वर्ष की अवस्था में हुई थी । आप ज्येष्ठ थे । माता की मृत्यु के समय आपकी अवस्था लगभग १२ वर्ष की थी । माता सरल परिणामी, परोपकाररत साधु स्वभाव वाली थी । दीन जनों पर माता का बड़ा प्रेम था । आपके पिता बहुत बलवान थे । पांच छै गुन्डी पानी का हंडा पीठ पर रखकर लाते थे ।

आपका बचपन वास्तव में आश्चर्यप्रद है । आप ग्राम के मुसलमानों के बड़े स्नेहपात्र थे । मुस्लिम दरगाह मे जाकर पैर पड़ा करते थे और सोलह वर्ष की उम्र तक वहां जाकर अगरबत्ती जलाना और शक्कर चढ़ाया करते थे । जब आपको धर्मबोध हुआ तो आपने दरगाह वगैरह क्षेत्र में जाना बन्द कर दिया, इससे मुसलमान काफी नाराज हुए और आपको मारने की सोचने लगे । ऐसी स्थिति में आप कुडची ग्राम से चार मील दूर ऐनापुर गाव में चले गये । यहा के पाटिल से आपका काफी सौहार्द था । ऐनापुर गांव में आप रामू (कुन्थु सागरजी) तथा एक और व्यक्ति मिलकर ठेके पर जमीन लेकर खेती करने लगे ।

आपकी सांसारिक कार्यों से अरुचि थी । आप इनको दुःखमय मानते थे और आपकी इनसे छूटने के उपाय—मुनि मार्ग की तरफ रुचि थी और बाल्यावस्था में ही मुनि बनना चाहते थे । धीरे-धीरे इनकी इच्छा बलवती हो गई । आप ज्योतिषियों से पूछा करते थे कि मैं मुनि कब बनूंगा । मेरी यह इच्छा पूरी होगी या नहीं ?

आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज से आपने गोकाक नगर में क्षुल्लक दीक्षा और समडोली में मुनिदीक्षा ली थी ।



क्षुल्लक श्री चन्द्रकीर्तिजी महाराज

आपका जन्म सम्वत् १९५० मिती पौष बदी ६ को अलवर (राज०) शहर में प्रधान जैन-जातीय अग्रवाल-गोत्रीय वश में हुआ है। जन्म-नाम ऋषभदास है। पूज्य मातेश्वरी का नाम रुक्मिणी देवी और पिता का नाम लेखमल था। ये जवाहरमलजी, छोटेलालजी, गुलाबचन्द्रजी, कालूरामजी इसप्रकार ५ सहोदर भ्राता थे। आप इकलौते पुत्र होने के कारण बडे ही लाड़-चाव में पले। आपकी चाचीजी ने लाड़ के कारण ही कनक (सोना) नाम डाल दिया। अतएव आपका कनकमल नाम ही प्रख्यात हुआ। स० १९५३ में ही आपके पिताजी का स्वर्गवास हो गया। परिवार का विशेष प्यार होने के कारण आपकी शिक्षा की तरफ विशेष ध्यान नही दिया गया, परन्तु बाल्यावस्था से ही प्रत्येक कार्यों में आपकी बुद्धि बडी ही प्रखर थी। सं० १९६६ मे जब यहा क्षुल्लक जानकीलालजी का चातुर्मास हुआ, तब आप उन्ही की सेवा में विशेष संलग्न रहने लगे तथा बाजार की मिठाई वगैरह अशुद्ध वस्तुओं का खान-पान त्याग दिया। ब्राह्मण वैश्य के सिवा अन्य स्पर्शित जल के पीने का भी त्याग कर दिया। और आजन्म ब्रह्मचर्य से रहने का दृढ संकल्प कर लिया। कुटुम्बी जनों ने विवाह के अनेक प्रयत्न किये, परन्तु आप अपने विचारों पर अटल ही रहे और स्वतन्त्र कपड़े का व्यवसाय कर न्यायोपार्जित द्रव्य संचय करते हुए धर्मध्यान, स्वाध्याय, जातीय एवं सामाजिक कार्यों में ही अधिक समय लगाने लगे। स० १९७५ मे पूज्य मातेश्वरी का वियोग हो गया। आपका चित्त ससार से बहुत ही उदासीन रहने लगा। सं० १९८३ मे आपने श्रीसम्मेदशिखरजी की वन्दना की। आप व्यर्थ व्यय के तीव्र विरोधी थे। हाँ धार्मिक कार्यों में बड़े ही उदार-चित्त थे। आपने रविव्रत व रत्नत्रय व्रत के उद्यापन किये। व्यर्थ समभ २५०) रु० के करीब उपकरण, परदे आदि श्री मदिरजी में ही विशेष भेट किये। आप 'श्री दि० जैन सस्कृत पाठशाला' अलवर के मुख्य संचालक एव कोषाध्यक्ष थे। पाठशाला के विद्यार्थियों को व भाद्रपद मास में व्रतविधान, उपवासादि करनेवाले व्यक्तियो को आप प्राय: प्रीतिभोज दिया करते थे। सं० १९८४ में श्रीसम्मेदशिखरजी में परम पूज्य तपोनिधि, आचार्यवर्य का सघ पधारा और वहाँ आदर्श पचकल्याणक महोत्सव होने के समाचार प्राय: देश के कौने कौने में फैल गये। आपने भी सुने तो दर्शनों की प्रबल इच्छा हो गई तथा अन्य लोगों से भी चलने का आग्रह किया। तब १०५ यात्रियों सहित सकुटुम्ब शिखरजी पहुंचे। अन्यत्र भी यात्रा करते हुए करीब तीन मास में आप वापिस आये। आने के तीन दिवस पश्चात् ही

आपके पूज्य बाबा गुलाबचन्द्रजी का स्वर्गवास हो गया। इनकी सम्पत्ति के अधिकारी आप ही हुए, परन्तु आपने कुल सम्पत्ति से जैन धर्मशाला में, जो कि श्री दि० जैन अग्रवाल मन्दिर के सामने है, ऊपर अत्यन्त रमणीक विशाल कमरा बनवा दिया, जिसका नाम 'आनन्द-भवन है'। आपका लक्ष्य सदैव जैन-जाति व धर्म की उन्नति की तरफ ही विशेष रहता था। दुकान पर भी प्रायः जैन व्यक्तियों को ही नौकर रखते थे और उनके साथ पूर्ण सहानुभूति व उनके सुख-दुःख में पूर्ण प्रेम रखते थे। आपके पास जितने भी व्यक्ति रहे, उन्होने काफी उन्नति प्राप्त की तथा अब भी स्वतन्त्र कार्य कर रहे हैं और सदैव आपका ही गुणगान करते है। आपकी महान् उदारता का एक परिचय यह है कि 'श्री दि० जैन औषधालय' अलवर में चिरंजीलाल "आनन्द" जैनाग्रवाल नाम के स० वैद्य थे। अलवर महाराजा की रजत-जयन्ती के समय औषधालय की वनौषधि चित्र-प्रदर्शनी होने वाली थी, तब घर में इनकी वृद्ध माताजी को निमोनिया होगया, परन्तु आवश्यक कार्य से रात्रि को ही जयंती स्थान पर जाना पड़ा। सरदी का समय था। ८–१० दिन बाद ही इनको भी वायु का रोग हो गया। उस समय इनके कुटुम्ब वाले (रिश्तेदार) तो धन के लालच से कुछ भी सेवा-सुश्रुषा में कार्य न आये। उनके दिली भाव ये ही थे कि अच्छा है यदि मृत्यु होजाय। ये दुःखद समाचार आपको विदित हुए, तो आपने व स्थानीय प्रधानाध्यापक पं० जिनेश्वरदासजी जैन वैद्यशास्त्री ने निश दिन दो माह तक अकथनीय परिश्रम किया। आपके कुटुम्बी एवं अन्य सज्जनों ने, आप दोनों धर्मवीरों को इनके पास आने से भी, यह रोग उड़ना है इत्यादि अनेकों भय बताये, परन्तु आपने अपना तन-मन-धन लगाकर अनेको वैद्य-हकीम-डाक्टरों से चिकित्सा कराई और उन्हे असाध्य रोग से बचाकर नवजीवन प्रदान किया। आरोग्य हो जाने पर आपने आग्रह करके अपनी ही दुकान में आधा साझा कर दिया था। आप ही के सुप्रयत्न एव कृपा से बाहर के कई अग्रवाल वैष्णव गृह भी जैनधर्म के अनुयायी एवं कट्टर श्रद्धानी (सस्कारित) हो गए थे। कतिपय अलवर में ही आकर स्वतन्त्र व्यापार करते हुए धर्म में पूर्ण संलग्न हैं।

सं० १९८८ के कार्तिक में पूज्य आर्यिका श्री चन्द्रमतीजी का अलवर में शुभागमन हुआ। तब आपने दो प्रतिमाएं ग्रहण की। इसी समय परम पूज्य आचार्य श्री शान्तिसागरजी (दक्षिण) महाराज का संघ तिजारा आया, तब आपने संघ को सानन्द व प्रभावना के साथ अलवर की तरफ लाने की आयोजना की और प्रमुख व्यक्तियों को लेकर मोटर—लारी रिजर्व कर तिजारा पहुंचे। वहाँ पहुंचने के द्वितीय दिवस ही पूज्य आचार्यश्री को आहार-दान दिया। इसके हर्षोपलक्ष्य में आपने श्री आचार्य महाराज की पूजन छपवा कर मुफ्त वितरण की। सघ को सानन्द अलवर लाये। शहर से दो मील दूर नशियांजी में संघ विराजा। आपने कुटुम्ब व मित्रगणों से भी रंच मात्र सम्मति न ली और आचार्य-चरणों में प्रातःकाल शुभ मिती चैत्र कृष्णा १३ सं० १९८८ को सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण

कर लिये । आपने कुल कार्यभार साझी पर ही छोड़ दिया व हर समय धर्मध्यान, स्वाध्याय आदि में ही समय व्यतीत करने लगे । सं० १९८९ का चातुर्मास आपने जयपुर (राज०) में श्री आचार्यवर्य के चरणों में ही व्यतीत किया । इसी वर्ष प० चिरंजीलालजी जैन वैद्य को साथ लेकर आपने गिरनार, पालीताना आदि तीर्थों की यात्रा की थी । सं० १९९० का चातुर्मास ब्यावर श्री आचार्य महाराज के चरणों में बिताया । वहा से श्रीसम्मेदशिखरजी पंचकल्याणोत्सव में पहुचे । पुन: आपने निजी द्रव्य से श्रीपंचकुमारस्वामी की श्वेत पाषाण की एक प्रतिमा बहुत ही मनोज्ञ तैयार करवाई, प्रतापगढ़ (राज०) में पंचकल्याणक-बिम्बप्रतिष्ठा-महोत्सव में पधारकर उसकी प्रतिष्ठा करवाई और अलवर के श्री दि० जैन अग्र० बडे मदिर में विराजमान की । उसी समय समस्त पंचों को एकत्रित कर नवीन वेदी बनवाने के अपने विचार प्रकट किये तो पंचों ने मदिर मे ही एक तरफ वेदी बनवाने की स्वीकृति आपको दे दी ।

चैत्र शुक्ला १० स० १९९१ के शुभ दिन वेदी के नीचे की नींव का मुहूर्त आप ही के कर-कमलों द्वारा बड़े ही समारोह के साथ हुआ । इसप्रकार आपने निजी न्यायोपार्जित द्रव्य का सदुपयोग किया ।

पंचकुमारस्वामी के दर्शन कर स्थानीय भौरेंलालजी हलवाई के बहुत ही विशेष भाव चढ गये । इन्होंने उक्त वेदी के बनवाने में निजो दस हजार रुपया के लगभग सम्पत्ति लगाकर बड़ी ही रमणीक मदिर में ही चैत्यालय के रूप में वेदी तैयार करवाई । पश्चात् वि० सं० १९९३ में वेदी-प्रतिष्ठा बड़े ही समारोह से की गई । यह सब आप ही की महत् कृपा का फल था । वि० सं० १९९१ में उदयपुर में परमपूज्य श्री आचार्य-चरणो मे ही चातुर्मास किया और शुभ मिती कार्तिक शुक्ला १३ को क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की । नाम-संस्करण 'चन्द्र-कीर्ति' हुआ । यहां से आप श्रीमान् धर्म-वीर सेठ सखाराम जी दोशी के आग्रह एवं श्री आचार्य की आज्ञा से अन्य पूज्य क्षुल्लकों के साथ शोलापुर पंचकल्याणक-महोत्सव में पधारे । आप तीर्थ-यात्रा के बड़े ही प्रेमी है । गृहस्थावस्था में ही तीन बार श्रीशिखरजी एवं गिरनारादि की वंदना आप कर चुके हैं तथा देहली, रेवाड़ी, गया, आगरा आदि अनेकों स्थानों की बिम्ब-प्रतिष्ठाओं में पहुंचे है । श्री महावीरजी की यात्रार्थ तो आप प्रति वर्ष ही जाते थे । आप बडे ही परोपकारी एवं सहनशील हैं तथा खानपान क्रियाओ में पूर्ण शुद्धि के कट्टर श्रद्धा वाले हैं । आप श्रीआचार्य चरणों के परम भक्त हैं । आपका स्वास्थ्य ठीक नही रहता है । भोजन के समय तो अत्यन्त ही वेदना रहती है, तथापि आप इसकी रंच-मात्र भी परवाह नहीं करते ।



क्षु० श्री धर्मसागरजी महाराज

(कुरावड़ निवासी)

महाराणा प्रताप की वीर भूमि मेवाड़ प्रान्त के कुरावड़ ग्राम में आपका जन्म हुवा था। पिता का नाम राधाकृष्ण था, माँ का नाम हीराबाई था। पौष सुदी दशमी संवत् १९३७ को चुन्नीलाल का जन्म हुवा था। आपका जन्म ब्राह्मण कुल में हुवा था। विवाह होने के कुछ वर्ष पश्चात् आ० क० चन्द्रसागरजी महाराज का आगमन हुवा तब आपने मुनि श्री के प्रवचन सुने तथा उसी समय आपने जैन धर्म को स्वीकार कर श्रावक के व्रत धारण किए जब परिवार वालों ने सुना कि चुन्नीलाल न जैन धर्म स्वीकार कर लिया है तो परिवार वालों ने उन्हे जाति से बाहर कर दिया। पर आपने अपने मन से जैन धर्म को नही छोड़ा तथा आप सपत्नीक व्रतों को धारण कर आत्म कल्याण में लग गये। समय के अनुसार पत्नी का वियोग हो गया तब आपने भुगेड मे महाराजजी से सातवीं प्रतिमा के व्रत धारण किए। आ० शान्तिसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली। दीक्षा लेने के पश्चात् आपने बागड प्रान्त मे विहार किया तथा अनेक भीलों को मास खाने का, शराब पीने का त्याग कराया। भीण्डर नरेश ने रात्रि मे भोजन नहीं करेगे, ऐसा नियम लिया था। तथा हमारे प्रान्त में आठम, ग्यारस, चौदस, अमावस एवं पूनम को जीव हिंसा नही होगी। आपके द्वारा बागड़ प्रान्त में सैकडों पाठशालाएँ, गुरुकुल खुलवाये गये तथा विधवा विवाह आदि का त्याग कराया तथा अन्त समय तक धार्मिक कार्यों के प्रचार प्रसार मे लगे रहे। आप बागड़ प्रान्त के प्राण थे।



आर्यिका विद्यावती माताजी



सिकन्दरपुर (मुजफ्फरनगर) यू० पी० मे श्रेष्ठी श्री फूलचन्दजी के घर पर जन्म लिया। आपका पूर्व नाम श्री सज्जोदेवी था। आपकी जाति अग्रवाल थी। आप लौकिक शिक्षा के साथ व्याकरण न्याय, सिद्धान्त की अधिकारी साध्वी थी।

आपने शास्त्री परीक्षा भी पास की थी। आचार्य श्री शान्तिसागरजी के उपदेश से वैराग्य हुवा तथा परिवार का मोह छोड करके स० १९९० मे सातवी प्रतिमा के व्रत धारण किए, स० १९९८ में आचार्य श्री शान्तिसागरजी से दहीगाव मे क्षुल्लिका दीक्षा ली। स० २००८ दहीगाव मे आचार्य श्री से आर्यिका दीक्षा ली। आपने ४० चातुर्मास यत्र तत्र कर धर्म प्रभावना की। आपने सोलह कारण, कर्मदहन, दशलक्षण धर्म आदि के व्रत लेकर उपवास आदि किए। आप बडी ही तपस्वी साध्वी के रूप मे समाज के सामने आई।



आर्यिका चन्द्रवती माताजी



चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागरजी महाराज ने केशरबाई को दीक्षा देते समय कहा था कि नमूना तो बनो। उस समय तक कोई स्त्री दीक्षित नही हुई थी। परमपूज्य आचार्य महाराज बारम्बार प्रार्थना करने पर भी दीक्षा नही देते थे परन्तु उन्होन केशर बाई को सत्पात्र विचार कर एक ही दिन के बाद दीक्षा देकर कृतार्थ किया।

सयम के सुवास से समलकृत सत्य एव श्रद्धा की मूर्तिमान स्वरूपा परमपूज्य आर्यिका श्रेष्ठ माता चन्द्रवतीजी के गृहस्थावस्था का नाम केशर बाई था।

वे वाल्हे गाव (जिला–पूना) की हैं। उनका विवाह तेरह वर्ष की अवस्था मे हुआ था। उनका शरीर बडा बलशाली था। जो भी उनके सुदृढ शरीर को देखता था वह उससे प्रभावित हो जाता था।

इन्होने प्रारम्भ मे बम्बई के श्राविकाश्रम मे आकर शिक्षा ग्रहण की। उसकी सचालिका महिलारत्न मगनबाई और उनकी सहायिका कंकूबाई और ललिताबाई थी।

पर पिताजी ने इन्हे घर पर ही बुलाकर प० नानाजी नाग के तत्वावधान मे इन्हे शिक्षा दिलाई।

माताजी को व्रत उपवास करन मे बडा आनन्द आया करता था। उन्होने चारित्र शुद्धि व्रत को, जिसमे १२३४ उपवास होते है, किया था। इन्होने अनेक प्रकार के तप किये।

पूज्य माताजी का जन साधारण पर उनकी पवित्रता के कारण बडा प्रभाव पडता है। दिल्ली के सुप्रसिद्ध नये मन्दिरजी मे शुभवर्णी सहस्रकूट चैत्यालय का निर्माण इनकी और इनके साथ रहने वाली माताजी विद्यामतीजी की प्रेरणा से हुआ।

दि० जैन लालमन्दिरजी के उद्यान में सुन्दर मानस्तम्भ भी इन्हीं दोनों की प्रेरणा से ही शोभायमान हो रहा है।

माताजी का स्वभाव बड़ा सरल है। उनकी वाणी में मधुरता है। निर्दोष संयम पालने से आत्मा मे अद्भुत् शक्तियां विकसित होती हैं।

जैन समाज का भाग्य है कि अत्यन्त पवित्र हृदय वाली भद्र परिणाम युक्त आत्मकल्याण मे सतत् सावधान रहने वाली माताजी, सर्वश्रेष्ठ और ज्येष्ठ तपस्विनी के रूप में शोभायमान हो रही है। १०१ वर्ष की आयु मे भी व्रत नियम और चर्या के पालन करने में समर्थ हैं।

अभी माताजी का दिल्ली महिलाश्रम, दरियागंज, दिल्ली में स्वर्गवास हो गया।



आर्यिका सिद्धमती माताजी

स्वर्गीय श्री १०५ आर्यिका सिद्धमतीजी का पहले का नाम सतोबाई था। आपका जन्म विक्रम सं० १९५० के आश्विन मास में हुआ था। भारत की राजधानी देहली को आपकी जन्मभूमि होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। आपके पिता का नाम लाला नन्दकिशोर था तथा माता का नाम कट्टो देवी था। आप अग्रवाल जाति की भूषण और सिहल गोत्रज थी। आपका विवाह ८ वर्ष की अल्पावस्था मे हुआ था। परन्तु पाच वर्ष बाद ही आपको पतिवियोग सहना पड़ा।

आपने संसार की असारता देख जीवन को जल बिन्दु सदृश क्षणिक समझा। इसलिए आत्मा का कल्याण करने के लिए वि० स० १९९० मे आपने सातवी प्रतिमा श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी से ले ली थी। फिर वि० स० २००० में क्षुल्लिका दीक्षा सिद्धक्षेत्र सिद्धवरकूट में ली थी। श्री १०८ आचार्य वीरसागरजी से नागौर में विक्रम संवत २००६ मे आर्यिका दीक्षा ली थी। आपने विक्रम संवत २०२५ में प्रतापगढ़ में समाधिमरण प्राप्त किया था।



क्षुल्लिका गुणमती माताजी

प्रशममूर्ति विदूषीरत्न परमपूज्य श्री १०५ क्षुल्लिका गुणमती माताजी दिव्य देदीप्यमान नारी रत्न हैं जिन्होंने अपने जीवन में संचित ज्ञानराशि को दूसरों के हित के लिए अर्पित कर दिया और अपना सारा जीवन संयम की आराधना में लगा दिया।

माताजी का जन्म संपन्न परिवार में हुआ जहां वैभव और ऐश्वर्य की कोई कमी नहीं। जैन कुलभूषण स्वनाम धन्य ला० हुकमचन्दजी के घर संवत १९५६ में आपका जन्म हुआ।

चार पुत्रों में एक कन्या का जन्म होने से उसका नाम चावली रखा गया। बाद में उसकी विशेष ज्ञान वृद्धि को देखते हुए ज्ञानमती नाम पडा। बचपन में अत्यन्त लाड-प्यार से पालन होने के कारण सभी प्रकार के सांसारिक सुख थे परन्तु कौन जानता था कि विवाह के ३६ दिन के पश्चात् विधिना की क्रूर दृष्टि के कारण माथे का सिन्दूर पुँछ जायेगा।

जैनधर्म की शिक्षा ही कुछ ऐसी है जो हर्ष मे उन्मत्त होने से और शोक में अक्रान्त होने से बचाती ही नही बल्कि कर्मों की विचित्र गति जानकर साहस, पौरुष और आत्मशक्ति को प्रबल कर देती है, दुर्भाग्य सौभाग्य रूप में परिणत हो जाता है।

त्यागमूर्ति बाबा भागीरथजी जैसे संतों के पधारने से जिन शासन के अध्ययन की रुचि जगी। व्रत नियम, संयम जीवन का लक्ष्य हो गया। सौभाग्य से विदुषी रत्न, लोकसेवी, शिक्षा प्रचारिका श्री रामदेवीजी के सम्पर्क से जैनधर्म के अध्ययन में निष्णात होने लगी। सिद्धान्तशास्त्री पं० गौरीलालजी ने शाकटायन व्याकरण का अध्ययन कराया। फलस्वरूप जिनवाणी के अध्ययन में अबाधगति से प्रवृत्ति होने लगी। ज्ञानाराधन का स्वाद दूसरे भी उठाये, असमर्थ विधवा सहायता योग्य बहिनों की उन्नति कैसे हो इस बलवती भावना के फलस्वरूप गुहाना में श्री ज्ञानवती जैन वनिताश्रम की स्थापना की गई। इस युग में समन्तभद्र के समान विदुषीरत्न मगनबेन, चारित्र मूर्ति ब्रह्मचारिणी चन्दाबाईजी जैसे मातृवत्सला नारी रत्नों के समक्ष नारी जाति के उद्धार के लिये यह संस्था कल्पवृक्ष के समान फलदायी सिद्ध हुई।

माता ज्ञानवती जी ने इसे अपने जीवन का प्राणाधार समझा। दिन रात संस्था की उन्नति में अहर्निश दत्तचित्त हो संस्था के विकास के मार्ग पर अग्रसर होती गई।

आन्तरिक सयम की प्रबल भावना के फलस्वरूप चारित्र के विकास की अटपटी लगने लगी। चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागरजी महाराज के संघ के साधुओं को आहार दान वैयावृत्ति करना, जहां संघ का विहार हो वहा जाना अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया। पंचाणुव्रत प्रतिमा और क्रमशः बढते हुए चारित्र की सीढ़ी पर चढ़ने लगी। परमपूज्य शान्तमूर्ति आचार्य शान्तिसागरजी महाराज से क्षुल्लक की दीक्षा अंगीकार की।

अपने व्रतों को निर्बाध और निरतिचार पालन करती हुई, सर्वत्र ज्ञान का प्रचार करती हुई दरियागंज मे कन्याओं में धार्मिक शिक्षा प्रचार के लिए श्री ज्ञानवती कन्या पाठशाला की स्थापना करायी और रायसाहब उल्फतरायजी की पुत्रवधु स्वर्णमाला की देखरेख में सस्था दिनोदिन उन्नति करने लगी। माताजी स्त्री शिक्षा के प्रचार के लिए, चारित्र की वृद्धि के लिए दुर्धर तप का पालन करती हुई जिनशासन के गौरव को बढ़ा रही हैं।



क्षुल्लिका अजितमती माताजी



जन्म स्थान— ओलीवडे (जि० कोल्हापुर)

जन्म— सन् १६०४

पिता का नाम— श्री नानासाहबजी

माता का नाम— श्री कृष्णा बाईजी

माताजी का पूर्व नाम—श्री मरुदेवी

दो वष की उम्र मे पिताजी व दो भाई एक बहिन की प्लेग की बीमारी से मृत्यु हुई तथा २½ वर्ष की उम्र मे मा ने विवाह कर दिया। १२ वर्ष की आयु मे पति वियोग। २० वष की आयु मे आ० शातिसागरजी से दूसरी प्रतिमा के व्रत धारण किये। सन् १६२८ मे पू० आ० शातिसागरजी महाराज से तीर्थराज सम्मदशिखरजी मे क्षुल्लिका दीक्षा धारण की, उसीसमय मे आपने अपने जीवन को तप त्याग के मार्ग मे लगाया हुआ है?

आपने अपने जीवन मे अनेको उपवास किये, जिनमे मुख्यत सोलह कारण के ३ बार ३२-३२ उपवास किये दो बार सिहनि क्रीडित व्रत किये। सागली मे आपने १२३४ उपवास किये।

चारित्र चक्रवति आ० शातिसागरजी महाराज की अतिम शिष्या पू० माताजी ही हैं। आप वयोवृद्ध, तपोवृद्ध विविध गुण सम्पन्न हैं। आगमानुकूल चारित्र, सहनशीलता एव प्रभावशाली व्यक्तित्व के कारण जैन समाज के लिए एक उत्कृष्ट तपस्वी साध्वी हैं।



आचार्य श्री वीरसागर स्तुतिः



स्वात्मैकनिष्ठं नृसुरादिपूज्यं,
षड्जीव कायेषु दयार्द्रचित्तं ।
श्रीवीरसिंधुं भववार्धिपोतं,
तं सूरिवर्यं प्रणमामि भक्त्या ॥



स्वाध्यायध्यानादिक्रियासु सक्तः,
स्वात्मोत्थसौख्यास्वदनेऽनुरक्तः ।
संसारभोगेषु विरक्तचित्तः,
आचार्यवर्यं त्रिविधं नमामि ।



यो मुख्यशिष्यो गुरुशान्तिसिन्धोः,
दीक्षाव्रतादेशविधौ विधिज्ञः ।
कन्दर्पमायाक्रुधमानलोभान्,
जित्वा रिपून् 'वीर' इति प्रसिद्धः ॥



आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज के प्रथम

पट्टाचार्य शिष्य

आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य

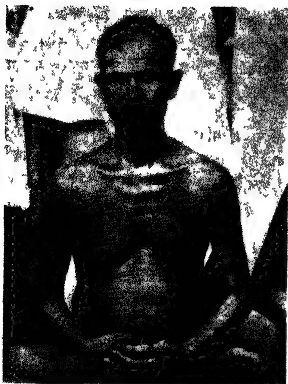


आचार्य श्री शिवसागरजी
आचार्य श्री धर्मसागरजी
मुनि श्री पदमसागरजी
मुनि श्री सन्मतिसागरजी
मुनि श्री आदिसागरजी
मुनि श्री सुमतिसागरजी
मुनि श्री श्रुतसागरजी
मुनि श्री अजितकीर्तिजी
मुनि श्री जयसागरजी
आचार्य कल्प श्री श्रुतसागरजी

क्षुल्लक श्री सिद्धसागरजी
क्षुल्लक श्री सुमतिसागरजी
आर्यिका इन्दुमतीजी
आर्यिका वीरमतीजी
आर्यिका विमलमतीजी
आर्यिका कुन्थुमतीजी

आर्यिका सुमतिमतीजी
आर्यिका पार्श्वमतीजी
आर्यिका सिद्धमतीजी
आर्यिका ज्ञानमतीजी
आर्यिका सुपार्श्वमतीजी
आर्यिका वासुमतीजी
आर्यिका शान्तिमतीजी

आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज



वर्तमान शताब्दी की दिगम्बर जैनाचार्य परम्परा के तृतीय आचार्य प० पू० प्रात स्मरणीय परम तपस्वी बालब्रह्मचारी आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज थे। आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के समय मे भारतवर्ष मे साधु सघ का आदर्श प्रस्तुत हुआ था। आपने आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज द्वारा आर्षमार्गानुसार प्रस्थापित परम्परा को अक्षुण्ण तो बनाये ही रखा, साथ ही सघ मे अभिवृद्धि कर सघानुशासन का आदर्श भी उपस्थित किया। भारतवर्ष का सम्पूर्ण जैनजगत् आपके आदर्श सघ के प्रति नत मस्तक था। साधु समुदाय मे ज्ञान-जिज्ञासा एव उसकी प्राप्ति की सतत् लगन के साथ चारित्र का उच्चादर्श देखकर विद्वद्वर्ग भी सघ के प्रति आकृष्ट था और प्रबुद्ध साधुवग से अपनी शकाओ के समाधान प्राप्त कर आनन्द प्राप्त करता था।

दिगम्बर मुनि धर्म की अविच्छिन्न धारा से सुशोभित दक्षिण भारत के अन्तर्गत वर्तमान महाराष्ट्र प्रान्तस्थ औरगाबाद जिले के अडगाव ग्राम मे रावका गोत्रीय खण्डलवाल श्रेष्ठि श्री नेमीचन्द्रजी के गृहागण मे माता दगडाबाई की कुक्षि से वि० स० १९५८ मे आपका जन्म हुआ था। जन्म नाम हीरालाल रखा गया था। आप दो भाई थे, दो बहिने भी थी। प्रतिभावान व कुशाग्रबुद्धि होते हुए भी साधारण आर्थिक स्थिति के कारण आप विशेष शिक्षा नही ग्रहण कर पाये।

औरंगाबाद जिले के ही ईरगाव वासी ब्र० हीरालालजी गंगवाल (स्व० आचार्य श्री वीर-सागरजी) आपके शिक्षागुरु रहे । निकटस्थ अतिशयक्षेत्र कचनेर के पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन विद्यालय में आपका प्राथमिक विद्याध्ययन हुआ । धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ हिन्दी का तीसरी कक्षा तक ही आपका अध्ययन हो पाया था कि अचानक महाराष्ट्र प्रान्त में फैली प्लेग की भयंकर बीमारी की चपेट में आपके माता-पिता का एक ही दिन स्वर्गवास हो गया । माता-पिता की वात्सल्यपूर्ण छत्रछाया में बालक अपना पूर्ण विकास कर पाता है, किन्तु आपके जीवन के तो प्राथमिक चरण में ही उसका अभाव हो गया, इसका प्रभाव आपके विद्याध्ययन पर पड़ा । आपके बड़े भाई का विवाह हो चुका था, किन्तु विवाह के कुछ समय बाद ही उनका भी देहान्त हो जाने के कारण १३ वर्षीय अल्पवय में ही आप पर गृहस्थ संचालन का भार आ पड़ा । कुशलता पूर्वक आपने इस उत्तरदायित्व को भी निभाया ।

माता-पिता एवं बड़े भाई के आकस्मिक वियोग के कारण संसार की क्षणस्थायी परिस्थितियों ने आपके मन को उद्वेलित कर दिया । फलस्वरूप, गृहस्थी बसाने के विचारों को मन ने कभी भी स्वीकार नहीं किया । विवाह के प्रस्ताव प्राप्त होने पर भी आपने सदैव अपनी असहमति ही प्रगट की । आप आजीवन ब्रह्मचारी ही रहे । २८ वर्ष की युवावस्था में असीम पुण्योदय से आपको आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज के दर्शन करने का मंगल अवसर मिला तथा उसी समय आपने यज्ञोपवीत धारण कर द्वितीय व्रत-प्रतिमा ग्रहण की । महामनस्वी चा० च० आचार्यश्री के द्वारा बोया गया यह व्रतरूप बीज आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज के चरण सान्निध्य में पल्लवित पुष्पित हुआ ।

वि० स० १९९९ की बात है, अब तक आपके आद्य विद्यागुरु ब्र० हीरालालजी गंगवाल आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज से मुनिदीक्षा ग्रहण कर चुके थे और मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र पर विराजमान थे । आपने उनसे सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये तथा ब्रह्मचारी अवस्था में संघ में प्रवेश किया । बाल्यावस्था से ही आपकी स्वाध्याय की रुचि थी । वह अब और तीव्रतर होने लगी अत: आप विभिन्न ग्रन्थों का अध्ययन करने लगे । "ज्ञानं भार: क्रिया विना" की उक्ति आपके मन को आन्दोलित करने लगी । आपके मन में चारित्र ग्रहण करने की उत्कट भावना ने जन्म लिया । आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज का जब सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र पर ससंघ पहुंचना हुआ तब आपने वि० सं० २००० में क्षुल्लकदीक्षा ग्रहण की । आपको क्षु० शिवसागर नाम प्रदान किया । अद्भुत संयोग रहा हीरालाल द्वय का । गुरु और शिष्य दोनों ही हीरालाल थे । यह गुरु-शिष्य संयोग वीरसागरजी महाराज की सल्लेखना तक निर्बाधरूप से बना रहा ।

निरन्तर ज्ञान-वैराग्य शक्ति की अभिव्यक्ति ने आपको निर्ग्रन्थ-दिगम्बर दीक्षा धारण करने के लिये प्रेरित किया। फलस्वरूप वि० सं० २००६ में नागौर नगर में आषाढ शुक्ला ११ को आपने आचार्य श्री वीरसागरजी के पादमूल में मुनिदीक्षा ग्रहण की। वर्तमान पर्याय का यह आपका चरम विकास था। अब आप मुनि शिवसागरजी थे। मुनिदीक्षा के पश्चात् ८ वर्ष पर्यंत गुरु-सन्निधि में आपकी योग्यता बढ़ती ही चली गयी। आपने गुरुदेव के साथ श्री सम्मेदशिखरजी सिद्धक्षेत्र की यात्रा वि० सं० २००९ में की। जब वि० स० २०१४ मे आपके गुरु का जयपुर खानियाँ में समाधि-मरण पूर्वक स्वर्गवास हो गया तब आपको आचार्यपद प्रदान किया गया। इस अवधि में आपका ज्ञान भी परिष्कृत हो चुका था। आपने चारों अनुयोग सम्बन्धी ग्रन्थों का अध्ययन कर लिया था। तथा अनेक स्तोत्र पाठ, समयसार कलश, स्वयंभू स्तोत्र, समाधितंत्र, इष्टोपदेश आदि संस्कृत रचनाएं कठस्थ भी कर ली थी। मातृभाषा मराठी होते हुए भी आप हिन्दी अच्छी बोल लेते थे।

वि० सं० २०१४ में ही आचार्यपद ग्रहण के पश्चात् आपने ससंघ गिरिनार क्षेत्र की यात्रा की। उसके बाद क्रमशः ब्यावर, अजमेर, सुजानगढ, सीकर, लाडनूं, खानिया (जयपुर), पपौरा, महावीरजी, कोटा, उदयपुर और प्रतापगढ़ में चातुर्मास किये। इन वर्षों में आपके द्वारा संघ की अभिवृद्धि के साथ-साथ अत्यधिक धर्म प्रभावना हुई। ११ वर्षीय इसी आचार्यत्वकाल में आपने अनेक भव्यजीवों को मुनि-आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक-क्षुल्लिका पद की दीक्षाएं प्रदान की तथा सैकडों श्रावकों को अनेकविध व्रत, प्रतिमा आदि ग्रहण कराकर मोक्षमार्ग में अग्रसर किया। आपके सर्वप्रथम दीक्षित शिष्य मुनि ज्ञानसागरजी महाराज थे। उसके अनन्तर आपने ऋषभसागरजी, भव्यसागरजी, अजित-सागरजी, सुपार्श्वसागरजी, श्रेयाससागरजी सुबुद्धिसागरजी को मुनिदीक्षा प्रदान की। आपने सर्वप्रथम आर्यिका दीक्षा चन्द्रमतीजी को प्रदान की। उसके बाद क्रमशः पद्मावतीजी, नेमामतीजी, विद्यामतीजी, बुद्धिमतीजी, जिनमतीजी, राजुलमतीजी, संभवमतीजी, आदिमतीजी, विशुद्धमतीजी, अरहमतीजी, श्रेयासमतीजी, कनकमतीजी, भद्रमतीजी, कल्याणमतीजी, सुशीलमतीजी, सन्मतीजी, धन्यमतीजी, विनयमतीजी एवं श्रेष्ठमतीजी सबको आर्यिका दीक्षा दी। आपके द्वारा दीक्षित सर्वप्रथम क्षुल्लक शिष्य सम्भवसागरजी थे, साथ ही आपने शीतलसागरजी, यतीन्द्रसागरजी, धर्मेन्द्रसागरजी, भूपेन्द्र-सागरजी व योगीन्द्रसागरजी को भी क्षुल्लक के व्रत दिए। क्षुल्लक धर्मेन्द्रसागरजी को उनकी सल्लेखना के अवसर पर आपने मुनिदीक्षा दी थी। ऐलक अभिनन्दनसागरजी आपके द्वारा अन्तिम दीक्षित भव्यप्राणी हैं। आपके अन्तिम शिष्य हैं। सुव्रतमती क्षुल्लिका भी आपसे ही दीक्षित थी, इसके अतिरिक्त तीन भव्य प्राणियों को उनकी सल्लेखना के अवसर पर आपसे मुनिदीक्षा ग्रहण करने का सौभाग्य मिला था। वे थे आनन्दसागरजी, ज्ञानानन्दसागरजी तथा समाधिसागरजी। इन तीनों ही साधुओं की सल्लेखना आपकी सन्निधि में ही हुई थी।

आपके आचार्यत्वकाल में संघ विशालता को प्राप्त हो चुका था। उसकी व्यवस्था सम्बन्धी सारा संचालन आप अत्यन्त कुशलता पूर्वक करते थे। कृशकाय आचार्य श्री का आत्मबल बहुत दृढ़ था। तपश्चर्या की अग्नि में तपकर आपके जीवन का निखार वृद्धिगत होता जाता था। आपके कुशल नेतृत्व से सभी साधुजन संतुष्ट थे। न तो आपको छोडकर कोई जाना ही चाहता था और न आपने आत्मकल्याणार्थी किसी साधु या श्रावक को भी कभी सघ से जाने के लिए कहा। आपका अनुशासन अतीव कठोर था। संघ में कोई भी त्यागी आपकी दृष्टि मे लाये बिना श्रावकों से अल्प से अल्प वस्तु की भी याचना नही कर सकता था। सघव्यवस्था सुचारु रीत्या चले, इसके लिये प्राय: आर्यिका वर्ग में एक या दो प्रधान आर्यिकाओं की नियुक्ति आप कर दिया करते थे। साधुओं के लिये आपके सहयोगी थे संघस्थ मुनि श्री श्रुतसागरजी महाराज। अनुशासन की कठोरता के बावजूद आपका वात्सल्य इतना अधिक था कि कोई शिष्य आपके जीवनकाल मे आपसे पृथक् नही हुआ। संघ का विभाजन आपकी सल्लेखना के पश्चात् ही हुआ। आपने एक विशाल सघ का संचालन करते हुए भी कभी आकुलता का अनुभव नही किया।

आपके आचार्यत्व काल में सबसे महत्वपूर्ण एव सफल कार्य हुआ 'खानिया तत्त्व चर्चा'। पिछले दो दशकों से चले आ रहे सैद्धान्तिक द्वन्द्व से आपके मन में सदैव खटक रहती थी। उसे दूर करने का प्रयत्न किया आपने सोनगढ पक्षीय व आगमपक्षीय विद्वानों के मध्य तत्त्वचर्चा का आयोजन करवा कर। आपकी मध्यस्थता में होनेवाली इस तत्त्वचर्चा का फल तो विशेष सामने नहीं आया, किन्तु आपकी निष्पक्षता के कारण उभयपक्षीय विद्वान् आमने-सामने एक मच पर एकत्र हुए और उन्होंने अपने-अपने विचारो का आदान-प्रदान अत्यन्त सौम्य वातावरण में किया। इस तत्त्वचर्चा यज्ञ में सम्मिलित आगन्तुकों में प्राय सभी उच्चकोटि के विद्वान् थे। पंडित कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्ताचार्य वाराणसी, पं० फूलचन्दजी सिद्धान्तशास्त्री, पं० मक्खनलालजी शास्त्री, प० पन्नालालजी साहित्याचार्य, प० रतनचन्दजी मुख्तार आदि विद्वानो ने परस्पर बैठकर संघ-सान्निध्य में चर्चा की थी। इस चर्चा को खानिया तत्त्वचर्चा नाम से २ भागो मे सोनगढ पक्ष की ओर मे टोडरमल स्मारक वालों ने प्रकाशित भी किया है।

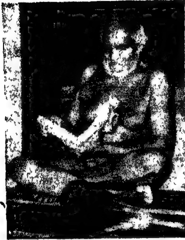
चर्चा के सम्बन्ध मे प० कैलाशचन्द्रजी ने अपना अभिमत जैन सन्देश (अक ७ नवम्बर, १९६७) के सम्पादकीय लेख मे लिखा था कि "इस (खानियातत्त्वचर्चा) के मुख्य आयोजक तथा वहा उपस्थित मुनिसघ को हम एकदम तटस्थ कह सकते हैं, उनकी ओर से हमने ऐसा कोई संकेत नहीं पाया कि जिससे हम कह सके कि उन्हे अमुक पक्ष का पक्ष है। इस तटस्थवृत्ति का चर्चा के वातावरण पर अनुकूल प्रभाव रहा है।"

आचार्य स्वयं पंचाचार का परिपालन करते हैं और शिष्यों से भी उसका पालन करवाते हैं। शिष्यों पर अनुग्रह और निग्रह आचार्य परमेष्ठी की अनेक विशेषताओ में से एक विशेषता है। अतः आचार्य पद के नाते आप अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करते हुए इस बात का सदैव ध्यान रखते थे कि संघस्थ साधु समुदाय आगमोक्त चर्या में रत है या नही। आपकी पारखी दृष्टि अत्यन्त सूक्ष्म थी, आत्मकल्याणेच्छुक कोई नवीन व्यक्ति संघ में आता और दीक्षा की याचना करता तो यदि वह आपकी पारखी दृष्टि में दीक्षा का पात्र सिद्ध हो जाता तो ही वह दीक्षा प्राप्त कर सकता था। जिस व्यक्ति को जनसाधारण शीघ्र दीक्षा का पात्र नही समझता वह व्यक्ति आचार्यश्री की दृष्टि से बच नही पाता था। उसकी क्षमता परीक्षण के पश्चात् ही उसे योग्यतानुसार क्षुल्लक, मुनि आदि दीक्षा आपने प्रदान की। विद्वानों का आकर्षण भी आपके एवं सघस्थ गहनतम स्वाध्यायी साधुओं के प्रति था इसीलिए प्रायः प्रत्येक चातुर्मास में सघ मे कई-कई दिनों तक विद्वद्वर्ग आकर रहता था और सभी अनुयोगों की सूक्ष्म चर्चाओं का आनन्द लेता था। बातचीत के बीच सूत्ररूप वाक्यो के प्रयोग द्वारा बड़ी गहन बात कह जाना आचार्य श्री की प्रकृति का अभिन्न अंग था। कुल मिलाकर आचार्य श्री अपूर्व गुणों के भण्डार थे। वि० स० २०२५ का अन्तिम वर्षायोग आपने प्रतापगढ़ मे किया था। वहा से फाल्गुन माह मे होने वाली शान्तिवीर नगर महावीरजी की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में सम्मिलित होने के लिए आप ससघ श्री महावीरजी आये थे। यहा आने के कुछ ही दिन बाद आपको ज्वर आया और ६-७ दिन के अल्पकालीन ज्वर मे ही आपका समस्त सघ की उपस्थिति में फाल्गुन कृष्णा अमावस्या को दिन में ३ बजे लगभग समाधिमरण हो गया। आपके इस आकस्मिक वियोग से साधु संघ ने वज्रपात का सा अनुभव किया। ऐसा लगने लगा कि जिस कल्पतरु की छत्रछाया में विश्राम करते हुए भवताप से शान्ति का अनुभव होता था, उनके इस प्रकार अचानक स्वर्गवास हो जाने से अब ऐसी आत्मानुशासनात्मक शान्ति कहा मिलेगी ?

वस्तुतः आचार्यश्री ने अपने गुरु के परम्परागत इस संघ को चारित्र व ज्ञान की दृष्टि से परिष्कृत, परिवर्धित और संचालित किया था। उन जैसे महान् व्यक्तित्व का अभाव आज भी खटकता है। आपके स्वर्गारोहण के पश्चात् वहां उपस्थित आपके गुरुभ्राता [आचार्य श्री वीरसागरजी के द्वितीय मुनिशिष्य] श्री १०८ धर्मसागरजी महाराज को समस्त सघ ने सघ का नायकत्व सौंपकर अपना आचार्य स्वीकार किया। वे भी इस संघ का सचालन अपने प्रयत्न भर कुशलता पूर्वक कर रहे हैं। प० पू० महान् तपस्वी १०८ आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के पावन चरणों में अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए अपनी विनम्र भावाञ्जलि समर्पित करता हू।



आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज



कृषि प्रधान भारत का स्वरूप ऋषि प्रधान रहा है। यहां सत्ता, वैभव एव ऐश्वर्य के उन्नत शिखर भी त्याग, वैराग्य एवं आत्मसाधना के चरणों में झुकते रहे हैं। अनादिकाल से जीवन का लक्ष्य सत्ता व ऐश्वर्य नही किन्तु साधना व वैराग्य रहा है। भारतीय मस्तिष्क मूलतः शान्ति का इच्छुक है और शान्ति का उपाय त्याग व साधना है। यही कारण रहा है कि आत्मसाधना के पथ पर चलने वाला साधक ही भारतीय जीवन का आदर्श, श्रद्धेय और वन्दनीय माना जाता रहा है।

इस हुण्डावसर्पिणी काल के सर्वप्रथम सर्वोत्कृष्ट आत्मसाधक भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर पर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकर महापुरुषो की पावन परम्परा में अनेक महर्षियो ने अपनी आत्मसाधना की है और उनका आदर्श अद्यप्रभृति अक्षुण्ण बना हुआ है। भगवान महावीर के पश्चात् गौतमस्वामी से लेकर धरसेनाचार्य तक और उनके पश्चात् कुन्दकुन्दाचार्य आदि से लेकर अद्यप्रभृति महान आत्माएँ इस पृथ्वी तल पर जन्म लेती रही है और आर्ष परम्परा के अनुकूल आत्मसाधना करते हुए अन्य भव्य प्राणियों को भी आत्मसाधना का मार्ग प्रशस्त कर रही है।

इन्ही महान धर्माचार्यों की परम्परा कुन्दकुन्दान्वय में ईस्वी सन् १६ वी शताब्दि मे एक महान आत्मा का जन्म हुआ और विश्व में चारित्र चक्रवर्ती श्री शान्तिसागरजी महाराज के नाम से जाने गये। आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज ने इस भारत भू पर अवतरित होकर १६-२० वीं शताब्दि मे लुप्तप्रायः आगम विहीत मुनिधर्म को पुनः प्रगट किया एव दक्षिण से उत्तर भारत की ओर मगल विहार करके दिगम्बर मुनि का स्वरूप एव चर्या जो मात्र शास्त्रों मे वर्णित थी, को प्रगट किया। उन महर्षि की महती कृपा का ही यह फल है कि आज यत्र तत्र सर्वत्र दिगम्बर मुनिराजों के दर्शन, उपदेश श्रवण का लाभ समाज को प्राप्त हो रहा है। आचार्य शान्तिसागरजी महाराज के पश्चात् उन्ही के प्रधान मुनिशिष्य श्री वीरसागरजी महाराज ने आचार्य पद ग्रहण किया एवं उनके

पश्चात् उन्हीं के प्रधान मुनिशिष्य शिवसागरजी महाराज ने आचार्य पद को सुशोभित किया । उभय आचार्यों ने अपने समय में चतुर्विध संघ की अभिवृद्धि के साथ साथ धर्म की महती प्रभावना में भी अपना अपूर्व योगदान दिया । आचार्यत्रय की इस महान परम्परा में आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के पश्चात् आचार्य श्री शान्तिसागरजी के प्रशिष्य एवं आचार्य श्री बीरसागरजी के द्वितीय मुनिशिष्य श्री धर्मसागरजी महाराज वर्तमान में आचार्य पद पर प्रतिष्ठित है । उन्ही आचार्यश्री का जीवनवृत्त प्रस्तुत निबन्ध मे लिखा गया है ।

एक दिन अवनितल पर आँखें खुली, यह जीवन का प्रारम्भ हुआ । एक दिन आखों ने देखना बन्द कर दिया, यह जीवन का अन्त हुआ । जीवन किस तरह जीया गया यह जीवन का मध्य है । कौन किस तरह जीवन जी गया यह महत्वपूर्ण प्रश्न है । इसी प्रश्न की चर्चा मे से जीवन चरित्रों का गठन, लेखन और परिगुम्फन होता है । महान पुरुषो के जीवन चरित्र प्रेरणादायी होते हैं । अत: वर्तमान काल के परम्परागत आचार्य परमेष्ठी श्री धर्मसागरजी महाराज का जीवन चरित्र जो कि अत्यन्त प्रेरणादायक है, उसे इसी उद्देश्य से यहा प्रस्तुति किया है । ताकि उनके जीवन से प्रेरणा पाकर हम भी उन महापुरुष के पद चिन्हों पर चलकर अपने जीवन को उन्नत एवं महान बना सकें ।

जन्म एवं बाल्यकाल

भगवान् धर्मनाथ ने कैवल्य प्राप्ति की थी अत: केवलज्ञान कल्याणक की तिथि होने से जो दिवसकाल मगल रूप था और जिस दिन चन्द्रमा ने अपनी षोड्शकलाओं से परिपूर्ण होकर अपनी शुभ्र ज्योत्स्ना से जगत को आलोकित किया था उसी पौषी पूर्णिमा के दिन आज से ६७ वर्ष पूर्व विक्रम संवत १९७० मे राजस्थान प्रान्त के बून्दी जिलान्तर्गत गम्भीरा ग्राम में सद्‌गृहस्थ श्रेष्ठी श्री बख्तावरमलजी की धर्मपत्नी श्रीमती उमरावबाई की कुक्षी से एक बालक ने जन्म लिया जिसका नाम चिरजीलाल रखा गया ।

खण्डेलवाल जातीय छाबडा गोत्रीय श्रेष्ठी बख्तावरमलजी भी अपने को धन्य समझने लगे जब उनके गृहागण में पुत्ररत्न बालसुलभ क्रीड़ाओं से परिवारजनों को आनन्दित करने लगा ।

पारिवारिक स्थिति

आपके पिता बख्तावरमलजी एव उनके अग्रज श्री कंवरीलालजी दोनों सहोदर भ्राता थे । दोनों ही भाईयों के मध्य दो संतानें थी । अग्रज भ्राता के दाखा बाई नाम की कन्या एवं अनुज भ्राता

के आप पुत्र थे । आप से पूर्व जन्म लेने वाली संतानों का सुख माता पिता नही देख सके । आपका अपर नाम कजोड़ीमलजी भी था । प्रायः आपके दोनों ही नाम प्रसिद्ध रहे हैं । आपकी बड़ी बहिन (बड़े पिता की संतान) दाखां बाई का विवाह निकटस्थ ग्राम बामणवास में ही हुआ था। शैशवावस्था की दहलीज पर आपने पैर रखा ही था कि आपके माता पिता का असामयिक निधन हो गया । उधर दाखां बाई को भी माता पिता का वियोगजन्य दुःख आ पड़ा, किन्तु आपकी अपेक्षा उनकी आयु अधिक थी और विवाहित थी अतः उनको पति तथा सास-ससुर के संरक्षण में रहने का अवसर होने से अधिक चिन्ता नहीं थी । आपका जीवन तो अल्प समय में ही माता पिता के लाड प्यार भरे सरक्षण से वंचित हो गया था । इष्ट वियोगज दुःख में आपको बहिन दाखाबाई का संरक्षण मिला । आप बामणवास जाकर उन्हीं के पास रहने लगे और जब विद्याध्ययन के योग्य हुए तो आप अपने पिता श्री के पूर्वजों की जन्मस्थली "दुगारी" ग्राम चले गये । वहां आपको मोतीलालजी सुवा-लालजी छाबडा का संरक्षण प्राप्त हुआ । इधर दाखांबाई को अल्पवय में ही एक और इष्ट वियोगज दुःख का झटका लगा जब उनके पति श्री भंवरलालजी का स्वर्गवास हो गया । अब तो मात्र दोनों भाई बहिन के निर्मल स्नेह का ही जीवन में आश्रय शेष था जो कि बहिन के जीवन पर्यंत रहा ।

शिक्षा

क्रमशः एक के बाद एक वियोगज दुःख आने से प्रारम्भिक जीवन में भी आप विशेष विद्याध्ययन नही कर सके । यद्यपि आपको अपने जीवन में सामान्य शिक्षा ग्रहण कर ही सतोष प्राप्त करना पड़ा तथापि शिक्षा के प्रति आपका अनुराग अद्यप्रभृति बना हुआ है ।

बचपन मे अनभिज्ञता वश आप प्रायः सभी धर्मों के देवताओं के पास जाते थे । आप शिवालय भी गए, मस्जिद भी गये । आप सभी देवताओं के पास जाकर एक मात्र यही याचना करते थे कि "मुझे बुद्धि दे दो, विद्या दे दो" । उस समय आपको धर्मशास्त्रों का भी विशेष ज्ञान नही था और न गांव में कोई सही मार्ग बताने वाला था । एक दिन आप जैन मन्दिर में गये, वहां एक शास्त्रों के जानकार व्यक्ति शास्त्र वाचन कर रहे थे, उन्होंने कहा कि जो वीतराग जिनेन्द्र के अतिरिक्त कुदेवताओं की पूजा करता है वह नरक में जाता है । आपने इस बात को सुना और वह आपके हृदय मे अच्छी तरह बैठ गई, उसी समय से आपने अन्य देवताओं को पूजना बन्द कर दिया, किन्तु मन्दिर तब भी जाना प्रारम्भ नही किया ।

वीतराग प्रभु की शरण की प्रेरणा

दुगारी में जब आप अधिक दिन विद्याभ्यास नहीं कर सके तो फिर आप अपनी बहिन दाखांबाई के पास ही आकर बामणवास रहने लगे । उन दिनों उत्तर भारत में दिगम्बर मुनिराजों का अत्यन्त

अभाव था अतः उनका समागम उपदेश श्रवण दुर्लभ था। यही कारण था कि आपको स्थानकवासी जैन साधुओं के समागम मे रहने का अधिकतर अवसर मिलता रहा, क्योंकि उन दिनों कोटा नगर के आस पास उन्हीं साधुओं का विहार होता था। जब आप पर साधुओ के समागम से इतना प्रभाव पड़ा कि आप दिगम्बर वीतराग प्रभु के मन्दिर में न जाकर स्थानक मे जाते और स्थानकवासी सम्प्रदाय के अनुसार समस्त धार्मिक क्रियाएं करते तो बहिन दाखाबाई ने आपको प्रेरणा दी कि जिनेन्द्र प्रभु के दर्शन करने के लिए जिन मन्दिर जाया करो, किन्तु कई बार इस प्रकार की प्रेरणा करने पर भी आप पर कुछ असर नही पडा तो फिर बहिन ने अनुशासनात्मक कदम उठाया कि "यदि मन्दिर दर्शन करने नही जाओगे तो रोटी नही मिलेगी"। चूंकि आप पर स्थानकवासी सस्कार अधिक पड चुके थे अतः आप मन्दिर जाने से कतराते रहे, तथापि घर पर आकर जब बहिन ने एक दिन पूछा कि आज मन्दिर जाकर आये या नही तो झूठ का सहारा लिया और कह दिया कि मन्दिर जाकर आया हू। भोजन तो मिल गया किन्तु बहिन ने मन्दिर की मालिन से पूछ ही लिया कि क्या आज चिरंजो मन्दिर दर्शन करने आया था, उत्तर नकारात्मक मिला तब घर पहुचने पर पुनः आपके समक्ष प्रश्न था कि आज मन्दिर नही गये थे, मन्दिर की मालिन ने तो मना किया कि तुम मन्दिर नही गये ? उत्तर मिला मालिन झूठ बोलती है। बात तो आयी गयी हो नही सकी किन्तु उस दिन झूठ बोलने से आपका हृदय आत्मग्लानि से भर गया और मन ही मन निर्णय किया कि "झूठ के सहारे कब तक काम चलेगा, कल से नित्य देवदर्शन के लिए मन्दिर जाना ही है।" दूसरे दिन से वीतराग प्रभु की शरण में जाने लगे। आप स्वय भी बहिन की अनुशासनात्मक प्रेरणा से प्रसन्न थे, क्योंकि वह आपके जीवन मोड़ का सर्वप्रथम कारण था और आज भी आप इस बात का उल्लेख करते समय गौरव पूर्ण शब्दो में बहिन का उपकार मानते है। वास्तव में परिजनों का वही यथार्थ वात्सल्य है जो अपने परिवार के सदस्यों को सही मार्ग मे आरूढ़ करके उनके जीवन निर्माण में सहायक हो सके।

व्यापार जीवन का प्रथम मोड़ :

१४-१५ वर्ष की अवस्था में ही आपने आजीविकोपार्जन हेतु व्यापार प्रारम्भ कर दिया, एक छोटी सी दुकान आपने खोल ली, नैनवाँ जाकर २-३ दिन मे कुछ सामान ले आते और उसे बेचकर अपनी आजीविका चलाते थे। आपको संतोषवृत्ति से ही गृहस्थ जीवन व्यतीत करना इष्ट था। फलस्वरूप आप जब यह देख लेते कि आज आजीविका योग्य लाभ प्राप्त हो गया है तो उसी समय दुकान बन्द कर देते थे।

इस समय तक भी आपको दिगम्बर साधुओं का निकटतम सान्निध्य प्राप्त नही हुआ था अतः बहिन की प्रेरणा से यद्यपि मन्दिर जाना तो प्रारम्भ कर दिया था किन्तु विशेष रूप से धर्मकार्यों की

ओर झुकाव नहीं हो पाया था। इसी मध्य नैनवां नगर में प० पू० सिंहवृत्ति धारक, परमागम पोषक १०८ आ० क० श्री चन्द्रसागरजी महाराज के चातुर्मास का सुयोग प्राप्त हुआ। गुरुदेव का समागम प्राप्त कर आपने अपने जीवन को नया मोड़ दिया और शुद्ध भोजन करने का आजीवन नियम धारण किया। साथ साथ ग्रहस्थ के षडावश्यक कर्मों का परिपालन भी आपने दृढ़ता पूर्वक प्रारम्भ कर दिया था।

देशान्तर गमन :

कुछ ही वर्षों के पश्चात् आप अपनी बहिन के साथ इन्दौर चले गये वहां जाकर आपने सेठ कल्याणमलजी की कपड़ा मिल में नौकरी कर ली। चूंकि जीवन निर्वाह तो करना ही था अतः आपने नौकरी करना इष्ट न होते हुए भी उसे स्वीकार किया, किन्तु कुछ ही दिन पश्चात् मिल में कपड़े की रगाई आदि कार्यों की देख रेख के प्रसग में उन कार्यों में होने वाली भारी हिंसा को देखकर आत्म-ग्लानि उत्पन्न हुई और आपने मिल में कार्य करने की अस्वीकृति सेठानी सा० के समक्ष प्रगट कर दी, क्योंकि आप जानते थे कि सेठानीजी का मुझ पर वात्सल्यमय स्नेह है। था भी ऐसा ही सेठजी तो थे नही दोनों सेठानियों की वात्सल्यमयी दृष्टि आप पर सदैव बनी रहती थी। आपको मिल से दुकान पर बुला लिया गया। इसी प्रकार संतोषवृत्ति पूर्वक दोनों भाई बहिनों का जीवन निर्विघ्नतया व्यतीत हो रहा था कि इसी बीच सेठानीजी ने कईबार आपके समक्ष विवाह करने का प्रस्ताव रखा और यहां तक कहना प्रारम्भ किया कि विवाह का सारा प्रबन्ध हम कर देंगे, तुम विवाह कर लो, किन्तु जो महान आत्मा मोक्षमार्ग में लगकर रत्नत्रय पालन करते हुये मोक्ष लक्ष्मी को वरण करने की मन में भावना को जागृत करने में लगे थे उन्हें सांसारिक विवाह बन्धन में बंधकर आत्मोन्नति में बाधा उपस्थित करना कैसे इष्ट हो सकता था। अतः सेठानीजी द्वारा कई बार रखे गये विवाह सम्बन्धी प्रस्तावों को आपने ठुकरा दिया और बाल ब्रह्मचारी रहने का निर्णय किया।

गुरुसंयोग और व्रती जीवन का प्रारम्भ :

इन्दौर नगर में प० पू० आचार्य कल्प श्री वीरसागरजी महाराज का समागम आपको प्राप्त हुआ किन्तु आप दूर से ही दर्शन करके आ जाते थे एक दिन आपके साथी मित्र आपको पूज्य महाराजश्री के निकट ले गए। प्रारम्भिक वार्ता के पश्चात् व्रतों के महत्व को अत्यन्त सक्षेप में बताते हुए आपको महाराजश्री ने व्रती बनने की प्रेरणा दी, उन्होंने कहा कि "दो प्रतिमा ले लो" आपने मन में सोचा सम्भव है महाराज "मन्दिर मे विराजमान प्रतिमाओं के सम्बन्ध में कह रहे होंगे? उन दिनों भी आप शुद्ध भोजन तो करते ही थे अतः आपने स्वीकृति दी और गुरुदेव ने बारह व्रतों के

नाम बताते हुए व्रतों के पालन की अति संक्षिप्त में विधि बता दी । यद्यपि आप व्रती बन चुके थे तथापि व्रतों का निर्दोष पालन किस प्रकार होगा इस बात की चिन्ता मन में थी । उन दिनों आपका विशेष स्वाध्याय भी नहीं था, इसी कारण जब आपको महाराज ने सर्व प्रथम दो प्रतिमा लेने के लिए कहा तो आप उक्त बात ही समझे थे । उन दिनों गुरु के प्रति विनय श्रद्धा की भावना अधिक थी । गुरुओं के समक्ष अधिक मुखरता और तर्क वितर्क नहीं था । यही कारण था कि आपने अत्यन्त विनय पूर्वक गुरुवर्य की आज्ञा शिरोधार्य की और व्रतों के पालन सम्बन्धी विशेष जानकारी स्वयं ग्रन्थों का स्वाध्याय करके या विद्वानों से सम्पर्क करके प्राप्त की तथा गुरु द्वारा प्रदत्त व्रतों का निर्दोष रीत्या पालन करने लगे । यहीं से आपके व्रतीजीवन का प्रारम्भ हुआ ।

चू कि अब आप व्रती बन चुके थे अत आपने धर्मध्यान एवं स्वाभिमान पूर्ण जीवन मे नौकरी को बाधक समझ कर नौकरी छोड़ दी । आजीविकोपार्जन के लिए आपने स्वतन्त्र रूप से कपड़े की फेरी का कार्य प्रारम्भ किया । प्रातःकाल नित्य क्रियाओं से निवृत्त होकर जिनेन्द्र पूजन, स्वाध्यायादि आवश्यक कर्त्तव्यों को करके भोजनादि से निवृत्त हो जाने पर मध्याह्नकाल के पश्चात् लगभग ३ बजे आप फेरी पर निकलते थे । कपड़ा बेचते हुये जब २-३ घन्टे में आपको १/= प्रतिदिन हो जाता था । तो आप वापस घर आ जाते थे । आपकी सतोषवृत्ति से साथी लोग भी चकित थे । आपकी यह धारणा बन चुकी थी कि आजीविका चलाने के योग्य मुनाफा प्राप्त हो जाता है फिर दिन भर व्यापार में क्यों रचा पचा जावे । दोनों भाई बहिनों के लिए उन दिनों में उतना ही काफी था । परिग्रह का सचय किसके लिये करना । दोनों ही प्राणी व्रतीजीवन अंगीकार कर चुके थे । २-३ घन्टे के पश्चात् घर जाकर आप अपना शेष समय स्वाध्यायादि में लगाते थे ।

संयम की ओर बढ़ते कदम :

जिन्हे आत्मोत्थान के लिए संयम अत्यन्त प्रिय था वे गुरुजनों के समागम में रहकर आत्म सतुष्टि करते थे । इसी के फलस्वरूप जब प० पू० आचार्य कल्प श्री चन्द्रसागरजी महाराज का ससंघ चातुर्मास बड़नगर में था उस समय आप उनके चरण सान्निध्य में पहुंचे और स्वाध्यायादि के साथ साथ गुरु सेवा का अवसर प्राप्त कर बडे आनन्दित थे । अब चूंकि बहिन दाखांबाई और आपका निर्मल स्नेह एवं धर्म के प्रति अनुराग ही परिवार था अतः आप दोनों हो सदैव साथ साथ गुरुजनों के समागम में जाते थे । चातुर्मास के मध्य आपने ब्रह्मचर्य प्रतिमा (सातवीं प्रतिमा) के व्रत अंगीकार कर लिये । आजीवन ब्रह्मचारी रहने का संकल्प तो आप पहले ही ले चुके थे अतः अब कोई दुविधा मन में नहीं थी । यह आपके संयमी जीवन का प्रथम चरण था और अब चिरंजीलाल से ब्रह्मचारी चिरंजीलालजी हो गये थे ।

गृह त्याग एवं क्षुल्लक दीक्षा :

बड़नगर चातुर्मास के पश्चात् आचार्य कल्प श्री चन्द्रसागरजी महाराज इन्दौर नगर में पधारे। आपकी छत्रछाया में ब्र० चिरंजीलालजी अपर नाम कजोड़ीमलजी अपने जीवन को दिन प्रतिदिन उन्नत बनाने के लिये प्रयत्नशील थे। पू० श्री चन्द्रसागरजी महाराज ने इन्दौर नगर में धर्म प्रभावना करते हुये भी प्रसंगवश अपने आराध्य गुरुदेव परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज का आदेश प्राप्त करते ही इन्दौर नगर से विहार कर दिया था। उसी समय आप भी गृह त्याग करके संघ के साथ हो गये थे। बावनगजा, मांगीतु गी आदि क्षेत्रो की वंदना करते हुए नांदगांव कोपरगांव और कसाबखेड़ा नगरों में प्रभावना पूर्ण चातुर्मास आ० क० श्री चन्द्रसागरजी महाराज ने किये तथा इन नगरों के आस पास के ग्रामों मे विहार करके धर्म प्रभावना करते हुए बालुज (महाराष्ट्र) में जब सघ पहुचा तो महाराष्ट्र प्रान्त की जनता गुरु सान्निध्य प्राप्त कर हर्षित थी।

आपके मन में दीक्षा धारण करने की भावना अवश्य थी और आप अपनी बहिन से इस बात को कह भी चुके थे। आप दीक्षा प्राप्त न होने तक विभिन्न रसो का परित्याग भी करते रहते थे। किन्तु दीक्षा के लिए आपने गुरुदेव के समक्ष कभी प्रार्थना नहीं की। दीक्षा लेने के विचार गुरुदेव के समक्ष अन्य लोगों के द्वारा पहुच भी गये थे अतः गुरुदेव ने कहा कि कजोड़ीमलजी (चिरजीलालजी) स्वयं आकर कहे तो मैं उनको दीक्षा दूँ और आपके मन में यह भावना थी कि यदि मुझमें योग्यता आ गई है तो स्वयं गुरुदेव दीक्षा लेने के लिए कहें तो मै दीक्षा लूँ। इस प्रकार गुरु शिष्य के मध्य कुछ दिन वात्सल्यमय मानसिक द्वन्द्व चलता रहा। अन्ततः गुरु के समक्ष शिष्य की हार हुई और उन्होंने गुरुदेव के चरणों मे दीक्षा प्रदान करने की प्रार्थना की। प्रार्थना करते ही शुभ दिवस में आपको दीक्षा प्रदान की गई।

बालुज नगर की जनता के लिये वह अपूर्व आनन्द की मगल बेला चैत्र शुक्ला सप्तमी वि० स० २००१ थी, जिस दिन आपने क्षुल्लक दीक्षा प्राप्त की थी। दीक्षित नाम क्षुल्लक भद्रसागरजी रखा गया।

गुरु वियोग :

क्षुल्लक दीक्षा होने के पश्चात् आपने गुरुवर्य श्री चन्द्रसागरजी महाराज के साथ अडल (महाराष्ट्र) में सर्वप्रथम चातुर्मास किया। चातुर्मास के पश्चात् गिरनारजी सिद्धक्षेत्र की वंदना हेतु

गुरुदेव ने ससंघ मगल विहार किया। मार्ग में पड़ने वाले मुक्तागिरी, सिद्धवरकूट, ऊन-पावागिरी आदि क्षेत्रों की वंदना करते हुए बावनगजा सिद्धक्षेत्र पर पहुंचने के पश्चात् फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा वि० सं० २००१ में सिंह वृत्ति धारक गुरुवर्य श्री चन्द्रसागरजी महाराज का सल्लेखना पूर्वक स्वर्गवास हो गया। जन्म लेने के पश्चात् जिस प्रकार अल्पवय मे ही आपको माता पिता के वियोग का दुःख आया उसी प्रकार दीक्षा जीवन के लगभग ११ माह ८ दिन में ही आपको पितृ तुल्य तरण-तारण गुरुवर्य का वियोग भी सहना पड़ा।

पू० श्री चन्द्रसागरजी महाराज के स्वर्गवास के पश्चात् आप आ० क० श्री वीरसागरजी महाराज के चरण सान्निध्य में आ गये और गुरुवर्य के साथ क्षुल्लकावस्था मे ६ चातुर्मास किये। इन वर्षों में आपने स्वाध्याय के बल पर आगमज्ञान को वृद्धिगत किया। आपकी सदैव प्रसन्न मुद्रा से समाज में आनन्द रहता था चूंकि आ० क० श्री चन्द्रसागरजी के चरण सान्निध्य में षोडश कलाओं से युक्त चन्द्रमा के समान आपका ज्ञान वैराग्योदधि वृद्धि को प्राप्त हुआ था अतः अब आप प्रतिक्षण महाव्रत प्राप्ति के लिये भावना करते रहते थे कि अब कब इस अल्प वस्त्ररूप परिग्रह को भी शीघ्र ही छोड़ूं।

संयम का दूसरा चरण :

प० पूज्य आ० क० श्री वीरसागरजी महाराज ने सुजानगढ़ में वि० सं० २००७ में ससघ वर्षायोग सम्पन्न किया। इसके पश्चात् सघ का मंगल विहार विभिन्न गावों एवं नगरों में होता हुआ फुलेरा की ओर हुआ। फुलेरा नगर मे पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर तपकल्याणक के दिन आपने ऐलक दीक्षा ग्रहण की। इस समय आपके पास एक कोपीन मात्र परिग्रह शेष रह गया था। वि० स० २००८ के वैशाख मास में होने वाले इस पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में आपने ऐलक दीक्षा रूप उत्कृष्ट श्रावक के पद को तो प्राप्त कर लिया था, किन्तु मोक्षमार्ग मे इतने से परिग्रह को भी बाधक समझकर निरन्तर आप यही भावना करते रहे कि शीघ्र ही दिगम्बर अवस्था को प्राप्त करूँ। 'यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी" के अनुसार ६ माह के पश्चात् ही वह मंगलमय दिवस भी प्राप्त हुआ जिस दिन आपने मुनिदीक्षा ग्रहण की।

दिगम्बर प्राप्ति :

फुलेरा पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के पश्चात् संघ ने आस पास के ग्रामों में विहार किया और धर्म प्रभावना करते हुए वर्षायोग का समय निकट आ जाने पर पुनः फुलेरा नगर में वर्षायोग

सम्पन्न करने हेतु मंगल प्रवेश किया । आषाढ़ शुक्ला १४ सं० २००८ को संघ ने वर्षायोग की स्थापना की । प० पू० आ० क० श्री वीरसागरजी महाराज के वात्सल्यामृत से वैराग्य का वह बीजांकुर वृक्ष रूप में पल्लवित हो रहा था । जिसे चन्द्रसागरजी महाराज ने लगाया था । कार्तिकी अष्टाह्निका महापर्व का मंगल महोत्सव चल रहा था आपने गुरुदेव से प्रार्थना की कि हे भगवन् ! अब मुझे ससार समुद्र से पार कराने मे समर्थ दैगम्बर दीक्षा प्रदान करके मुझ पर अनुग्रह कीजिए । प्रार्थना स्वीकार हुई और अष्टाह्निका महापर्व के उपान्त्य दिवस कार्तिक शुक्ला १४ सं० २००८ के दिन आपको भगवती श्रमण दीक्षा प्रदान की गई । अब आप रत्नत्रय मार्ग के पूर्ण पथिक दिगम्बर मुनि धर्मसागरजी थे ।

फुलेरा नगर का यह बड़ा सौभाग्य रहा कि यहा को समाज ने संयम की तीनो अवस्थाओं में आपके दर्शन किये वि० सं० २००५ मे क्षुल्लकावस्था में पहले आपके दर्शन किये ही थे और ऐलक एवं मुनि दीक्षा तो आपकी यही पर हुई थी ।

तीर्थराज सम्मेदाचल की वन्दना :

फुलेरा नगर का वर्षायोग सम्पन्न होने के पश्चात् मार्गशीर्ष माह में प० पू० वीरसागरजी महाराज ने ससंघ तीर्थराज सम्मेदाचल की ओर मगल विहार किया । पू० श्री वीरसागरजी महाराज इससे पूर्व भी अपने आराध्य गुरुदेव श्री आचार्य प्रवर शान्तिसागरजी महाराज के साथ मुनि अवस्था में ही तीर्थराज की वंदना कर चुके थे । संघ मार्ग में पड़ने वाले ग्रामो तथा नगरों में अपने उपदेशामृत से धर्मप्रभावना करते हुए सम्मेदाचल की ओर वढ रहा था । मार्गस्थ राजगृही आदि अन्य सिद्धक्षेत्रों की वंदना भी संघ ने की । इस तीर्थ वदना में नव दीक्षित मुनिराज धर्मसागरजी भी साथ थे ।

जब कोई भी व्यक्ति अपना लक्ष्य निर्धारित करके उस ओर गतिमान रहता है तो गन्तव्य स्थान पर अवश्य पहुंचता है । सघ भी धीरे-धीरे अपने गन्तव्य स्थान तीर्थराज पर पहुचा । आपने सभी सघ के साथ अनन्त तीर्थङ्करों की सिद्धभूमि उस अनादिनिधन तीर्थराज की वंदना करके परम आल्हाद का अनुभव किया । चूंकि संघ जब यहां पहुंचा था तब वर्षायोग का समय अत्यन्त निकट था अतः मधुवन से ईसरी बाजार आकर इस वर्ष का वर्षायोग सघ ने यहीं स्थापित किया ।

इस प्रकार गुरुवर के साथ साथ ही आपने विहार किया एव उनके अन्तिम समय तक उन्ही के साथ रहे । वि० स० २०१२ में आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज ने अपनी सल्लेखना के समय कुंथलगिरी से अपना आचार्य पट्ट वीरसागरजी मुनिराज को प्रदान किया था तदनुसार वि० सं० २०१२ मे ही जयपुर खानियां में वर्षायोग के समय विशेष समारोह पूर्वक चतुर्विध संघ ने आ० क०

श्री वीरसागरजी महाराज को अपना आचार्य स्वीकार किया । अब वीरसागरजी महाराज के ऊपर दोहरा भार था । और उन्होंने गुरु द्वारा प्रदत्त आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होकर उसे सफलता पूर्वक निभाया । आचार्य पद के पश्चात् भी २ वर्ष तक आपने खानियाँ जयपुर में ही चातुर्मास किये । क्योंकि आप शारीरिक रूप से अस्वस्थ थे और विहार करने की सक्षमता आप में नहीं थी ।

एक और झटका गुरु वियोग का :

वि० सं० २०१४ का चातुर्मास जयपुर में ही सानन्द सम्पन्न हो रहा था कि इसी बीच आश्विन कृष्णा १५ को आचार्य वीरसागरजी महाराज का सहसा ही सल्लेखना मरण हो गया। आपको अभी दीक्षा लिये ६ वर्ष ही हुए थे कि आपको गुरु वियोगज अनिष्ट प्रसग प्राप्त हुआ। आचार्य श्री वीरसागरजी का स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् समस्त सघ ने उनके प्रधान शिष्य मुनिराज श्री शिवसागरजी महाराज को संघ का आचार्य बनाया ।

गिरिनार सिद्धक्षेत्र की वंदना एवं संघ से पृथक् विहार :

अब संघ के आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज थे । आचार्य संघ ने गिरिनार यात्रा के लिए मगल विहार किया । चूंकि अब से १३ वर्ष पूर्व क्षुल्लक दीक्षा होने के पश्चात् आ० क० श्री चन्द्रसागरजी महाराज के साथ आपने गिरनारजी सिद्धक्षेत्र की वंदना के लिए विहार किया था, किन्तु गुरुदेव का असमय में मध्य यात्रा मे ही स्वर्गवास हो जाने से उस समय आप यात्रा नहीं कर पाये थे अतः उसका मनोरथ अब पूर्ण होता देख आपको प्रसन्नता थी । आपने भी सघ के साथ विहार करते हुए गिरनार सिद्धक्षेत्र की वंदना की और वहां से वापस लौटते समय ब्यावर नगर में संघ ने वर्षायोग का विचार किया । चूंकि वर्षायोग में अभी समय था अतः आपने संघस्थ एक और मुनिराज को साथ लेकर संघ से पृथक् विहार कर दिया और निकटस्थ आनन्दपुर कालू जाकर वर्षायोग स्थापित किया था ।

यहां से अगले दो चातुर्मास क्रमशः बीर (अजमेर) और बूंदी करने के पश्चात् बुन्देलखण्ड की यात्रा करने के लिए आपने दो मुनिराजों के साथ मंगल विहार किया । तीर्थक्षेत्रों की वंदना करते हुए आपने उस प्रांत में ग्राम-ग्राम, नगर-नगर में अत्यन्त धर्म प्रभावना की । इतना ही नहीं वि० सं० २०१८-२०१९ व २०२० के तीन वर्षायोग भी आपने इसी प्रात के क्रमशः शाहगढ़, सागर और खुरई नगर में किये । इन तीनों वर्षायोगों में धर्म की महती प्रभावना हुई तथा आपके सरलता आदि अनुपम गुणों के कारण सागर के कई विद्वान आपसे प्रभावित भी हुए तथा आपके चरण सान्निध्य में व्रती जीवन भी प्राप्त किया । इन तीनों चातुर्मासों में दीक्षा समारोह (खुरई) के अतिरिक्त

सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि एक अजैन व्यक्ति जो कि भाटियाजी के नाम से विख्यात है, ने आपके उपदेशों से प्रभावित होकर कई स्थानों पर अपने स्वोपार्जित द्रव्य से सिद्धचक्र विधान भी करवाये एवं जैन तीर्थों की वंदना भी की। आपने महाराज श्री के आदर्श त्यागमय जीवन से प्रभावित होकर धर्मध्यान दीपक नामक पुस्तक के एक संस्करण का प्रकाशन भी करवाया।

मालवा प्रान्तीय तीर्थक्षेत्रों की वन्दना :

बावनगजा सिद्धक्षेत्र की वंदना के पश्चात् आपने इन्दौर नगर की ओर विहार किया और वि० स० २०२१ का वर्षायोग यही स्थापित किया। इस वर्षायोग में आपको सर्वप्रथम मुनिशिष्य की प्राप्ति हुई अर्थात् आपने सर्व प्रथम मुनिदीक्षा इसी चातुर्मास में प्रदान की। वर्षायोग के पश्चात् आपने राजस्थान प्रात की ओर विहार किया तथा क्रमशः झालरापाटन (२०२२) टोंक (२०२३), बूंदी (२०२४) और बिजौलिया (झालरापाटन) के आस पास के ग्रामों में विहार करते हुए बासी ग्राम आए। आपके सान्निध्य में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा भी यहां सम्पन्न हुई थी। यहीं आपके चरण सान्निध्य में वीतराग प्रभु के प्रति मूल प्रेरणा स्रोत आपके गृहस्थावस्था की बहिन ब्र० दाखांबाई ने सल्लेखना पूर्वक अत्यन्त शात परिणामों से इस नश्वर शरीर का परित्याग कर स्वर्गारोहण किया था। आप प्रारम्भ से ही अति सहनशील एवं शांत परिणामी थी। स्वयं आचार्य श्री उनके इन गुणों की प्रशसा करते ही हैं किन्तु जिन्होंने भी दाखांबाई को देखा था वे सब उनके गुणो की प्रशसा करते हुये पाये गए। टोंक और बूंदी चातुर्मासों में क्रमशः क्षुल्लक और मुनि दीक्षाए हुई। बिजौलिया नगरों में मुनिसंघ के नायक होने से आपको आचार्य पद प्रदान करने की भावना समाज ने व्यक्त की किन्तु सदैव आपने यही कहा कि धर्मप्रभावना की दृष्टि से हम पृथक् विहार कर रहे है, हमें आचार्य पद नहीं लेना है, हमारे सघ के आचार्य शिवसागरजी महाराज विद्यमान हैं तथा दूसरी बात यह भी है कि आचार्य पद जैसे गुरुतर भार को ग्रहण करके मैं अपने धर्मध्यान में बाधा भी नही डालना चाहता हू।

एक और वज्रपात :

वि० सं० २०२५ का बिजौलिया नगर मे चातुर्मास सम्पन्न करके आपने श्री शान्तिवीर नगर मे होने वाले पचकल्याणक महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए महावीरजी की ओर विहार किया। इसी महोत्सव में भाग लेने के लिए आचार्य श्री शिवसागरजी से मिले तो वह उभय संघ सम्मिलन का दृश्य अपूर्व था। वि० सं० २०१५ से पृथक् विहार के पश्चात् गुरु भाईयों का यह मिलन दूसरी बार था। इससे पूर्व भी आप राजस्थान प्रान्त के उनियारा ग्राम में मिल चुके थे। प्रतिष्ठा महोत्सव से पूर्व ही आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज को फाल्गुन कृष्णा ७ स० २०२५ को अचानक ज्वर ने घेर लिया और दिन प्रतिदिन आपकी शारीरिक स्थिति गिरती ही चली गई। फाल्गुन कृष्णा १४ को कई

लोगों ने दीक्षा ग्रहण करने हेतु आचार्य श्री के चरणों में प्रार्थना की थी। पंचकल्याणक के अन्तर्गत तपकल्याणक के दिन यह दीक्षासमारोह होने का निर्णय था। प्रतिष्ठा से पूर्व फाल्गुन कृष्णा अमावस्या को शिवसागरजी महाराज के स्वास्थ्य की स्थिति और भी गिरती रही। संघस्थ मुनिराज श्री श्रुतसागरजी एव सुबुद्धिसागरजी महाराज ने आचार्य श्री शिवसागरजी से पूछा कि यदि आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं हो पाया और पाण्डाल में नही जा सकेंगे तो फाल्गुन शुक्ला ८ को होने वाले तपकल्याणक के अन्तर्गत दीक्षा समारोह में दीक्षार्थियों को दीक्षा कौन प्रदान करेगा। उत्तर स्वरूप आचार्य श्री ने कहा कि अभी आठ दिन शेष हैं तब तक तो मै स्वयं ही स्वस्थ हो जाऊंगा और यदि नही हो सका तो मुनि श्री धर्मसागरजी महाराज दीक्षार्थियों को दीक्षा प्रदान करेंगे। धर्मसागरजी महाराज वहा उपस्थित मुनि समुदाय में (आचार्य शिवसागरजी को छोडकर) सबसे तपोज्येष्ठ थे। अमावस्या को मध्याह्न ३ बजे आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज का सहसा स्वर्गवास हो गया। समस्त संघ में वातावरण शोकाकुल सा हो गया क्योंकि सघ ने कुशल अनुशास्ता आचार्य श्री को खो दिया था। स्वय धर्मसागरजी महाराज ने भी निधि खो जाने जैसा अनुभव किया।

आचार्यत्व प्राप्ति :

चू कि आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के स्वर्गवास से प्रतिष्ठा महोत्सव में उत्साह की कमी आ गई थी, दूसरा ज्वलत प्रश्न यह था कि सघ के आचार्य कौन होंगे ? आठ दिनों के विशेष ऊहापोह के पश्चात् फाल्गुन शुक्ला ८ स० २०२५ को प्रभातकाल में सघस्थ सभी साधुओं ने एक स्वर से यह निर्णय किया कि अब आचार्य श्री शिवसागरजी के पश्चात् संघ के आचार्य का भार मुनिराज श्री धर्मसागरजी महाराज को प्रदान किया जावे। निर्णयानुसार तपकल्याणक के अवसर पर फाल्गुन शुक्ला ८ के दिन ही आपको विशाल जनसमुदाय के समक्ष चतुर्विध संघ ने आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। विधि का विधान ही कुछ ऐसा होता है कि जिस आचार्य पद को ग्रहण करने की आपने पूर्व में भी कई बार अनिच्छा प्रगट की थी वही आचार्य पद आपको स्वीकार करना पड़ा। आचार्य पद प्राप्त होने के पश्चात् उसी दिन आपके कर कमलों से (६ मुनि, २ आर्यिका, २ क्षुल्लक और १ क्षुल्लिका) ११ दीक्षाए हुई। ये वे ही दीक्षार्थी थे जिन्होंने आचार्य श्री शिवसागरजी के समक्ष प्रार्थना की थी।

आचार्य पद प्राप्ति के पश्चात् महावीरजी क्षेत्र से जयपुर की ओर विहार किया और गुरुदेव श्री वीरसागरजी महाराज के निषद्यास्थान की वंदना की। वि० सं० २०२६ का वर्षायोग आपने जयपुर शहर में किया। एक ओर जहाँ दीक्षा समारोह हुआ वहीं धार्मिक शिक्षा के लिए गुरुकुल की स्थापना एवं शहर में कई स्थानों पर रात्रि पाठशालाओं का संचालन भी हुआ। यहां आपके कर

कमलों से ५ दीक्षाएं सम्पन्न हुई तथा आपके संघस्थ क्षु० योगीन्द्रसागरजी महाराज जिन्हे मुनिदीक्षा प्रदान कर दी गई थी का आपके चरण सान्निध्य में सल्लेखना पूर्वक स्वर्गारोहण हुआ था। वर्षायोग सानन्द सम्पन्न होने के पश्चात् आपने ससंघ पद्मपुरा की ओर मंगल विहार किया। पद्मपुरा में पद्मप्रभु भगवान के दर्शन करने के पश्चात् ग्राम ग्राम मंगल विहार करके धर्मामृत की वर्षा करते हुए वि० स० २०२७ का चातुर्मास टोक नगर में स्थापित किया। इससे ४ वर्ष पूर्व आप मुनि अवस्था में चातुर्मास कर चुके थे। इस समय आपके साथ ११ मुनि एवं १८-१९ आर्यिका थी। इस प्रकार विशाल संघ के आचार्यत्व का भार आप पर था जो अद्यप्रभृति है। टोंक से विहार करते हुए वि० सं० २०२८ का वर्षायोग अजमेर नगर में स्थापित किया। इस वर्ष भी धर्म की महती प्रभावना के साथ साथ आपके कर कमलों से ७-८ दीक्षाये सम्पन्न हुई थी। इसके पश्चात् क्रमशः वि० सं० २०२९ (लाडनू) और वि० सं० २०३० (सीकर) नगर मे आपके ससघ दो चातुर्मास हुए। सीकर वर्षायोग के पश्चात् आपने दिल्ली महानगर की ओर विहार किया।

भगवान महावीर का २५०० वाँ परिनिर्वाणोत्सव :

वि० सं० २०३१ तदनुसार सन १९७४ मे सम्पन्न होने वाले निर्वाणोत्सव में आपको विशेष रूप मे आमन्त्रित किया गया था और दिगम्बर सम्प्रदाय के परम्परागत पट्टाचार्य होने से आपका विशेष अतिथि के रूप मे राष्ट्रीय समिति मे भी नाम रखा गया था। निर्वाण महोत्सव की प्रत्येक गतिविधि में प्रायः आपसे विचार विमर्श किया जाता था। आपने सम्पूर्ण कार्यक्रमों में इस बात का सदैव ध्यान रखा कि दिगम्बर सस्कृति अक्षुण्ण बनी रहे। इसका कारण यह था कि इस महोत्सव में जैन धर्म के चारों सम्प्रदाय सम्मिलित हुये थे। महोत्सव पर समिति की ओर से प्रकाशित होने वाली भगवान् महावीरस्वामी की जीवनी जो कि चारों सम्प्रदाय को मान्य होनी थी जब आपके पास अवलोकनार्थ आयी तो उस पर आपने अपनी सहमति देने से इन्कार कर दिया, क्योंकि उसमें दिगम्बर सम्प्रदाय के अनुसार कई स्थल अनुचित थे। महोत्सव में होने वाले ऐसे प्रत्येक कार्य में आपने अपनी सहमति देने से इन्कार कर दिया जिसमें वीतराग प्रभु महावीर और उनके द्वारा प्रतिपादित धर्म की आसादना होने की सम्भावना थी। इसी कारण महोत्सव समिति के प्रधान कार्यकर्ता क्षुब्ध भी हुये और कहा कि आप हमे कुछ भी कार्य नहीं करने देना चाहते तो हम समिति मे रहकर ही क्या करेंगे ? आपने अत्यन्त गम्भीरता से अपने मनोभावों को अभिव्यक्त करते हुये कहा कि "आप लोगों को क्षुब्ध होने की आवश्यकता नही है मैं यह चाहता हू कि दिल्ली जो कि भारत की राजधानी है उसमें होने वाले महोत्सव सम्बन्धी प्रत्येक कार्यक्रम पर सारे देश की समाज की दृष्टि लगी हुई है और सभी प्रमुख धर्माचार्यों के सान्निध्य मे होने वाले इस महोत्सव सम्बन्धी कार्यक्रमों का अनुकरण सारा समाज

करेगा । अतः यहां ऐसा कोई भी कार्यक्रम मैं नही होने दूंगा जो दिगम्बर सस्कृति के प्रतिकूल हो और उसका सारा गलत प्रभाव देशभर में पडे । इसके बावजूद भी ग्राप लोग क्षुब्ध होते है और कार्य समिति से स्तीफा देते हैं तो दें मैं तो संस्कृति के अनुकूल कार्यों मे ही अपनी सहमति दे सकता हूं ।

इस प्रकार अत्यन्त निर्भयता पूर्वक आपने दिगम्बर संस्कृति की रक्षार्थ कार्य किया और संस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखा । आपकी इस कार्य प्रणाली को देखकर आपके दिल्ली पहुचने से पूर्व जो लोग ग्रापको दिल्ली नही जाने देना चाहते थे उन्होंने भी एक स्वर से यह स्वीकार किया कि आपके रहते हुए परम्परा एवं ग्रागम की महती प्रभावना हुई एव संस्कृति अक्षुण्ण बनी रही । इस वर्ष भी आपके कर कमलों से दिल्ली महानगरी में ८ दीक्षाएं सम्पन्न हुई । दिगम्बर सम्प्रदाय की ग्रोर से ग्राचार्य श्री देशभूषणजी महाराज भी ग्रपने संघ सहित इस महोत्सव में सम्मिलित हुये थे । उभय ग्राचार्यो का वात्सल्य देखकर सारा समाज आनन्द विभोर हो जाता था महोत्सव में मुनि श्री विद्यानंदजी महाराज भी उपस्थित थे ग्रौर ग्रापने भी उभय ग्राचार्यो की भावनाग्रो के अनुकूल दिगम्बर सस्कृति की अक्षुण्णता के लिए दोनो ग्राचार्यों से सदैव परामर्श करके ही प्रत्येक कार्यक्रम मे अपना पूर्ण सहयोग प्रदान किया था ।

दिल्ली महानगर से ससघ मगलविहार करके आपने उत्तरप्रदेश की ओर प्रस्थान किया एव गाजियाबाद मेरठ, सरधना आदि स्थानों पर धर्म प्रभावना करते हुए उत्तरप्रदेश के ऐतिहासिक तीर्थ हस्तिनापुर के दर्शन करने के लिए पदार्पण किया । हस्तिनापुर भगवान शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ की गर्भ, जन्म, तप ग्रौर ज्ञान कल्याणक भूमि है । यही भगवान ऋषभदेव को सर्वप्रथम आहारदान राजा श्रेयास ने दिया था कौरव पाडव की राज्य भूमि होने का गौरव भी इसी तीर्थक्षेत्र को प्राप्त है । यही पर महामुनि विष्णुकुमारजी द्वारा अकम्पनाचार्यादि ७०० मुनिराजो का उपसर्ग दूर हुआ था ग्रौर रक्षाबन्धन पर्व का प्रारंभ हुग्रा था ग्रौर ग्रब ग्रायिका ज्ञानमतीजी की दूरदर्शी सूझबूझ से ग्रागम में वर्णित विशाल जम्बूद्वीप की रचना त्रिलोक शोधसंस्थान के माध्यम से हो रही है तथा इस संस्थान के अन्तर्गत अन्य भी कई लोकोपकारी गतिविधियां सम्पन्न हो रही हैं ।

वि० स० २०३१ में जब ग्राचार्यश्री यहां पधारे थे तभी यही प्राचीन क्षेत्र कमेटी की ग्रोर से पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का आयोजन था । यही पर आपके चरण सान्निध्य में सघस्थ मुनिराज श्री वृषभसागरजी ने यह सल्लेखना ग्रहण की थी और सघ सान्निध्य में अत्यन्त शांत परिणामों एवं पूर्ण चेतनावस्था में कषाय निग्रह करते हुए इस नश्वर शरीर का परित्याग कर उत्तर भारतीय समाज के समक्ष एक ग्रादर्श उपस्थित किया था ।

तीर्थ वंदना एवं सल्लेखना महोत्सव के पश्चात् आपने ससघ उत्तरप्रदेश के सहारनपुर नगर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में मुजफ्फर नगर आदि स्थानों पर धर्मप्रभावना करते हुए वर्षायोग से एक माह पूर्व आप सहारनपुर पहुंचे इस वर्ष (२०३२) का वर्षायोग आपने सहारनपुर में ही स्थापित किया था। वर्षायोग सम्पन्न होने के पश्चात् आपने पुनः मुजफ्फरनगर की ओर विहार किया यहा के शीतकालीन त्रैमासिक प्रवास काल मे संघस्थ दो मुनिराजो ने आपके चरणसान्निध्य मे सल्लेखना पूर्वक समाधिमरण को प्राप्त किया। यहीं पर आपके कर कमलों से ११ दीक्षाये सम्पन्न हुई। यहा से शामली, कैराना, कादला आदि ग्रामों मे विहार करते हुए बडौत नगर मे वि० सं० २०३३ का वर्षायोग सम्पन्न किया। कादला मे आ० क० श्री श्रुतसागरजी महाराज जो कि आपके गुरु भाई भी है आपके दर्शनार्थ राजस्थान प्रान्त से विहार करते हुए संघ मे सम्मिलित हुए। बड़ौत चातुर्मास मे भी वे साथ ही थे। बड़ौत चातुर्मास के पश्चात् ससंघ आपने दिल्ली महानगर तथा रोहतक, रेवाड़ी (हरियाणा प्रान्त) आदि की ओर विहार करके राजस्थान प्रान्त में पुनः प्रवेश किया।

राजस्थान के प्रसिद्ध नगर मदनगज–किशनगढ में वि० स० २०३४ का वर्षायोग अभूतपूर्व धर्म प्रभावना के साथ सम्पन्न किया एव वर्षायोग के पश्चात् अजमेर नगर की ओर प्रस्थान किया। अजमेर में शीतकालीन प्रवास व्यतीत कर आपने ससंघ ब्यावर की ओर मगल विहार किया। साथ में आ० क० श्री श्रुतसागरजी महाराज थे, वे अजमेर ही रुक गये क्योंकि उन्हे अपने संघ मे मिलना था जिसे छोड़कर वे आपके दर्शनार्थ उत्तरप्रदेश की ओर पहुचे थे। ब्यावर के पश्चात् भीलवाड़ा होते हुए सघ भीण्डर (उदयपुर) पहुचा। आपके ससंघ सान्निध्य मे पचकल्याणक प्रतिष्ठा अत्यन्त प्रभावना के साथ सम्पन्न हुई। इसी महोत्सव के अवसर पर शान्तिवीर दिगम्बर जैन सिद्धान्त सरक्षिणी सभा का नैमित्तिक अधिवेशन भी हुआ। सभा ने धर्म रक्षार्थ आपसे मार्गदर्शन भी प्राप्त किया। भीण्डर से उदयपुर के लिए विहार किया। वि० सं० २०३५ का वर्षायोग उदयपुर मे सम्पन्न किया। इस वर्ष भी दो दीक्षाये आपके कर कमलो से सम्पन्न हुई। उदयपुर के वर्षायोग के पश्चात् उदयपुर सम्भाग के छोटे छोटे ग्रामो मे आपने मगल विहार किया और इन ग्रामों मे फैली कुरीतियो को दूर करने की प्रेरणा अपने उपदेशो मे दी। कही कही तो आपके उपदेशामृत से प्रेरणा पाकर जीर्णशीर्ण दशा मे स्थित मन्दिरों को जीर्णोद्धार करने का सकल्प समाज ने किया। विहार मार्ग में ऐसे ग्राम भी आए जहा इतने विशाल सघ को रहने की व्यवस्था भी नही बन पाती थी, आपसे लोगों ने निवेदन भी किया कि बड़े सघ के रहते ग्रीष्मकाल में आपको किन्ही बड़े स्थानों पर ही विहार करना चाहिए ताकि संघ की व्यवस्था ठीक प्रकार से हो सके। प्राणी मात्र के कल्याण की भावना जो कि सदैव आपके हृदय में विद्यमान रहती है वह शब्दो में प्रगट हुई, आपने कहा कि "बड़े नगरों व ग्रामों में प्रायः साधु विचरते ही हैं। किन्तु इन छोटे छोटे ग्रामो मे रहने वाले लोगों में व्याप्त अज्ञानान्धकार

फिर कब दूर होगा। ये लोग कब साधुओं का समागम प्राप्त करके आत्मकल्याण का मार्ग प्राप्त करेंगे। अतः थोडा कष्ट पाकर भी इन ग्रामो में विचरण करेंगे तो इन गांवो में निवास करने वाली समाज का भी तो कल्याण होगा।

इस प्रकार छोटे-छोटे ग्रामों में मगल विहार करते हुए आप सलूम्बर नगर में पहुचे और समाज के विशेषाग्रह से आपने वि० सं० २०३६ का वर्षायोग यही स्थापित किया। उदयपुर सम्भाग में आपका यह द्वितीय चातुर्मास था। पूर्ववर्ती चातुर्मासों के समान ही इस वर्ष भी अत्यन्त धर्म-प्रभावना के साथ यह वर्षायोग सम्पन्न हुआ। इसके पश्चात् सलूम्बर तहसील के आस पास के छोटे छोटे ग्रामो मे पुनः धर्मप्रभावना करते हुए वि० स० २०३७ के वर्षायोग के समय आप केशरियाजी (ऋषभदेवजी) पहुचे और इस वर्ष का चातुर्मास यही स्थापित किया। शारीरिक दृष्टि से यह क्षेत्र आपके तथा संघस्थ प्रायः सभी साधुओं के लिये अनुकूल नही रहा, क्योंकि इस वर्ष इस क्षेत्र मे मलेरिया का अत्यधिक प्रकोप रहा और प्रायः सभी साधुओं को ज्वराक्रांत रहना पडा। रोग जनित उपसर्ग तुल्य इस अनिष्ट संयोगज दु.ख को सघ ने अत्यन्त प्रसन्नता के साथ सहन किया। इस वर्ष भी आपके कर कमलो से चार दीक्षाये सम्पन्न हुई पारसौला मे ७५ साधुओ के सान्निध्य में पंच कल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। ५ दीक्षाएं तथा आपके शिष्य मुनि श्री संयमसागरजी की समाधि भी वही हुई। अभी हाल ही प्रतापगढ में भी आपके साथ ४० साधुवृन्द थे।

इस प्रकार दीक्षा ग्रहण करके ३८ वर्षीय दीक्षित जीवन काल में आपने भारतवर्ष के राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र आदि प्रमुख प्रमुख प्रान्तों में, नगरो एवं ग्रामों मे मगल विहार करते हुए अभूतपूर्व धर्मप्रभावना की एवं प० पू० आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज द्वारा आगम विहीत परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखा है।

सरलता की प्रतिमूर्ति :

ग्रहस्थ हो या साधु (अनगार) आत्मसाधना का प्रमुख आधार सरलता है, निष्कपटता है। आत्मविशुद्धि के लिये सरलता एक अमोघ साधन है। सरल परिणामों से युक्त आत्मा ही निर्मल-पवित्र होती है और साधक अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है। आचार्यश्री सरल भाव की ज्योतिर्मय मूर्ति हैं। आपके जीवन में कहीं छुपाव या दुराव वाली बात को स्थान नही है। इसी सरलता के कारण आप निर्भीक एवं स्पष्टवादी हैं। कथनी और करनी की समानता वाले सद्गुरु इस ससार में अत्यन्त विरल हैं, आचार्यश्री भी कथनी और करनी की समानता से सयुक्त अद्भुत योगीराज हैं।

आचार्यश्री इस युग के आदर्श संत हैं। संतजीवन की समग्र विभूतियां उनमें केन्द्रित हो गई हैं। शिशु का सा सारल्य, माता का कारुण्य, योगी की असम्पृक्तता से ओतप्रोत उनका जीवन है। हृदय नवनीत सा मृदु, वाणी मे सुधा की मधुरता और व्यवहार में अनायास अपनी ओर आकृष्ट कर लेने वाला जादू ही है। आत्मनिष्ठा के साथ अशेष निष्ठा का निर्वाह करने वाले आचार्यश्री वास्तव मे अनेकांत के मूर्तिमान उदाहरण है।

सिद्धान्त विरोधी प्रवृत्ति में असहिष्णुता :

आर्ष परम्परा के प्रतिकूल सिद्धान्त विरोधी प्रवृत्ति को आपने कभी भी सहन नही किया है। न तो आप स्वय सिद्धान्त विरुद्ध आचरण करते हैं और न किसी के सिद्धान्त विरुद्ध आचरण को सहन ही करते हैं। भगवान महावीर के २५०० वें परि निर्वाणोत्सव के प्रसंग में ऐसे अवसर भी आये जब संस्कृति के विरुद्ध भी सभा मे कार्यक्रमो के प्रमुख अतिथियों ने अपने वक्तव्य देने का असफल प्रयास किया, किन्तु उस समय भी आपने पूर्ण निर्भीकता से उन सिद्धान्त विरुद्ध बोलने वाले लोगों को अच्छी नसीहत देते हुए स्पष्ट शब्दों में सभा के मध्य ही सिंह गर्जना करते हुए कहा कि इनको हमारे धर्म सिद्धान्त के विरुद्ध बोलने का कोई अधिकार नही है। उस समय आपने यह संकोच कभी नही किया कि सभा में आने वाला मुख्य अतिथि केन्द्रीय सरकार का मत्री है या अन्य कोई। आप सदैव ही आर्ष परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने में प्रयत्नशील रहते है।

मन वचन कर्म की ऐक्य परिणति मूर्तिमान :

विश्व मे तीन प्रकार के व्यक्ति पाये जाते हैं। सर्वप्रथम तो ऐसे व्यक्ति है जिनका हृदय बहुत सरल, मधुर और निश्छल प्रतीत होता है। किन्तु हृदय की मधुरता वाणी में प्रगट नही होती है, मन का माधुर्य कर्म में भी नहीं उतर पाता है। उनके अन्तःकरण की सरलता वाणी में प्रगट नही हो पाती है। दूसरी कोटि के ऐसे व्यक्ति भी बहुत हैं जिनकी मिश्री के समान वाणी मधुर सरस होती है किन्तु हृदय कटुता, विद्वेष, वैमनस्य सयुक्त है। तीसरे प्रकार के व्यक्ति भी विश्व में यत्किंचित् संख्या में मणिवत् प्रकाशमान हैं, उनकी वाणी मधुर, मन उससे भी मधुर, वाणी सरल, सरस और हृदय उससे भी सरल, सरस और पवित्र होता है। आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज का व्यक्तित्व इसी कोटि का है। महान व्यक्तियो के मन, वचन, क्रिया मे सदैव एकरूपता होती है और दुरात्मा इससे विपरीत होता है। आचार्यश्री का पावन जीवन मन, वचन, क्रिया और कर्मरूप निर्मल त्रिवेणी का सगम स्थल है अतः वह परम पावन जीवन्त तीर्थ है।

स्नेह सौजन्य की मूर्ति :

आचार्य श्री का हृदय सरोवर स्नेह और सौजन्य से लबालब भरा हुआ है । जो भी व्यक्ति उनके सामने जाता है, स्नेह और सौजन्य से अभिषिक्त हुए बिना नही रहता । राजा हो या रंक, श्रीमन्त हो या निर्धन, बालक हो या वृद्ध, नर हो या नारी, अनुरागी हो या विरोधी, निन्दक हो या प्रशंसक सभी पर समान भाव से स्नेह की पीयूष धारा बरसाने वाले आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज अनायास ही सबको अपना बना लेते हैं । प्रायः देखा जाता है कि जब कोई व्यक्ति साधारण से असाधारण स्थिति पर पहुचता है तो वह साधारण व्यक्तिओ से अपने आपको ऊँचा मानते हुए गर्वानुभूति करता है । किन्तु आचार्यश्री मे ऐसा नही है ।

कुछ लोगो का कहना है कि श्रद्धा अज्ञान की सहचारिणी है, किन्तु आचार्यश्री ने अपने व्यक्तित्वबल से जहां साधारण जन की श्रद्धा का अर्जन किया है वही समाज के विद्वज्जन भी आपके सरल, शात, सौम्य एव निस्पृह वृत्ति से प्रभावित हुए है । आचार्यश्री की स्मरण शक्ति भी अद्‌भुत है । आपकी जिह्वा पर जैन दर्शन के सस्कृत प्राकृत भाषा मे सम्बद्ध अनेको श्लोक विद्यमान है और आप निरन्तर उठते बैठते उनका पारायण करते रहते है ।

प्रवचन शैली :

आचार्यश्री की धर्मदेशना प्रणाली अपने ढंग की निराली है, उनके प्रवचनों मे न तो दार्शनिक स्तर की सूक्ष्मता है और न ही आध्यात्मवाद की अज्ञेय गहराईया है । लौकिकजनों को अनुरन्जित कर लोकेषणा से अनुप्राणित भाषा का प्रयोग भी उनके प्रवचनों मे नही होता है । उनके हृदय की निर्मलता सरलता और विरक्तता उनकी वाणी में प्रकट होती है, क्योकि आगमानुसार सयम से परिपूर्ण उनका प्रवचन तथा उसके अनुरूप ही जीवन भी संयमित है । आपके प्रवचनों में खडी हिन्दी में राजस्थानी (मारवाडी) भाषा का पुट अत्यन्त मधुर लगता है । आगम समर्थित वैराग्योत्पादक आपकी वाणी ने अनेकों भव्यात्माओ को प्रभावित किया है जिसके फलस्वरूप वे अपने आत्मकल्याण के मार्ग पर अग्रसर है । कितने ही पापानुगामी जीवो ने पाप पथ का परित्याग करके धर्ममार्ग को अपनाया है । आप अपने प्रवचनों में सदैव कहा करते है कि वास्तविक आनन्द की सिद्धि भोग में नहीं है त्याग में है और व्यक्ति का जीवन भी समीचीन त्याग से उन्नति पथ पर अग्रसर होता है । भोग आत्म पतन और त्याग आत्मोन्नति का राजपथ है । आचार्यश्री आत्मविद्या के सजग साधक परमयोगी है । उनकी आत्मसाधना का प्रत्यक्ष रूप उनके दर्शन मात्र से ही प्रतिबिम्बित होता है ।

आचार्यश्री मेरे दीक्षा गुरु हैं अतः मैने उन्हें असाधारण व्यक्तित्व सम्पन्न एवं अनुपम चारित्र-निधि आदि विशेषणों से अलंकृत किया हो ऐसी बात नही है । जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश, चन्द्रमा की शीतलता और जलधिका गाम्भीर्य प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं है उसी प्रकार महापुरुषों के व्यक्तित्व को निखारने की आवश्यकता नही होती वह स्वतः निखरित होता है । महापुरुष जिस ओर चरण बढ़ाते हैं वही मार्ग है, जो कहते है वही शास्त्र है और जो कुछ करते हैं वही कर्तव्य बन जाता है । महापुरुष तीन प्रकार के होते हैं । (१) जन्म जात (२) श्रम या योग्यता के बल पर (३) कृत्रिम जिन पर महानता थोपी जाती है । आचार्यश्री जन्म जात महापुरुष तो हैं ही किन्तु योग्यता के बल पर बने महापुरुष भी उन्हें कहा जावे तो अतियोशक्ति नहीं होगी । आपके विशाल व्यक्तित्व की प्रामाणिकता में सबसे बड़ा कारण है आपका निर्दोष आचार ।

समस्त भारत वर्ष की सभी संस्थाओं एवं जैन समाज की ओर से तथा दि० जैन नवयुवक मण्डल, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित एवं आचार्य कल्प श्री श्रुतसागरजी एवं मुनि वर्धमान सागरजी के मार्ग निर्देशन में ब्र० धर्मचन्द शास्त्री के द्वारा सम्पादित अभिनन्दन ग्रन्थ ५० हजार जनसमुदाय की उपस्थिति में आपको समर्पित किया गया, पर आपने ग्रन्थ लिया नही तथा प्रकाशक एवं संयोजन करने वाले सभी बन्धुओं को फटकारा । धन्य है आपका त्याग ! जहा पर मानव पद लिप्साओं को छोडने में समर्थ नही है वहाँ पर आपने समस्त समाज के सामने ग्रन्थ लेने से इंकार कर दिया ।

ऐसे स्वपर कल्याणकारी महापुरुष के चरणों में मानव का शीश स्वयं ही झुक जाता है और उसकी हृदतंत्री से स्वतः ही यह भावना मुखर उठती है कि ऐसे युग पुरुष सदियों तक मानव मात्र का पथ प्रदर्शन करते रहें और अपने आध्यात्मिक बल से मूर्च्छित नैतिकता में प्राण प्रतिष्ठा करते रहें । इन्ही भावनाओं के साथ करुणा के असीम सागर, आर्ष परम्परा के निर्भीक संरक्षक, अध्यात्म-वाद के साक्षात् आचरण कर्ता, अतिसरल, सत्य के तेजःपुन्ज, छल, कपट से अनभिज्ञ, उच्चकोटि के सादगी प्रिय, क्रोध से सहस्रों कोस दूर, स्याद्वाद के प्रबल समर्थक, सरलता के मूर्तिमान, निस्पृही व्यक्तित्व, जन जन के वंद्य आचार्यश्री के परम पावन चरणों में मुझ अल्पज्ञ शिष्य के शतसहस्र प्रणाम !



मुनिश्री पद्मसागरजी महाराज



मुनि श्री १०८ पद्मसागरजी के गृहस्थावस्था का नाम धूलचन्दजी था। आपका जन्म आज से लगभग ६० वर्ष पूर्व टोंक (राजस्थान) में हुआ था। आपके पिता श्री गद्दूमलजी पंडित व माताजी श्रीमती भोलीबाई थी। आप खण्डेलवाल जाति के भूषण व बाकलीवाल गोत्रज थे। आपकी लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा साधारण ही हुई। आपके पिताश्री गोटे का व्यापार करते थे। आपने विवाह नहीं कराया। बालब्रह्मचारी ही रहे। परिवार मे एक भाई और है।

ससार की नश्वरता को जानकर आपने स्वय आचार्य श्री १०८ वीरसागरजी महाराज से खानिया, जयपुर मे मुनिदीक्षा ले ली। आपने इन्दौर आदि मे चातुर्मास कर धर्मवृद्धि की।

पदमपुरी मे सन् १-९-८१ मे आपने चातुर्मास किया था। यही पर आचार्य कल्प श्री श्रुतसागरजी के सान्निध्य में आपने समाधिमरण किया।

मुनिश्री सन्मतिसागरजी महाराज



श्री १०८ मुनि सन्मतिसागरजी का गृहस्थ अवस्था का नाम मोहनलालजी था। आपका जन्म आज से करीब ७० वर्ष पूर्व टोडारायसिह मे हुआ। आपके पिता श्री मोतीलालजी थे। आप खण्डेलवाल जाति के भूषण थे और गोत्र छाबड़ा है। आपकी धार्मिक एव लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। आपका विवाह भी हुआ था।

आपने १०८ श्री आचार्य वीरसागरजी से दीक्षा ली। आपने इन्दौर औरंगाबाद, फल्टन, कुम्भोज, जबलपुर, आरा आदि स्थानो पर चातुर्मास किये। आपको तत्वार्थसूत्र का विशेष परिचय था। आप अभी आहार में केवल दूध मात्र ग्रहण करते रहे। आप इसी प्रकार शरीर से आत्मा की दिशा में बढते रहे। सन १९८१ को उदयपुर में आपने समाधि ग्रहण कर ली तथा भौतिक शरीर का त्याग भी यही किया।

मुनिश्री आदिसागरजी महाराज



आपका जन्म खण्डेलवाल जातीय अजमेरा गोत्र में हुवा था आप मूलतः दांता (सीकर) राजस्थान के निवासी थे। आपकी दीक्षा प्रतापगढ़ में वि० सं० १९९० फाल्गुन सुदी ग्यारस को हुई थी। आप आचार्य वीरसागरजी महाराज के प्रथम सुशिष्य थे। छोटो के प्रति वात्सल्य भाव और बड़ों के प्रति विनम्रता का व्यवहार आपका स्वभाव था। आपकी गुरु भक्ति अद्वितीय रही। आप हमेशा कहा करते थे कि बड़ा बनने की चेष्टा मत करो, बड़ा बनना सरल नही है।

आप निरन्तर आध्यात्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय कर उनका सार प्राप्त कर आत्मा का सच्चा अनुभव भी करते थे।

जब भीषण ज्वर से आपका शरीर क्षीण हो गया और शरीर में तीव्र वेदना थी, तब भी आप ध्यान में लीन परमशान्त और गम्भीर थे।

पू० महाराजश्री की भावना का सार उनको प्राप्त हुवा। प्रातःकाल चार बजे स्वयमेव उठकर पद्मासन लगाकर बैठ गये, जिससे ऐसा प्रतीत होता था मानो निर्भीक होकर यमराज का सामना कर रहे हो।

आपने भव भवान्तरसे प्राणियो के पीछे लगने वाली ममता की जजीर को समता रूपी शस्त्र से क्षीण कर दिया और यमनाशक सयम को स्वीकार किया।

ख्याति, लाभ, पूजा के लिये जिसकी भावना है वह समाधिमरण नही कर सकता।

परन्तु आपने हसते २ णमोकार मत्र का जाप्य करते हुए अन्तःसमाधि में लीन होकर गुरुवर्य १०८ आचार्य वीरसागरजी के सान्निध्य मे अनन्तानन्त सिद्धों की सिद्धि के क्षेत्र परमपावन सम्मेदशिखर पर भौतिक शरीर का परित्याग कर देव पद प्राप्त किया।

सुमेरु पर्वत की दृढता, सागर की गम्भीरता, वसुधा की क्षमाशीलता, व्यामोह की विशालता, शशि की शीतलता और नवनीत की कोमलता, जिसके समक्ष सदैव श्रद्धा से नत रहती थी, ऐसी अध्यात्म मूर्ति थे श्री आदिसागर महाराज।

मुनिश्री सुमतिसागरजी महाराज

आपका जन्म औरंगाबाद जिले के अन्तर्गत पिपली ग्राम में हुआ। आपके पूर्वज डेह गांव के खण्डेलवाल जातीय काशलीवाल गोत्र में उत्पन्न हुए थे। आपने नागौर में वि० सं० २००६ की आषाढ शुक्ला एकादशी के दिन क्षुल्लक दीक्षा एवं वि० सं० २००८ में फुलेरा (राजस्थान) के पंच-कल्याणक महोत्सव के अवसर पर कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी के दिन मुनिदीक्षा ग्रहण की थी। आप दृढ श्रद्धानी, परम तपस्वी साधु थे। सं० २००९ में आचार्य संघ के साथ तीर्थराज सम्मेदशिखर की यात्रा को गये। तीर्थराज के दर्शन करने के बाद भादवा सुदी १५ के दिन पूर्ण संयम, नियम उपवास द्वारा कर्मों को काटने के लिये ईसरी में भौतिक शरीर का त्याग किया।



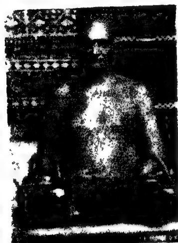
मुनिश्री श्रुतसागरजी महाराज



पूज्य मुनिश्री ने आचार्य वीरसागर महाराज से दीक्षा लेकर अपने को आत्म कल्याण के मार्ग पर लगाया था। दीक्षा लेने के कुछ समय पश्चात् ही आपका समाधि मरण हो गया। आप महान तपस्वी साधु थे।



मुनिश्री अजितकीर्तिजी महाराज



[शिष्य आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज]

(जीवन परिचय अप्राप्य)



मुनिश्री जयसागरजी महाराज

आपका जन्म जयपुर (राजस्थान) मे हुवा था । पूर्ण नाम श्री गुलाबचन्दजी टोंग्या था । सं० २००३ में आपने व्रती जीवन प्रारम्भ किया, आचार्य वीरसागरजी से व्रत स्वीकार किए । सं० २०१३ मे मुनिदीक्षा जयपुर में ही ली । सं० २०२४ प्रतापगढ मे आचार्य शिवसागरजी महाराज के सान्निध्य में आपकी समाधि हुई ।

आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज



राजस्थान के प्रसिद्ध शहर बीकानेर में फाल्गुन बदी अमावस्या सम्वत् १९६२ में श्रावक (ओसवाल) गोत्रोत्पन्न श्रीमान् सेठ छोगामलजी, माता श्रीमती गज्जोबाईकी कुक्षिसे आपका जन्म हुआ था। माता-पिता ने आपका नाम श्री गोविन्दलाल रखा, इकलौते और लाड़ले पुत्र होने के कारण आपको फागोलाल भी कहा करते थे।

आपके पिता कपडे के अच्छे व्यापारी थे। घर की स्थिति अच्छी सम्पन्न थी। आपसे बड़ी एक बहिन श्री लोनाबाईजी भी है जो धर्म परायण तथा आत्म कल्याण की ओर अग्रसर होकर धर्म ध्यान में कालयापन करती है।

पिता के होनहार, इकलौते लाडले पुत्र होने के साथ ही सम्पन्न परिवार मे होने के कारण आपके पिताजी ने आपकी शिक्षा को विशेष महत्व न देकर प्रारम्भिक शिक्षा मात्र ही दिलाई। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद आप पिताजी को उनके व्यावसायिक कार्य में सहयोग देते हुये कपडे का व्यापार करने लगे। कुछ समय बाद आप अपनी कार्य निपुणता के कारण व्यापारी वर्ग मे प्रतिष्ठित हुये और आपने व्यापार में प्रचुर सम्पन्नता एवं सम्मान प्राप्त किया।

प्रारम्भ में आपके पिता श्री मुंह पट्टी वाले श्वेताम्बर आम्नाय के कट्टर अनुयायी थे। संयोग की बात कि एक रामनाथ नाम का व्यक्ति जो कि जाति का दर्जी था, आपके मकान के नीचे किराए पर रहता था। वह व्यवसाय भी अपनी जाति के अनुसार सिलाई का करता था। दर्जी होते हुए भी सुयोग्य एवं दिगम्बर जैन आम्नाय के प्रति गहरी श्रद्धा रखता था। इसने अपनी विवेक-

शीलता, निपुणता एवं आत्म श्रद्धा से आपकी माता को दिगम्बर जैन आम्नाय के महत्व को बताया और अन्त में आपकी माता के हृदय मे दिगम्बर जैन धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा का समावेश किया। फलतः आपकी माताजी श्वेताम्बर आम्नाय के बजाय दिगम्बरत्व के प्रति अटूट श्रद्धा रखने लगीं। कुछ समय पश्चात् आपके पिताश्रीने भी अपनी तीक्ष्ण विवेक शीलता के द्वारा दिगम्बरत्व के महत्व को आंका और दिगम्बर जैन धर्म के प्रति आस्था रखते हुये आचरण करने लगे। यह नीति है कि "मातृ पितृ कृताभ्यासो गुणताम् इति बालकः" अर्थात् माता पिता ही बालकों को गुणवान बनाते हैं, क्योंकि बालक माँ के पेट से पण्डित होकर नही निकलता। ठीक यही नीति आपके ऊपर भी चरितार्थ हुई। एक बार आपके पिना व्यापार के लिये कलकत्ते आये। आप भी अपने पिता के साथ कलकत्ते आये तथा कलकत्ते में चावल पट्टी दि० जैन पार्श्वनाथ बड़ा मन्दिर के समीप किराए पर रहने लगे। यहां जैन भाइयों से आपका अच्छा सम्पर्क हुआ। आपके पिता ने आपको नया मन्दिर चितपुर रोड की जैनशाला में पठनार्थ भरती करा दिया। आपने श्री प० मक्खनलालजी तथा पं० श्री झम्मनलालजी से शिक्षा प्राप्त की। आपके धार्मिक संस्कार दृढ होने लगे। इस प्रकार आपने अपनी प्रारम्भिक लौकिक शिक्षा धार्मिक शिक्षा के साथ प्राप्त की।

आपकी माता विशेष धर्म परायण व सद्गृहस्थिन के साथ ही अत्यन्त दयालु व योग्य थी। इसका पूर्णतः प्रभाव आप पर पड़ा। आपके पिताजी भी एक उच्च घराने के आदर्श व्यवसायी होने के साथ ही जिनधर्म के कट्टर अनुयायी व श्रद्धालु थे। व्यापारी वर्ग मे आपकी अच्छी प्रतिष्ठा थी।

जब आपकी उम्र लगभग १७ वर्ष की थी तो पिताश्री ने आपका विवाह बीकानेर निवासी व कलकत्ता प्रवासी सेठ जुगलकिशोरजी की शील रूपा, सुयोग्य सुपुत्री श्रीमती बसंताबाई के साथ सम्पन्न करा दिया। लेकिन आपका गृहस्थाश्रम बाल्यपन से ही बहुत वैराग्य युक्त व्यतीत हुआ। आपकी बड़ी बहिन श्री सोनाबाईजी भी आजकल श्रावकों के नैष्ठिक व्रतोंका पालन करती हुई शुद्ध ब्रह्मचर्य पूर्ण जीवनयापन कर रही है।

आपके सुयोग्य, कर्तव्यशील तीन पुत्र श्री माणिकचन्द्रजी श्री हीरालालजी एवं श्री पदमचन्द्रजी हैं, जो पैतृक उद्योग के अलावा प्रेस का भी सञ्चालन करते हैं। आपकी सुयोग्यशीलरूपा तीन पुत्रियाँ भी हैं। बड़ी पुत्री श्री अमरावबाई हैं। इनका विवाह पुरलियामे श्री भंवरलालजी के साथ एव मझली पुत्री श्रीमती ममौलबाई का विवाह कलकत्ता निवासी सेठ श्री उदयचन्द्रजी छारीवाल के यहा सम्पन्न हो चुका है। आपकी छोटी पुत्री सुश्री सुशीला वर्तमान मे आर्यिका श्रुतमतीजी हैं तथा गहरी धार्मिक आस्था के साथ त्याग मार्ग की ओर उनकी रुचि है।

जब आपकी उम्र लगभग २७ वर्ष की होगी आपके पिता श्री को एक साधारण सी बीमारी ने पीड़ित किया। उनको यह आभास हुआ कि अब हमारा जीवन अन्तिम लहरमें तैर रहा है। कौन जानता था कि सचमुच यह साधारण सी बीमारी ही इनको प्राण शून्य कर देगी। आपने जीवन को असम्भव जान समाधि ले ली और निर्मल आत्मा में अनन्त गुणो से युक्त भगवान जिनेन्द्रदेव का स्मरण करते हुये असमय ही आपकी आत्मा पार्थिव शरीरको छोड़कर स्वर्ग के सुख में लवलीन हो गई।

दुखित हृदया माँ ने संसारकी इस नश्वरताका प्रत्यक्ष दर्शन करते हुए निश्चय किया कि असारता से सारता को जाने के लिए जिनेन्द्र भक्तिरूपी वाहन का अवलम्बन लेना ही श्रेयस्कर है। इसके लिए त्याग तपस्या की आवश्यकता है। पति श्री की मृत्यु के बाद ७ वर्ष तक आपने अपनी शक्ति अनुसार जिनेन्द्र भगवान की आराधना करते हुए त्याग और संयम का पालन किया। अन्त समय मे समाधि मरण लेकर अतुल सुख से परिपूर्ण ऐसे स्वर्गों में, अपने पुत्र पौत्रों को इस धरातल पर छोड़कर सदा के लिये चली गई।

माता पिता के स्वर्गारोहण हो जाने मे फागोलालजी को ससार की असारता का भाव उद्भाषित हुआ। अपने हृदय मे त्याग तप साधना ही आत्मकल्याण का हेतु है ऐसा विचार कर घर पर रहते हुए आत्म-कल्याण का कारण त्याग, उपवास, सयम आदि धार्मिक क्रियाएं करने लगे। कलकत्ते में "छोगालाल गोविन्दलाल" के नाम से आपका कपडे का थोक व्यापार होता था। आपका बडा पुत्र भी आपके व्यापार में योग देने लगा, श्रीमान् पं० ब्रह्मचारी सुरेन्द्रनाथजी, श्री ब्रह्मचारी श्रीलालजी काव्यतीर्थ एवं श्रीबद्रीप्रसादजी पटना वालों के साथ आपकी शास्त्रीय चर्चाएं तथा ज्ञान गोष्ठियां होती थी। ज्ञानार्जन के इस अभ्यास के द्वारा आप शास्त्रीय विद्वान हो गये। आपके अन्तर में गृह त्याग की भावना दिन प्रतिदिन बढती गई, फलतः आप ४० वर्ष की तरुण वय में आजन्म ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा लेकर ब्रह्मचर्यव्रत पालन करने लगे।

विक्रम सम्वत् २००६ को उदासीन आश्रम ईसरी में आपने परम पूज्य आचार्यवर श्री वीरसागरजी महाराज के प्रथम दर्शन किये थे। तभी से आपकी आत्म-कल्याण की भावना का प्रबलतम उदय हुआ था और उसी समय से सासारिक वैभव नीरस एवं जल बुदबुदे के समान प्रतीत होने लगे। फलतः घर पर आकर आप उदासीन वृत्ति से रहने लगे। फिर भी आपको हृदय में पूर्णतः शान्ति नही मिली और सम्वत् २०११ में टोड़ारायसिंह (राजस्थान) में आचार्यश्री वीरसागरजी महाराज के समीप ७ वीं प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये। इन व्रतों के लेने से आपकी आत्मा में अटूट वैराग्य भावनारूपी ज्वाला ज्वलित होने लगी। फलतः चार माह बाद ही टोडारायसिह में कार्तिक सुदी १३ संवत् २०११ में ही आचार्यश्री वीरसागरजी महाराज से आपने क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली

क्षुल्लक दीक्षा के बाद आपका ध्यान आगम ज्ञान के आलोक में विचरने लगा। अल्प समय में अपनी तीक्ष्ण विवेकशीलता के द्वारा आपका ज्ञान आत्मा मे आलोकित हो गया। आपने विचार किया कि आत्मा अनन्त शरीरों मे रहा परन्तु एक भी शरीर आत्मा को नहीं रख सके। आत्मा और शरीर का यह दुःखदायी संयोग वियोग का अवसर कैसे समाप्त हो ? जब इस समस्या का समाधान स्वयं की विवेक शीलता के द्वारा जान लिया, तब आपने शीघ्र ही हजारों नर-नारियों के बीच अपूर्व उत्साह पूर्वक समस्त अन्तरङ्ग बहिरङ्ग परिग्रह का त्याग कर भादों सुदी तीज सम्वत् २०१४ में शुभ दिन जयपुर खानिया मे प्रातःस्मरणीय परम पूज्य आचार्यवर श्री वीरसागरजी महाराज के श्री चरणों में नमन कर आत्म शान्ति तथा विशुद्धता के लिये दिगम्बर मुनि का जीवन अङ्गीकार कर लिया।

आपकी परम चारित्रशीला, धर्मानुरागिणी पत्नी भी ५ वी प्रतिमा के व्रत अङ्गीकार कर धर्माराधन द्वारा आत्मकल्याण की ओर अग्रसर बन जीवनयापन कर रही हैं।

मुनि दीक्षा के बाद आपका प्रथम चातुर्मास ब्यावर, दूसरा अजमेर, तीसरा सुजानगढ़, चौथा सीकर, पांचवां लाडनू एव छटवां जयपुर मे हुआ। जयपुर चातुर्मास के अवसर पर आपके ऊपर असह्य शारीरिक संकट आ पड़ा था, लेकिन आपने-अपने आत्मबल के द्वारा दुःखी भौतिक शरीर से उत्पन्न वेदना का परिषह शान्ति पूर्वक सहन कर विजय पाई।

आपकी पेशाब रुक गई थी। किसी भी प्रकार बाह्य साधनों द्वारा उसका निकलना असम्भव था। इस विज्ञानवादी विकासोन्मुख युग मे ऐसी अनेको औषधियां हैं जिनका सेवन कर या यान्त्रिक साधनों द्वारा आपरेशन कर बड़े-बड़े दुःख क्षणमात्र मे दूर किये जा सकते है, लेकिन आपने अपने तप बल, ज्ञान बल से जिस औषधि को पा लिया उसके सामने उपर्युक्त बाह्य औषधिया अपना मूल्य नहीं रखती, इसलिये आपने इन औषधियों व यन्त्रों के सेवन का त्याग कर दिया था और यही आपके त्याग की चरमसीमा का उत्कृष्ट एवम् अनुपम उदाहरण है। अन्त मे जब दैव ने अपनी करतूत करली और मुनिश्री द्वारा इस कठोर वेदना को आत्म साधना द्वारा शान्तिपूर्वक सहन करते हुये देख हार मान गया तो स्वतः अविजयीसा होकर मुंह छिपाकर चला गया।

आपने अनन्त वेदना को सहनकर अपने आत्मतेज एवम् कठिन परिषह सहने का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। धन्य है ऐसी तपस्या को, ऐसे त्याग को एवम् ऐसी आत्मकल्याण की साधना को जिसमे चाहे सुख हो या दुःख, रोग हो या सकट, सभी में समानता रह सके। जब चातुर्मास अवधि समाप्त हो गई और जयपुर से विहार कर ससंघ बुन्देलखण्ड के पवित्र अतिशय क्षेत्र पपौराजी की वन्दना के लिए आये तो पुनः आपको इस रोग ने पीड़ा देना प्रारम्भ किया। इस बार

पपौराजीमें जो वेदना हुई वह अत्यन्त असह्य और दुःखदायिनी थी। पुनः आपकी पेशाब रुक गई। अनेक बाह्य साधन जिनमें किसी भी प्रकार हिंसा न हो, अपनाए गए। किसीमें भी सफलता नहीं मिली। एक डाक्टरने आचार्यश्री से विनय की कि यदि महाराजको ध्यानावस्था या मूर्छावस्थाके समय इजेक्शन लगा दिया जाय तो आराम होनेकी सम्भावना की जा सकती है।

आचार्यश्री से कहे गये उक्त शब्द मुनिश्री ने सुने और तुरन्त मुस्कराकर बोले "भइया साधुओंसे कभी जबरदस्ती नहीं की जा सकती। वे विश्वमे किसी भी प्राणीके आधीन नही होते। उन्हें तो अपनी आत्माका कल्याण करना है। यदि आपने इन्जैक्शन लगा दिया या आपरेशन कर दिया तो ठीक है क्योंकि यह तो आपको करना है पर यदि मैंने समाधि ले ली तो? इस प्रश्नका उत्तर कुछ भी नही था, अतः डाक्टर साहब मौन रह अपनी बातका प्रतिकूल उत्तर पाकर एव आपकी इस महान साधनाको देखकर अवाक् रह गए।

अनन्त वेदनाके होनेसे महाराजश्री मौन अवस्थामे लेटे हुए थे। अनेक विद्वान चारो ओर अत्यन्त वैराग्य युक्त व समाधि-मग्ग पूर्ण उपदेश व पाठ कर रहे थे। महाराजश्री अपने आत्म-ध्यानमे लीन रहते। जब तीव्र वेदनाका अनुभव होता तो मात्र एक दो बार करवट बदल कर उस घोर दुःखको सहन कर लेते थे। जो डाक्टर आये हुये थे आपको इस महान साधनाको देखकर हाथ जोडे महाराजश्री के सामने बैठे हुए थे। इस सहनशक्ति को देखते हुये अनेकों नर-नारियोकी आंखोंसे आसू बह रहे थे। लोगों से वह वेदना देखी नहीं जाती थी। अन्तमें मुनिश्रीने अपनी आत्म-साधना एव परिषह क्षमतासे मुक्ति पाई।

आचार्यश्री ने जबकि आप इस वेदनासे पीडित थे आपके समीप बैठ जिस वैराग्य पूर्ण एवं संसारकी असारता तथा आत्म-कल्याणके उपदेश आपके समक्ष दिये वह अत्यन्त रोमान्चकारी एवं हृदय-ग्राही थे। उन्हें सुनकर जन-साधारणके ऐसे भाव होते थे कि धन्य है यह मुनि अवस्था और धिक्कार है इस संसारको! भगवन् मैं भी इस अवस्थाको पाऊँ। धन्य है जिन्होंने मुनिपद धारण कर लेने पर भावों और क्रियासे पंच पापोंका त्याग कर दिया, क्रोध, मान, माया रूपी पतनकारी कषायोंसे पिण्ड छुडाया, तथा बहिरात्मा बुद्धिके बदले अन्तरात्मा बुद्धिसे आत्माको निर्मल बना लिया। इस प्रकार आत्म-कल्याण करते हुये आप अनेक आत्माओंको इस पथका अवलोकन करानेमे तत्पर है।

इस प्रकार मुनि जीवन यापन करनेमें आपको अनेक आपत्तियों, उपसर्गों और परीषहोंका सामना करना पडा लेकिन मुनिश्री सदा अपने आत्म-कल्याणके लक्ष्यमें इस प्रकार लवलीन रहे कि इन आपत्तियोंसे आपके तपोतेजमें वृद्धि ही हुई।

धन्य है उस माँ को जो मानवोंके कल्याण-कर्त्ता ऐसे इकलौते पुत्रको जन्म देकर महा भाग्यशालिनी हुई । इस क्षणिक जीवन में आपने जबमे इस पथका अवलम्बन लिया तबसे अतुल जैनागमका ज्ञान ग्रहण करते हुये चारित्र के क्षेत्रमे भी अनवरत अग्रणी हैं । आपके दैनिक जीवनका अधिक उपयोग शास्त्र-स्वाध्यायमें ही होता है । आपका स्वाध्याय स्थायी और शुभोपयोगी होना है । आप अपने उपदेशमे जिन बातोका निरूपण करते है वह विद्वानो को भी आश्चर्यकारी होती है ।

श्री श्रुतसागरजीके दिव्य व्यक्तित्वमें एक अनोखी प्रभावोत्पादक शक्ति है जिसका अनुभव उनके सम्पर्कमें आने पर ही हो पाता है । जैन आगमके दुरूह और गूढ़तम रहस्य। तक उनकी जिज्ञासु दृष्टि पहुंचती है और वे तत्त्व विवेचनमें आठों याम एक परिश्रमी विद्यार्थीकी तरह रुचि लेते हैं एवं कठोर अध्यवसाय करते है ।

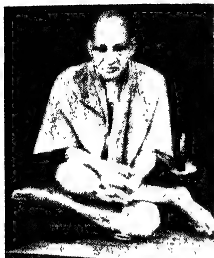
समाजमे आजकल अनेकान्तवाद तथा स्याद्वादकी उपेक्षा करके किसी भी एकान्त दृष्टिसे पक्ष समर्थन किये जाने के कारण जो अनर्थकारी ऊहापोह मच रही है उसके प्रति भी आपकी दृष्टि अत्यन्त स्पष्ट और आगम सम्मत है । आपका कहना है कि हमारे पूज्य आचार्योंने तत्वज्ञानकी कठोर साधनाके उपरान्त जो विवेचन किया है वह यदि हमारी दृष्टि मे ठीक नही बंठता तो यह हमारे ज्ञान तथा क्षयोपशमकी कमी है अथवा हमने बातको उस अपेक्षासे समझनेका प्रयास नहीं किया है । ऐसी स्थितिमें हमें अपनी बुद्धिको आचार्योंके कथन और अपेक्षाके अनुसार विकसित करने का प्रयास करना चाहिये । आचार्योंकी वाणीको अपनी बुद्धिके अनुरूप तोड-मरोड करना या एकान्त दृष्टिके पोषणके लिये अर्थका अनर्थ करना उचित नही है, और यह हमारा अधिकार भी नहीं है ।

वर्तमान में आप आचार्यश्री धर्मसागरजीके संघ के साथ में रह रहे है आपके द्वारा आचार्यश्री धर्मसागर अभिवन्दनग्रन्थ का विमोचन २ मार्च १९८२ को भीण्डर में २५ हजार की जनसख्या मे विमोचित किया गया था । उसी अवसर पर एक गोष्ठी का आयोजन भी किया गया । जो दिगम्बर जैनाचार्य एव आचार्य परम्परा के नाम से हुई थी । वर्तमान में आप यदा कदा लेख आदि लिखकर समाज का मार्गदर्शन कर रहे हैं ।

आपमे वात्सल्य भाव भी कूट-कूटकर भरा है । आचार्यश्री के प्रति विनय और संघके अन्य साधु-साध्वियोके प्रति आपका व्यवहार उस वात्सल्य और कल्याण-भावनासे ओत-प्रोत रहता है । उनके लिए आपका कथन है कि हम सब छद्मस्थ है अतः त्रुटिया हममे हो सकती है, इसलिए निंदककी बात सुनकर भी हमे रोष नहीं करना चाहिये वरन् आत्म-शोधन करके अपने आपको त्रुटि हीन बनाना चाहिये । "जो हमारा है सो खरा है" ऐसा कहना ठीक नही होगा । हमे तो हमेशा सत्यको स्वीकार करनेके लिए तैयार रहना चाहिए और कहना चाहिये कि—"जो खरा है सो हमारा है ।" ऐसी परम पवित्र आत्माके प्रति कोटिशः नमन है ।



श्री सिद्धसागरजी महाराज



झाबुआ मध्यप्रदेशमें सेठ चम्पालालजी जैन की गिनती प्रतिष्ठित घरानो में होती है। जिनशासन सेवा और साधु वैयावृत्ति की भावना कुलपरम्परा से ही उन्हे मिली थी। इसे ही वे अपना धर्म मानकर जी रहे थे। पत्नी दोलीबाई भी उन्हे मिली तो लगभग ऐसे ही विचारों की। इस धर्मशील दम्पति को वि० सं० १९६९ भाद्रपद शु० पचमी को पुत्ररत्न का लाभ हुआ तो नाम रखा उन्होंने मथुरादास। स्कूली पढाई मे मथुरादास मैट्रिक से आगे नही बढ़ सका पर तत्वज्ञान वैराग्य मे वह उतना बढा जहां औरो का पहुचना मुश्किल था। निर्ग्रन्थ गुरुओ को 'आहारदान' देते ही उसमे वैराग्य की किरण फूट पडी और इन्दौर मे पू० आ० श्री वीरसागरजी म० से सातवी प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये। वि० स० १९९५ पौष शु० पचमी को पूज्य आचार्यश्री से ही क्षुल्लक दीक्षा का सुयोग मिल गया। बाल ब्रह्मचारी मथुरादास क्षु० सिद्धसागरजी म० बन गये। यह सब गुरु कृपा का फल है। बहुत बडे पुण्यात्माओं को गुरु कृपा मिल पाती है। शास्त्रो का अध्ययन करके आपने कुछ रचनाएँ भी की है। दीक्षाकाल से लेकर अब तक निम्नलिखित स्थानों में चातुर्मास करके धर्मामृत की वर्षा की है—

इन्दौर, कचनेर, कन्नड़, कारजा, सज्जनगाव, झालरापाटन, रामगंजमडी, नैनवा, सवाई-माधोपुर, नागौर, सुजानगढ, नरायना, दूदू, मौजमाबाद, केकडी, टोडारायसिंह, मदनपुरा, जयपुर। मौजमाबाद मे तेरह चातुर्मास कर चुके है तथा सन् ६९ से सन् ७३ छोडकर मौजमाबाद में ही विराजमान हैं।

वर्तमान मे ग्राम मौजमाबाद मे चातुर्मास कर रहे है यह अतिशय क्षेत्र है यहाँ एक मन्दिर तीन शिखर का विशाल मन्दिर है जिसमें भूमिके नीचे २ भौहरे (तलघर) है जिसमे अतीव सुन्दर मनोरम मूर्तियां विराजमान हैं। मन्दिर को देखने हेतु दूर २ से यात्रीगण आते है। बाजार में एक छोटा मन्दिर है तथा गाँवके बाहर एक नशियांजी हैं जो अपनी प्राकृतिक छटा से आकर्षक केन्द्र है। यहाँ पर धर्मानुरागी श्रावको के ४०-५० घर है यहाँ जिनमन्दिरजी में बडा भारी शास्त्र भण्डार है। करीब-करीब दिगम्बर जैन वांगमयके सभी ग्रन्थ उपलब्ध है।

सुन्दर साधना :

आपकी सौम्यमुद्राके दर्शन से ही यह स्पष्ट झलकता है कि आपकी गम्भीर प्रकृति है। सदा मौन पूर्वक आप अपनी साधना करते हैं। ध्यान, सामायिक, षड्आवश्यक पालन में अति उत्साह है। जब कभी बोलने का अवसर आवे तो सुमधुर परिमित एवं हित कारक आदि अनेक गुण आपमें ऐसे हैं जो आत्म कल्याणेच्छुओके लिए अनुकरणीय है जो व्यक्ति एक बार भी आपके दर्शन कर लेता है उसे यह इच्छा बनी ही रहती है कि मै ऐसी प्रशान्त मूर्ति के फिर कभी दर्शन करूं। रात दिन आपका समय पठन-पाठन मे व्यतीत होता है। 'जैन गजट' आदि अखबारों मे आपके लेख कविता एवं शंका-समाधान प्रकाशित होते रहते हैं।

आप द्वारा रचित पुस्तकों के नाम निम्न प्रकार है :—

(१) आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज की पूजन

(२) संस्कृत शान्तिनाथ स्तोत्र

(३) जीवन्धर की वैराग्य वीणा

(४) चिन्तामणि पार्श्वनाथ पूजा

(५) सत् शिक्षा

(६) पराक्रमी वरांग

(७) लघु समाधि साधन

(८) पंचाध्यायी तत्वार्थसूत्र आदि।

अनुवाद :

(१) सन्मति सूत्र (२) धर्मरत्नाकर (३) ध्यानकोष (४) आराधना समुच्चय (५) कम्मपयदि चूर्णि (६) पाच द्वात्रिंशतिकाऐ (७) द्रव्य संग्रह (८) भक्तामर स्तोत्र (९) अभ्रदेवकृत श्रावकाचार (१०) श्री योगदेवकी सुखबोध तत्वार्थवृत्ति एवं भगवती आराधना।

इस प्रकार आप एक बहुत अच्छे कवि, लेखक, ज्ञानी, ध्यानी, तपस्वी, साधक महान आत्मा है। आपका उत्तम क्षमा के दिन जन्म है, आप वास्तव मे उत्तम क्षमा के साक्षात् अवतार है। क्रोध मात्र तो आपके पास आता ही नही।



क्षुल्लक श्री सुमतिसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक सुमतिसागरजी का गृहस्थ अवस्था का नाम मदनचन्द्रजी था। आपका जन्म संवत् १९५० में किशनगढ़ (अजमेर) में हुआ। आपके पिता श्री फूलचन्द्रजी थे व माता गुलाबबाई थी। आप खण्डेलवाल जाति के भूषण हैं। आपकी लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा साधारण ही रही। आपके एक भाई था। आपके दो विवाह हुए। गार्हस्थ जीवन सुखसम्पन्न था।

आपने संवत् २०२२ में मंगसिर कृष्णा एकम को स्वर्गीय १०८ आचार्य वीरसागरजी महाराज से खानिया में क्षुल्लक दीक्षा ली। आपने खानिया ब्यावर, अजमेर, जयपुर आदि स्थानों पर चातुर्मास किये।



आर्यिका इन्दुमतीजी



आर्यिकाश्री १०५ इन्दुमतीजी का जन्म सन् १९०५ में हुआ था। मारवाड़ में डेह नामक ग्राम को आपकी जन्म-भूमि बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आपके पिता श्री चन्दनमलजी पाटनी थे और माता जड़ावबाई थी। आपने दिगम्बर जैन खण्डेलवाल जाति को विभूषित किया था।

चन्दनमलजी जहां कुशल व्यापारी थे, वहां धर्मात्मा भी थे और उनकी गृहिणी जड़ावबाई तो उनसे दो कदम आगे थी। आपके चार पुत्र हुए—ऋद्धिकरण, गिरधारीलाल, केशरीमल, पूनमचन्द्र। आपके तीन पुत्रियां हुई गोपीबाई, केशरीबाई, मोहनीबाई। मोहनीबाई का विवाह चम्पालालजी सेठी के साथ हुआ तो सही पर छह माह के भीतर ही उनका स्वर्गवास हो गया। इससे दोनों परिवार दुःखी हुए।

पिता की प्रेरणा पाकर मोहनीबाई जिनेन्द्र पूजन व स्वाध्याय में काफी समय बिताने लगी। आपने परिवार के साथ तीर्थयात्रा की। जब श्री १०८ मुनि शान्तिसागरजी का संघ सम्मेदशिखरजी की वन्दना के लिए आया तो उनके दर्शनों से आपके विचार और भी अधिक विरागकी ओर बढ़े। चूं कि आप मुनिश्री के प्रवचन अपने हजार आवश्यक काम छोड़कर भी सुनती थी। इसलिए विषय वासनाओं से विरक्ति बढ़ती ही रही।

उन दिनो, आचार विचार में मारवाड बहुत पिछडा था । पर जब १०८ मुनिश्री चन्द्रसागरजी विहार करते हुए सुजानगढ आये तब यहा के श्रावकों ने भी अपने को सुधार लिया । जब मोहनीबाई को उक्त मुनिश्री के आने और चातुर्मास की बात ज्ञात हुई तो मोहनीबाई भी अपनी माता के साथ दर्शन करने के लिए आई और मा के साथ ही स्वय भी दूसरी प्रतिमा स्वीकार करली ।

चातुर्मास के बाद मुनिश्री ने विहार किया तब मोहनीबाई भी उनके साथ अनेकों नगरों में गयी । वे आहार दान तथा धर्म श्रवण के कार्य करती थी । सन् १९३६ में आपने सातवी प्रतिमा स्वीकार कर ली । आपके भाई (ऋद्धिकरण) भाभी ने दूसरी प्रतिमा ली और मा ने पांचवी प्रतिमा के व्रत स्वीकार किये । यही आपका परिचय अध्यापिका मथुराबाई से हुआ ।

जब चन्द्रसागरजी ने कसाबखेडा (महाराष्ट्र) मे चातुर्मास किया तब मोहनीबाई और मथुराबाई ने उनसे आर्यिका की दीक्षा बाबत निवेदन किया । मुनिश्री ने आगापीछा सोचकर उन्हे सन् १९४२ में क्षुल्लिका दीक्षा दी । अब ब्रह्मचारिणी मथुराबाई का नाम विमलमती रखा गया और ब्रह्मचारिणी मोहनीबाई को इन्दुमती कहकर पुकारा गया । आप दोनो ने पीछी कमण्डलु, श्वेत साड़ी व चादर के सिवाय सभी परिग्रह का त्याग कर दिया और ज्ञान तथा ध्यान की साधना करने में लगी ।

जब सुजानगढ़ निवासी चादमल धन्नालाल पाटनी ने मुनिश्री चन्द्रसागरजी से बडवानी की ओर विहार करने और स्वनिर्मित मानस्तम्भ की प्रतिष्ठा मे सम्मिलित होने के लिए प्रार्थना की तब इन्दुमतीजी भी सघ के साथ चली ।

जब नागौर मे मुनिराज आचार्य श्री वीरसागरजी का चातुर्मास हुआ तब आपने उनसे आर्यिका दीक्षा ली और अपनी साध पूरी की । उनके सघ मे रहकर आपने अनेक तीर्थों की यात्रा की । आपने भारतवर्ष के समस्त प्रान्तो मे विहार कर धर्म प्रभावना की है ।

सन् १९८२ में तीर्थराज सम्मेदशिखरजी पर आपको अभिनन्दन ग्रन्थ भेट किया गया था । आपने उसे स्वीकार नही किया । धन्य है आपका त्याग तथा सिहवृत्ति जीवन । ८० वर्ष की उम्र में आप परम शान्त जितेन्द्रिय है । जिनागम पर आपकी अपार आस्था है ।



आर्यिका वीरमतीजी



श्री १०५ आर्यिका वीरमतीजी का गृहस्थावस्था का नाम चांदबाई था। आपका जन्म आज से लगभग ६० वर्ष पूर्व जयपुर (राजस्थान) मे हुआ था आपके पिता का नाम श्री जमुनालाल था तथा आपकी माता गुलाबबाई थी। आप खण्डेलवाल जाति की भूषण है। आपकी लौकिक शिक्षा व धार्मिक शिक्षा साधारण हुई। आपका विवाह श्री कपूरचन्द्रजी के साथ हुआ।

स्वय के चारित्र व आचार्य श्री १०८ शान्तिसागरजी के आगमन से भावों में विशुद्धि हुई अत: सिद्धवरकूट सिद्धक्षत्र मे क्षुल्लिका की दीक्षा ली। विक्रम संवत् १९९५ मे इन्दौर में स्वर्गीय १०८ आचार्य वीरसागरजी से आर्यिका की दीक्षा ली। आपको सस्कृत व हिन्दी पर विशेष अधिकार है। आपने खातेगाव, उज्जैन, इन्दौर, झालरापाटन, जयपुर, ईसरी, कोटा, उदयपुर आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्मवृद्धि की। आपने दूध के अलावा अन्य समस्त रसों का त्याग किया है।



आर्यिका विमलमतीजी



आपका जन्म ग्राम मुंगावली (मध्यप्रदेश) में परवार जातीय श्री रामचन्द्रजी के यहा वि० सं० १९६२ मिती चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को हुआ था। आपका विवाह श्री हीरालालजी भोपाल (म० प्र०) निवासी के साथ बाल्य अवस्था में हुआ, मगर दुर्दैववश आपके पति का असमय मे ही निधन हो गया। बारह वर्ष की अल्प आयु में आपका विधवा होना आपके लिए बडी भारी विपत्ति थी।

बाद मे आपने विद्याध्ययन बम्बई में किया, १९ वर्ष की आयु के बाद आप अध्यापिका के पद पर नागौर (राजस्थान) मे श्रीमान् सेठ मोहनलालजी मच्छी द्वारा कन्या पाठशाला मे नियुक्त हुई। सयोगवश पूज्य १०८ श्री चन्द्रसागरजी मुनि-महाराज विहार करते हुए नागौर पहुचे। उस समय पूज्य महाराज से आपने द्वितीय प्रतिमा का चारित्र ग्रहण किया।

आठ वर्ष पाठशाला मे पढाने के बाद अध्यापिका पद से त्यागपत्र दे दिया और पूज्य चन्द्रसागरजी महाराज के संघ में विहार करने लगी, तत्पश्चात् सवत् २००० के कार्तिक कृष्णा ५ के रोज क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की।

स० २००० फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा के रोज पूज्य श्री १०८ श्री चन्द्रसागरजी महाराज का बडवानी क्षेत्र में स्वर्गवास हो गया, बाद मे आपने पूज्य श्री १०८ वीर सागरजी महाराज मे चैत्र शुक्ला त्रयोदशी स० २००२ को आर्यिका दीक्षा ग्रहण की।

तत्पश्चात् आपने अनेक नगरो एव ग्रामो में विहार एवं चातुर्मास किया।

आपका शरीर वायु के प्रकोप से भारी होने के साथ साथ कमजोर भी होने लगा। अत: सं० २०२० के बाद आपने लम्बी दूरी का विहार करने में असमर्थ रहने के कारण नागौर के आसपास व खास नागौर में ही ज्यादा चातुर्मास किये।

कुछ वर्ष पहले आपके गिर जाने से अचानक एक पैर की हड्डी में फ्रेक्चर हो गया जिससे बहुत समय तक वेदना की असह्य पीडा रही।

आपका दैनिक समय प्रायः स्वाध्याय में ही बीतता था । आपका मुख्य दैनिक स्वाध्याय पाठ आदि निम्न प्रकार चलते थे ।

तत्वार्थसूत्र, भक्तामर स्तोत्र, सहस्रनाम, कल्याणमन्दिर, एकीभाव, स्वरूपसंबोधन, समाधितंत्र, इष्टोपदेश, पार्श्वनाथस्तोत्र, ऋषि मण्डल स्तोत्र, सरस्वती स्तोत्र, णमोकार मंत्र का माहात्म्य, महावीराष्टक स्तोत्र, मंगलाष्टकम् पंच भक्ति पाठ, प्रथमानुयोग व द्रव्यानुयोग का स्वाध्याय एवं प्रतिक्रमण आदि ।

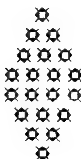
आपके द्वारा अनेकों ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ जिनके मुख्य नाम ये है । कल्याण पाठ संग्रह, नित्यनियम पूजा, नित्यनियम पाठ पूजा, भक्तामर कथा (हिन्दी अनुवाद), शांति विधान (हिन्दी अनुवाद), देववंदना, समाधि तन्त्र, इष्टोपदेश, स्वरूपसंबोधन, जिनसहस्र स्तवन, द्वादशअनुप्रेक्षा, सूतक निर्णय व नवधाभक्ति आराधना कथाकोष (संस्कृत) आदि । आराधना कथाकोष तीनों भाग भी हिन्दी व संस्कृत में छपकर प्रकाशित होगये हैं ।

चरित्रनायिका श्री १०५ विमलमती आर्यिकाजी सत्समाधि के साथ यहीं पर अपने भौतिक देह को बैशाख सुदी १, वि० सं० २०३४ में छोड़ चुकी है । अब तो धार्मिकजनों को उनके द्वारा उपदिष्ट मार्ग-उपदेश के अनुगामी होते हुए उनके द्वारा प्रचारित जिनवाणी के अध्ययन करते हुए अपना हित करते रहना चाहिये ।



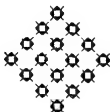
आर्यिका कुन्थुमतीजी

आपने आचार्य वीर सागरजी महाराज से सं० २००३ में आर्यिका दीक्षा ली। आप इस समय ८० वर्ष के लगभग है। फिर भी अपने व्रतों को ससंयम पाल रही है। आप इस समय शिखरजी मे पू० सुपार्श्वमती माताजी के सान्निध्य में आत्म साधना कर रही हैं।



आर्यिका सुमतिमतीजी

१०५ आ० सुमतिमती माताजी (खण्डेवाल : विलाला गोत्र) जयपुर की थी। आपने आचार्य श्री वीरसागरजी से जयपुर मे आर्यिका दीक्षा ली। संघ का विहार मारवाड, डेह, नागौर की ओर हुवा। नागौर मे ही आप समाधि मरण पूर्वक स्वर्ग वासिनी हुई। आपका अधिकाश समय विशेष धर्मध्यान पूर्वक ही व्यतीत हुवा।



आर्यिका पार्श्वमतीजी

आसोज वदी तृतीया विक्रम सम्वत् १६५६ के दिन जयपुर के खेडा ग्राम में बोरा गोत्रमें आपका जन्म हुआ था। जन्मके समय माता-पिताने आपका नाम गेंदाबाई रखा।

आपके पिताका नाम मोतीलालजी एवं माताका नाम जडावबाईजी था। आप अपने तीन भाइयोंके बीच अकेली लाडली बहिन थी। समयका दुखदायी चक्र चला और आपके दो भाई असमय में ही इस नश्वर संसारसे विदा हो गए। संसारकी इस असारता को देखकर आपके छोटे भाई ब्रह्मचारी मूलचन्द्रजीने धर्मका आश्रय लिया जो आजकल आत्म-कल्याणकी ओर तत्पर है।

जीविकोपार्जनके उद्देश्यसे आपके पिता श्री सपरिवार खेडा ग्रामसे जयपुर चले आये थे और मोदीखानेका व्यवसाय करने लगे थे। उस समय आपकी उम्र मात्र पाँच वर्षकी थी।

जब आपकी अवस्था आठ वर्षकी हुई तब आपके पिता श्रीने आपका पाणिग्रहण जयपुर निवासी श्रीमान् लक्ष्मीचन्द्रजी कालाके साथ सम्पन्न कर दिया। आपके स्वसुर श्री सेठ दिलसुखजी अच्छे सम्पन्न प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। सात ग्रामकी जमींदारी आपके हाथ थी। स्वसुर घरके सभी व्यक्ति योग्य और सुशिक्षित थे, फलतः आपकी विशेष धार्मिक शिक्षा भी स्वसुर घर पर ही हुई। इसके पूर्व आपकी स्कूली शिक्षा मात्र कक्षा तीन तक ही थी।

आपके पति श्री लक्ष्मीचन्द्रजी काला एक होनहार और कर्त्तव्यशील व्यक्ति थे तथा अध्यापनका कार्य करते थे। अध्यापन कार्यके साथ ही अध्ययनमे भी आपने उत्तरोत्तर वृद्धि की किन्तु बी० ए० पास करनेके दो माह बाद ही दुर्दैव वश इनका अचानक असमयमें स्वर्गवास हो गया।

कर्मकी इस दुखदायी गतिके कारण यौवनावस्थामें ही आपको वैधव्य धारण करना पडा। उस समय आपकी उम्र २४ वर्षकी थी। आपको अपने गार्हस्थ जीवनकी अल्प अवधिमें सन्तानका सुख प्राप्त न हो सका। ससार की इस दुखदायी असारताने आपके अन्तरमें वैराग्यकी प्रबल ज्योतिको जला दिया। आप उदासीन वृत्तिसे घरमें रहकर नियम व्रतोका कठोरतासे पालन करने लगी।

आपकी आत्माका कल्याण होना था अतः वैधव्य प्राप्त करनेके ८-६ वर्ष बाद विक्रम सम्वत् १६६० में चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागरजी महाराजसे जयपुर खानियां में ७ वी प्रतिमाके व्रत अङ्गीकार कर लिए। आपके परिणामोंमें निर्मलता आई और अन्तरमें वैराग्य का उदय हुआ,

फलतः विक्रम सम्वत् १९९७ मे आचार्यवर श्री वीरसागरजी महाराजसे सकनेरमें क्षुल्लिका की दीक्षा ग्रहण करली।

इस अवस्थामे आकर आपने कठोर व्रतोका अभ्यास किया और ज्ञान-चारित्रमें उत्तरोत्तर वृद्धिकी जिससे आपकी आत्मामें प्रबल वैराग्यकी ज्योति जगमगा उठी, फलत. रविवार आसौज बदी पूर्णमासी विक्रम सम्वत् २००२ में प्रातः समय झालरापाटन में अपार जन-समूहके बीच जय-ध्वनिके साथ आचार्य वीरसागरजी महाराजसे आर्यिकाकी दीक्षा ग्रहण करली।

इस प्रकार अपनी आत्माको तप और साधनासे उज्ज्वल करती हुई ज्ञान और चारित्रके माध्यमसे मुक्तिके मार्ग पर अग्रसर हैं।



आर्यिका सिद्धमतीजी

दिल्लीमे अग्रवाल सिंहल गोत्रोत्पन्न श्रीमान् लाला नन्दकिशोरजीके घर माता श्री कट्टोदेवी की कुक्षिमें विक्रम सम्वत् १९५० के आसौजमे आपका जन्म हुआ। आपका नाम दत्तोबाई था।

आपके पिता श्री उदार हृदयी, होनहार और अच्छे कार्यकर्ता थे। घरकी स्थिति सम्पन्न थी, तथा दिल्लीमें काठसे तैयार किया हुआ सामान बेचते थे।

जब आपकी वय ८ वर्षकी थी तब आपका विवाह दिल्लीमें ही श्रीमान् लाला मौरसिंहजीके सुपुत्र श्री वजीरसिंहजीके साथ सम्पन्न हुआ था। आपके स्वसुर रेल विभागमे माल गोदामके सबसे बडे अधिकारी थे। विवाहके ५ वर्ष बाद ही जब आपकी उम्र १३ वर्षकी थी आपके ऊपर दुःखके वज्रका प्रहार हुआ और आपके पतिका देहावसान हो गया। इस बालापन की अवस्थासे ही आपको वैधव्य धारण करना पडा। इस घोर संकटके आ जानेसे आपके पिताने दिल्लीमें एक विदुषी को आपकी शिक्षाके लिये निश्चित किया और उन्हीके द्वारा आपकी लौकिक व धार्मिक शिक्षा हुई।

जैसे-जैसे आपने यौवनावस्थामें प्रवेश किया तदनुसार आप सुशिक्षित होती हुई धर्म परायण होती गई, और दैनिक गृहस्थी और कर्त्तव्योंके साथ धार्मिक कार्योंको प्राथमिकता देती हुई आत्म-कल्याणकी ओर उन्मुख हुई ।

माता पिताकी इकलौती लाडली पुत्री होने और बालापनसे विधवापन जैसे घोर सकट में आ जानेसे आपकी माताको चिन्ता हुई कि इस गृहस्थी और अटूट सम्पत्तिको कौन सम्भालेगा । अत: आपकी माताने आपसे आग्रह किया कि बेटी कोई बालक गोद ले लो जो हमारे बाद इस घरको सम्हाले रहे ।

आपकी प्रवृत्ति तो वैराग्यकी ओर थी फिर भी माताजीकी हठके कारण आपको एक बालक (श्री अनूपचन्द्र) को गोद लेना पडा । इस समय आपकी अवस्था २३ वर्षकी थी । बालक अनूपचन्द्र अपनी धर्म माताकी गोदमें आकर वैभव सम्पन्न होने लगा । बडा हुआ, शादी हुई और ५ पुत्र रत्नोके साथ ८ पुत्रियोंका सौभाग्य मिला ।

आपकी आत्मा सासारिक वैभवोके प्रति मोहीके बजाय निर्मोही होती जा रही थी । बालक अनूपचन्द्रको गोद लेनेके २ वर्ष बाद ही आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराजका सघ दिल्ली आया हुआ था । उस समय आपने शूद्र स्पर्शित जल न पीनेका नियम ग्रहण कर लिया । तीन माह बाद ही हस्तिनापुरमे पुन. आचार्यश्री से सातवी प्रतिमा तक के व्रत अङ्गीकार कर लिए ।

परिणामोंमें विशुद्धि आई और अन्तरमें वैराग्यकी ज्योति जलने लगी तथा ८ वर्ष के कठोर व्रताभ्यासके बाद सिद्धवर कूटमे आपने आचार्य श्री वीरसागरजी महाराजसे फाल्गुन सुदी पचमी सम्वत् २००० मे क्षुल्लिका की दीक्षा ले ली ।

तप सयम और साधनाके साथ ज्ञान और चारित्रमे वृद्धि हुई जिससे आपके हृदयमे शुद्ध वैराग्यकी भावनाका उदय हुआ और आसौज बदी एकादशी रविवार विक्रम सम्वत् २००६ मे आचार्य श्री वीरसागरजी महाराजसे नागौरमें आर्यिका की दीक्षा ग्रहण कर ली । निमित्तकी बात है आपके छोटे देवर की शादी हुए दो माह ही व्यतीत हुए थे कि आपकी देवरानी को दुर्दैव ने वैधव्य धारण करा दिया, जिससे उसके अन्तरमें इस ससारकी असारताका नग्न चित्र अंकित हुआ, और वह भी गृह-त्याग, क्षुल्लिकाकी दीक्षा ग्रहण कर कठोर व्रतोका पालन कर शरीरको तपाभ्यासी बनाती हुई अपनी आत्मा को निर्मल बना रही है । इसका निमित्त आपकी प्रबल वैराग्य भावना को मानना पडेगा ।

इस प्रकार आप धर्म मर्यादाको अक्षुण्ण बनाए हुये जीवमात्रके कल्याणकी भावनाके साथ अपनी आत्माको कर्म मलसे रहित उज्ज्वल बना रही है ।



आर्यिका ज्ञानमती माताजी



सन् १९३४ वि० सं० १९९१ आसौज की पूर्णिमा जिस दिन चन्द्रमा अपनी सोलह कलाओं को पूर्ण कर असली रूप में दृष्टिगत हो रहा था इस दिन को लोग 'शरद पूर्णिमा' के नाम से जानते हैं और ऐसी किंवदन्ति भी चली आ रही है कि उस दिन आकाश से अमृत झरता है । कई स्थानों पर लोग शरद पूर्णिमा की रात्रि मे खुले आकाश में खाने की वस्तुएं रखते है और प्रात: इस कल्पना से सबको बांट-कर उसे खाते हैं कि उसमें अमृत के कण मिश्रित हो गए है । इसी चांदनी रात्रि में माँ मोहिनी की गोद में एक दूसरा चाँद आया जिसका नाम रखा गया 'मैना' ।

मैना ने जो विशेषतापूर्ण कार्य अपने बचपन मे ही कर डाले जो कि हर सतान के लिए तो सोचने के विषय भी नही हो सकते ।

सन् १९५२ का पुन: वही शरद पूर्णिमा का पवित्र दिवस जब मैना अपने १८ वर्ष को पूर्ण कर १९ वे मे प्रवेश करने जा रही थी, बाराबंकी उ० प्र० मे आ० श्री देशभूषण महाराज के चरण सान्निध्य में सप्तम प्रतिमा रूप आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया । अत: शरद पूर्णिमा विशेष रूप से उनके वास्तविक जन्मदिन को सूचित करता है । यही से आपका नवजीवन प्रारम्भ हुआ । सन् १९५३ चैत्र वदी एकम श्री महावीर जी मे आ० देशभूषण महाराज के कर-कमलों से ही आपने क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की और वीरमती नाम को प्राप्त किया । सन् १९५६ में आ० श्रीवीरसागरजी के कर-कमलोसे माधोराजपुरा (राज०) मे आर्यिका दीक्षा प्राप्त कर आर्यिका ज्ञानमती बन गईं ।

आ० ज्ञानमती माताजी भारत देश मे जैन समाज की प्रथम हस्तियो में से है जिन्होंने विश्व मे ब्राह्मी सुन्दरी ओर चन्दना के आदर्श को उपस्थित किया है । कुमारी कन्या का इस ओर कदम

बढाना उस समय के लिए एक आश्चर्य और संघर्ष का विषय था किन्तु भगवान महावीर की परम्परा सदैव जयशील रही है उसीके अनुरूप पू० ज्ञानमती माताजी अपनी प्रतिभाओं के द्वारा जैन शासन की ध्वजा उन्नत रूप से लहरा रहो हैं। इन्होंने आज से १४ वर्ष पूर्व विद्वानों की बढती हुई मांग को देखकर अष्टसहस्री जैसे क्लिष्ट ग्रन्थ का हिन्दी में अनुवाद किया जो विश्व विद्यालयों के अध्ययन में सुगम और सुवोध रूप से अपना स्थान रखती है। उसके अनन्तर समाज की बहुमुखी रुचियों को दृष्टि मे रखकर इन्द्रध्वज विधान महाकाव्य, मूलाचार, नियमसार, बालविकास आदि शताधिक ग्रन्थों की रचना की है जिनके द्वारा जनसामान्य लाभान्वित हो रहा है। इनमें से लगभग ६०-७० ग्रन्थ त्रिलोक शोध संस्थान के माध्यम से प्रकाशित हो चुके हैं। नारी जाति के लिए यह प्रथम रिकार्ड है कि इतनी बहुमात्रा में किसी आर्यिका द्वारा इतना महान् साहित्य सृजन हुआ हो। "सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका" जो कि आपके द्वारा ही चतुरानुयोगो में निबद्ध है घर बैठे ही लोगों को साक्षात् तीर्थंकर की वाणी सुना रही है यह अपने आप में एक अनूठी पत्रिका है।

हस्तिनापुर की पवित्र धरा पर जम्बूद्वीप स्थल पर आपकी गुरुभक्ति का प्रतीक आ० वीरसागर संस्कृत विद्यापीठ भी सन् १६७६ में स्थापित हुआ। होनहार विद्यार्थी प्राचीन आचार्य परम्परा का ज्ञान प्राप्त कर समाज के समक्ष कुशल वक्ता और विधानाचार्य के रूप में आ रहे हैं यह प्रसन्नता का विषय है।

सन् १६८२ का ४ जून का दिवस इतिहास पृष्ठो में स्वर्णाक्षरो में अंकित रहेगा जिस दिन पू० माताजी के शुभाशीर्वाद से भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती इंदिरा गांधी के कर कमलो से "जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति" रथ का राजधानी दिल्ली से प्रवर्तन प्रारम्भ हुआ। यह ज्ञानज्योति आज देश के विभिन्न प्रान्तो में भ्रमण करती हुई भगवान महावीर के अहिंसा अपरिग्रह सिद्धान्तों को जन-जन का सुना रही है और जन-जन में ज्ञान की ज्योति जला रही है।

सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र की धनी पू० आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी वास्तव में इस युग के लिए एक धरोहर के रूप में है जिनसे सर्वदा ज्ञान की गंगा प्रवाहित हो रही है। हम सबका भी यह कर्तव्य है कि उस ज्ञान गंगा में स्नान कर अपने को पवित्र बनावे तथा शरद्पूर्णिमा के पवित्र दिवस पर हम सभी जन्म जयती उत्सव मनावें और अनत ज्ञानामृत पान क. सकल्प करे।

पू० माताजी आरोग्य लाभ करते हुए चिरकाल तक संसार के मिथ्यात्व अंधकार दूर कर सम्यग्ज्ञान प्रकाश से जनमानस को आलोकित करते रहे, इन्ही मंगल भावनाओं के साथ। पूज्य माताजी के चरणों में शत-शत वन्दन।



आर्यिका सुपार्श्वमती माताजी



आज दिगम्बर जैन समाज में जहां अनेक तपस्वी विद्वान आचार्य मुनिगण विद्यमान हैं वहीं अपने तप और वैदुष्य से विद्वत्ससार को चकित करने वाली आर्यिका साध्वियां भी विद्यमान हैं। इन्हीं मे से एक हैं आर्यिका १०५ श्री सुपार्श्वमती माताजी। आपकी बहुज्ञता, विद्या-व्यासंग, सूक्ष्म तलस्पर्शिनी बुद्धि, अकाव्यतर्कणा शक्ति एवं हृदयग्राह्य प्रतिपादन शैली अद्भुत् है और विद्वत् संसार को भी विमुग्ध करने वाली है।

राजस्थान के मरुस्थल नागौर जिले के अन्तर्गत डेह से उत्तर की ओर १६ मील पर मैनसर नाम के गांव मे सद्गृहस्थ श्री हरकचन्दजी चूड़ीवाल के घर वि० सं० १६८५ मिती फाल्गुन शुक्ला नवमी के शुभ दिवस में एक कन्यारत्न का जन्म हुआ—नाम रखा गया "भंवरी"। भरे पूरे घर मे भाई बहिनों के साथ बालिका भी लालित-पालित हुई पर तब शायद ही कोई जानता होगा कि यह बालिका भविष्य में परमविदूषी आर्यिका के रूप में प्रकट होगी।

अपने घरो मे कन्या के विवाह की बडी चिन्ता रहती है और यही भावना रहती है कि उसके रजस्वला होने से पूर्व ही उसका विवाह सबध कर दिया जाय। भवरीबाई भी इसका अपवाद कैसे रह सकती थी। उनका विवाह १२ वर्ष की अवस्था मे ही नागौर निवासी श्री छोगमलजी बड़जात्या के ज्येष्ठ पुत्र श्री इन्दरचन्दजी के साथ कर दिया। परन्तु मनचाहा कब होता "अपने मन कुछ और है विधना के कुछ और" विवाह के तोन माह बाद ही कन्या जीवन के लिये अभिशाप स्वरूप वैधव्य ने आपको आ घेरा। पति श्री इन्दरचन्दजी का आकस्मिक निधन हो गया। आपको वैवाहिक सुख न मिला विवाह तो हुआ परन्तु कहने मात्र को। वस्तुतः आप बाल ब्रह्मचारिणी ही हैं।

अब तो भंवरीबाई के सामने समस्याओं से घिरा सुदीर्घ जीवन था। इष्ट वियोग से उत्पन्न हुई असहाय स्थिति बड़ी दारुण थी। किसके सहारे जीवन यात्रा व्यतीत होगी? किस प्रकार निश्चित जीवन मिल सकेगा? अवशिष्ट दीर्घजीवन का निर्वाह किस विधि होगा? इत्यादि नाना भांति की विकल्प लहरियां मानस को मथने लगीं। भविष्य प्रकाशविहीन प्रतीत होने लगा।

संसार में शीलवती स्त्रियां धैर्यशालिनी होती हैं, नाना प्रकार की विपत्तियों को वे हंसते हंसते सहन करती हैं। निर्धनता उन्हें डरा नही सकती, रोग शोकादि से वे विचलित नहीं होती परन्तु पति वियोग सदृश दारुण दुःख का वे प्रतिकार नही कर सकती हैं, यह दुःख उन्हें असह्य हो जाता है।

ऐसी दुखपूर्ण स्थिति में उनके लिए कल्याण का मार्ग दर्शाने वाले विरले ही होते हैं और सम्भवतया ऐसी ही स्थिति के कारण उन्हे "अबला" भी पुकारा जाता है। परन्तु भंवरीबाई में आत्म—"धर्म" बल प्रकट हुआ उनके अन्तरंग मे स्फूरणा हुई कि इस जीव का एक मात्र सहायक या अवलम्बन धर्म ही है। अपने विवेक से उन्होंने सारी स्थिति का विश्लेषण किया और महापुरुषों व सतियों के जीवन चरित्रों का परिशीलन कर धर्म को ही अपनी भावी जीवन यात्रा का साथी बनाने का दृढ़ निश्चय किया। अब पितृ घर में ही रह कर प्रचलित स्तोत्र पाठादि, पूजन स्वाध्यायादि में ही अपनी रुचि जागृत की। माता पिता के संरक्षण में इन क्रियाओं को करते हुए आपके मन को बड़ी शाति मिलती।

अब आपका अधिकांश समय धर्म ध्यान मे ही बीतता, ससार से विरक्ति की भावना की जड़ें पनपने लगी। अपनी ७-८ वर्ष को आयु में आपको महान् योगी तपस्वी साधुराज १०८ आचार्य कल्प श्री चन्द्रसागरजी महाराज के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ था जब वे डेह से लालगढ़, मैनसर पधारे थे।

विक्रम सम्वत् २००५ का चातुर्मास नागौर में पूर्ण कर आर्यिका १०५ श्री इन्दुमती माताजी भदाना, डेह होते हुए मैनसर पहुची थी। भंवरीबाई आपका सान्निध्य पाकर बहुत प्रमुदित हुई। माताजी के संसर्ग से वैराग्य की भावना बलवती हुई। भंवरीबाई को माताजी के जीवन से बहुत प्रेरणा मिली माताजी भी वैधव्य के दुःख का तिरस्कार कर संयम मार्ग में प्रवृत्त हुई थी। भंवरीबाई को आर्यिकाश्री से अमूल्य वात्सल्य प्राप्त हुआ और उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया कि आत्मकल्याण का सम्यग्मार्ग तो यही है, शेष तो भटकना है। अतः आपने मन ही मन संयम ग्रहण करने का निश्चय किया। अब से आप माताजी के साथ ही रहने लगीं। आपके साथ ही रहकर अनेक तीर्थक्षेत्रों, अतिशय क्षेत्रों आदि के दर्शन करती हुई मुनिसंघों की वैयावृत्ति व आहार दान का लाभ लेती हुई नागौर, सुजानगढ़, मेडतारोड़, ईसरी, शिखरजी, कटनी, पार्श्वनाथ ईसरी आदि स्थानों पर वर्षायोग में रहकर जयपुर खानियां में आचार्य १०८ श्री वीरसागरजी के संघ के दर्शनार्थ पहुंची। आचार्यश्री वहां चातुर्मास हेतु विराज रहे थे। आर्यिका इन्दुमतीजी ने भी आचार्य संघ के साथ चातुर्मास वहीं किया।

आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज ने भंवरीबाई के वैराग्य भाव, अच्छी स्मरण शक्ति एवं **स्वाध्याय की रुचि** देखकर संघस्थ ब्रह्मचारी श्री राजमलजी को (वर्तमान में विद्वान मुनि १०८ श्री **अजितसागरजी)** आज्ञा दी कि ब्र० भवरीबाई को संस्कृत, प्राकृत का अध्ययन कराये तथा अध्यात्म ग्रन्थों का स्वाध्याय कराये । विद्यागुरु का ही महान प्रताप है कि आप आज चारों ही अनुयोगों के साथ साथ संस्कृत भाषा में भी परम निष्णात हो गई । ज्यों ज्यो आपका ज्ञान बढने लगा उसका फल वैराग्य भी प्रकट हुआ ।

वि० सं० २०१४ भाद्रपद शुक्ला ६ भगवान सुपार्श्वनाथ के गर्भ कल्याणक के दिन विशाल जनसमूह के मध्य द्वय आचार्य संघों की उपस्थिति मे (आचार्य १०८ श्री महावीरकीर्तिजी महाराज भी तब ससंघ वही विराज रहे थे) ब्र० भवरीबाई ने आचार्य १०८ श्री वीरसागरजी महाराज के कर कमलों से स्त्री पर्याय को धन्य करने वाली आर्यिका दीक्षा ग्रहण की । भगवान सुपार्श्वनाथ का कल्याणक दिवस होने से आपका नाम सुपार्श्वमती रखा गया । आचार्यश्री के हाथो से यह अन्तिम दीक्षा थी । आसोज बदी १५ को सुसमाधिपूर्वक उन्होने स्वर्गारोहण किया ।

नवदीक्षिता आर्यिका सुपार्श्वमतीजी ने पूज्य इन्दुमतीजी के साथ जयपुर से विहार किया । अनेक नगरों ग्रामो में देशना करती हुई आप दोनों नागौर पहुची । पूज्य १०८ श्री महावीरकीर्तिजी ने वि० सं० २०१५ का वर्षायोग यही करने का निश्चय किया था । गुरुदेव के समागम से ज्ञानार्जन विशेष होगा तथा प्रसिद्ध प्राचीन शास्त्र भण्डार के अवलोकन का सुअवसर मिलेगा यही सोचकर आप नागौर पधारी थी । यहा आपने अनेक ग्रन्थो का स्वाध्याय किया । गुरुदेव के साथ बैठकर अनेक शकाओं का समाधान किया और आपके ज्ञान में प्रगाढता आई ।

वस्तुत: वि० सं० २००५ से ही आप मातृतुल्य इन्दुमतीजी के वात्सल्य की छत्रछाया मे रही हैं । आज आप जो कुछ भी हैं उस सबका सम्पूर्ण श्रेय तपस्विनी आर्या को ही है । आपकी गुरुभक्ति भी श्लाघनीय है । माताजी की वैयावृत्ति मे आप सदैव तत्पर रहती हैं ।

आपका ज्योतिष ज्ञान, मत्र, तत्रो, यत्रों का ज्ञान भी अद्वितीय है । आपके सम्पर्क में आने वाला श्रद्धालु ही आपकी इस विशेषता को जान सकता है अन्य नही ।

आपकी प्रवचन शैली के सम्बन्ध मे क्या लिखूं ? श्रोता अभिभूत हुए बिना नहीं रह पाते । विशाल जनसमुदाय के समक्ष जिस निर्भीकता से आप आगम का क्रमबद्ध, धारा प्रवाह प्रतिपादन करती हैं तो लगता है साक्षात् सरस्वती के मुख से अमृत झर रहा है । आपके प्रवचन आगमानुकूल

अकाट्य तर्कों के साथ प्रवाहित होते हैं । समझने के लिए व्यावहारिक उदाहरणों को भी आप ग्रहण करती हैं । परन्तु कभी विषयान्तर नहीं होती । चार चार, पांच पांच घण्टे एक ही आसन से धर्म चर्चा में निरत रहती हैं । उच्च कोटि के विद्वान भी अपनी शकाओं को आपसे समीचीन समाधान पाकर संतुष्ट होते हैं ।

सबसे बडी विशेषता तो आपमें यह है कि आपसे कोई कितने ही प्रश्न कितनी ही बार करे आप उसका बराबर सही प्रामाणिक उत्तर देती है । और प्रश्न कर्ता को सन्तुष्ट करती हैं । आपके चेहरे पर खीज या क्रोध के चिह्न कभी दृष्टिगत नही होते ।

अब तक के जीवन काल में आपके असाता कर्म का उदय विशेष रहा है, स्वास्थ्य अधिकतर प्रतिकूल ही रहता है परन्तु आप कभी अपनी चर्या में शिथिलता नहीं आने देती । कई वर्षों से अलसर की बीमारी भी लगी हुई है कभी कभी रोग का प्रकोप भयंकर रूप से बढ भी जाता है फिर भी आप विचलित नही होतीं । णमोकार मंत्र के जाप्य स्मरण में आपकी प्रगाढ़ आस्था है और आप हमेशा यही कहती हैं कि इसके प्रभाव से असम्भव भी सम्भव हो जाता है । आपको वचन वर्गणा सत्य निकलती है । ऐसे कई प्रसंगो का उल्लेख स्वय माताजी ने इन्दुमतीजी का जीवन चरित्र (इसी ग्रन्थ का दूसरा खण्ड) लिखते हुए किया है । दृढ़ श्रद्धान का फल अचूक होता है । निष्काम साधना अवश्य चाहिए ।

आसाम, बंगाल, बिहार, नागालैण्ड आदि प्रान्तों में अपूर्व धर्मप्रभावना कर जैन धर्म का उद्योत करने का श्रेय आपको ही है । महान विद्यानुरागी, श्रेष्ठ वक्ता अनेक भाषाओं की ज्ञाता चतुरनुयोगमय जैन ग्रन्थों की प्रकाण्ड विदुषी, न्याय, व्याकरण, सिद्धान्त साहित्य की मर्मज्ञा, ज्योतिष यंत्र, तत्र, मंत्र, औषधि आदि की विशेष जानकार होने से आपने सहस्रों जीवों का कल्याण किया है । और आज भी आप कठोर साधना मे लीन होते हुए स्वपर कल्याण में रत हैं ।

आपके द्वारा लिखित एवं अनुवादित ग्रन्थ सूची—

(१) परम अध्यात्म तरंगिणी (२) सागार धर्मामृत (३) नारी चातुर्य (४) अनगार धर्मामृत (५) महावीर और उनका सन्देश (६) नय विवक्षा (७) पार्श्वनाथ पंचकल्याणक (८) पंचकल्याणक क्यों किया जाता है (९) प्रणामांजलि (१०) दश धर्म (११) प्रतिक्रमण (१२) मेरा चिन्तवन (१३) नैतिक शिक्षाप्रद कहानिया भाग-दस । (१४) प्रमेय कमल मार्त्तण्ड (१५) मोक्ष की अमर बेल रत्नत्रय (१६) राजवार्तिक (१७) नारी का चातुर्य (१८) आचार-सार (१९) लघु प्रबोधिनी कथा (२०) रत्नत्रयचन्द्रिका ।

आप तपस्विनी, स्वाध्यायशीला, व्यवहार कुशल, सौम्याकृति, शत्रुमित्र समभावी हैं। आपने पूरा जीवन संसारी प्राणियों को करुणाबुद्धि पूर्वक सन्मार्ग दिखाने में तथा स्वयं कठोर तपस्या करने में लगाया। आपने सैकड़ों लोगों को ब्रह्मचर्य व्रत एवं प्रतिमा के व्रत देकर उन्हें चारित्र मार्ग में दृढ़ किया। आप शान्त और निर्मल स्वभाव की धर्मपरायण माताजी हैं।



आर्यिका वासुमतीजी



श्री १०५ आर्यिका वासुमतीजी के बचपन का नाम लाडबाई था। आपका जन्म आज से ७५ वर्ष पूर्व जयपुर (राजस्थान) मे हुआ था। आपके पिता का नाम चान्दूलालजी था जो सब्जीका व्यापार किया करते थे। आप खण्डेलवाल जाति के भूषण हैं। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण हुई। आप बड़जात्या गोत्रज है। आपका विवाह श्री चिरंजीलालजी के साथ हुआ था।

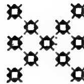
नगर में मुनिश्री १०८ शान्तिसागरजी के आगमन से आपमें वैराग्य वृत्ति जाग उठी। आपने विक्रम सवत् २०११ में आचार्य श्री १०८ वीरसागरजी से खानियाँ में आर्यिका दोक्षा ले ली। आपने खानियाँ, अजमेर, सुजानगढ़, सीकर, दिल्ली, कोटा, उदयपुर, लाडनू इत्यादि स्थानो पर चातुर्मास कर धर्मवृद्धि की। आपने तेल, दही, मीठा आदि त्याग कर रखा है।



आर्यिका शान्तिमतीजी

श्री १०५ आर्यिका शान्तिमतीजी का गृहस्थ अवस्था का नाम कुन्दनबाई था। आपका जन्म आज से लगभग पचपन वर्ष पूर्व नसीराबाद (राजस्थान) मे हुआ था । आपके पिता श्री रोडमलजी थे तथा माताजी बसन्तीबाई थी । आप खण्डेलवाल जाति के भूषण हैं । आपका जन्म गंगवाल परिवार में हुआ था । विवाह बम्ब गोत्रमे हुआ था । आपके परिवार में दो भाई हैं । आपकी लौकिक शिक्षा साधारण हुई । आपके पति हीरा–जवाहरात का व्यावसाय करते हैं ।

श्री १०५ आर्यिका सुपार्श्वमतीजी की सत्प्रेरणा से प्रभावित होकर आत्मकल्याण हेतु जयपुर में क्षुल्लिका दीक्षा ली । बादमें नागौर में श्री १०८ आचार्य वीरसागरजी से आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर ली । आपके चातुर्मास पदमपुरी, सुजानगढ, नागौर, अजमेर आदि स्थानों पर हुए । आपने दूध के अलावा पाँचों रसों का त्याग कर दिया है । आप संयम और विवेक शीला है । देश और समाज को सन्मति के सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती रहें ।



श्री शिवसागराचार्य स्तुतिः

ध्यानैकतानं सुगुणैकधानं ध्वस्ताभिमानंदुरिताभिहानम् ।
मोक्षाभियानं महनीयगानं सूरिं प्रवन्दे शिवसागरं तम् ।।

यो लीन आसीत्सुतपःसमूहे नो दीन आसीद् दुरिताभिहान्याम् ।
यः सागरोऽभूत्सुखशान्तिराशेः सूरिं प्रवन्दे शिवसागरं तम् ।।

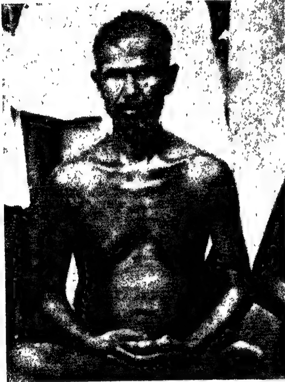
हिसादि पापं प्रथिताभितापं संहत्य दूरं सुकृतैकपूरम् ।
यो वृत्तभार सुदधेऽतिसार सूरिं प्रवन्दे शिवसागरं तम् ।।

येन क्षता मन्मथमानमुद्रा येन क्षताबोधचयातिनिद्रा ।
येन क्षता मोहमहाभितन्द्रा सूरिं प्रवन्दे शिवसागरं तम् ।।

योऽनेकसाधुव्रजपालनाय साध्वीचयस्यापि सुरक्षणाय ।
आसीत्प्रदक्षो विगतारिपक्षः सूरिं प्रवन्दे शिवसागरं तम् ।।



आचार्य शान्तिसागरजी महाराजके द्वितीय
पट्टाचार्य शिष्य
आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज द्वारा
दीक्षित शिष्य वर्ग



मुनि श्री ज्ञानसागरजी
मुनि श्री वृषभसागरजी
मुनि श्री अजितसागरजी
मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी
मुनि श्री सुबुद्धिसागरजी
मुनि श्री भव्यसागरजी
मुनि श्री श्रेयान्ससागरजी
क्षुल्लक श्री योगीन्द्रसागरजी
आर्यिका विशुद्धमतीजी
आर्यिका बुद्धमतीजी
आर्यिका आदिमतीजी
आर्यिका अरहमतीजी
आर्यिका चन्द्रमतीजी
आर्यिका राजुलमतीजी
आर्यिका नेमीमतीजी
आर्यिका भद्रमतीजी

आर्यिका दयामतीजी
आर्यिका कनकमतीजी
आर्यिका जिनमतीजी
आर्यिका संभवमतीजी
आर्यिका सन्मति माताजी
आर्यिका कल्याणमतीजी

आर्यिका विद्यामतीजी
आर्यिका श्रेयासमतीजी
आर्यिका श्रेष्ठमतीजी
आर्यिका सुशीलमतीजी
आर्यिका विनयमतीजी
क्षुल्लिका सुव्रतमतीजी

मुनिश्री ज्ञानसागरजी



राजस्थान प्रदेश में जयपुर के समीप राणोली ग्राम है। वहाँ पर एक खण्डेलवाल जैन कुलोत्पन्न छाबड़ा गोत्री सेठ सुखदेवजी रहते थे। उनके पुत्रका नाम श्री चतुर्भुजजी और स्त्रीका नाम घृतवरीदेवी था। ये दोनों गृहस्थ-धर्म का पालन करते हुए रहते थे। उनके पाँच पुत्र हुए। जिनके नाम इस प्रकार है—१ छगनलाल, २. भूरालाल, ३. गंगाप्रसाद, ४. गौरीलाल और ५. देवीदत्त। इनके पिताजी का वि० स० १९५९ में स्वर्गवास हो गया, तब सबसे बड़े भाई की आयु १२ की थी और सबसे छोटे भाईका जन्म तो पिताजी की मृत्यु के पीछे हुआ था। पिताजी के असमय में स्वर्गवास हो जाने से घर के कारोबार की व्यवस्था बिगड़ गई और लेन-देन का धन्धा बैठ गया। तब बड़े भाई छगनलालजी को आजीविका की खोज मे घर से बाहर निकलना पड़ा और वे घूमते हुए गया पहुचे ओर एक जैन दुकानदार की दुकान पर नौकरी करने लगे। पिताजी की मृत्यु के समय दूसरे भाई और प्रस्तुत ग्रन्थ के कर्ता भूरामलकी आयु केवल १० वर्ष की थी और अपने गाव के स्कूल की प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की थी। आगे की पढाई का साधन न होने से एक वर्ष बाद अपने बड़े भाई के साथ आप भी गया चले गये और किसी जैनी सेठ की दुकान पर काम सीखने लगे।

लगभग एक वर्ष दुकान का काम सीखते हुआ कि उस समय स्याद्वाद महाविद्यालय बनारस के छात्र किसी समारोह मे भाग लेने के लिए गया आये उनको देखकर बालक भूरामल के भाव भी पढने को बनारस जाने के हुए और उन्होने यह बात अपने बड़े भाई से कही। वे घर की परिस्थिति-वश अपने छोटे भाई भूरामल को बनारस भेजने के लिए तैयार नही हो रहे थे, तब आपने पढने के लिए अपनी दृढ़ता और तीव्र भावना प्रकट की और लगभग १५ वर्ष की उम्र मे आप बनारस पढ़ने चले गये।

जब आप स्याद्वाद महाविद्यालय में पढ़ते थे तब वहा पर पं० बंशीधरजी, पं० गोविन्दरायजी, पं० तुलसीरामजी आदि भी पढ़ रहे थे। आप और सब कार्यों से परे रहकर एकाग्र विद्याध्ययन में संलग्न हो गये। जहां आपके सब साथी कलकत्ता आदि की परीक्षाएं देने को महत्व देते थे वहां आपका

विचार था कि परीक्षा देने से वास्तविक योग्यता प्राप्त नही होती वह तो एक बहाना है । वास्तविक योग्यता तो ग्रन्थ को अद्योपान्त अध्ययन करके उसे हृदयगम करने से प्राप्त होती है । अतएव आपने किसी भी परीक्षा को देना उचित नही समझा और रातदिन ग्रन्थों का अध्ययन करने में ही लगे रहते थे । एक ग्रन्थ का अध्ययन समाप्त होते ही तुरन्त उसके आगे के ग्रन्थ का पढना और कण्ठस्थ करना प्रारम्भ कर देते थे, इस प्रकार बहुत ही थोड़े समय मे आपने शास्त्रीय, परीक्षा तक के ग्रन्थों का अध्ययन पूरा कर लिया ।

जब आप बनारस मे पढ रहे थे तब प्रथम तो जैन व्याकरण साहित्य आदि के ग्रन्थ ही प्रकाशित नही हुए थे, दूसरे वे बनारस, कलकत्ता आदि के परीक्षालयों में नहीं रखे हुए थे, इसलिए उस समय विद्यालय के छात्र अधिकतर अजैन व्याकरण और साहित्य के ग्रन्थ ही पढकर परीक्षाओं को उत्तीर्ण किया करते थे । आपको यह देखकर बडा दुःख होता था कि जब जैन आचार्यों ने व्याकरण साहित्य आदि के एक से एक उत्तम ग्रन्थों का निर्माण किया है तब हमारे जैन छात्र उन्हे ही क्यों नही पढ़ते हैं ? पर परीक्षा पास करने का प्रलोभन उन्हे अजैन ग्रन्थों को पढने के लिए प्रेरित करता था तब आपने और आपके सदृश ही विचार रखने वाले कुछ अन्य लोगो ने जैन न्याय और व्याकरण के ग्रन्थ जो कि उस समय तक प्रकाशित हो गये थे काशी विश्वविद्यालय और कलकत्ता के परीक्षालय के पाठ्यक्रम मे रखवाये । पर उस समय तक जैन काव्य और साहित्य के ग्रन्थ एक तो बहुत कम यों ही थे, जो थे भी उनमे से बहुत ही कम प्रकाश मे आये थे । अतः पढते समय ही आपके हृदय मे यह विचार उत्पन्न हुआ कि अध्ययन समाप्ति के अनन्तर मैं इस कमी की पूर्ति करूगा । यहा एक बात उल्लेखनीय है कि आपने बनारस में रहते हुए जैन न्याय, व्याकरण, साहित्य के ही ग्रन्थो का अध्ययन किया । उस समय विद्यालय मे जितने भी विद्वान अध्यापक थे वे सभी ब्राह्मण थे और जैन ग्रन्थो को पढाने में आना कानी करते और पढने वालो को हतोत्साहित भी करते थे किन्तु आपके हृदय मे जैन ग्रन्थो के पढने और उनको प्रकाश मे लाने की प्रबल इच्छा थी । अतएव जैसे भी जिस अध्यापक से सम्भव हुआ आपने जैन ग्रन्थो को ही पढा ।

इस प्रसग मे एक बात और भी उल्लेखनीय है कि जब आप बनारस विद्यालय में पढ रहे थे, तब वहा पं० उमरावसिहजी जो कि पीछे ब्रह्मचर्य प्रतिमा अगीकार कर लेने पर ब्र० ज्ञानानन्दजी के नाम से प्रसिद्ध हुए है, का जैन ग्रन्थो के पठन पाठन के लिए बहुत प्रोत्साहन मिलता रहा । वे स्वय उस समय धर्मशास्त्र का अध्ययन कराते थे । यही कारण है कि पूर्व के प० भूरामलजी और आज के मुनि ज्ञानसागरजी ने अपनी रचनाओ मे उनका गुरुरूप से स्मरण किया है ।

आप अध्ययन समाप्त कर अपने ग्राम राणोली वापिस आ गये । अब आपके सामने कार्य क्षेत्र के चुनाव का प्रश्न आया । उस समय यद्यपि आपके घर की परिस्थिति ठीक नही थी और उस समय

विद्वान विद्यालयों से निकलते ही पाठशालाओं और विद्यालयों मे वैतनिक सेवा स्वीकार कर रहे थे किन्तु आपको यह नही जचा और फलस्वरूप आपने गांव में रहकर दुकानदारी करते हुए स्थानीय जैन बालकों को पढाने का कार्य निःस्वार्थभाव से प्रारम्भ किया और एक बहुत लम्बे समय तक आपने उसे जारी रखा।

जब आप बनारस से पढकर लौटे तभी आपके बडे भाई भी गया से घर आ गये और आप दोनों भाई दुकान खोलकर अपनी आजीविका चलाने लगे और अपने छोटे भाईयों की शिक्षा दीक्षा की देख रेख मे लग गये। इस समय आपकी युवावस्था, विद्वत्ता और गृह सचालन, आजीविकोपार्जन की योग्यता देखकर आपके विवाह के लिए अनेक सम्बन्ध आये और आपके भाईयों और रिश्तेदारों ने शादी कर लेने के लिए बहुत आग्रह किया, पर आप तो अध्ययन काल से ही अपने मन में यह सकल्प कर चुके थे कि आजीवन ब्रह्मचारी रहकर जैन साहित्य निर्माण और उसके प्रचार मे अपना समय व्यतीत करूंगा। इसलिए विवाह करने से आपने एकदम इन्कार कर दिया और दुकान के कार्यो को भी गौण करके उसे बडे और छोटे भाईयों पर ही छोडकर पढ़ाने के अतिरिक्त शेष सर्व समय को साहित्य की साधना में लगाने लगे। फलस्वरूप आपके अनेक सस्कृत और हिन्दी के ग्रन्थों की रचना की तालिका इस प्रकार है।

संस्कृत रचनाऐ :—

१. दयोदय—अहिंसाव्रत धारी की कथा का गद्य-पद्य मे चित्रण किया गया है।

२. भद्रोदय—इसमे असत्य भाषण करने वाले सत्यघोष की कथा पद्योमे दी है।

३. सुदर्शनोदय—इसमें शीलव्रती सुदर्शन सेठ का चरित्र-चित्रण अनेक सस्कृत छंदों मे है।

४. जयोदय—इसमे जयकुमार सुलोचना की कथा महाकाव्य के रूप मे वर्णित है। साथ में स्वोपज्ञ, सस्कृत, टीका तथा हिन्दी अन्वयार्थ भी दिया गया है।

५. वीरोदय—महाकाव्य के रूप मे श्री वीर भगवान् का चरित्र-चित्रण किया गया है।

६ प्रवचनसार—आ० कुन्दकुन्द के प्रवचनसार की गाथाओ का हिन्दी पद्यानुवाद है।

७. समयसार—आ० कुन्दकुन्द के समयसार पर आ० जयसेन की संस्कृत टीका का सर्वप्रथम सरल हिन्दी अनुवाद किया गया है।

८. मुनि-मनोरजंन शतक—इसमे सौ संस्कृत श्लोकों के द्वारा मुनियों का कर्तव्य वर्णित है ।

हिन्दी रचनाऐं—

१. ऋषभावतार—अनेक हिन्दी छन्दों में भ० ऋषभदेव का चरित्र-चित्रण है ।

२. गुणसुन्दर वृत्तान्त—इसमें भ० महावीर के समय मे दीक्षित एक श्रेष्ठी पुत्र का चरित्र है ।

३. भाग्योदय—इसमें धन्य कुमार का चरित्र चित्रण है ।

४. जैनविवाह विधि—सरल रीति से वर्णित है ।

५. सम्यक्त्वसारशतक—हिन्दी के सौ छन्दों में सम्यक्त्वका वर्णन है ।

६. तत्वार्थसूत्र टीका—अनेक उपयोगी चर्चाओं के साथ हिन्दी अनुवाद है ।

७. कर्तव्य पथ प्रदर्शन—इसमे श्रावकों के कर्तव्यों पर प्रकाश डाला गया है ।

८. विवेकोदय—यह आ० कुन्दकुन्द के समयसार गाथाओ का हिन्दी पद्यानुवाद है ।

९. सचित्त विवेचन—इसमे आगम प्रमाणो से सचित्त और अचित्त का विवेचन है ।

१०. देवागम स्तोत्र—यह आ० समतभद्र के स्तोत्र का हिन्दी पद्यानुवाद है ।

११ नियमसार—यह आ० कुन्दकुन्द के नियमसार गाथाओ का पद्यानुवाद है ।

१२ अष्टपाहुड़—यह आ० कुन्दकुन्द के अष्टपाहुड गाथाओ का पद्यानुवाद है ।

१३. मानव-जीवन—मनुष्य जीवन की महत्ता बताकर कर्तव्य पथ पर चलने की प्रेरणा ।

१४. स्वामी कुन्दकुन्द—और सनातन जैन धर्म अनेक प्रमाणो से सत्यार्थ जैन धर्म का निरूपण कुन्दकुन्दाचार्य के ग्रन्थों के आधार पर किया गया है ।

इस प्रकार अध्ययन अध्यापन करते हुए आपके मनमें चारित्र को धारण कर आत्म कल्याण की भावना जागी । फल स्वरूप आपने गृह त्याग कर आचार्य श्री वीरसागरजी की सेवा में प्रवेश किया, कई वर्षों तक क्षुल्लक पद का अभ्यास किया, पश्चात् समस्त परिग्रह का त्याग कर (खानियां) जयपुर सं० २०१४ में श्री आचार्य शिवसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा ग्रहण की । मुनि संघ में आपने उपाध्याय के रूप में मानव जाति का बड़ा कल्याण किया । आपकी समझाने की शैली बड़ी सरल थी । आप साधारण से साधारण व्यक्ति को भी धर्म तत्त्वों को बहुत ही सरल शब्दों में समझा देते थे । मदनगंज-किशनगढ़ में भी आपका चातुर्मास बहुत आनन्द उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ । आप मरण पर्यन्त बराबर निर्दोष मुनिव्रत का पालन करते हुए निरन्तर शास्त्र अध्ययन-मनन और चिन्तन में लगे रहे ।

आपका समाधिमरण नसीराबाद में ज्येष्ठ बदी अमावस सं० २०३० में हुआ, जहां पर जैन समाज ने आपका भव्य स्मारक बनाया है । चिर स्थाई स्मारक तो उनकी उक्त अनुपम रचनाये ही हैं ।



जब आचार्य शान्तिसागरजी महाराज का संघ खुरजा से दिल्ली आया था तब संघ को दिल्ली लाने का श्रेय आपको ही था। उसका कारण आपकी अतुल श्रद्धा और भक्ति थी। संघ दिल्ली में २८ दिन रहा। इस अवधि में आपने अपनी धर्मपत्नी के साथ प्रतिदिन आहार दान का पुण्य सचय किया और इसी समय से आपमें धार्मिक भावना का प्रबलतम भाव उत्पन्न हुआ। आपकी धार्मिक भावना को सफलतम् एवम् उन्नतिकर बनाने का श्रेय क्षुल्लक श्री ज्ञानसागरजी महाराज को था। अब भी आप परम पूज्य क्षुल्लक ज्ञानसागर (मुनि श्री सुधर्मसागरजी) के प्रति अनन्त हार्दिक श्रद्धा रखते हुए उन्हें आदि गुरु एव परम उपकारी मानते हैं।

आपका सराफी का व्यापार अच्छी प्रगति पर रहा। आपने सांसारिक एवम् धार्मिक दोनों क्षेत्रोंमें मान्यताये प्राप्त कीं। आपके द्वारा जो शास्त्र प्रवचन होता था वह हृदयग्राही होता था। लोगों की श्रद्धा आपके प्रति काफी बढ़ गई थी जिससे जैन समाज में आपका पद प्रतिष्ठित व्यक्तियों की श्रेणी में गिना जाता था।

जब हमारे देश का सविधान बनाया जा रहा था और उसमें जैन धर्म का स्थान हिन्दू धर्म के अन्तर्गत समाहृत किया जा रहा था तब आचार्य शान्तिसागरजी महाराज का सकेत पाकर इस सम्बन्ध में अन्य विद्वानों के सहयोग से अनेकों प्रमाण प्रस्तुत कर निश्चित करा दिया कि हिंदू एवं जैन धर्म परस्पर स्वतन्त्र धर्म हैं। यह एक दूसरे के आधीन नही है। फलतः विधान में यह मान्यता स्वीकार की गई। इसका समाचार जब सर्व प्रथम कुछ विद्वानो के साथ आप आचार्यश्री के पास ले गए तो आचार्यश्री ने आपको आशीर्वाद देते हुए अन्न ग्रहण किया था।

इस प्रकार आप समाज के बीच जन-प्रिय हुए, अतः आपको श्री दिगम्बर जैन सिद्धान्त प्रचारिणी समिति का मन्त्री मनोनीत किया गया। इस पद पर आपने और भी अनेको कार्योंका अपनी प्रज्ञा के द्वारा सम्पादन किया। आपका व्यवसाय भी खूब चला तथा पारिवारिक स्थिति सम्पन्न हो गई, लेकिन काललब्धि ने आपके हृदय मे परिवर्तन ला दिया और आपकी सासारिक वैभवो के प्रति उदासीनता बढने लगी। फलतः सन् १६३१ मे चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शान्ति-सागरजी महाराज के समीप बड़ौत में दूसरी प्रतिमा के व्रत धारण कर लिये। घर आकर उदासीन वृत्ति से सयम पूर्वक रहने लगे।

पश्चात् आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज जब ससघ सवाईमाधोपुर पधारे हुये थे तभी आपने आचार्यश्री से पांचवी प्रतिमा के व्रत अङ्गीकार करते हुये ईसरी चातुर्मास के शुभावसर पर दीक्षित न होने तक घी न खाने की प्रतिज्ञा ली और फुलेरा में हुए पंच कल्याणक महोत्सव के

शुभावसर पर आपने आचार्यवर श्री वीरसागरजी महाराज से सातवीं प्रतिमा के व्रत अङ्गीकार कर लिए। इसी बीच अयोध्या में आए धार्मिक संकट को दूर करने में आपने जो विजय पाई वह बहुत सराहनीय है। घटना इस प्रकार है :—

आचार्यवर श्री देशभूषणजी महाराज की सत्प्रेरणा से श्री पारसदासजी आदि दिल्ली वालों की ओर से तीर्थ क्षेत्र अयोध्या मे भगवान ऋषभदेव की ३३ फुट उत्तुङ्ग खड्गासन सुन्दर सगमरमर की मूर्ति २४ अक्टूबर १६५७ को अयोध्या स्टेशन पर आई थी। मूर्ति एक स्पेशल गाड़ी पर रखकर जैक आदि यांत्रिक साधनों द्वारा स्टेशन से एक बगीचे मे लाई जा रही थी। एक मोड पर थोड़ी-सी उतार पड़ने के कारण गाड़ी स्वत: २-३ फीट आगे चल दी। मूर्ति का कन्धा एक मकान के कोने से लग गया जिससे सारा मकान बीच मे दरार खा गया। इस पर अयोध्या के कुछ पण्डो ने मिलकर मूर्ति को तोडने और नग्न मूर्ति अयोध्या मे स्थापित न करने की जिद्द की। इस सङ्कट में दिल्ली वासियों ने मई १६५८ में आपको अयोध्या भेजा। (लेखक भी उस समय अयोध्या में ही अध्ययन करता था।) आप उस समय ब्रह्मचारी ही कहलाते थे। आपने वहाँ के विद्रोहियो को नम्रता एव प्रेम पूर्वक समझाया। अयोध्या के काफी अजैन भाई आपसे प्रभावित हुए। ऐसा समय देखकर आपने अनेको मासाहारियो को मांस तथा मद्य सेवन न करने के नियम लिवाए। इस प्रकार कार्य सम्पन्न कर तथा विद्रोहियों के हृदय में प्रेम की धारा बहाकर आप वापिस दिल्ली लौट आए।

समय बीता और परिणामो मे निर्मलता आई। जब आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज का सघ अजमेर आया तब आप दिल्ली से अजमेर आए और घर पर यह समाचार भेज दिया कि मैने रेल और मोटर का त्याग कर दिया है तथा दीक्षा ले रहा हू। आपके पुत्र सपरिवार आए और बोले पिताजी मैं आपको हवाई जहाज द्वारा घर ले जाऊगा तथा दीक्षा नही लेने दूँगा। धन्य है वह समय जब पुत्रों को मोह और पिता को प्रबल वैराग्य। ऐसे समय मे पिता पुत्र की नेह निवृत्ति का दृश्य। आपने अपने निश्चय को नही बदला तथा कार्तिक सुदी एकादशी सम्वत् २०१६ के दिन आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ले ली।

क्षुल्लक दीक्षा के बाद आपका पहला चातुर्मास सुजानगढ ग्राम मे हुआ। चातुर्मास के समय एक दिन पारणा कर रहे थे तो तीन मक्खियाँ लडती हुई दूध मे गिर पडी और मर गई। जिससे आपको शुद्ध वैराग्य की भावना का उदय हुआ और आपने आचार्य श्री से मुनि दीक्षा की विनय की फलतः आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज ने सुजानगढ़ में अपार जन-समूह के बीच जयध्वनि के साथ कार्तिक शुक्ला त्रयोदशी सम्वत् २०१७ के शुभ दिन आपको दिगम्बरी मुनि दीक्षा दी।

मुनि दीक्षा के बाद आपका प्रथम चातुर्मास सीकर दूसरा लाडनू (राजस्थान) और तीसरा जयपुर खानियाँ में हुआ। आपने जब से यह मुनि पद ग्रहण किया तब से आज तक अनेकों व्यक्तियों के हृदय में सम्यग्दर्शन की भावना को जाग्रत किया। नियम और सप्त व्यसनो का त्याग करते हुये यज्ञोपवीत देकर हजारों को सुपथ पर पहुचाया। सैकडों मासाहारियों को आजीवन मांस, मधु का त्याग कराया और अनेकों से नशीली वस्तुओं के सेवन न करने के व्रत लिवाये। इस प्रकार संघमें विहार कर भगवान महावीर स्वामी के दिव्य संदेशोंको फैलाते हुये मानव आत्माओं के कल्याण के लिये बड़ा महत्वशाली कार्य कर रहे हैं।

आपके श्री युगल चरणो में कोटिशः नमन।



मुनि श्री अजितसागरजी महाराज



विक्रम सम्वत् १६८२ में भोपाल के पास आष्टा नामक कस्बे के समीप प्राकृतिक सुरम्यता से परिपूर्ण भौंरा ग्राम में पद्मावती पुरवाल गोत्रोत्पन्न परम पुण्यशाली श्री जवरचन्द्रजी के घर माता रूपाबाई की कुक्षि से आपका मङ्गल जन्म हुआ था। जन्म के बाद माता पिता ने आपका नाम राजमल रखा।

शील रूपा माँ रूपाबाई सुगृहणी, कार्य कुशल एवं धर्म परायण महिला है। फलतः उनके आदर्शो का असर होनहार सन्तान पर भी पड़ा। आपके पिता श्री स्वभाव से सरल, धार्मिक बुद्धि के व्यक्ति थे। वे वजनकसी का कार्य करते थे। जन्म के समय आपकी आर्थिक स्थिति साधारण थी।

आपसे बड़े तीन भाई श्री केशरीमलजी, श्री मिश्रीलालजी एवं श्री सरदारमलजी हैं, और आजकल घर पर ही अपने उद्योग के साथ परिवार सहित धार्मिक जीवन यापन कर रहे है।

आपकी रुचि प्रारम्भ से ही विरक्ति की ओर थी। बालापन से ही आपका स्वभाव, सरल, मृदु एवम् व्यवहार नम्रता पूर्ण रहा। विद्यार्थी जीवन मे आपकी बुद्धि प्रखर एवम् तीक्ष्ण थी। वस्तु परिज्ञान आपको शीघ्र हो जाता था। आपकी प्रारम्भिक स्कूली शिक्षा कक्षा चार तक ही इन्दौर जिला के 'अजनास' ग्राम में हुई। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा के बाद सम्वत् २००० में आपने आचार्यवर श्री वीरसागरजी महाराज के प्रथम दर्शन किए फलतः आपके हृदय मे परम् कल्याणकारी जैन धर्म के प्रति अनन्य श्रद्धा ने जन्म लिया। १७ वर्ष की अल्प आयु मे ही आचार्य श्री की सत्प्रेरणा से प्रभावित होकर आप संघ में शामिल हो गये और जैनागम का गहन अध्ययन प्रारम्भ कर दिया। जैसे जैसे आपकी निर्मल आत्मा को ज्ञान प्राप्त होता गया वैसी-वैसी आपकी प्रवृत्ति वैराग्य की ओर होने लगी। विक्रम सम्वत् २००२ में ही आपने झालरापाटन (राजस्थान) में आचार्यवर श्री वीर-सागरजी महाराज से सातवी प्रतिमा तक के वृत अंगीकार कर लिए।

इस अवस्था में आकर आपने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत की कठिन प्रतिज्ञा लेकर सासारिक भोग-विलासों को ठुकराते हुये कठोर व्रतों का अभ्यास कर शरीर को दुर्द्धर तपस्या का अभ्यासी बनाया। इस पवित्र ब्रह्मचर्यावस्था में आकर आपने अपने अथक श्रम से जिस आगम का ज्ञान प्राप्त किया उससे आपकी समाज के बीच उचित प्रतिष्ठा हुई।

सफलता पूर्वक अनेक पंच कल्याणक प्रतिष्ठाओ मे व्रत विधान कराने के कारण "प्रतिष्ठाचार्य" आत्म-कल्याण की ओर प्रवृत्त अनेक श्रावक श्राविकाओं को आगम की उच्च शिक्षा देनेके कारण "महापण्डित"—तथा अपनी विद्वत्ता पूर्ण प्रवचन लेखन शैली के कारण "विद्यावारिधि" के पद से समाज ने आपकी साधना को अलकृत किया।

आपमें एक विशिष्ट गुण का प्राधान्य पाया जाना है, वह यह है कि जब भी आप तर्क संगत विद्वत्ता पूर्ण विशेष कल्याण कारक कोई भी कार्य करते तो उसका श्रेय अन्य किसी व्यक्ति विशेष को इगित कर देते, तथा स्वयं नाम प्रतिष्ठा के निर्लोभी बने रहते। कार्य का सम्पादन स्वयं करते और उसकी प्रतिष्ठा, इज्जत के अधिकारी अन्य व्यक्ति होते—यह आपकी व्यामोह विहीनता, महानता, प्रबल सासारिक वैराग्य और क्षणभगुर शरीर के प्रति निर्ममत्व के साथ ही मानव समाज के कल्याण की उत्कृष्ट भावना का प्रतीक था।

यदि आपकी विशिष्ट कार्य सम्पन्नता से प्रभावित होकर किसी व्यक्ति विशेष ने आपके गुणों की गरिमा गाई तो आप उससे प्रसन्न होने के बजाय अप्रसन्न ही हुए। धन्य है आपकी इस महानता को। आपके द्वारा प्रशिक्षित अनेक श्रावक श्राविका अपना आत्म-कल्याण करते हुए क्षुल्लक, क्षुल्लिका व आर्यिकाओं के रूप में धर्म साधन कर आपकी गुण गरिमा का परिचय दे रहे है।

इस प्रकार ज्ञान और चारित्र मे श्रेष्ठता पाजाने पर आपके अन्तर मे वैराग्य की प्रबल ज्योति का उदय हुआ तथा सीकर (राजस्थान) मे अपार जन-समूह के बीच परम पूज्य दिगम्बर जैनाचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से समस्त अतरग और बहिरग परिग्रह का त्याग करके कार्तिक सुदी चतुर्थी सम्वत् २०१८ की शुभतिथि व शुभ नक्षत्रमे आपने दिगम्बर मुनि दीक्षा धारण कर ली। आचार्य श्री ने आपका नाम सस्कार श्री अजितसागर नाम से किया। दीक्षित नाम पूर्व नाम की अपेक्षा यथार्थवादी होता है अर्थात्—"यथा नाम तथा गुण" की युक्ति को चरितार्थ करने वाला ऐसा अजितसागर नाम पूज्य आचार्यवर ने रखा।

नवीन वय, सुगठित सानुपातिक और बलिष्ठ शरीर, सौम्य शान्त मुद्रा, चेहरे पर ब्रह्मचर्य का तेज, ऐसी अवस्था में नग्न मुद्रा धारण कर अपनी विषय वासना को कठोर नियंत्रण में करते हुये समाज के बीच सफल नग्न परीक्षण देना कितना कठिन है? यह एक ऐसी अवस्था होती है जहा पर

शारीरिक मोह छोडते हुये लज्जा और इन्द्रियों पर महान विजय पानी होती है । इन्द्रिय-निग्रह का महान आदर्श उपस्थित करना होता है । इस प्रकार हम देखते हैं कि आप अपने तेजोबल से मुनि धर्म का कठोरता से पालन करते हुये अपनी दिनचर्या का अधिकाश समय जैनागम के अध्ययन अध्यापन में व्यतीत करते हैं ।

आपका सस्कृत ज्ञान परिपक्व एव अनुपम है । आपने निरन्तर कठोर अध्ययन एवम् मनन से जिस ज्ञान का भण्डार अपनी आत्मा मे समाहृत किया उससे अच्छे-अच्छे विद्वान दांतों तले अंगुली दबाकर नत हो जाते हैं । आपने ५ हजार श्लोकों का संग्रह किया है जो शीघ्र ही समाज के सामने आ रहा है ।

आपके अध्ययन की प्रक्रिया को मात्र इस उदाहरण से कह सकते है कि—जैसे एक विद्यार्थी परीक्षा की सफलता के लिए अति निकट परीक्षा अवधि मे तन्मयता और श्रम के साथ अध्ययन करता है उससे कही बहुत तीव्र लगन के साथ महाराज श्री अपने आत्म-कल्याण रूपी परीक्षा की सफलता के लिये अनवरत तैयारी करते रहते है ।

आपने अनेकों ग्रन्थो का प्रकाशन कराया है ।

जब हम आपके जीवन पर दृष्टि डालते है तो यह पाते है कि आपने मात्र १७ वर्ष का समय घर मे व्यतीत किया और फिर आचार्य श्री के सघ मे मिलकर आत्म कल्याण की ओर मुड़ गये । अल्प वय मे इतना त्याग, इतना वैराग्य और ऐसी कठोर ब्रह्मचर्य व्रत की साधना के साथ मुनि धर्म जैसी कठोर चर्या का पालन करना विरले पुरुषार्थी महापुरुषों के लिए ही सभव हो सकता है । आप विशाल संघ के साथ यत्र तत्र सर्वत्र विहार करते रहते हैं ।

अन्तमे ऐसे महान् साधक श्री गुरु के पावन युगल चरणों में उनकी इस उत्कृष्ट महानता के लिये बार बार नमन है ।



मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज



जयपुर प्रान्त के सारसोप ग्राम में चैत्र वदी चौथ सम्वत् १९५८ के दिन मंगल बेला में परम शीलवती माता सुन्दरबाई की कुक्षि से अग्रवाल सिहल गोत्र में आपका जन्म हुआ । आपके पिता श्री छगनलालजी ने आपका जन्म नाम घासीलाल रखा ।

आपके पिताजी ग्राम के प्रमुख प्रतिष्ठित व्यक्ति थे । ग्राम मे इन्ही का शासन था । जब आपका जन्म हुआ था, आपके पिताजी एक बडे जमीदार थे । आप अपने माता पिता के प्रथम पुत्र होने के कारण अत्यन्त प्रिय व लाडले थे । जन्म के समय बड़ा उत्सव मनाया गया था । आपके पिताजी तीन भाई थे ।

आपसे छोटे दो भाई और हुए । बडे श्री रामनिवासजी है । इन्होने शादी कराने का विचार नही किया । आजकल घर पर ही व्यापार करते हुये श्रावको के कर्त्तव्यो का पालन कर जीवनयापन कर रहे हैं । छोटे भाई श्री राजूलालजी थे । माता पिता को दो सन्ताने प्रायः विशेष लाडली होती हैं । प्रथम और अन्त की सन्तान । अतः आपके छोटे भाई श्री राजूलालजी विशेष प्रिय व लाडले होने के साथ ही उदार प्रकृति, सन्तोषी एव कार्य कुशल युवक थे । शादी के बाद उनके एक पुत्र श्री भैरवलालजी हुए इसके पश्चात् असमय ही में उनका देहावसान हो गया ।

विक्रम सम्वत् १९७१ में जबकि आपकी उम्र मात्र १३ वर्ष की थी, पिताजी ने आपके विवाह का निश्चय किया, एव ग्राम बेंड के सेठ रामनाथजी की सुपुत्री श्रीमती झारसीदेवी के साथ आपका विवाह कर दिया । बेड ग्राम एक अच्छा कस्बा है जहां पर जैनियों की अच्छी जन-संख्या के साथ ही सुन्दर जैन मन्दिर है ।

शादी के पश्चात् आपके तीन पुत्र हुए । अन्तिम पुत्र का जन्म विक्रम सम्वत् १९८६ मे शादी के १५ वें वर्ष बाद हुआ था । प्रथम दो पुत्रो की तो बाल्यावस्था ही मे मृत्यु हो चुकी थी । तृतीय पुत्र श्री रामपालजी के जन्म के ६ मास बाद ही आपकी धर्म पत्नी का साधारण सी बीमारी में धर्म-ध्यान पूर्वक देहावसान हो गया । पुत्र रामपाल का लालन-पालन आपकी माताजी ने ही किया । आजकल श्री रामपालजी लेन-देन एवं कपड़ का ही व्यवसाय करते है । व्यवहार कुशल, योग्य एवं उदार होने के कारण ग्राम मे आपकी प्रतिष्ठा है ।

श्री रामपालजी की प्रथम पत्नी का शादी के कुछ वर्षों बाद ही देहावसान हो जाने से दूसरी शादी कर दी गई । अपने गृहस्थी के कर्त्तव्यों के साथ ही भाई रामपालजी धार्मिक कर्त्तव्यों का भी पूर्णरूपेण पालन करते हुये सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे है ।

घासीलालजी की प्रारम्भिक स्कूली शिक्षा बिल्कुल भी नही हुई, घर पर ही एक ब्राह्मण अध्यापक से आपने मात्र बारहखड़ी की शिक्षा प्राप्त की थी । अल्प शिक्षित होने पर भी अपना उद्योग सफलता पूर्वक करते थे ।

जब आप मात्र १२ वर्ष की अवस्था में थे आपके पिताजी म्यादी बुखार से पीड़ित होने के कारण असमय ही में सम्वत् १९७० के बैसाख महीने मे नश्वर शरीर से मोह छोड हमेशा के लिये ससार से विदा हो गए ।

पिताजी की मृत्यु के बाद अपने भाई बन्धुओ, परिजनों एवं विशेषकर श्री चिरजीलालजी दरोगा का शुभ निमित्त पाकर आप मे जैन धर्म के प्रति विशेष आस्था का उदय हुआ । ठीक भी है जब किसी जीवात्मा का कल्याण होना होता है तब वह किसी भी स्थिति मे हो ज्ञानी या अज्ञानी, बाल या वृद्ध उसकी परिणति काल-लब्धि द्वारा उसी प्रकार कल्याण की ओर प्रवृत्त हो जाती है । इस विषय मे उदाहरण प्रायः सबके सुनने व देखने में आते हैं । ठीक यही स्थिति आपकी भी हुई । सम्वत् १९८० मे जब आपकी उम्र लगभग २२ वर्ष की होने जा रही थी आपने जीवन पर्यन्त रात्रि भोजन, बिना छना हुआ जल का त्याग करते हुए, दनिक जिनेन्द्र दर्शन, पूजन, प्रक्षाल आदि करने के नियम धारण कर लिये ।

समय का चक्र बदला और सम्वत् २००० में एक साधारण सी बीमारी में जिनेन्द्र प्रभु की भक्ति करते हुये आपकी माताजी का देहावसान हो गया । माता की मृत्यु हो जाने से आपके अन्तर में संसार की नश्वरता का नग्न चित्र उपस्थित हुआ और आपके हृदय में वैराग्य ने प्रवेश किया तथा दिन प्रतिदिन अग्नि शिखा की तरह वैराग्य भावना का उदय होता गया ।

विक्रम सम्वत् २०१० में परम पूज्य आचार्यवर श्री वीरसागरजी महाराज का सघ जयपुर खानियाँ में आया हुआ था । आप संघ के दर्शनार्थ गए, एव प्रथम बार मुनियों को आहार देने का सौभाग्य प्राप्त कर परम पूज्य मुनि श्री सन्मतिसागरजी महाराज की सत्प्रेरणा से आपने द्वितीय प्रतिमा के व्रत अगीकार कर लिये, तथा घर चले आए । इतने पर भी आपको संतोष नही हुआ, वैराग्य भावना दिन प्रति दिन बढती ही गई । फलतः अपना सारा कारोबार अपने पुत्र को देकर व पुत्र मित्र परिजनों के साथ ग्रह सम्पदा का परित्याग कर, आचार्य शिवसागरजी महाराज का संघ सीकर (राजस्थान) में आया हुआ था तब, आपने पौष बदी एकम सम्वत् २०१७ की शुभ घड़ी में

आचार्यश्री से क्षुल्लक दीक्षा धारण कर ली। आचार्यश्री ने आपका दीक्षित नाम सुपार्श्वसागर रखा।

क्षुल्लक अवस्था में आकर आपने जैनागम का ज्ञान पाते हुये धर्म का निर्दोष आचरण कर कठोर व्रतों का अभ्यास किया तथा अपने शरीर को दुर्द्धर तपस्या का अभ्यासी बनाया।

क्षुल्लक अवस्था में जब आपका चातुर्मास सम्वत् २०१६ मे लाड़नू (राजस्थान) मे हो रहा था, आपने ३० दिन के कठोर उपवास किए थे। इस अवधि में ४ दिन मात्र दूध लिया था। इसी प्रकार जयपुर खानिया में भी चातुर्मास के शुभावसर पर सम्वत् २०२० में ३२ दिन का उपवास करते हुए चार दिन प्रासुक जल लेकर अपनी तप साधना का उत्तम परिचय दिया। उपवास के बाद पारणा श्री हरिश्चन्द्रजी टकसाली की सप्तम प्रतिमा धारणी माताजी श्री रामदेई के यहाँ हुई थी। उस समय जयपुर के २००० नर-नारियों का अपार जन-समूह आहार दान का दृश्य देखने के लिए उमड़ पडा था।

क्षुल्लक अवस्था मे आपकी इस तपस्या एवं कठिन साधना के अभ्यास को देखकर महामुनि श्री वृषभसागरजी महाराज (आ० श्री शिवसागरजी सघस्थ) ने ससार को क्षणभंगुर असारता को दिखाते हुए आत्म-कल्याण के मार्ग पर चलने का उत्तम पथ दर्शाते हुए मुनि दीक्षा लेने की प्रेरणा दी। मुनिश्री की इस प्रेरणा से प्रेरित होकर आपने कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी विक्रम सम्वत् २०२० में जयपुर खानिया में चातुर्मास के शुभावसर पर पन्द्रह हजार से अधिक जन-समूह के बीच आचार्यवर परम पूज्य श्री शिवसागरजी महाराज से समस्त अन्तरङ्ग बहिरङ्ग परिग्रह का त्याग करके आत्म शान्ति तथा विशुद्धता के लिये दिगम्बर मुनि का जीवन अंगीकार कर लिया।

इस प्रकार कठिन साधना मे निरत दुर्द्धर तप करते हुए संघ सहित विहार कर बुन्देलखण्ड मे प्रविष्ट हुए एवं मुनि दीक्षा के बाद प्रथम चातुर्मास अतिशय क्षेत्र पपौराजी में हुआ।

मुनि अवस्था मे अतिशय क्षेत्र पपौराजी मे भी पूरे भाद्र मास मे ३२ दिवस का कठोर उपवासों का व्रत निर्विघ्नता से पूरा कर आपने अपनी तप साधना का परिचय दिया। पारणा के समय ७-८ हजार जन-समूह आहार दान के दृश्य को देखने के लिए आकाश मे आच्छादित मेघो की भांति पपौरा प्रांगण मे फैला हुआ था। पारणा श्रीमान् गोविन्ददासजी कापड़िया खिरिया वालों के यहाँ हुई थी।

दिल्ली में ६१ दिनो का उपवास किया गया मात्र ५-६ दिनों बाद दूध एवं पानी लेते थे।

इस प्रकार की कठोर तप साधना एवं उपवास अवधि में आपका दैनिक कार्यक्रम उसी प्रकार रहता था जैसा कि पूर्व में होता था। प्रतिदिन स्वाध्याय शास्त्र प्रवचन के साथ ही आप अपने

नैमित्तिक कर्तव्यों को दृढ़ता पूर्वक करते थे । शारीरिक शिथिलता लेशमात्र भी नहीं पाई जाती थी, मात्र ४ घण्टे रात्रि के अन्तिम प्रहर में जिनेन्द्र स्मरण करते हुये आपका शयन होता था । आपकी इस तप साधना को देखकर हजारो अजैन भी धन्य-धन्य करते हुये नत हो जाते थे ।

आप आचार्यवर श्री शिवसागरजी महाराज के परम विनयी शिष्य हैं । आपका दैनिक कार्य-क्रम का अधिकांश समय जैनागम के अध्ययन एवं लगन में ही व्यतीत होता है । आप यथार्थ में मूक साधक है ।

आचार्य धर्म सागरजी के सघ सान्निध्य मे मुजफ्फरनगर (U. P.) में आपने सल्लेखना धारण की तथा ८ माह तक दूध, छाछ, पानी लिया अंत में वह भी त्यागकर ५७ साधुओं के मध्य में आपने समाधि मरण किया बहलना (मुजफ्फरनगर में) आपकी विशाल चरण छतरियों का निर्माण हुवा है । धन्य है आपका जीवन ।

धन्य है आपकी इस वैराग्यमयी भावना को । आप इस भौतिक शरीर से ममता को अनुपयोगी वस्तु की भाति छोड़कर आत्म-कल्याण मे अग्रसर है । आपके पावन चरणों मे कोटिशः नमन है ।



मुनिश्री सुबुद्धिसागरजी महाराज



परम पूज्य १०८ मुनिश्री सुबुद्धिसागरजी महाराज का जन्म राजस्थान की पवित्र भूमि प्रतापगढ नगर के निवासी संघ शिरोमणि गुरुभक्त सेठ श्री पूनमचन्दजी घासीलालजी विशा हूमड की धर्मपत्नी श्री नानीबाई की कुक्षि से सवत् १९५७ में हुआ। जन्मनाम श्री मोतीलालजी रक्खा गया आपके तीन बडे भ्राता थे सबसे बडे अमृतलालजी जो कि १८ वर्ष की उम्र मे ही दिवगत हो चुके तथा सेठ सा० गेंदमलजी एवं दाडमचन्दजी व बहन श्री रूपाबाईजी थे सबसे छोटे मोतीलालजी दूज के चन्द्रमा के समान वृद्धि करते पाच वर्ष के हुवे तभी पिता श्री भारत की महानगरी बम्बई में व्योपार निमित्त सपरिवार चले गये वहा पर क्रम-क्रम से व्योपार करते हुये भाग्योदय हुवा सो बम्बई के जौहरी बाजार में आपका नाम प्रसिद्ध जौहरियों में गिना जाने लगा। अरब देशों मे जाकर मोतियों की खरीद करने आदि से करोडों की सम्पत्ति प्राप्त करली आपका पूरा परिवार धर्मात्मा था। आपके पिता श्री एव सभी के अतरग मे एक उत्कृष्ट भावना जाग्रत हुई कि प० पू० चारित्र चक्रवर्ती १०८ आचार्य श्री शातिसागरजी महाराज के साथ सघ सहित तीर्थराज सम्मेदशिखरजी की यात्रा करना; आचार्य श्री का संघ दक्षिण प्रात में विराजमान था वहा पहुंचे महाराज श्री से निवेदन किया और विशेष आग्रह करने पर स्वीकृति प्राप्त हो गई। बडे भाई साहब गेंदमलजी की उम्र करीब पेंतीस वर्ष एवं श्री मोतीलालजी की उम्र २५ वर्ष के करीब थी। पिताजी मौजूद थे सभी परिवार तन मन धन से जुट गया बड़ी तैयारी के साथ, संघ का विहार दक्षिण भारत से कराया और उत्तर भारत के गाव-गाव नगर-नगर में विहार कराते हुवे चले, अनेक त्यागी एव आगे अनेक श्रावक श्राविका ये साथ चलते रहे, संघ बढता रहा, सभी भाई स्वयं आचार्य श्री के साथ साथ चलते थे, कमडल उठाते, साधुओ की खूब वैयावृत्ति करते एवं आहार दान आदि देकर महान हर्ष एवं उदारतापूर्वक करीब एक वर्ष तक अपने मकान पर ताले बन्द रहे पीछे की तरफ देखा ही नहीं। धन्य है ऐसे दाता और पात्र। लाखों का खर्च हुवा पूरा परिवार संघ की चर्या मे रत था। साथ ही प्रतापगढ़ के श्री शातिनाथ मंदिर का जीर्णोद्धार एवम् पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करायी, जब संघ सहित तीर्थराज शिखरजी पहुचे वहा पर पचकल्याणक प्रतिष्ठा कराई और बम्बई खास में कालबादेवी रोड पर

स्वयम् की बनी हुई बिल्डिंग को गिराकर उस स्थान पर श्री पार्श्वनाथ दि० जैन विशाल मन्दिर का निर्माण करवाया जो करोडो की लागत से तैयार हुवा और वहा भी पचकल्याणक हुवा इस प्रकार लाखों करोडों का दान देकर इस युग मे महान कार्य किया है इसके अलावा भी परम पू० १०८ समाधि सम्राट आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज के सघ में हमेशा जाते रहते और आहार-दान आदि देकर समय समय पर पूरी व्यवस्था करते थे ।

सं० २०२४ के साल मे परम पू० १०८ आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज का चातुर्मास उदयपुर (राज०) था उस समय आप श्री सेठ मोतीलालजी जौहरी दर्शनार्थ पधारे आचार्य श्री की प्रेरणा मिली तत्काल वैराग्य उमड आया और आचार्यश्री से दीक्षा के लिये निवेदन किया और अच्छा मुहूर्त देखकर बहुत बडी धर्म प्रभावना के साथ मिती भाद्रपद शुक्ला १५ के दिन क्षुल्लक दीक्षा प्रदान कर दी आपकी धर्मपत्नि का नाम हुलासी बाई था जिनका दीक्षा के चार वर्ष पूर्व ही स्वर्गवास हो गया था आपके पीछे तीन पुत्र पाँच पुत्री थे । बडे श्री राजमलजी जौहरी श्री सन्मतिकुमार, श्री अशोककुमार । इसप्रकार करोडों की सम्पत्ति एवं पूरा हरा भरा सम्पन्न परिवार भारी वैभव को ठुकराकर साधु बन गये । चातुर्मास के बाद संघ का उदयपुर से विहार होकर करीब ६ महीने में सलूम्बर पहुंचा और वहा पर आपने मुनि दीक्षा ग्रहण कर ली और आप मुनि श्री १०८ सुबुद्धि-सागरजी के नाम से प्रसिद्ध हुवे और चारित्र शुद्धि आदि और भी अनेक व्रतो को करते हुवे कठिन व्रत उपवास करते रहे है इस वक्त आपकी उम्र ८३ वर्ष के करीब है और कई वर्षों मे आप परम पू० १०८ अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी मुनि अजितसागरजी के साथ रहकर निरन्तर ध्यान अध्ययन करते है गत वर्ष स० २०३६ के सलूम्बर चातुर्मास में आहार में केवल ५ वस्तु रखकर बाकी सभी प्रकार की वस्तुओं का आजीवन त्याग कर दिया है १. गेहू, २. चावल, ३. दूध, ४ मट्ठा, ५. केला इस वृद्ध अवस्था में इस प्रकार का त्याग करते हुवे चातुर्मास में अभी भी एकातर आहार में उठते है । इस प्रकार केवल समाधि का लक्ष बना हुवा है । आपके बडे भाई श्रीमान सेठ सा० गेंदमलजी ने भी परम पू० १०८ आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से नीरा (महाराष्ट्र) चातुर्मास के समय क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली उसके बाद कुछ समय गजपथा क्षेत्र पर रहकर धर्म साधना करते थे और जब अतिम समय निकट आया उनके बम्बई आने के भाव हुवे और अपने निजी बनाये हुवे श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मदिर कालबादेवी रोड पर आप पधारे । एक दिन सुबह उनकी तबियत कुछ विशेष खराब हुई और उसी समय अकस्मात् जीवन में सचित किये हुए महान पुण्य के उदय से परम पू० १०८ आचार्य श्री सुमतिसागरजी का संघ सहित दर्शनार्थ वही आना हुवा । उनसे उसी वक्त आपने मुनि दीक्षा ग्रहण कर ली और एक घन्टे बाद ही महामंत्र णमोकार मंत्र का जाप्य

करते हुवे इस पर्याय को छोड़कर स्वर्गवासी बन गये । वास्तव में आपने व आपके पूरे परिवार ने धर्म क्षेत्र में जो कार्य किया है अनुपम है साथ ही अनुकरणीय भी है ।



मुनिश्री भव्यसागरजी

मुनि श्री १०८ भव्यसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम लादूलालजी था । आपका जन्म जेठ सुदी तीज, विक्रम संवत् १९७९ नैनवा मे हुआ था । आपके पिता श्री मिश्रीमलजी थे जो कपड़े का व्यापार व नौकरी किया करते थे । आपको माता श्री बरजाबाई थी । आप खंडेलवाल जाति के भूषण हैं व बैद गोत्रज है । आपकी धार्मिक शिक्षा द्रव्य सग्रह व रत्नकरंडश्रावकाचार तक हुई । आपका विवाह भी हुआ । परिवार में आपके चार भाई व तीन बहिने है ।

स्वाध्याय एवं चन्द्रसागरजी की प्रेरणा मे आपमे वैराग्य भावना जाग्रत हुई । जयपुर खानियांजी में आपने ऐलक दीक्षा ले ली । कार्तिक सुदी तेरस विक्रम संवत् २०१७ में आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी से सुजानगढ में मुनि दीक्षा ले ली । आपने अजमेर, सुजानगढ, खानियां, सीकर, लाडनूं, बूंदी आदि स्थानो पर चातुर्मास कर धर्मवृद्धि की ।

आपने चारो रसों का त्याग तथा गेहू, चना, बाजरा, मटर आदि का त्याग किया है ।



परम पू० १०८ श्री श्रेयान्ससागरजी महाराज



ये पृथ्वी रत्नो को उत्पन्न करती है इसलिये इसको रत्नगर्भा कहते है । उसी प्रकार जगत् उद्धारक, तरण-तारण पुत्रों को जन्म देने से माता को भी जगन्माता कहते हैं । ऐसे ही एक महान जगन्माता की कूख से महाराष्ट्र प्रान्त औरंगाबाद जिला के अपने ननिहाल वीरगाव मे ६ जनवरी ई० सन् १९१९ तदनुसार शक सवत् १८४० पौष सुदी ४ चंद्रवार की अरुणसंध्या में देदीप्यमान बालक का जन्म हुआ ।

जो अपने त्याग, तपस्या से भारत भूमि में प्रसिद्ध है । जिनको इस भारत भूमि का बच्चा बच्चा जानता है । जिसमे कठोर तपस्वी, महान् विद्वान्, आचार्यकल्प, महा-मुनिराज प० पू० स्व० १०८ श्री चन्द्रसागरजी जैसे तपः पूत साधुरत्न ने जन्म लिया । इसी प्रकार स्व० पू० आ० १०८ श्री वीरसागरजी महाराज जैसे श्रेष्ठ रत्न से जो जाति पावन बनी है । ऐसे महान कुल और महान जाति में इस पुण्यात्मा बालक का जन्म हुआ । जिनका शुभनाम फूलचन्दजी रक्खा गया ।

स्व० प० पू० १०८ श्री चन्द्रसागरजी महाराज आपके बाबाजी; तथा स्व० आ० १०८ श्री वीरसागरजी महाराज आपके गृहस्थावस्था के नानाजी हैं । आपके पिताजी का शुभ नाम श्रीमान् सेठ लालचन्दजी और माताजी का नाम कुन्दनबाई है । जो आज आर्यिका १०५ श्री अरहमती नाम से विद्यमान हैं । आपके पिताजी भी व्रती थे ।

सभी मिलके आपके २० भाई बहन थे । लेकिन दुर्भाग्यवश आज ७ भाई १ बहन विद्यमान हैं । इनमे से कोई डॉक्टर, कोई इंजिनियर, कोई व्यापारी सभी अपने अपने कार्य में तत्पर हैं । रेल-पटरी पर दौड़ मे सबसे आगे रहना आपका बचपन का शौक था । आपने पूना में एस० पी० कॉलेज से इन्टर आर्ट परीक्षा पास की ।

सन १९३८ में श्री गोंदा निवासी श्रीमान सेठ दुलीचन्दजी, माणिकचन्दजी बडजात्या की सुपुत्री सौ० (श्रीमती) लीलाबाई जी के साथ आपका विवाह हुआ । आपके शरद, विकास ये दो सुपुत्र

और क्षमा, शीला नामक दो सुपुत्रियाँ है। गृहस्थावस्था मे आपने परम्परागत आढत, तम्बाखू व्यापारादि के द्वारा न्यायपूर्वक धनोपार्जन किया। फलतः आप श्रीरामपुर नगर के सेठजी कहलाते थे। "पहाडेदादा" नाम से भी आप विख्यात थे। दान देना, सहायता करना, परोपकार करना इन बातों में आपकी शुरू से ही रुचि थी।

भरी पूरी जवानी, भरे पूरे परिवार के बीच विषय भोग के लुभावने साधनों के सुलभ होते हुए भी संसार रूपी कीचड से निकल कर आत्मकल्याण की तरफ आपका मन आकर्षित होने लगा। धार्मिक संस्कार सपन्न पत्नी की शुभ प्रेरणा से आपने स्व० प० पू० १०८ श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज के पास तम्बाखू सेवन त्याग, रात्रि भोजन त्याग ले लिये। खानिया में स्व० आ० प० पू० १०८ श्री वीरसागरजी महाराज से प्रतिदिन पचामृताभिषेक, पूजन करने का नियम लिया। तदुपरान्त पू० १०८ श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज से शूद्रजल त्याग, द्वितीय प्रतिमाव्रत ग्रहण किये। श्रीसिद्धक्षेत्र मांगीतु गीजी के पावन पहाड पर अखड ब्रह्मचर्यव्रत धारण किया। पू० सुपार्श्वसागरजी महाराज के सान्निध्य मे सप्तमप्रतिमाव्रत ग्रहण किये।

भर जवानी अवस्था, इन्द्रिय विषय के सुखोपभोगो से युक्त सपन्नावस्था, पुत्र-पुत्रियाँ एवं अन्य विशाल परिवार के रहते हुए भी उन सभी का निःसकोच परित्याग कर असिधारा समान कठोर जैनेश्वरी दीक्षा धारण करने के आपके उत्कृष्ट भाव हुए।

सन् १९६५ श्री अतिशय क्षेत्र महावीरजी शातिवीर नगर के पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के पावन अवसर पर करीब ४० हजार जनसमुदाय के बीच स्व० आ० प० पू० १०८ श्री शिवसागरजी महाराज के करकमलो से आप दोनों पति-पत्नी की दीक्षा ग्रहण विधि बडे ठाट से हुई। आप दोनों ने दीक्षा धारण कर एक महान आदर्श जैन समाज में उपस्थित किया।

आपके इस आदर्श विरक्त जीवन का प्रमुख बीज आपके व्रती माता-पिता के धर्म सस्कार ही है। आपके दीक्षा के पूर्व ही २ साल आपकी माता श्री कुन्दनबाईजी ने स्व० पू० १०८ श्री सुपार्श्व-सागरजी महाराज से क्षुल्लिका व्रत ग्रहण किये थे। आपके दीक्षा के समय क्षुल्लिका माताजी ने भी पू० आ० १०८ श्री शिवसागरजी से आर्यिका व्रत ग्रहण किये। आपके गुरुदेव ने आपको श्री श्रेयांस-सागरजी नाम से, पत्नी को श्री श्रेयासमतीजी नाम से, माताजी को श्री अर्हमती शुभ नाम से विभूषित किया।

दीक्षा लेने के बाद आपने सबसे प्रथम आत्मसाधना की ओर ध्यान दिया। अभीक्ष्णज्ञानोप-योगद्वारा सम्यग्ज्ञान की साधना की। न्याय, धर्म, व्याकरण, सिद्धान्तशास्त्रों का सूक्ष्म अध्ययन किया। जिनके फलस्वरूप ज्ञान विकास के साथ साथ आपका चारित्र उज्ज्वल हुआ।

तपश्चरण की गंभीरता से आपका तेजोदीप्त मुख मडल प्रत्येक दर्शनार्थी को विनयावनत बनाता है। कठिन से कठिन किसी भी विषय को सरलता से समझाने की आपकी प्रवचन शैली से श्रोतागण सुनकर मंत्र मुग्ध हो जाते हैं।

स्वय मोक्षमार्ग पर चलते हुए साथ साथ भव्य जीवों को मोक्षमार्ग में प्रेरित करके उनका उद्धार करने में आप निरन्तर लगे रहते हैं। जिसके फलस्वरूप हर गाव मे अनेकों नर-नारी, बच्चा-बच्ची हर तरह के व्रतोपवासादि ग्रहण करते है।

सन् १९७१ में आपके उपस्थिति मे जयसिंगपूर मे इन्द्रध्वज विधान संपन्न हुआ। उसी समय ऐल्लक, क्षुल्लकादि त्यागियो का विशाल सम्मेलन आयोजित किया गया। सन् १९७२ चौमासा के बीच बारामती मे संघस्थ ब्रह्मचारिणी वसंतोबाई हूतनौर वालों की आर्यिका दीक्षा तथा नवयुवक श्रीमधर गाधी फलटण वालो की क्षुल्लक दीक्षा; सन् १९७३ फलटण चौमासा के बीच ब्र० श्री धूलिचन्दजी पारसोडा वालो की मुनि दीक्षा, श्री ब्र० रतनबाईजी मेहता फलटण वालों की क्षुल्लिका दीक्षा आदि दीक्षाएँ आपके करकमलों से हुई है। जो सांप्रत क्रम से आर्यिका १०५ श्री सुगुणमतीजी, क्षु० १०५ श्रीसुभद्रसागरजी, मुनि १०८ श्री धर्मेन्द्रसागरजी, क्षु० १०५ श्री श्रद्धामतीजी नाम से प्रख्यात हैं। सन् १९७४ अकलूज नगरी में आपके उपस्थिति में विद्वत् सम्मेलन तथा अखिल भारतीय शास्त्री परिषद अधिवेशन सपन्न हुए। जिसमें एकान्त पक्षीय धर्म विरुद्ध सोनगढ़ के मन्तव्यों पर प्रकाश डाला गया। तथा विद्वानों को जैन समाज के उत्थान प्रति जागरूक किया गया।

आपके मगलमय उपदेश की प्रेरणा से औरंगाबाद दि० जैन मंदिर की नव निर्माण योजना; वैजापूर के समवसरण तुल्य विशाल शिखरबंद मंदिर योजना; पारसोडा, लासूर, उठडादि गांवो में मंदिर निर्माण; तथा और भी जगह चैत्य चैत्यालयों का निर्माण तथा जीर्णोद्धार हुआ है। अभी वर्तमान में श्री सिद्धक्षेत्र मांगीतु गीजी के मदिर जीर्णोद्धार और नव मंदिर निर्माण का महान कार्य होने जा रहा है। ये सभी कार्य आपकी प्रेरणा के ही उज्ज्वल फल है।

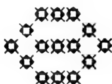
मुनि बनने के बाद आ० श्री १०८ शिवसागरजी महाराज के सान्निध्य में ज्ञान, ध्यान, तपोरत रहते हुए आपने महावीरजी, कोटा, उदयपुर प्रतापगढ में चातुर्मास किये। गुरुदेव के स्वर्गारोहणोपरान्त संघ से पृथक् होकर धर्मप्रचार करते हुए आपके क्रमश किशनगढ, औरगाबाद, बाहुबली (कुम्भोज), बारामती, फलटण, श्रीरामपूर, नान्दगांव, इन्दौर, अजमेर, ईसरी, सुजानगढ में चातुर्मास संपन्न हुए।

आपने तीर्थराज सम्मेदशिखर जी की यात्रा की जो ब्र० धर्मचन्द शास्त्री ने कराई। ब्र० ऐराजी, ब्र० सुधर्मा जी, ब्र० श्री सुलोचना जी आदि साथ में थे।

वर्तमान में आप मांगीतुंगी का उद्धार कर रहे हैं। आपने इस क्षेत्र के लिए १ करोड़ का योगदान दिलाया है।

धन्य है वो धरा, धन्य है वो माता !!! धन्य है वो पिता, धन्य है वो कुल, धन्य है वो जाति जिन्होंने ऐसे तेजस्वी रत्नों को प्रसूत कर धर्मध्वजा फहराई है। ऐसे महान् सन्त के पुनीत चरणों में मेरा शत शत वंदन हो।

धन्य है वो माता, धन्य है वो पिता।
जिनके पावन दर्शन मे नश जावे मिथ्यातम का माथा ।।



क्षुल्लक योगीन्द्रसागरजी

क्षुल्लक श्री १०५ योगीन्द्रसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम हेमचन्द्रजी था। आपका जन्म आज से लगभग ६५ वर्ष पूर्व राठोड़ा (उदयपुर) राजस्थान मे हुआ था। आपके पिता श्री पाढ़ाचन्द्रजी थे। जो खेती एव व्यापार करते थे। आपकी माताजी का नाम माणिकबाई था। आप नरसिंहपुरा जाति के भूषण है। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। विवाह भी हुआ। परिवार मे आपके तीन भाई, एक बहिन, चार पुत्र एवं चार पुत्रिया हैं।

आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी की सत्सगति के कारण आपमें वैराग्य भावना जागृत हुई। अतः विक्रम संवत् २०२४ मे उदयपुर में आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी महाराज से आपने क्षुल्लक दीक्षा धारण कर ली। आपने प्रतापगढ़ आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म की आशातीत वृद्धि की।



विदुषीरत्न आर्यिका १०५ विशुद्धमती माताजी



गृहस्थाश्रम का नाम— श्री सुमित्रा बाई।

जन्म स्थान— रीठी, जि० जबलपुर (म० प्र०)।

पिता— श्रीमान् सि० लक्ष्मणलालजी

माता— सौ० मथुराबाई।

भाई— श्री नीरजजी जैन एम० ए० और श्री निर्मल-कुमारजी जैन मु० सतना (म० प्र०)।

जाति— गोलापूर्व।

जन्म तिथि— सं० १९८६ चैत्र शुक्ला तृतीया शुक्रवार दिनांक १२-४-१९२८ ई०।

लौकिक शिक्षण— १ शिक्षकीय ट्रेनिंग (दो वर्षीय) २. साहित्य रत्न एवं विद्यालंकार।

धार्मिक शिक्षण— शास्त्री (धर्म विषय में)।

धार्मिक शिक्षण के गुरु— परम माननीय विद्वद्-शिरोमणि पं० डा० पन्नालालजी साहित्याचार्य, सागर (म० प्र०)।

कार्यकाल— श्री दि० जैन महिलाश्रम (विधवाश्रम) का सुचारु-रीत्या संचालन करते हुए प्रधानाध्यापिका पद पर करीब १२ वर्ष पर्यन्त कार्य किया एवं अपने सद् प्रयत्नों से संस्था में १००८ श्री पार्श्व-नाथ चैत्यालय की स्थापना कराई।

वैराग्य का कारण— परम पू० प० श्रद्धेय आचार्य १०८ श्री धर्मसागर महाराजजी के सन् १९६२ ई० सागर (म० प्र०) चातुर्मास में पू० १०८ श्री धर्मसागर महाराजजी की परम निरपेक्ष वृत्ति और परम शान्तता का आकर्षण एवं संघस्थ प० पू० प्रवर वक्ता १०८ श्री सन्मतिसागरजी महाराज के मार्मिक सम्बोधन।

आर्यिका दीक्षागुरु—	परम पू० कर्मठ तपस्वी अध्यात्मवेत्ता, चारित्र शिरोमणि, दिगम्बराचार्य १०८ श्री शिवसागरजी महाराज ।
शिक्षा गुरु—	परम पू० सिद्धान्तवेत्ता आचार्य कल्प १०८ श्री श्रुतसागरजी महाराज ।
विद्या गुरु—	परम पू० अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी उपाध्याय १०८ श्री अजितसागरजी महाराज ।
दीक्षा स्थान—	श्री अतिशय क्षेत्र पपौराजी (म० प्र०) ।
दीक्षा तिथि —	स० २०२१ श्रावण शुक्ला सप्तमी दिनाक १४-८-६४ ई० ।
वर्षा योग—	स० २०२१ में पपौरा क्षेत्र पर दीक्षा हुई पश्चात् क्रमश श्री अतिशय क्षेत्र महावीरजी, कोटा, उदयपुर, प्रतापगढ, टोडारायसिंह, भिण्डर, उदयपुर, अजमेर, निवाई, रेनवाल (किशनगढ़), सवाई माधोपुर, सीकर, रेनवाल (किशनगढ़), निवाई, निवाई, टोडारायसिंह आदि ।
जिन मुखोद् भव साहित्य-सृजन—	१. टीका—श्रीमद् सिद्धान्त चक्रवर्ती नेमिचन्द्राचार्य विरचित त्रिलोकसार की सचित्र हिन्दी टीका । २ भट्टारक सकल कीर्त्याचार्य विरचित सिद्धान्तसार दीपक अपर नाम त्रैलोक्य दीपिका की हिन्दी टीका । ३. तिलोयपण्णत्ती—आचार्य यतिवृषभ प्रणीत की हिन्दी टीका ।
मौलिक रचनाएँ—	१. श्रुत निकुञ्ज के किञ्चित् प्रसून (व्यवहार रत्नत्रय की उपयोगिता) २ गुरु गौरव, ३. श्रावक सोपान और बारह भावना ।
संकलन—	१. शिवसागर स्मारिका, २. आत्म प्रसून ।

सम्पादन-- १. समाधि दीपक, २. श्रमण चर्या।
३. निर्वाण कल्याणक एव दीपावली पूजन विधि, ४. श्रावक सुमन संचय आदि।

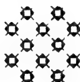
विशेष धर्म प्रभावना— आपकी प्रखर और मधुर वाणी से प्रभावित होकर श्री दि० जैन समाज जोबनेर जि० जयपुर ने श्री शान्ति वीर गुरुकुल को स्थायित्व प्रदान करने हेतु श्री दि० जैन महावीर चैत्यालय का नवीन निर्माण कराया एवं आपके सानिध्य मे ही वेदी प्रतिष्ठा कराई। जन धन एव आवागमन आदि अन्य साधन विहीन अलयारी ग्राम स्थित जिन मन्दिर का जीर्णोद्धार, २½ फुट ऊँची १००८ श्री चन्द्रप्रभु भगवान की नवीन प्रतिमा तथा सगमरमर की नवीन वेदी की प्राप्ति एव वेदी प्रतिष्ठा आपके ही सद्प्रयत्नो का फल है। इसी प्रकार अनेक स्थानो पर कलश-रोहण महा महोत्सव हुए, जैन पाठशालाएँ खोली गई, श्री दि० जैन धर्मशाला टोडारायसिह का नवीनीकरण भी आपकी ही सत्प्रेरणा का फल है।

सयमदान-- श्री ब्र० सूरज बाई मु० ड्योढी जि० जयपुर की क्षुल्लिका दीक्षा, श्री ब्र० मनफूल बाई मातेश्वरी श्री गुलाबचन्दजी, कपूरचन्दजी सर्राफ टोडाराय-सिंह, जि० टोक को अष्टम प्रतिमा एवं श्री कजोड़ीमलजी कामदार, जोबनेर जि० जयपुर आदि को द्वितीय प्रतिमा के व्रत आपके कर कमलो से प्रदान किये गये।



आर्यिका बुद्धमतीजी

आपका जन्म वि० स० १९६७ मे जबलपुर मे गोलापुरा जातीय श्री बसोरेलालजी की धर्मपत्नी जमनाबाई की कोख मे हुवा । आपका नाम कस्तूर बाई था। आपका वैवाहिक जीवन श्री कपूरचन्दजी के साथ सानन्द बीत रहा था लेकिन बचपन में आपकी शिक्षा प्रवेशिका तक आरा आश्रम में सम्पन्न होने के कारण बचपन से ही धर्म के प्रति आपकी प्रगाढ आस्था थी । स० १९९३ मे आपने जादर में आर्यिका माताजी धर्ममतीजी से क्षुल्लिका दीक्षा धारण कर ली । तत्पश्चात् स० २०१७ में स्व० आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज सा० से आपने आर्यिका दीक्षा लेकर ईडर, डूगरपुर घाटोल, जयपुर, साभर, फुलेरा, ब्यावर, अजमेर, सुजानगढ, सीकर, कोटा, लाडनू , खुरई आदि स्थानों पर चातुर्मास करते हुये धर्म प्रभावना की ।



आर्यिका आदिमतीजी



श्री १०५ आर्यिका आदिमतीजी के बचपन का नाम अंगुरीबाई था । आपके पिता श्री जीवनलालजी हैं । माता भगवानदेवी हैं । गोपालपुरा (आगरा) को आपकी जन्म-भूमि होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । आपने लौकिक शिक्षा कक्षा ८ वीं तक प्राप्त की और धार्मिक शिक्षा विशारद तक प्राप्त की ।

पन्द्रह वर्ष की अवस्था में आपका विवाह हुआ तो सही पर भाग्य को यह स्वीकार नही था, इसलिए डेढ वर्ष बाद ही आपके पति को डाकू हमेशा के लिए ले भागे । अब आपको ससार दुखमय सूना सूना लगने लगा । आप कण्ठस्थ किये हिन्दी, सस्कृत भाषा के धर्म पाठो से अपूर्व शान्ति पाती थी ।

कालान्तर में आपने घर के भाई बहनों का मोह छोड़ा और घर छोड़कर साधु सघ में ही रहीं। वातावरण के साथ ही आपका जीवन क्रम बदला। संवत् २०१८ में सीकर (राजस्थान) में आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ले ली।

आपने नेमीचन्द्राचार्य कृत गोम्मटसार कर्मकाण्ड की हिन्दी टीका कर जैन समाज का महान उपकार किया है।

आप समय पर लेख आदि भी लिखती रहती हैं वर्तमान में आचार्य श्री धर्मसागरजी के संघ के साथ आत्मसाधना में निरत है।

आपने लाडनू, कलकत्ता, श्रवणबेलगोला, शोलापुर, सनावद, प्रतापगढ आदि स्थानों पर चातुर्मास किये। आपकी रस परित्याग व्रत पर बडी आस्था है। आप जैसी विदुषी साध्वी से ही धार्मिक समाज का अहर्निश कल्याण सम्भव है।



आर्यिका अरहमतीजी

श्री १०५ आर्यिका अरहमती को लोग गृहस्थावस्था मे कुन्दनबाई कहकर पुकारते थे। आपके पिता श्री गुलाबचन्द्रजी थे, माता हरिणीबाई थी। वीर गाव की यह एक ही वीरबाला निकली जिसने लोक जीवन के साथ परलोक के जीवन को भी सम्हाला। आप जाति से खण्डेलवाल और पहाड़िया गोत्रज हैं। यद्यपि आपकी लौकिक धार्मिक शिक्षा नहीं के बराबर ही हुई तथापि सत्संग-धर्मश्रवण से आपने काफी लाभ उठाया। आपका विवाह लालचन्दजी से हुआ था।

बचपन के सामाजिक सस्कार सबल हुए। वैधव्य जीवन में विरक्ति की भावना बढ़ी। भला जिसके ज्येष्ठ मुनिश्री चन्द्रसागरजी, काका आचार्य वीर सागरजी, पुत्र मुनिश्री श्रेयान्ससागरजी, हों और जो १५ वर्षों तक १०८ मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी के धार्मिक वातावरण में बढ़ी हो, वह भला

संसार में कैसे रहती ? निदान १०८ मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी से संवत् २०२० में क्षुल्लिका दीक्षा ले ली और अगले वर्ष ही संवत् २०२१ मे आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी महाराज से शान्ति वीर नगर श्री महावीरजी में आर्यिका दीक्षा भी ले ली ।

यद्यपि आप ६५ वर्षो की हो गई पर आपकी धार्मिक चर्या में सावधानी बढ़ती ही जा रही है । आपने श्री महावीरजी, जयपुर, कोटा, उदयपुर, प्रतापगढ़ आदि स्थानों पर चातुर्मास किये । जिह्वा इन्द्रिय को वश में करने के लिए नमक, तेल, दही का त्याग कर रखा है । आपने चारित्र शुद्धि कर्मदहन तीस चौबीसी जैसे व्रत अनेक बार किये है ।



आर्यिका चन्द्रमतीजी

आपका जन्म आज से ६५ वर्ष पूर्व विक्रम सवत् १९५६ मे सतारा जिलान्तर्गत गिरवी नामक ग्राम में हुआ था । माता पिता ने आपका नाम मानीबाई रखा । आपके पिता श्री फूलचन्द्रजी धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे तथा सराफी की दुकान करते थे । जन्म के समय आर्थिक स्थिति अच्छी सम्पन्न थी । आपकी माता का नाम कस्तूरबाईजी था । मा का वात्सल्य बालापन से ही छिन गया था । जिस समय आपकी माताजी का स्वर्गवास हुआ उस समय आप १२ वर्ष की थी । आपके भाई रामचन्द्रजी अपनी सात बहिनों के बीच अकेले ही थे । दुर्दैव का चक्र चला और आपकी ५ बहिने इस नश्वर संसार से हमेशा के लिए विदा ले गई । आप और आपकी एक बहिन श्री बालुबाई ही सात बहिनों के बीच जीवित रह सकी ।

बालापन मे माँ का प्यार छिन जाने के कारण आपका लाड़-प्यारमयी जीवन पिता की गोद में व्यतीत हुआ । आपकी स्कूली शिक्षा भी कक्षा ४ तक ही हुई तथा धार्मिक शिक्षा का अभ्यास स्वयं के अध्ययन व मनन से घर पर ही प्राप्त किया ।

जब आप गृह कार्य में सुयोग्य होती हुई लगभग २० वर्ष की हुई तब आपका पाणिग्रहण सोलापुर अन्तर्गत मोहर ग्राम में श्रीमान् सेठ मोतीलालजी के लघु पुत्र श्री हीरालालजी के साथ सम्पन्न हो गया। आपके स्वसुर अच्छे सम्पन्न परिवार के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे तथा थोक व्यापार किया करते थे। आपके पति श्री हीरालालजी अपने चार भाइयों के बीच सबसे छोटे थे।

आपकी शादी हुए केवल आठ वर्ष ही व्यतीत हुए कि आपके ऊपर दुःख का पहाड टूट पड़ा और आपको वैधव्य धारण करना पडा। गार्हस्थ जीवन की अल्प अवधि मे आपको एक मात्र पुत्री चि० 'विद्युल्लता' का ही सौभाग्य मिल सका। काल की इस दुःखदायनी विचित्रता को देखकर आपके अन्तर में ससार की नश्वरता के प्रति विराग हुआ और आपने कालिञ्जा आश्रम मे अपना आश्रय लिया। इस आश्रम मे आकर आपने धार्मिक शिक्षा का गहन अध्ययन और मनन किया, पश्चात् एक सुयोग्य विदुषी महिला बनकर इसी आश्रम मे कुछ वर्षो तक अध्यापन का भी कार्य किया। अपने जीवन के १६ वर्ष कालिञ्जा आश्रम में ही अध्ययन और अध्यापन मे व्यतीत किए।

परम तपस्वी आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी के सद्उपदेशो ने भी आपको वैरागी बना दिया। जब चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागरजी काससंघ चातुर्मास कालिजा मे हुआ तब आपने आचार्य वीरसागरजी महाराज से सातवी प्रतिमा तक के व्रत अगीकार किए थे, उस समय आपकी वय ३५ वर्ष की थी। इस प्रकार आपने सप्तम प्रतिमा तक के व्रतो को १५-१६ वर्ष तक पालन कर अपनी आत्मा को निर्मल और निर्मोही बना लिया।

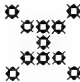
"प्रायः यह पाया जाता है कि पिता के गुण पुत्र में और माता के गुण सुता में आते है।" यही बात आपकी एक मात्र लाडली प्रिय पुत्री विद्युल्लता में पूर्णतया चरितार्थ होना पाई गई। विरागिनी माँ की प्रज्ञा, आगम के प्रति गहन श्रद्धा, और परम वैराग्य का पूरा पूरा प्रभाव लाडली पुत्री के ऊपर पडा है।

शील शिरोमणि बहिन विद्युल्लता आजकल प्रधानाध्यापिका व अधिष्ठात्री के रूप में सप्तम् प्रतिमा तक के व्रतो का पालन करती हुई सोलापुर के आश्रम में है। इनका हृदय हमेशा वैराग्य की ओर झुका रहता है, और यही कारण है कि इनकी भी अभिलाषा महाव्रतों को ग्रहण करने की है। विद्युल्लता जैसी सुयोग्य शीलरूपा सुपुत्री को पाकर आपका मातृत्व भी धन्य हो गया।

कार्तिक शुक्ला पञ्चमी विक्रम सम्वत् २०१३ मे परम पूज्य आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज से जयपुर खानिया में चातुर्मास के शुभावसर पर आपने क्षुल्लिका की दीक्षा ग्रहण कर ली। आचार्य श्री ने आपका दीक्षित नाम श्री चन्द्रमती रखा।

क्षुल्लिका की दीक्षा के बाद आपके अन्तर में वैराग्य की लौ दिन प्रतिदिन उग्र रूप धारण करती गई और चैत्र बदी पड़वा विक्रम सम्वत् २०१४ मे गिरनारजी सिद्धक्षेत्र पर परम पूज्य तपोनिधि आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से आपने आर्यिका की दीक्षा ग्रहण कर ली।

अपनी उग्र तपस्या के द्वारा आत्मा को कर्म-मल से रहित करती हुई आप मुक्ति मार्ग के पथ पर अविचल रूप से बढ रही है।



आर्यिका राजुलमतीजी

विक्रम सम्वत् १९६४ में अकोला क्षेत्र के कारञ्जा नामक ग्राम में बघेलवाल गोत्रोत्पन्न पिता श्री बबनसाजी के घर माता श्री बजाबाईजी की कुक्षि से आपका जन्म हुआ था। आपको दो भाइयों तथा दो बहिनों का सयोग भी मिला। भाइयों में श्री मोतीलालजी व श्री झब्बूलालजी है। तथा बहिनो मे ज्येष्ठ आप एवं छोटी बहिन श्री मोनाबाईजी है।

माता पिता ने आपका जन्म नाम श्री रूपाबाईजी रखा था। आपके पिताश्री अच्छी स्थिति के सम्पन्नशाली व्यक्ति थे तथा सराफा की दुकान करते थे। वह उदार हृदयी, सन्तोषी और शान्त प्रवृत्ति के योग्य व्यक्तियो मे से एक थे। यही कारण था कि इनके सुलक्षणो का पूरा पूरा प्रभाव होनहार सन्तान पर भी पडा।

जब आपकी उम्र मात्र १२ वर्ष की थी तब आपके पिता श्री ने आपका पाणिग्रहण कारञ्जा ग्राम मे ही श्रीमान् सेठ नागोसाजी के पुत्र श्री देवमनसाजी के साथ किया। भाग्य की बात थी कि उसी ग्राम मे माता पिता और उसी ग्राम मे सास स्वसुर, दोनों ही कुल श्रेष्ठ सम्पन्न तथा ऐश्वर्यशाली थे। आपकी सास श्री सोनाबाईजी भी एक आदर्श महिला थी।

विवाह हुये डेढ वर्ष ही व्यतीत हुआ था कि दुर्दैव का चक्र चला और आपके पतिश्री का स्वर्गवास हो गया। उस समय आप १४ वर्ष की अबोध बालिका ही थीं। इस दुःखदायी वज्र प्रहार के हो जाने से आपको अध्ययन के उद्देश्य से सोलापुर आश्रम का सहारा लेना पडा। अपनी कुशाग्र

बुद्धि और आदर्श कार्य कुशलता का परिचय देते हुये अध्ययन के वाद, उसी आश्रम में आपने अध्यापन का कार्य सम्हाला । इस कार्य में आपको जितनी भी सफलता मिली वह आपकी यश: कीर्ति के लिए पर्याप्त है ।

इस प्रकार अध्ययन और अध्यापन का लगभग १६ वर्षीय लम्बा समय आश्रम में व्यतीत हुआ । आपने आश्रम में एक अबोध असहाय बालिका के रूप मे प्रवेश लिया और एक सुयोग्य विदुषी महिला के रूप में अधिष्ठात्री बनकर आश्रम से विदा ली ।

"जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन्न, जैसा पीये पानी वैसी बोले वानी" इस लोकोक्ति को शब्दश: चरितार्थ करती हुई आपके अन्तर मे ससार की असारता के साथ आत्मोन्नति की भावना का उदय हुआ और परम पूज्य श्री समन्तभद्रजी महाराज से ७ वी प्रतिमा के व्रत अगीकार कर लिये । यह मुनि श्री अत्यन्त सुयोग्य महातपस्वी बाल ब्रह्मचारी और आचार्यवर हैं । यही आपकी आत्मा को सन्पथ पर लाने वाले मूल मार्ग दर्शक व आदि गुरु है ।

समय अपनी अबाधगति से निकलता गया तदनुसार आपके भावो मे निर्मलता आई, परिणामों में वैराग्य ने प्रवेश किया और सद्गुरु आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के सद्उपदेशों ने प्रभावित किया, फलत: चैत्र बदी पड़वा विक्रम सम्वत् २०१२ मे गिरनारजी सिद्ध क्षेत्र पर आचार्य श्री से क्षुल्लिका की दीक्षा ग्रहण करली । आचार्य श्री ने आपका दीक्षित नाम राजमतीजी रखा । अपनी कठिन साधना के साथ ज्ञानाभ्यास के द्वारा ज्ञान और चारित्र मे उत्तरोत्तर वृद्धि की, फलत: आपके अन्तर मे शुद्ध वैराग्य की ज्योति जगमगा उठी । आपने लोक में स्थित जीवों की रक्षा के लिये पीछी, शुद्धि के लिए कमन्डलु तथा शारीरिक लज्जा की मर्यादा बनाए रखने के लिए मात्र एक धोती को छोड़कर समस्त अन्तरग बहिरंग परिग्रह का त्याग करने का निश्चय किया, और कार्तिक शुक्ला चतुर्थी सम्बत् २०१८ के दिन सीकर में परम पूज्य दिगम्बर जैनाचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से आर्यिका की दीक्षा ग्रहण की ।

आप अनेक भव्य जीवों को सतपथ का अवलोकन कराती हुई आत्म कल्याण की ओर अग्रसर है । ऐसी भव्य आत्मा के श्री चरणों में नमन है ।



आर्यिका नेमीमतीजी



पू० माताजी का जन्म श्रावण बदी ७ सं० १६५५ की शाम को जयपुर में हुआ। आपके पिताजी का नाम रिखबचन्दजी बिन्दायक्या व मातु श्री का नाम मेहताबबाई था, आपका बचपन का नाम भवरकुमारी था, लेकिन पिताजी के १ ही सन्तान होने के कारण प्यार से दोलत कवर के नाम से पुकारते थे। आपकी शिक्षा उस समय चौथी कक्षा तक हुई और आपका विवाह १० वर्ष की उम्र में लाला नन्दलालजी सा० बिलाला पील्या वाले के सुपुत्र श्री गणेशलालजी के साथ हुआ। लगभग ४० वर्ष तक आप पूर्ण धार्मिक मर्यादा सहित गृहस्थ जीवन पालन करती रही। विद्यालय मे शिक्षा प्राप्त करते समय ही आपके हृदय मे विशेष धार्मिक अभिरुचि उत्पन्न हुई और स्वाध्याय, दर्शन आदि के दैनिक नियम बन गये। प्रत्येक शास्त्र की समाप्ति पर आप कुछ न कुछ नियम अवश्य लेती थी यथा समय दान भी किया करती थी यही कार्य इनके पति श्रीगणेशलालजी का भी था। आपके पति श्री लाला गणेशलालजी बिलाला जयपुर स्टेट के काल में चादी की टकशाल के ऑफिसर (दारोगा) थे, यहा से पेन्शन हो जाने के पश्चात् दोनों ही पति-पत्नि आचार्य वीर सागरजी महाराज के सघ मे ज्यादातर रहने व चौका आदि लगाने लगे, इनके पति ने ७ वी प्रतिमा के व्रत धारण कर लिये तथा ८ वर्ष तक इस प्रतिमा में रहे और घर के काम काज से एक प्रकार मे उदासीन वृत्ति धारण कर ली उनका विचार जयपुर में श्री १०८ आचार्य वीर सागरजी महाराज के चर्तुमास के समय क्षुल्लक दीक्षा धारण करने का था किन्तु आपके पौत्र चि० नगेन्द्रकुमार के विवाह की तारीख निश्चित हो जाने के कारण धारण नही कर सके। जब १०८ पू० शिवसागरजी महाराज ने आचार्य की दीक्षा ली और ये संघ चातुर्मास समाप्त होने पर गिरनारजी के लिये रवाना हुआ तो उनके साथ हो गये और ब्यावर मे जब ये संघ पहुंचा तो कुछ दिन पश्चात् १ दिन प्रात ५ बजे सामायिक करते हुए स्वर्ग सिधार गये। उनकी मृत्यु के १॥ वर्ष बाद इन्होने भी ससार की अनित्यता को देखकर आत्म कल्याण की दृष्टि से स्व० १०८ आचार्य वीरसागरजी महाराज की छत्री के निर्माण के दिन सासारिक सुखों के समस्त साधनो से सम्पन्न होते हुए भी उनको ठुकरा कर आपने आचार्य शिवसागरजी महाराज से क्षुल्लिका की दीक्षा विशाल जन समुदाय की हर्ष-ध्वनि के बीच ले ली। सं० २०१७ मे सुजानगढ में आर्यिका की दीक्षा धारण की।



आर्यिका भद्रमतीजी



आपका जन्म कुन्डलपुर क्षेत्र के समीप कुमारी ग्राम में हुवा था। आपके पिता का नाम परमलालजी तथा माताजी का नाम हीराबाई था। शादी के १ वर्ष पश्चात् आप के पति का वियोग हो गया। तब ही से आपने आरा मे ब्र० चन्दाबाईजी के आश्रम में शिक्षा ग्रहण की तथा आपने सैद्धान्तिक ग्रन्थों का अध्ययन किया। आपने लाडनू में २५ वर्ष तक अध्यापिका रह कर जैन बालिकाओं को धर्म शिक्षा का ज्ञान कराया। सन् १९६३ मे खुरई चातुर्मास मे आपने आचार्य धर्मसागरजी द्वारा क्षुल्लिका दीक्षा धारण की, तथा आचार्य श्री शिवसागरजी से आर्यिका दीक्षा ली। वर्तमान मे आप आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के सघ में रह कर आत्म कल्याण के मार्ग में निरत है।



आर्यिका दयामतीजी

आपका जन्म सागर (गोपालगज) मे हुआ। पिताजी का नाम सिघई श्री गोरेलालजी था। शिक्षा सामान्य थी, किन्तु धार्मिक कार्यों व्रत उपवास मे प्रारम्भ से रुचि थी। हिलगन जिला सागर निवासी सिं. छोटेलालजी के साथ विवाह सम्पन्न हुआ था। कुछ समय बाद ही वैधव्य का वज्राघात हो गया। माता कनकमतीजी के सम्पर्क हो जाने से आचार्य श्री शिवसागर महाराज से आर्यिका दीक्षा ग्रहण करली। अभी मुनि श्री १०८ अजितसागरजी के सघ में विराजमान है।



आर्यिका कनकमतीजी



जन्म स्थान बडागाव जिला टीकमगढ म० प्र० पूर्व नाम चिरोंजाबाई है, श्री सिघई हजारीलालजी वैद्य आपके पिता का नाम था ६५ वर्ष पहिले श्रीमती स्व० परमाबाई की कूंख मे जन्म लिया था, उस समय की प्रथा के अनुसार १२ वर्ष की अल्प वय मे झासी जिले के कारीटोरन के श्री दयाचन्द सिंघई के साथ विवाह हो गया था । मात्र १६ वर्ष की वय में वैधव्य का वज्रपात आ पडा । महिलाश्रम सिवनी, उदासीन महिला आश्रम इन्दौर तथा महिला आश्रम सागर में धर्म ध्यान के साथ विशारद तक अध्ययन किया ।

सागर, दुर्ग तथा डालटेनगज मे अध्यापन किया श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी से सातवी प्रतिमा तथा श्री १०८ आचार्य शिवसागरजी महाराज से श्री महावीरजी मे आर्यिका दीक्षा ग्रहण की । श्री महावीरजी, कोटा, प्रतापगढ, टोडारायसिह, अजमेर, निवाई, सुजानगढ़ आदि स्थानों मे चातुर्मास हो चुके है । कई रसों का आजीवन त्याग कर दिया है ।

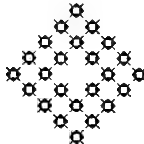


आर्यिका जिनमतीजी



आपका शुभ जन्म म्हसवड (महाराष्ट्र) में हुआ। आपका जन्म का नाम प्रभावती था। बाल अवस्था में ही माता-पिता का वियोग हो गया। आप एक भाई और एक बहिन सहित आश्रय रहित हो गई, तब आपका लालन पालन मामा मामी के घर हुआ। षोडशी अवस्था मे ज्ञानमती माताजी का सम्पर्क मिला और आप ब्रह्मचारिणी बन गईं। आजीवन ब्रह्मचारिणी बनकर माताजी के साथ आ गई और माधोराजपुरा (राजस्थान) मे आचार्य श्री वीर सागरजी महाराज से क्षुल्लिका की दीक्षा धारण की। आप कुशाग्र बुद्धि के द्वारा परम विदुषी रत्न हैं। बडे बडे ग्रन्थो का अध्ययन किया। सीकर नगर मे आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से आपने आर्यिका दीक्षा ग्रहण की। आप आर्यिका के गुणों को अत्यन्त ही उत्कृष्ट रीति से पालन करती है। दर्शन ज्ञान सहित आपका चरित्र सराहनीय है।

आप संघस्थ नवदीक्षित आर्यिकाओं की देख रेख, वैयावृत और सेवा के कार्यो में अत्यन्त दक्ष हैं। भ्रातृत्व स्नेह से भरपूर होकर परस्पर वात्सल्य का रूप इनमे देखने को मिला। पठन पाठन और ज्ञानोपयोग इनकी रुचि के उज्ज्वल उदाहरण है।



आर्यिका संभवमतीजी



आपका जन्म अजमेर में पन्नालालजी बज के घर पर हुआ । आपकी माताजी का नाम श्रीमती राजमती बाई था । आपका नाम हुलासी बाई रखा गया था । माता की धार्मिक भावना का आप पर प्रभाव पडा । आपने अपना जीवन धर्म कार्य में व्यतीत किया । किशनगढ मे आर्यिकाश्री के समागम से आपको वैराग्य हुआ और आचार्यश्री शिवसागरजी महाराज का जब चातुर्मास अजमेर में हुआ, तब आपने आर्यिका दीक्षा धारण की ।



आर्यिका विद्यामतीजी

आपका जन्म डेह (नागौर) मे उत्तर की ओर लालगढ (बीकानेर) मे वि० सं० १६६२ मिती फाल्गुन बदी १३ को हुआ । आपके पिता श्री नेमचन्दजी बाकलीवाल ने आपके बचपन का नाम शान्तिबाई रखा । वि० स० २००५ मिती वैसाख कृष्णा ४ को आपका पाणिग्रहण श्री मूलचन्दजी के साथ सम्पन्न हुआ ।

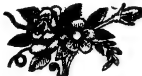
वि० स० २००८ वैशाख सुदी ६ को कलकत्ता महानगरी से श्री मूलचन्दजी एकाएक कही चले गये । कई वर्षों तक उनके न आने के कारण इस ससार से ऊब जाना स्वाभाविक था । कुछ समय पश्चात् आपका परिचय आर्यिका १०५ श्री इदुमतीजी एव श्री सुपार्श्वमतीजी के साथ हुआ । इनके साथ आपने ज्ञान की गगा में स्नानकर आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी महाराज से आर्यिका इंदुमतीजी एव श्री सुपार्श्वमतीजी के समक्ष, अपार जन-समूह के सामने वि० स० २०१७ मिती कार्तिक सुदी १३ को सुजानगढ मे दीक्षा ग्रहण की । दीक्षोपरान्त आपका नवीन नामकरण विद्यामतीजी हुआ ।



आर्यिका सन्मतिमाताजी



पूज्य १०५ श्री सन्मति माताजी का जन्म वि० स० १६७७ चैत्र शुक्ला नवमी को बनगोठडी गाँव में हुआ। आपके पिता का नाम भूरामलजी कासलीवाल था और माता का नाम सूरजबाई था और आपका नाम कमलाबाई रक्खा। आपके दो भाई और एक बहन है। माताजी का विवाह अल्पायु में ही श्री किस्तूरचन्दजी काला के साथ हुआ था आपके एक पुत्री हुई जिसका नाम गुणमाला है। आप घर सम्पन्न परिवार वाली है, भोग सामग्री की सुविधाओं की कोई कमी नही थी अत गृहस्थाश्रम सुख से व्यतीत हो रहा था, किन्तु दुर्दैव को यह सह्य नही हुआ स्वल्प काल मे ही आपके पति का स्वर्गवासहो गया। युवावस्था मे जिन्हे यह दुःख प्राप्त हो जाता है उस दुःख का अनुभव भुक्त भोगी ही जानता है अन्य नही। किन्तु आपने अपने जीवन को धर्माचरण की तरफ मोड़ा और साधु ससर्ग मे अपने को ससार पथ से त्याग के पथ पर चलाया। मन मे वैराग्य की भावना उत्तरोत्तर बढने लगी और १०८ श्री ज्ञानसागरजी महाराज से दूसरी तथा पाचवीं प्रतिमा के व्रतो को ग्रहण कर लिया। इतने से शान्ति न मिली और पूज्यपाद आचार्य १०८ श्री शिवसागरजी महाराज मे वि० सं० २०२२ मे कार्तिक शुक्ला १० को क्षुल्लिका दीक्षा ली और पश्चात् आठ महीने बाद ही आ० श्री शिवसागरजी म० से आर्यिका की दीक्षा ग्रहण की। वर्तमान मे ज्ञान और चारित्र की उत्तरोत्तर वृद्धि करती हुई आप धर्म ध्यान में रत रहती है। आपका कार्य स्वाध्याय और जाप करना ही है आप जाप का कार्य विशेष करती रहती हैं। आपका उपदेश भी कथानक के रूप मे अच्छा होता है।

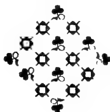


आर्यिका कल्याणमतीजी



आर्यिका श्री १०५ कल्याणमतीजी का गृहस्थावस्था का नाम बिलासमती था। आपका जन्म आज से ५५ वर्ष पूर्व मुबारिकपुर (मुजफ्फर नगर) में हुआ था। आपके पिता श्री समर्थसिंहजी थे व माता श्रीमति समुद्रीबाई थी। आप अग्रवाल जाति के भूषण व मित्तल गोत्रज हैं। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण हुई। आपका विवाह भी हुआ।

गणेशप्रसादजी वर्णी की सत्सगति के कारण आपमे वैराग्य प्रवृत्ति जाग उठी व आपने शिखरजी में सातवी प्रतिमा धारण कर ली। इसके बाद में आपने आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी से विक्रम सवत् २०२२ में शान्तिवीर नगर में क्षुल्लिका दीक्षा ले ली। कोटा मे आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी से आर्यिका दीक्षा ले ली। आपने श्री महावीरजी, उदयपुर, प्रतापगढ आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म वृद्धि की। आप चारित्रशुद्धि व्रत भी करती है। आपने तीनो रसो का त्याग कर दिया है।

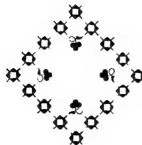


आर्यिका श्रेयांसमतीजी



श्री १०५ आर्यिका श्रेयासमतीजी का गृहस्थ अवस्था का नाम लीलावतीबाई था। आपका जन्म आज से ५० वर्ष पूर्व पूना (महाराष्ट्र) में हुआ। आपके पिता का नाम श्री दुलीचन्द्रजी व माता का नाम श्रीमती सुन्दरबाई था। आप खण्डेलवाल जाति की भूषण एवं बड़जात्या गोत्रज है। आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा ५ वी तक हुई। आपका विवाह मूलचन्द्रजी पहाडे से हुआ। जो आगे चलकर मुनि श्रेयाससागरजी हुए। आपके परिवार मे दो पुत्र व दो पुत्रियां है।

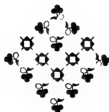
पति के दीक्षा लेने व ससार की नश्वरता का विचारकर आपने वि० सं० २०२१ में श्री १०८ आचार्य शिवसागरजी से शान्तिवीर नगर (महावीरजी) मे दीक्षा ले ली। आपने महावीरजी, कोटा, उदयपुर, प्रतापगढ आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म प्रभावना की। आपने तेल, दही, घी, नमक आदि का त्याग किया है।



आर्यिका श्रेष्ठमतीजी



श्री आर्यिका श्रेष्ठमतीजी का गृहस्थावस्था का नाम रतनबाई था। आपका जन्म फतेहपुर सीकरी (राजस्थान) मे आज मे लगभग ६० वर्ष पूर्व हुआ आपके पिता का नाम वासुदेवजी था। जो गल्ले का व्यापार करते थे। आपकी माता का नाम इन्द्रादेवी था। आपकी जाति अग्रवाल थी। आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा तीसरी तक हुई। आपका विवाह श्री नेमीचन्द्रजी के साथ हुआ। परिवार मे आपके दो भाई एव दो बहिन है। आपके नगर में संघ आगमन होने के कारण आपमें वैराग्य प्रवृत्ति जाग उठी। आपने विक्रम सवत् २०१९ मे आचार्य १०८ शिवसागरजी से दीक्षा ले ली। आपने लाडनूं, कलकत्ता हैदराबाद, सोलापुर, श्रवणबेलगोल, सनावद, प्रतापगढ आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्मवृद्धि की। आप चारित्र शुद्धि का उपवास व्रत भी करती है।

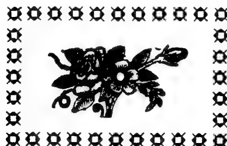


आर्यिका सुशीलमतीजी



श्री १०५ आर्यिका सुशीलमतीजी का गृहस्थावस्था का नाम काशीबाई था आपका जन्म आज से लगभग अट्ठावन वर्ष पूर्व मस्तापुर में हुआ था। आपके पिता श्री मोहनलालजी थे। आप परवार जाति की भूषण हैं। आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा १० वी तक हुई आपके पति धर्मदासजी थे। आपने अध्यापिका का कार्य भी किया। आपके परिवार में दो देवर और एक जेठ है।

जब आपके नगर मे मुनि-संघ आया तब आपने शान्तिवीर नगर महावीरजी मे श्री १०८ आचार्य शिवसागरजी से विक्रम सवत् २०२२ मे आर्यिका दीक्षा ले ली। आपने संघ के साथ कोटा, उदयपुर, प्रतापगढ आदि स्थानों पर चातुर्मास किये। आपने दो रसो का भी यथावसर त्याग किया। आप अपने वर्ग को छलप्रपंच से निकालकर निश्छल निष्कपट बनाने मे समर्थ हो यही कामना है।



आर्यिका विनयमतीजी

श्री १०५ आर्यिका विनयमतीजी का बचपन का नाम राजमती था। आपका जन्म आज से लगभग साठ वर्ष पूर्व मड़ावरा (ललितपुर) में हुआ था। आपके पिता श्री मथुराप्रसादजी थे। व माताजी सरस्वती देवी थी। आप गोला लारी जाति की भूषण थी। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। आपका विवाह चतुर्भुजजी के साथ में हुआ। आपके दो भाई व तीन बहिनें थी।

नगर में संघ का आगमन व प्रधानाध्यापिका सुमित्राबाई का दीक्षित होना आपके वैराग्य का कारण हुआ। आपने विक्रम संवत् २०२३ में कोटा में आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी से आर्यिका दीक्षा ले ली। आपने उदयपुर, प्रतापगढ़ आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म प्रभावना की। आपने मीठा, नमक, दही आदि का त्याग कर दिया है। आप देश और समाज की सेवा में इसी प्रकार कार्यरत रहें, आप शतायु हो। यही हमारी कामना है।



क्षुल्लिका श्री सुव्रतमतीजी

आपका जन्म महाराष्ट्रके हिंगोली ग्राममें विक्रम सम्वत् १९९१ में हुआ था। आपके पिताका नाम श्री भगवान राव और माताका नाम श्रीमती सरस्वती देवी है। आप अपनी चार बहिनों और तीन भाइयोंमें ज्येष्ठ है। आपका नाम शान्तीबाई था।

जब आपकी उम्र मात्र ९ वर्ष की थी तब लोहगावमें श्री अन्नारावजी के ज्येष्ठ पुत्र श्री मारोतीरावजी के साथ आपका पाणिग्रहण हुआ, पर समय का खेल कि ६ माह बाद ही आपके पति का देहावसान हो गया।

बालापन में वैधव्य आजानेसे पिताने आपको घर पर रखकर पढाया। आपने कक्षा ६ तक स्कूली शिक्षा प्राप्त करनेके बाद जैन पाठशालामें चतुर्थ भाग तक जैन धर्मकी शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद घर पर ही अध्ययनके द्वारा जैन धर्म का ज्ञान प्राप्त करती रही।

सन् १९५८ में आर्यिका अनन्तमतीजी विहार करती हुई आपके ग्राममें पहुँचीं। आर्यिका माताजीके सदुपदेशोंसे प्रभावित होकर संसार की आसारता से भयभीत हो आपने घर का परित्याग कर दिया और आर्यिकाजी के साथ विहार करती हुई धर्मध्यान पूर्वक व्रतों का अभ्यास करने लगीं।

खुरई में परम पूज्य मुनिराज धर्मसागरजी महाराज के दर्शनों का भी लाभ मिला। मुनि श्रीके दर्शन कर आपके अन्तर मे वैराग्य की भावना का उदय हुआ फलतः आपने मुनि श्रीसे कार्तिक शुक्ला एकादशी विक्रम सम्वत् २०२० के दिन ७ वी प्रतिमा तक के व्रत अङ्गीकार कर लिए। इस प्रकार परिणामों में निर्मलता आई, फलतः कार्तिक शुक्ला एकादशी विक्रम सम्वत् २०२१ के शुभ दिन तपोनिधि आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से अपार जन-समूह के बीच अतिशय क्षेत्र पपौरा मे आपने क्षुल्लिका की दीक्षा ली।



* आचार्य वन्दना *

[डॉ० पन्नालाल साहित्याचार्य, सागर]



निर्ग्रन्थमुद्रा सरला यदीया प्रमोदभावं परम दधाना ।
सुधाभिषिक्तेव धिनोति भव्यान् तं धर्मसिन्धु प्रणमामि नित्यम् ।।१।।

कामानलातापवितप्त पु सा माख्याति ब्रह्मव्रतसन्महत्त्वम् ।
य· सन्ततं भोगविरक्तियुक्त स्त धर्मसिन्धु प्रणमामि नित्यम् ।।२।।

हिंसानृतस्तेयपरिग्रहाद्य: कामाग्नितापाच्च निवृत्य नित्यम् ।
महाव्रतानि प्रमुदा सुधत्ते त धर्मसिन्धुं प्रणमामि नित्यम् ।।३।।

ईर्याप्रधाना समितीदधानः गुप्तित्रयी यः सतत दधाति ।
स्वध्यानतोषामृततृप्तचित्त स्त धर्मसिन्धु प्रणमामि नित्यम् ।।४।।

संघस्थसाध्वीनिचय सदा यः साधुव्रज चापि सहानुयातम् ।
सत्रायते सावहित. समन्तात्त धर्मसिन्धुं प्रणमामि नित्यम् ।।५।।

संसारदेहामितभोगवृन्दाद् विरज्य य! स्वात्मनि सस्थितोऽभूत् ।
स्वाध्यायपीयूषसरो निमग्न त धर्मसिन्धु प्रणमामि नित्यम् ।।६।।

दिगम्बराचार्यतति प्रधानो निर्बाधवृत्तं सतत दधानः ।
दधाति लोकप्रियता सदा य स्तं धर्मसिन्धु प्रणमामि नित्यम् ।।७।।

शान्त्यब्धि-वीराब्धि-शिवाब्धि दिष्टं श्रेय:पथं दर्शयते जनान्य: ।
अवाग्विसर्गं वपुषैव नित्य तं धर्मसिन्धु प्रणमामि नित्यम् ।।८।।

आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज के तृतीय

पट्टाचार्य शिष्य

आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित साधु-वृन्द



आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज



मुनि श्री दयासागरजी
,, पुष्पदन्तसागरजी
,, निर्मलसागरजी
,, सयमसागरजी
,, अभिनन्दनसागरजी
,, शीतलसागरजी
,, सम्भवसागरजी

मुनि श्री बोधसागरजी
,, महेन्द्रसागरजी
,, वर्धमानसागरजी
,, चारित्रसागरजी
,, भद्रसागरजी
,, बुद्धिसागरजी
,, भूपेन्द्रसागरजी

मुनि श्री विपुलसागरजी
,, यतीन्द्रसागरजी
,, पूर्णसागरजी
,, कीर्तिसागरजी
,, सुदर्शनसागरजी
,, समाधिसागरजी
,, आनन्दसागरजी
,, समतासागरजी
,, उत्तमसागरजी
,, निर्वाणसागरजी
, मल्लिसागरजी
,, रविसागरजी
,, जिनेन्द्रसागरजी
,, गुणसागरजी
ऐलक श्री वैराग्यसागरजी
क्षुल्लक श्री पूरणसागरजी
,, सवेगसागरजी
,, सिद्धसागरजी
,, योगेन्द्रसागरजी
,, करुणासागरजी
,, देवेन्द्रसागरजी
,, परमानन्द सागरजी
आर्यिका अनन्तमतीजी
,, अभयमतीजी

आर्यिका विद्यामतीजी
,, संयममतीजी
,, विमलमतीजी
,, सिद्धमतीजी
,, जयमतीजी
,, शिवमतीजी
,, नियममतीजी
,, समाधिमतीजी
,, निर्मलमतीजी
,, समयमतीजी
,, गुणमतीजी
,, प्रवचनमतीजी
,, श्रुतमतीजी
,, सुरत्नमतीजी
,, शुभमतीजी
,, धन्यमतीजी
,, चेतनमतीजी
,, विपुलमतीजी
,, आ० रत्नमती
क्षुल्लिका दयामतीजी
,, यशोमतीजी
,, बुद्धमतीजी
ब्र० प्यारीबाईजी



मुनिश्री दयासागरजी



पू० मुनि श्री दयासागरजी का जन्म स्थान राजस्थान की ऐतिहासिक वीर भूमि जि० चित्तौड़गढ़ में ग्राम बड़न है आपने स० १९८८ को श्री राजाबाई की कुक्षि से जन्म लिया। आपके पिता का नाम रामबगस जी था। बघेरवाल जाति मे आपने जन्म लेकर अपनी जाति का नाम ऊंचा किया। गृहस्थ अवस्था का नाम श्री कस्तूरचन्दजी था। शिक्षा सामान्य रही पारिवारिक समस्या आ जाने से शिक्षा को अधूरा ही छोड़ दिया तथा व्यापार कार्य करने लगे। बालकपन से ही धर्म के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति अपूर्व थी। घर की खेती होती थी तो उस कार्य में हिंसा अधिक होती देखकर आपके मन मे वैराग्य के भाव उत्पन्न हुए तब आप गृहस्थी के कार्यों को छोड़कर आचार्य श्री धर्मसागरजी की शरण मे आए तथा टोंक (राजस्थान) मे आपने आचार्य श्री से क्षुल्लक दीक्षा धारण की। संघ मे रहकर आप शास्त्र स्वाध्याय करते एवं वैराग्य की ओर आपका लक्ष्य बढ़ता रहा तत्पश्चात् श्री महावीरजी में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा पर आपने मुनिदीक्षा अंगीकार कर ली। आप भारतवर्ष के समस्त तीर्थों की पैदल यात्रा कर आत्म साधना कर रहे है। आप सरल एवं सौम्यता की मूर्ति हैं। आप आचार्य श्री के आदेशानुसार उप सघ का भी सचालन कर रहे है। आप तप: साधना के कीर्तिमान पुरुषार्थी सन्त शिरोमणि मुनिराज है।

आपके द्वारा अभी तक १९ दीक्षाएँ दी जा चुकी है। आप मूक साधना के प्रतीक मुनिश्री है।





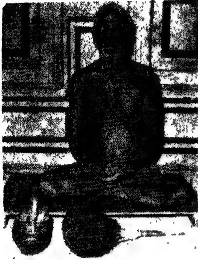
मुनिश्री पुष्पदन्तसागरजी

मुनि श्री १०८ पुष्पदन्तसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम जीवनलालजी था। आपका जन्म आज से लगभग ६२ वर्ष पूर्व मौजमाबाद में हुआ था। आपके पिता श्री चांदमलजी थे जो कपड़े के सफल व्यापारी थे। आपकी माता श्री फुलाबाई थी। आप खडेलवाल जाति के भूषण हैं। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। विवाह भी हुआ और परिवार में एक बहिन है।

नित्य प्रति शास्त्र स्वाध्याय करने से आपमें वैराग्य प्रवृत्ति जाग उठी। आपने श्रावण कृष्णा छठ, विक्रम संवत् २०२१ में आचार्य श्री १०८ धर्मसागरजी महाराज से इन्दौर में मुनिदीक्षा ले ली। आपने इन्दौर, झालरापाटन, टोंक, सवाईमाधोपुर, शिखरजी, आरा आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्मवृद्धि की है। श्री सम्मेदशिखरजी की २०१ वन्दना की। बाहुबली गिरनारजी की भी तीन बार वन्दना की है। आपने घी, मीठा, नमक का त्याग कर दिया है।

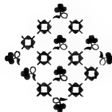


मुनिश्री निर्मलसागरजी



श्री १०८ मुनि निर्मलसागरजी का गृहस्थ अवस्था का नाम मदनलालजी जैन था। आज से लगभग सत्तावन वर्ष पूर्व आपका जन्म टोंक (राजस्थान) में हुआ। आपके पिता श्री केशरलालजी थे, इनकी मिठाई की दुकान थी। आपकी माता का नाम धापूबाई था आप अग्रवाल जाति के भूषण है। आप मित्तल गोत्रज है। आपकी लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा साधारण ही हुई। आपके परिवार में दो भाई थे। आपका विवाह हुआ और एक पुत्र रत्न की प्राप्ति भी हुई।

आपने सत्संगति और उपदेशश्रवण से मन मे वैराग्य लेने की बात भी विचारी। विक्रम संवत् २०२३ में श्रावण शुक्ला सप्तमी को टोंक मे श्री १०८ आचार्य श्री धर्मसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। बाद मे विक्रम संवत् २०२४ में मंगसिर शुक्ला पंचमी को श्री १०८ आ० धर्मसागरजी से ही मुनि दीक्षा लेली। आपने बूंदी, बिजौलिया, पार्श्वनाथ आदि स्थानों पर चातुर्मास किये। आप अपने भव्य जीवन से लोगों को सही अर्थों में भव्य बनने की प्रेरणा देते हुए शतायु हों, यही भावना है।



श्री १०८ मुनि संयमसागरजी महाराज



श्री १०८ मुनि संयमसागरजी महाराज का जन्म स० १९७० में बूंदी में हुआ था आपके पिता का नाम भवानीशंकरजी था। वह काश्तकारी का धंधा और व्यापार करते थे।

संयमसागरजी बचपन से ही धर्म में रुचि रखते थे। उन्होंने ससार को असार जानकर स० २०२३ मे टोंक में क्षुल्लक दीक्षा एव स० २०२४ मे बूंदी मे मुनिदीक्षा आचार्य श्री धर्मसागरजी से ली तथा नियमो के प्रति बहुत कठोर रहे और सब जीवों के उपकार की कामना करते रहे।

जो मुनिराज सम्यग्ज्ञान रूपी अमृत को पीते रहते हैं। जो अपने पुण्यमय शरीर को क्षमारूपी जल से सींचते रहते है तथा जो संतोष रूपी छत्र को धारण करते रहते हैं, ऐसे मुनिराज कायक्लेश नामा तप करते है। अन्त में पारसोला ग्राम में दिनाक २-६-८३ को समाधिपूर्वक शरीर का त्याग किया। ७६ साधु आपकी समाधि के अवसर पर उपस्थित थे।



मुनिश्री अभिनन्दनसागरजी



श्री धनराजजी का जन्म शेषपुर (सलुम्बर–उदयपुर) में हुआ था। आपके पिताश्री अमरचन्दजी थे व माता रूपीबाई थी। आपकी जाति नरसिंहपुरा व गोत्र बोसा था। आपके तीन भाई व तीन बहिने थी। आजीविका चलाने के लिए पान की दुकान थी। आप बाल ब्रह्मचारी थे। आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा ८ वी तक ही हुई किन्तु धार्मिक शिक्षा काफी है।

आपने सत्सगति व उपदेशों के कारण वैराग्य लेने की सोची। सवत् २०२३ में मुनि श्री वर्धमानसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। फिर धर्मप्रचार करने के बाद स० २०२५ मे आपने आ० श्री शिवसागरजी से ऐलक दीक्षा ले ली। दीक्षा लेने के बाद आपने कई ग्रामों मे भ्रमण करके धर्मोपदेश दिया। अन्त मे स० २०२५ में कार्तिक शुक्ला अष्टमी को मुनि श्री धर्मसागरजी से मुनि दीक्षा ले ली। आपने प्रतापगढ़, घाटोल, नठव्वा, गांमड़ी, दिल्ली, मुजफ्फरनगर, दाताय, श्रवणबेलगोला, आदि स्थानों में चातुर्मास किये।

आपने तेल, नमक, दही आदि का त्याग कर रखा है। आपने अपनी अल्प अवस्था में ही देश व समाज को काफी धर्मामृत का पान कराया है।

२३ वर्ष की आयु, सौम्य शान्त मुद्रा, ऐसी अवस्था में नग्न व्रत धारण कर उन्होने तपोबल द्वारा मुनि धर्म का कठोरता से पालन किया व अपनी दिनचर्या का अधिकांश समय जैनागम के अध्ययन, अध्यापन मे व्यतीत करते है। भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव पर उन्होंने दिल्ली के विभिन्न स्थानों पर प्रवचन करके बड़ी जागृति की है।

श्रुतज्ञान का अचिन्त्य महात्म्य है। श्री जिनेन्द्र देव ने जिसे निरूपण किया है। अर्थ और पद रूप से जिसकी अग पूर्व रूप रचना गणधर देवों ने की है। जिस श्रुतज्ञान के दो भेद हैं अंग पूर्व और अग बाह्य। द्रव्य श्रुतज्ञान और भाव श्रुतज्ञान के भेद से श्रुतज्ञान के अनेक भेद हैं।

भगवान की वाणी औषधि के समान है, जो जन्म मरण रूपी रोगों को हरती है। जो विषय रूपी रोग का विवेचन करती है। और समस्त दु:खो का नाश करने वाली है, जो उस वाणी का अध्ययन करते हैं, वे निर्मल तप करके केवलज्ञान को प्राप्त करते हैं। मुनिराज की अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग की प्रवृत्ति प्रशंसनीय है।



मुनिश्री शीतलसागरजी



आपका जन्म माघ सुदी पंचमी सम्वत् १९५५ के दिन परवार जातीय वाझल्ल गोत्र में श्रीमान् गोपालदासजी मोदी के घर श्रीमती हरबाईजी की कुक्षि से रायसेन जिले के बीरपुर ग्राम मे हुआ था। गृहस्थावस्था में आपका नाम नन्हेलाल था।

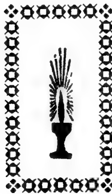
आपके माता-पिता उदार हृदयी सन्तोषी व्यक्ति थे। आप अपने माता पिता के बीच एक मात्र लाडले पुत्र थे। घर गृहस्थी का पूरा भार आपके ऊपर ही निर्भर था। आपके पिता ने आपको मात्र प्रारम्भिक स्कूली शिक्षा ही दिलाई। अल्प शिक्षा प्राप्त कर

आप अपने पिता को व्यापार आदि में सहयोग देने लगे। आपकी आर्थिक स्थिति विशेष सम्पन्न नहीं रही इसीलिए आजीविका की जिम्मेवारी आपके ऊपर थी।

बाईस वर्ष की अवस्था मे बासादेई के श्रीमान् नन्हेलालजी के घर श्रीमती कौसाबाई के साथ आपका विवाह हुआ। पांच वर्ष बाद आप वीरपुरा से व्यापार के उद्देश्य मे सागर चले आए और वहीं रहने लगे। आपको तीन पुत्र और चार पुत्रियों का सयोग मिला।

आपके अन्तर में वैराग्य की निर्मल ज्योति का अंकुरण हुआ फलत रेशदीगिरिजी की पच-कल्याणक प्रतिष्ठा के समय परम पूज्य मुनिराज आदिसागरजी महाराज से दूसरी प्रतिमा के व्रत अङ्गीकार कर लिये। चार माह बाद ही आहारजी अतिशय क्षेत्र में मुनि श्री धर्मसागरजी महाराज से तीसरी प्रतिमा के व्रत ले लिए। अन्तर में वैराग्य की निर्मल धारा बही फलतः सावन सुदी अष्टमी सम्वत् २०२० के दिन सागर में मुनि श्री से ही सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये। शीघ्र ही वह भी समय आया जब अन्तर में सच्ची वैराग्यता झिलमिलाने लगी और कार्तिक शुक्ला एकादशी स० २०२१ के दिन अतिशय क्षेत्र पपौराजी में परम पूज्य दि० जैनाचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से आपने क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली। श्री धर्मसागरजी से मुनिदीक्षा महावीरजी में ली। टौंक में समाधिमरण किया।

ससार की इस क्षण-भंगुर नश्वरता एवं असारता से भयभीत होकर जिस पुरुषार्थ से आपने इस पथ का अवलम्बन किया, वह आपकी सच्ची वैराग्य भावना का प्रतीक है।



मुनि श्री सम्भवसागरजी



उदयपुर शहर मे हूमण जाति मे मंत्रेश्वर गोत्रान्तर्गत श्री जवाहरलालजी के घर श्रीमती चम्पूबाईजी की कुक्षि से आपका जन्म हुआ। आपका जन्म नाम सुरेन्द्रकुमार था। बालक सुरेन्द्र के जीवन पर अपनी दादी की धार्मिक वृत्ति का प्रभाव पड़ा। वे एक धर्म परायण सत्चरित्र सुयोग्य महिला थी। इनके पिता होनहार कर्मठ व्यक्ति हैं तथा मुनीमी का कार्य करते है।

बालक सुरेन्द्र अपनी तीन बहिनो मे ज्येष्ठ और माता पिता का एक मात्र पुत्र होने के कारण सभी के लिए अत्यन्त लाडला और प्रिय था। इसकी प्रारम्भिक स्कूली शिक्षा उदयपुर मे ही कक्षा ४ तक हुई। सुरेन्द्रकुमार जब १० वर्ष का था तब एक स्थानकवासी साधु द्वारा किसी महिला को दीक्षा लेते देखकर इसके अन्तर मे वैराग्य का उदय हुआ। फलत: दो माह बाद ही इसने कुछ व्रत लेकर धार्मिक वृत्ति का परिचय दिया।

जब १२ वर्ष की अवस्था हुई तब दरियाबाद मे हुई मुनिराज आदिसागरजी महाराज की समाधि के अवसर पर ससार की असारता को प्रत्यक्ष देख सुरेन्द्रकुमार विह्वल हो उठा और तभी से गृह त्याग कर दिया। ६ माह बाद ही श्री देवेन्द्रसागरजी महाराज से दूसरी प्रतिमा के व्रत अङ्गीकार कर लिए। भावो में और निर्मलता आई और १४ अगस्त ६४ की शुभ बेला मे परम पूज्य आर्यिका ज्ञानमतीजी से हैदराबाद मे सप्तम प्रतिमा तक के व्रत अगीकार कर लिए। अन्तर मे विराग की निर्मल धारा बहने लगी और कर्म शत्रुओ से लिप्त निर्मल आत्मा में वैराग्य भावना की ज्योति जलने लगी फलतः तीन माह बाद ही कार्तिक शुक्ला एकादशी के दिन परम पूज्य दिगम्बर जैनाचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से अतिशय क्षेत्र परौराजी मे क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर निर्मल वैराग्यमयी भावना का आश्चर्यकारी प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत कर दिया। केवल १८ वर्ष की अल्प अवस्था मे ससार की असारता से भयभीत हो गये सुमार्ग का अनुसरण कर जिस दृढ भावना का परिचय सुरेन्द्रकुमार ने दिया है, वह अनेको भव्यो को कल्याणकारी सकेत की भाति हितकारी है। श्री महावीरजी पंच कल्याणक प्रतिष्ठा में आचार्य धर्मसागरजी से मुनि दीक्षा सं० २०२५ मे ली। तथा मुनि के व्रतों को पाल रहे है।

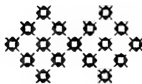


मुनिश्री बोधसागरजी महाराज



मुनि श्री का जन्म बुन्देलखंड में सागर जिले के अन्तर्गत मडखेरा नामक ग्राम में हुआ था। उनके माता-पिता धर्मात्मा थे। बचपन से ही धर्म में बहुत रुचि थी। आचार्य श्री धर्मसागरजी से इन्होंने खुरई में क्षुल्लक दीक्षा ली। ३ साल क्षुल्लक रहे। उसके बाद गुरु श्री धर्मसागरजी से मुनि दीक्षा ले ली और संघ में रहकर स्वाध्याय करने लगे। मुनि दीक्षा लेकर अनेकों तीर्थस्थानों की वन्दना की अन्त में मुजफ्फरनगर में आचार्य श्री के सान्निध्य में समाधि को धारण कर शरीर को छोड़ा।

संसारी जीव जो वीतराग भगवान की शरण में आते हैं, वे आपके स्नेह से नहीं आए है, किन्तु आपके चरण कमलों की शरण में आने का कारण अनेक प्रकार के दुःखों से भरा हुआ यह संसाररूपी महासागर ही है। जिसप्रकार गर्मी के दिनों में सूर्य से संतप्त होकर यह जीव छाया और जल से अनुराग करता है, क्योंकि छाया और जल संताप को दूर करने वाले है, इसीप्रकार आपके चरणकमल भी संसार के दुःखों को दूर करने वाले है, इसलिए संसार के दुःखों से अत्यन्त दुःखी हुए प्राणी उन दुःखों को दूर करने के लिए आपके चरण कमलों की शरण लेते है। इसलिए आपने मुनिव्रत अंगीकार किया।

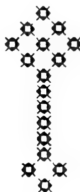


मुनिश्री महेन्द्रसागरजी महाराज



आपका जन्म संवत् १९८३ में टौंक के पलाई ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम बजरंगीलाल एवं माता का नाम श्रीमती कस्तूरबाई था। उनका एक भाई और है। धार्मिक संस्कार होने से उन्होंने बचपन से ही वैराग्य ले लिया। आचार्य महाराज के उपदेश से प्रभावित होकर टौक में क्षुल्लक दीक्षा ली। बूंदी में ऐलक दीक्षा ली फिर शान्तिवीरनगर मे सं० २०२५ मे आपने मुनि दीक्षा ले ली। आपके छोटे भाई ने भी आपसे प्रभावित होकर मुनि दीक्षा धारण कर ली। उदयपुर (राजस्थान) में आपका समाधिमरण हुवा है।

जो मुनिराज पांचों महाव्रतों का पालन करते है। पाचों समितियों का पालन करते हैं, तीन गुप्तियों का पालन करते है। तेरह प्रकार के चारित्र को प्रयत्नपूर्वक पालन करते है, जो ध्यान और अध्ययन में लीन रहते है, ऐसे मुनिराज अपने मन में मोक्षसुख को धारण कर कर्मों का नाश करने के लिए तपश्चरण करते हैं, वे आत्मकल्याण कर अनन्त सुखो के स्वामी हो जाते है। उन्हींका जीवन धन्य है।



मुनिश्री वर्धमानसागरजी महाराज



महाराज श्री का जन्म सनावद (मध्यप्रदेश) में हुआ था। उनके पिता का नाम कमलचन्द्रजी था। उनकी शिक्षा बी० ए० प्रथम वर्ष तक है। वह संसार के क्षणिक सुखों की ओर से विरुद्ध हो गये और महावीरजी में २०२५ में फाल्गुन सुदी अष्टमी को आचार्य श्री धर्मसागरजी से मुनि दीक्षा ले ली। आप बाल ब्रह्मचारी हैं। अनेक उपसर्ग आने पर भी वह पूर्णरूप से विजयी हुए। अब वह निरन्तर अध्ययन में लगे रहते है। अशुभकर्म के उदय से इनकी आंखों की ज्योति चली गई थी। आपने खानियां जयपुर में चन्द्रप्रभु भगवान के सामने शातिभक्ति नामक स्तोत्र का पाठ किया, फलस्वरूप आंखों की ज्योति फिर से आ गई। यह भगवान की भक्ति का प्रभाव है। क्रोधित हुए सर्प के काट लेने से जो असह्य विष समस्त शरीर में फैल जाता है, वह गारुणी की मुद्रा के दिखाने व उसके पाठ करने से, विष को नाश करने वाली औषधियों को देने से, मत्र से और होम करने आदि मे बहुत शीघ्र शात हो जाता है। उसीप्रकार हे भगवान्, जो मनुष्य आपके दोनो चरणरूपी अरुण कमलो का स्तोत्र करते है, दोनो चरण कमलों की स्तुति करते है, उनके समस्त विघ्न नष्ट हो जाते है और शरीर के समस्त रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। हे भगवन् ! यह भी एक महान आश्चर्य की बात है। अन्य विघ्नों को दूर करने के लिए बहुत परिश्रम करना पडता है, परन्तु रोग और विघ्न आदि केवल आपकी स्तुति करने मात्र से दूर हो जाते हैं। यही कारण है, जब युवक मुनिराज भगवान जिनेन्द्र की स्तुति करने क कारण दृष्टि चले जाने पर भी आखों की पुनः दिव्यज्योति को प्राप्त हुए। आपकी प्रवचन शैली बहुत ही आकर्षक है। आप सदैव लेखन एव पठन कार्य मे लीन रहते है।



मुनिश्री चारित्रसागरजी महाराज



मुनिश्री का जन्म सं० १९६२ में देवपुरा (राजस्थान) में हुआ था। उनके पिता का नाम किशनलालजी और माताजी का नाम श्रीमती चम्पाबाई था। आपका जन्म नाम पन्नालालजी था।

आपकी शिक्षा कम हुई। छोटी आयु में विवाह हो गया था। परन्तु आप घर रहकर ही यथाशक्ति धर्म चिन्तन किया करते थे। १९२९ मे श्री आ० शान्तिसागरजी महाराज संघ सहित उदयपुर पधारे। उनसे दिगम्बर धर्म में चलने की प्रेरणा मिली। फलस्वरूप क्रमश व्रत धारण करते हुए आत्म कल्याण के मार्ग पर अग्रसर होते गये।

अजमेर में आचार्यवर धर्मसागरजी से उन्होंने २०२३ मे मुनि दीक्षा ले ली।

जिसप्रकार चिन्तामणि रत्न तथा कल्पवृक्ष आदि अचेतन हैं, तो भी पुण्यवान पुरुषों को उनके पुण्योदय के अनुसार अनेक प्रकार के इच्छानुसार फल देते है। उसीप्रकार भगवान अरहन्त देव यद्यपि रागद्वेष रहित है, तथापि उनकी भक्ति से भक्त पुरुषों को भक्ति के अनुसार फल की प्राप्ति हो जाती है। सम्यक् भक्तिज्ञान और चारित्ररूपी रत्नत्रय ही मोक्ष मार्ग का साधन है और उसकी सिद्धि का साधन यह मुनिधर्म ही है। उदयपुर राजस्थान मे आपने शरीर को छोड़ा तथा आत्म कल्याण मे लगे रहे।

विशेष :--आप बाल ब्रह्मचारी है तथा आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज की पूर्व पर्यायी बहिन के सुपुत्र है। आचार्य महाराज जब ग्रहस्थ अवस्था में हीरालाल के नाम से जाने जाते थे, तब २ वर्ष की अवस्था से ही इनका पालन पोषण किया और उन्ही की प्रेरणा से आपने सन् १९६४ में लगभग १ लाख रुपये की जमीन तथा मकान आदि पैठण क्षेत्र को दान कर दिया।

शुरू से ही आपमें धार्मिक रुचि थी। इसीलिए लगभग ६ वर्ष पूर्व आपने स्व० मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज को पैदल यात्रा करायी तथा साथ में स्वयं भी पैदल यात्रा का लाभ प्राप्त किया।



मुनिश्री भद्रसागरजी महाराज



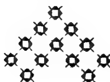
आपका जन्म झालावाड (राजस्थान) में सं० १९७५ बैसाख बदी पंचमी को हुवा था। आपके पिता का नाम बुलाकीचन्दजी जैन तथा मा का नाम श्री केशरबाईजी था। आपका गृहस्थ अवस्था का नाम श्री सूरजमलजी खण्डेलवाल था। आपने आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से सं० २०३३ में मुजफ्फरनगर मे मुनिदीक्षा ली थी। आप तपस्वी सन्त है तथा मुनि व्रतो का पालन कर रहे है।



मुनिश्री बुद्धिसागरजी महाराज



मुनि श्री का जन्म उदयपुर जिले के भिंडर कस्बे की वल्लभनगर तहसील में सं० १९७५ में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री चपालालजी था। आपके परिवार की गिनती कपडे के प्रमुख व्यापारियों मे थी। स्वर्गीय आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज सा० के उदयपुर चातुर्मास के समय आप सघस्थ मुनिराज आदि त्यागीवृन्दो के दर्शनार्थ पधारे थे तब यकायक ही आपमें वैराग्य उमड पडा और आपने तत्काल आचार्य श्री चरणों मे श्रीफल समर्पित कर पाचवी प्रतिमा धारण कर ली। तत्पश्चात् दो वर्ष बाद ही आपने आठवी प्रतिमा ले ली लेकिन उससे भी आपको चैन कहाँ मिलने वाला था। वैराग्य की भावना आपमें घर कर चुकी थी। परिणाम स्वरूप आपने श्री महावीरजी मे प० पू० आचार्य १०८ श्री धर्मसागरजी महाराज सा० मे क्षुल्लक दीक्षा ले ली और बाद में जयपुर पहुंचकर आचार्य श्री से ही मुनिदीक्षा धारण कर ली। आप वर्तमान में धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत हो विहार करते हुये धर्म प्रचार मे लगे हुये हैं।



मुनिश्री भूपेन्द्रसागरजी महाराज



मुनि श्री का जन्म उदयपुर जिले के राठोडा ग्राम मे मिती पोष शुक्ला १० सं० १९७० को श्री जयचंदजी जैन की धर्मपत्नी श्रीमती कस्तूरीबाई की कोख से हुआ था। जन्म से ही आपमें धार्मिक संस्कार कूट कूट कर भरे हुये थे। आपके पारिवारिक जनों में ही वैराग्य की भावना घर किये हुये थी। गृहस्थावस्था में आपको श्री कपूरचन्दजी बागावत नरसिंहपुरा के नाम से जाना जाता था। वैराग्य के प्रति अनुराग होने के कारण आपने सं० २०२४ मे कार्तिक शुक्ला ११ को उदयपुर में प० पू० आचार्य १०८ श्री धर्मसागरजी महाराज सा० से क्षुल्लक दीक्षा धारण कर ली। आपको केवल क्षुल्लक दीक्षा से ही संतुष्टि नही हुई। दो वर्ष के बाद ही आपने पूर्व दीक्षा तिथि के दिन ही जयपुर में आचार्य श्री से मुनि दीक्षा धारण कर ली। संघ के साथ ही आप विहार करते हुए मदनगंज चातुर्मास हेतु पधारे जहाँ आचार्य श्री के सान्निध्य में ही आपने इस नश्वर शरीर को सदा सदा के लिये त्याग दिया।



मुनिश्री विपुलसागरजी महाराज



आपका पूर्व नाम वीरचन्दजी था। जि० टोंक मे पलाई ग्राम में कस्तूरबाईजी की कुक्षि से वि० स० १६६२ चैत्र सुदी त्रयोदशी के दिन जन्म लिया था। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। आपने विवाह नही करवाया बाल ब्रह्मचारी रहे। माघ सुदी पंचमी सं० २०३२ को मुजफ्फरनगर में आचार्य श्री धर्मसागरजी से मुनि दीक्षा लेकर आत्म कल्याण के मार्ग में लगे हैं। आपका अलौकिक व्यक्तित्व आचरणीय है। आचार्य संघ में रहकर आत्म कल्याण के मार्ग में अग्रसर है।



मुनि श्री यतीन्द्रसागरजी महाराज



श्री १०८ मुनि श्री यतीन्द्रसागरजी महाराज का गृहस्थावस्था का नाम श्री देवीलालजी था। आपका जन्म उदयपुर में हुआ था। आपके पिता श्री मगनलालजी व माता श्रीमती गेंदीबाई थी। आप चित्तौड़ा जाति एव गुढीया जाति के भूषण हैं। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। आपके परिवार में दो भाई, चार बहिने, चार पुत्र व चार पुत्रिया थीं।

ग्यारह वर्ष की अवस्था से ही मुनियों की सत्सगति के कारण आपमे वैराग्य की भावना जागृत हुई। परिणामत. कार्तिक शुक्ला ग्यारस, विक्रम सवत् २०२४ मे उदयपुर में आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा धारण कर ली। एक वर्ष बाद ही आपने विक्रम सवत् २०२५ में आचार्य धर्मसागरजी महाराज से शान्तिवीर नगर (महावीर जी) मे मुनिदीक्षा ग्रहण कर ली। आपको भक्तामर आदि सस्कृत स्तोत्रो का विशेष ज्ञान है। आपने प्रतापगढ आदि अनेक स्थानो पर चातुर्मास कर जिनवाणी की आशातीत प्रभावना कर जिनधर्म की काफी वृद्धि की। सोलह-सोलह दिनों के उपवास कर आप सोलहकारण व्रतो का पालन करते हुए अहर्निश ज्ञान, ध्यान, तपोरक्त की उक्ति को जीवन में साकार कर रहे हैं।



मुनिश्री पूर्णसागरजी महाराज



पूज्य मुनि श्री १०८ श्री पूर्णसागरजी महाराज का जन्म अषाढ शुक्ला ८ रविवार सवत् १९७० में कुण्डा ग्राम (कुण्डलगढ) तहसील सराडा मे हुआ था। आपके गृहस्थावस्था का नाम श्री पूनमचन्दजी था। आपने बीसा नरसिहपुरा जाति मे जन्म लिया था। आपके पिता का नाम श्री हेमराजजी व माता का नाम कस्तूरी बाई था। आपकी माता की श्रद्धा भी धर्म मे अधिक थी। उन्होने भी दस दस उपवास व अन्य कई व्रतादिक किये।

आपने गृहस्थावस्था मे रहकर पति पत्नी दोनो ने एक माह का उपवास किया था साथ ही दस दस उपवास भी किये थे। आपने घर मे रहकर ५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया। आपने ५ वर्ष तक सरपंच रहकर जनता का भला किया। घर में ही वैराग्य भावना का चिन्तवन करते थे।

आप सवत् २०३२ के मगसर सुदी चतुर्दशी गुरुवार के दिन सारे गांव को भोजन करा कर, घर का त्याग करते हुए मुजफ्फरनगर मे १०८ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के पास पधारे। तथा आचार्य श्री से माघ शुक्ला पचमी सवत् २०३२ को मुनि दीक्षा धारण की।

महाराज श्री ने भाडोल (सराडा) मे वि० स० २०३६ में पूज्य मुनि श्री सभवसागरजी महाराज के साथ वर्षायोग धारण किया एवं श्रावण माह मे अन्न का त्याग रखा और एकान्तर आहार पर उतरते थे।

आप बारह सौ चौतीस व्रत के अन्तर्गत भाद्रपद माह मे सोलह कारण व्रत के ३२ (बत्तीस) उपवास कर रहे थे। इसी व्रत के अन्तर्गत आपने यम सल्लेखना धारण करली। ३० उपवास की समाप्ति के पश्चात् रात्रि को बारह बजे आप एक दम सोये हुए उठ बैठे और पद्मासन लगाकर णमोकार मन्त्र का ध्यान करते हुए भाद्रपद शुक्ला १५ को नश्वरदेह को त्याग दिया। धन्य है ऐसे तपस्वी मुनिराज।

✿

मुनिश्री कीर्तिसागरजी महाराज



आपका जन्म जयपुर के समीप निवाई मे हुवा था। मुनीमी शिक्षा प्राप्त करने के बाद आप सुजानगढ़ आये तथा यहाँ पर नौकरी करने लगे। आपने आचार्य श्री के प्रवचनों से प्रभावित होकर आचार्य श्री से जैनेश्वरी दीक्षा लेने के भाव प्रगट किए। आचार्य श्री ने भव्यजीव समझ कर सुजानगढ़ में क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की। सन् १९७४ मे दिल्ली आचार्य श्री से मुनि दीक्षा ले ली। केशरियानाथजी स० २०३६ में आपने समाधिमरण किया। आप सरल तथा ज्ञानी ध्यानी मुनि थे।



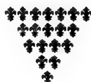
मुनिश्री सुदर्शनसागरजी महाराज

आपका जन्म बारां (कोटा) राजस्थान में आज मे लगभग ८० वर्ष पूर्व हुवा था। आपने आचार्य श्री धर्मसागरजो महाराज से सुजानगढ में मुनि दीक्षा ली। दिल्ली में सन् १९७३ में अचानक बुखार आ जाने से आपका समाधि मरण हो गया।



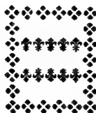
मुनिश्री समाधिसागरजी महाराज

आपने पू० आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से पुनः दीक्षा ली थी। २० वर्षीय मुनि जीवन शरीर की शिथिलता देखकर आपने मुनिपद छोड़ दिया था। आप श्री मल्लिसागरजी जालना वालों के नाम से प्रसिद्ध थे। आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के विशेष सबोधन से आपने पुनः सलूम्बर मे मुनि दीक्षा धारण की तथा संयम एव कठोरता के साथ आपने आचार्य श्री के सान्निध्य में यम समाधि लेकर शरीर को छोड़ा तथा आत्मकल्याण किया। धन्य है आपकी सम्यक् श्रद्धा जिसने आपको पुनः सन्मार्ग पर लगाया।



मुनिश्री आनन्दसागरजी महाराज

श्री ताराचन्दजी का जन्म भारतवर्ष की राजधानी दिल्ली में हुवा था। सामान्य उर्दू में आपकी शिक्षा हुई। आपने कपड़े का कार्य किया तथा गृहस्थ धर्म का पालन किया। आपके २ लड़के है। आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज का दिल्ली की ओर विहार हुवा तब से आप आचार्य श्री के सान्निध्य में रहकर आत्म साधना करते रहे। उदयपुर के समीप ऋषभदेवजी में आपने आचार्य श्री से मुनि दीक्षा ली। पाड़वा (उदयपुर) मे समाधि लेकर शरीर का त्याग किया। जहां पर आपके पार्थिव शरीर का संस्कार किया गया था वह स्थान आनन्दगिरी के नाम से घोषित कर दिया गया है।



मुनिश्री समतासागरजी महाराज



आपका जन्म मध्यप्रदेश मे रायसेन नामक जिले में मडखेरा नामक ग्राम मे हुआ । आपके पिता का नाम श्री इन्दरचन्दजी, माता का नाम श्रीमति सोनाबाई था । आपके यहा व्यापार एव खेती का कार्य होता था । पूरा परिवार धर्म श्रद्धा से ओतप्रोत था । आपके बडे भाई मुनि श्री बोधसागरजी के नाम से जाने जाते थे । भाई की सगति एवं उनके प्रवचनो से आपके मन मे वैराग्य बढ़ा तथा आपने मासोपवासी मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी से ५ वी प्रतिमा के व्रत धारण किए । सघ मे रहकर धर्म साधना करते रहे । पू० आचार्य श्री धर्मसागरजी से केशरियाजी सन् १९८० में आपने मुनि दीक्षा ली । आप प्रतिदिन १०० माला णमोकार मंत्र की जाप्य किया करते है तथा प्रायःकर सारा समय मौन में ही व्यतीत करते हैं । आप संघ के तपस्वी सन्त शिरोमणी साधु हैं । आपके चरणों मे शत शत वंदन ।



मुनिश्री उत्तमसागरजी महाराज



आपका जन्म महाराष्ट्र प्रान्त में फलटण नगर मे सन् १६२६ को हुवा था । आपके पिता का नाम मोतीराम, मा का नाम आलूबाई था । आप ३ भाई बहिन थे । आपकी धर्म में श्रद्धा बचपन से है । आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज के सान्निध्य में आपने वर्षों सघ की सेवा की । आपने तलवाड़ा (बांसवाड़ा) में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के शुभ अवसर पर आचार्य श्री से दीक्षा के लिए निवेदन किया । आचार्य श्री ने सतपात्र समझ कर क्षुल्लक दीक्षा दे दी । साबला (उदयपुर) मे आपने आचार्य श्री से ऐलक दीक्षा ली तथा पारसौला (उदयपुर) मे आपने आचार्य श्री से ही मुनि दीक्षा लेकर आत्मकल्याण के मार्ग में संलग्न है । अष्ट कर्मों के नाश करने हेतु आप निरत हैं, धन्य है ऐसी दिगम्बर मुद्रा को, जो ऐसी कठोर साधना कर रहे है ।



मुनिश्री निर्वाणसागरजी महाराज



मुनि श्री का जन्म लगभग ३८ वर्ष पूर्व उमरमरा (विलासपुर) मध्यप्रदेश मे श्री सरजूप्रसादजी के गृह में हुआ था। आपकी माताजी का नाम श्री मतिदेवीजी था। आपका पूर्व नाम ब्रजभान जैन था। मुनि श्री के पूर्व गृहस्थ अवस्था मे १३ भाई बहिन थे। आपकी लौकिक शिक्षा ११ वी तक हुई। सोनागिर क्षेत्र पर मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी के दर्शन से आपके मन में वैराग्य के अकुर प्रगट हुए। दिल्ली में भगवान महावीर स्वामी के पच्चीस सौ वे निर्वाण महोत्सव वर्ष में आपने क्षुल्लक दीक्षा आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से ली तथा मुजफ्फरनगर (उ. प्र) सन् १९७६ मे माघसुदी पंचमी को दिगम्बरी दीक्षा लेकर आत्मकल्याण कर रहे है।



मुनिश्री मल्लिसागरजी महाराज



आपका जन्म कर्नाटक प्रान्त के जिला बेलगांव के अन्तर्गत ग्राम सदलगा में मातेश्वरी काशीबाई की कोख से वि० सम्वत् १९७४ में सुप्रभात की शुभलग्न में हुआ था। आपका बचपन का नाम मल्लप्पा था। आपके पिता श्री पार्श्व अप्पा सरल, परिश्रमी, धर्मात्मा, दयालु एवं शान्त स्वभावी थे। उनका तम्बाकू का व्यापार तथा खेतीबाड़ी का कार्य था। ग्राम के गणमान्य व्यक्तियो मे उनकी गिनती होती थी।

स्कूल की शिक्षा के उपरान्त हमारे चरित्र नायक श्री मल्लप्पा को पिताजी ने व्यापार में लगा दिया। आपने बड़े परिश्रम और न्याय से व्यापार को चलाया। परन्तु प्रारम्भ से ही आपकी धर्म मे रुचि थी। प्रातःकाल उठकर श्री मन्दिरजी मे जाना, णमोकार-मन्त्र की माला जपना आदि नित्य के कार्य थे। आपका विवाह एक सम्पन्न घराने मे हुआ था। आपके चारपुत्र और दो पुत्रियां हुई।

दस वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य व्रत पालते हुए आपने माघ शुक्ला ५ वि० स० २०३२ को मुजफ्फर नगर (उ० प्र०) मे परम पूज्य १०८ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से अपार जन समूह के समक्ष सीधे ही मुनि दीक्षा ली। आपका नाम श्री मल्लिसागरजी महाराज रखा गया। आचार्य श्री ने आपसे दो माह के लिये नमक त्यागने को कहा परन्तु धन्य है आपका त्याग और गुरुभक्ति कि आपने जीवन भर के लिये नमक का त्याग कर दिया।

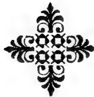
आपके गृहस्थ जीवन की धार्मिकता और संस्कारों का प्रभाव आपके परिवार पर बहुत गहरा पड़ा। बड़े पुत्र महावीरजी व बडी पुत्री गृहस्थाश्रम मे है।

आपके बड़े पुत्र बाल ब्रह्मचारी श्री विद्याधर ने १८ वर्ष की अल्पायु में श्री १०८ आचार्य श्री ज्ञानसागरजी महाराज से सीधे ही मुनि दीक्षा ली और २३ वर्ष की अल्पायु में ही आचार्य पद से विभूषित किये गये। जिनका दीक्षा महोत्सव अजमेर में अत्यन्त समारोह पूर्वक मनाया गया था।

वे अत्यन्त शान्तस्वभावी, निस्पृही, परमज्ञानी, सुवक्ता तथा कवि व युवा आचार्य श्री विद्यासागरजी हैं।

आप (श्री मल्लिसागरजी) के अन्य दो पुत्रों तथा पत्नी और दोनों पुत्रियों ने आपके साथ दीक्षा ग्रहण की। आपके द्वितीय पुत्र श्री अनन्तनाथ ने ऐलक दीक्षा ली, नाम श्री योगिसागर रखा गया। तीसरे पुत्र का नाम श्री शान्तिनाथ था तथा ऐलक दीक्षा के उपरान्त श्री समयसागर नाम रखा गया। आपकी धर्म पत्नी श्री मतिबाई का नाम श्री आर्यिका समयमतीजी रखा गया। आपकी छोटी पुत्री स्वर्णमाला का नाम दीक्षा उपरान्त प्रवचनमतीजी रखा गया। दोनों ऐलक अब मुनि श्री बन गये है जो आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के संघ में हैं।

इसप्रकार आपका पूरा परिवार दीक्षा धारण करके धर्मसाधन और ज्ञानोपार्जन मे पूर्णतया रत है। इस काल मे जबकि लोग व्रत, संयम तथा चारित्र पालन को कठिन समझते हैं, आपका जीवन एक महान आदर्श उपस्थित करके हम सबकी आंखें खोलने तथा चारित्र की ओर दृढता पूर्वक बढ़कर आत्म कल्याण करने एवं मानव जीवन को सफल बनाने की प्रेरणा देता है।

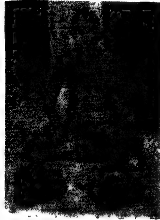


मुनि श्री रविसागरजी महाराज



खाते-पीते घर के हजारीलाल जैन को क्या सूझी कि छोटेपन मे साधुओ की जमात मे शामिल होने को छटपटा उठे । व्यवहारी जैसी छोटी सी बस्तियों मे साधुग्रो का ग्राना-जाना कभी हुग्रा हो यह बात तो गांव के ग्रतिवृद्ध को भी ठीक मे याद नही, सो हजारीलालजी साधुसेवा की अपनी उमगे दूरदराज के शहरों में विराजमान साधुओ की सेवा करके ही पूरी कर पाते थे । साधुसेवा ग्रौर स्वाध्याय की मेहनत कुछ ऐसा रंग लायी कि वैराग्य की निर्भरणी बहने लगी । श्रावक लक्ष्मीचन्द जैन व चतुरी बाई की यह प्यारी संतान मगसिर कृ० १२ सन् १९७९ जबलपुर में विराजमान आ० श्री सन्मतिसागरजी म० के चरणो मे क्षुल्लक दीक्षा की याचना करने उपस्थित हुई । श्रावकवर्ग के समक्ष दीक्षा विधि पूरी हुई और क्षु० रविसागरजी महाराज की जय हो के नारों से आपके इस ग्रनुकरणीय मार्ग की सराहना की । ग्राचार्य श्री धर्मसागरजो से सावला (राजस्थान) में मुनि दीक्षा ली । सम्प्रति गुरुचरणों में वयावृत्ति करते हुए शास्त्रो का स्वाध्याय कर रहे है ।





मुनिश्री जिनेन्द्रसागरजी महाराज

आपका जन्म राजस्थान प्रान्त के नागौर नगर में सन १६१८ मे हुवा। आपके पिता का नाम श्री केसरीमलजी व माता का नाम श्रीमति भंवरीदेवी था। आपका पूर्व नाम रतनलालजी था। आप अपने पिता के इकलौते पुत्र थे। १६ वर्ष की उम्र मे माता पिता का स्वर्गवास हो गया। आपने संघर्षमय जीवन व्यतीत करते हुए इम्फाल (मणीपुर) मे व्यवसाय शुरू किया तथा धनोपार्जन किया। सन् १६७५ मे आपके मन मे वैराग्य की भावना का उदय हुवा और इसी भावना से आपने व्यापार से सन्यास धारणकर त्यागमार्ग को अपनाया। सन् १६८० में आपने सन्यासमय जीवन प्रारम्भ किया। १८ अक्टूबर १६८० को नागौर में आपने मुनि श्री श्रेयाससागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। मानव जीवन के सर्वश्रेष्ठ एवं महत्वपूर्ण स्थान को प्राप्त करने के लिए १९८२ में आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से साबला (उदयपुर) में मुनि दीक्षा धारण की।



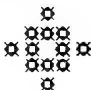
मुनि श्री गुणसागरजी महाराज



१०८ श्री मुनि गुणसागरजी महाराज का जन्म महाराष्ट्र राज्य के बीड़ जिले में सुरम्य उमापुरी ग्राम के श्रीमान श्रेष्ठी चम्पालालजी पाटनी जाति खण्डेलवाल की धर्मपत्नी माता कस्तूराबाई की कुक्षि से स० १६६६ में हुआ आपका जन्म नाम राजमल था। आपके और भी तीन बडे भ्राता उत्तमचन्दजी, गुलाबचन्दजी, पूनमचन्दजी थे। माता-पिता और भाई-बहनों के प्यारे लघु कु वर राजमलजी ही थे। आप स्वर्गीय आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज के भानजे थे। जैसे मामा ने आत्मकल्याण का मार्ग ढू ढा उसी मार्ग के आप भी प्रवर्तक हुए। आचार्य महाराज श्री की सतत् प्रेरणा से आप बचपन से ही सघ मे रहने लगे। आचार्य श्री की पूर्ण कृपा थी। स० २०२६ में आपने दूसरी प्रतिमा के व्रत लिये और धीरे धीरे आगे बढते हुए सप्तम प्रतिमा धारण की आप बाल ब्रह्मचारी है।

स० २०२५ मे शान्तिवीर नगर मे पच कल्याणक प्रतिष्ठा के समय आचार्य श्री का अकस्मात् स्वर्गवास हो जाने से आपका मन ससार से विरक्त हो गया और आपने नवीन आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की।

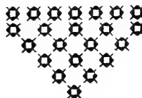
भगवान् महावीर २५०० सौवे निर्वाण महोत्सव के शुभ अवसर पर सघ भारत की महान नगरी दिल्ली में आया। वहा पर आपने आचार्य श्री से मुनि दीक्षा ग्रहण की और आपका नाम गुणसागर रखा। जैसा नाम वैसा गुण आपमें नजर आता है। आप कई वर्षो से १०८ श्री अजितसागरजी महाराज के सघ मे निरन्तर धर्म ध्यान मे रत है।





ऐलक श्री वैराग्यसागरजी महाराज

आपका जन्म माघ शुक्ला ८ स० १९६६ को नवा गाव, उदयपुर (राजस्थान) मे हुआ था। आपके पिता का नाम श्री गुमानमलजी और माता का नाम श्रीमती चुन्नीबाई था। गृहस्थ अवस्था में आपको श्री चुन्नीलालजी के नाम से सबोधित किया जाता था। गृहस्थावस्था मे धर्म के प्रति आपकी तीव्र लगन और वैराग्य के प्रति स्नेह था। परिणामस्वरूप प० पूज्य आचार्य १०८ श्री धर्मसागरजी महाराज सा० से आपने सं० २०२८ मे क्षुल्लक दीक्षा धारण की। तत्पश्चात् स० २०२९ में ही मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज सा० से आपने ऐलक दीक्षा ले ली। आपकी समाधि सघस्थ विहार करते हुये बड़ा गाव (खेखड़ा) उ० प्र० मे आचार्य श्री के सान्निध्य में हुई।



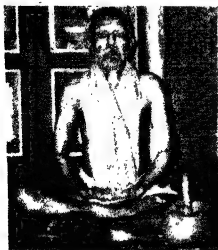
क्षुल्लक श्री पूरणसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक श्री पूरणसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम राजमलजी जैन था। आपका जन्म आज से लगभग ७५ वर्ष पूर्व घरोजा जिला शाजापुर में हुआ था। आपके पिता श्री केशरीमलजी व माता श्री जडावबाई थी। आप जैसवाल जाति के भूषण है व माबला गोत्रज हैं। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। आपकी दो शादियां हुई। आपके परिवार में दो पुत्र एव दो पुत्रियां है।

ससार की नश्वरता को जानकर आपने स्वेच्छा से विक्रम सवत् २०१७ की पूर्णिमा को बूंदी (राजस्थान) में आचार्य १०८ श्री धर्मसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपने शाहगढ़, सागर, खुरई, झालरापाटन आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म वृद्धि की। आपने रस त्याग व दही का त्याग कर दिया है।



क्षुल्लक श्री संवेगसागरजी महाराज



आपका जन्म सं० १९६५ में डूंगरपुर जिले के सरोदा ग्राम मे हुवा था। आपके पिता का नाम माणिकचन्दजी तथा मां का नाम मोतीबाई था। आपके ४ बच्चे थे। अपना सारा जीवन व्यापार आदि में ही व्यातीत किया। बागड प्रान्त में आचार्य श्री के आगमन पर आपने आचार्य श्री से ७ वीं प्रतिमा धारण की तथा २-६-८३ को पारसोला (उदयपुर) राजस्थान मे परम तपस्वी आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा धारण की। आप संघ में रहकर आत्म कल्याण के पथ पर अग्रसर हैं।



क्षुल्लक श्री सिद्धसागरजी महाराज

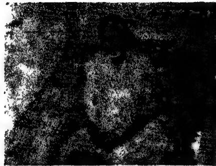


पद	—	क्षुल्लक
जन्म तिथि	—	श्रावण कृष्णा ५ सं० १९८१
जन्म स्थान	—	लाडनू (राजस्थान)
श्रावक अवस्था का नाम	—	श्री शिवकरणजी
पिता का नाम	—	श्री सेठ मागीलालजी अग्रवाल
माता का नाम	—	मौजी देवी
क्षुल्लक दीक्षा	—	माह सुद ५ सं० २०३२ सन् १९७६

श्री १०८ आ० धर्मसागरजी महाराज से मुजफ्फर नगर में धारण की।



क्षुल्लक श्री योगेन्द्रसागरजी महाराज

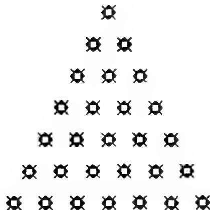


आपका जन्म राजस्थान के पवित्र जिला बासवाड़ा सुरम्य भोमपुर गाव मे श्रीमान् श्रेष्ठी श्री कस्तूरचन्दजी जाति नरसिंहपुरा माता चमचोबाई की कुक्षि से सवत् १९८१ मार्गशीर्ष शुक्ला २ की शुभ बेला में हुवा। आपका जन्म नाम फूलचन्द रक्खा गया। आप दो भाई थे। छोटे का नाम मणीलालजी था। देवयोग से आपके पिताजी का देहावसान हो गया जब आप तीन या चार वर्ष के थे। माता ने दोनों को बहुत ही लाड प्यार से बड़ा किया। जब आप होशियार हुये तो यथा योग्य पाठशाला में पढ़ने भेजा गया और साथ ही धार्मिकज्ञान भी कराया। अल्पवय में ही आपकी शादी करादी गई। आपके तीन पुत्र व तीन पुत्रिया हैं। आपमें बचपन से धार्मिक संस्कार होने से शास्त्रों का अध्ययन आप बडी रुचिपूर्वक करते थे। राजनीति मे भी आपका स्थान था जो कि १८ साल तक आप निर्विरोध सरपच के पद पर रहे इसलिये जन साधारण मे भी आपका अच्छा प्रभाव था। हर साल जहा तहां साधु सघ विराजमान रहते आप आहारदान के लिये चौका लेकर जाते एवं अनेक बार सपरिवार सम्मेदशिखर, गिरनार, बाहुबली आदि की तीर्थयात्रा एवं जन्म स्थान भोमपुर में नवीन चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मन्दिर के निर्माण कार्य में एव वहा दो बार पंच कल्याणक प्रतिष्ठा आदि में आप का ही पूर्ण सहयोग रहा एवं सिद्धचक्र विधान आदि जिनभक्ति निरन्तर करते रहते थे।

परम पू० १०८ आचार्य प्रवर श्री शिवसागरजी महाराज का संघ सहित उदयपुर सं० २०२५ का चातुर्मास था जब पूज्य मुनि सुपार्श्वसागरजी महाराज की समाधि के अवसर पर आप सपरिवार चौका लेकर गये और वहा आपने सातवी प्रतिमा के व्रत धारण कर लिये। जब से आपका वैराग्य बढ़ता गया। थोड़े दिनों में ही गृहजाल का त्याग कर दिया और बांसवाड़ा में एवं डूंगरपुर

उदयपुर के जिलो मे अनेक गावों मे पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं अनेक वेदी प्रतिष्ठा, बड़े बड़े बिधानों का आयोजन भी आपने निर्भोमता से केवल धर्म प्रभावना की भावना को लेकर कराये है जिससे तीनों जिलों में आपका बहुत ही अच्छा प्रभाव रहा। परम पू० आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज सहारनपुर स० २०३२ के चातुर्मास के बाद मुजफ्फर नगर सघ का विहार हुआ था। वहां पर आचार्य श्री से आपने नवमी प्रतिमा के व्रत लिये और आपका नाम धर्मभूषण वर्णी रखा। आप विशेष कर संघ के साथ रहते थे। आपके भाई ब्र० मणीलालजी भी आपके साथ एव आपकी माता ब्र० चमनीबाई तीनों प्राणी साथ में रहकर आहार दान आदि देते हुवे निरन्तर धर्मध्यान करते थे। आचार्य श्री का चातुर्मास २०३८ का बासवाड़ा में था जब महाराज श्री के सान्निध्य में ही माता चमनीबाई का धर्मध्यान पूर्वक समाधि मरण हो गया।

स० २०३९ के वैसाख कृष्णा ७ को आदिनाथ दि० जेन मंदिर पारसोला में मानस्तम्भ पंच-कल्याणक प्रतिष्ठा जो कि आपके द्वारा ही सम्पन्न हुई उसी अवसर पर परम पूज्य १०८ आचार्य शिरोमणि धर्मसागरजी से विशाल मुनिसंघ के सान्निध्य में क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। तब इनका नाम योगेन्द्रसागरजी रक्खा गया। अभी आप परम पू० १०८ श्री अजितसागरजी महाराज के संघ में रहते हुवे निरन्तर पठन पाठन एवं धर्मध्यान में रत है।



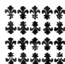


क्षुल्लक श्री करुणासागरजी महाराज

क्षुल्लकजी का जन्म स्थान राजस्थान के बासवाडा जिले में सुरम्य अति रमणीय लोहारिया नगर में श्रीमान धर्मनिष्ठ श्रेष्ठि दाड़मचन्दजी नरसिंहपुरा की धर्मपत्नी माता श्री कुरीबाई की कुक्षि से स० १९७० फाल्गुन शुक्ला १५ को हुआ। आपका जन्म नाम छगनलाल रक्खा गया आपके तीन भ्राता और एक बहिन थी। आपके छोटे भाईयो का नाम जवेरचन्द, हुकमीचन्द और मीठालाल है। आपके पिताजी गांव के सर्व मान्य व्यक्ति थे। आपकी आर्थिक स्थिति कमजोर होने से तीनो भाई बम्बई धनोपार्जन हेतु गये वहा काफी धन उपार्जन कर अपनी स्थिति सुदृढ बनाई। आपके छोटे भाई श्री जवेरचन्दजी ने ३५ वर्ष की उम्र मे ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया। उन्होंने पार्श्वनाथ दि० जैन मन्दिर लोहारिया का जीर्णोद्धार कराया। बासवाडा डूंगरपुर आदि जिलों में भी अनेक मंदिरों का जीर्णोद्धार कराया। धर्मशाला बोर्डिंग जैन पाठशाला आदि का कार्य किया। ऐसे थे आपके लघु भ्राता जिन्होने परम पू० १०८ आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा लेकर मुनि पार्श्वकीर्ति नाम से प्रसिद्ध हुवे और गत वर्ष रूपा पारोली (जि० भीलवाडा) में समाधि पूर्वक स्वर्गवास को प्राप्त हुये।

आपने उदयपुर में १०८ मुनि श्री पार्श्वसागरजी से सातवीं प्रतिमा धारण की और इसी वर्ष २०३९ मे पारसोला पच कल्याणक प्रतिष्ठा के सुअवसर पर १०८ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की और आपका नाम करुणासागर रखा।

आप अभी १०८ श्री अजितसागरजी महाराज के संघ मे रहकर निरन्तर धर्मध्यान रत हैं।



क्षुल्लक श्री देवेन्द्रसागरजी महाराज



क्षुल्लक श्री देवेन्द्रसागरजी का जन्म राजस्थान के डूगरपुर जिले में साबला गाव में श्रीमान् कचरूलालजी एवम् माता श्री चम्पीबाई की कुक्षि से स० १६७७ में हुआ। आपका जन्म नाम देवचन्दजी था। आपके तीन भ्राता पन्नालाल, गेबीलाल, लक्ष्मीलाल थे।

आप स्वभाव से सरल एवम् धार्मिक प्रवृत्ति वाले थे। आप बाल ब्रह्मचारी हैं आप अपने बडे भाई गेबीलालजी के साथ जैन पाठशाला मे अध्यापन और व्यापार मे भी ध्यान देते हुए सादगी पूर्ण जीवन व्यतीत करते रहे। आचार्य श्री १०८ धर्मसागरजी महाराज का ससघ साबला नगर मे पदार्पण हुआ और बाहुबली वेदी प्रतिष्ठा के अवसर पर आपने सातवी प्रतिमा को धारण किया। आप श्री धर्मभूषण वर्णीजी महाराज के साथ रहकर धर्म अध्ययन करते रहे।

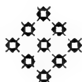
पारसोला मे स० २०३६ में मानस्तम्भ की पंच कल्याणक प्रतिष्ठा के सुअवसर पर आपने आचार्य श्री १०८ धर्मसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की।

इस समय आप मुनि श्री १०८ श्री अजितसागरजी महाराज के साथ रहकर निरन्तर पठन पाठन करते हुये धर्म ध्यान पूर्वक अपने चारित्र का पालन कर रहे है।



क्षुल्लक श्री परमानन्दसागरजी महाराज

गृहस्थ अवस्था का नाम	—	पवनकुमार स्वदेशी
पिता का नाम	—	गोकुलचन्दजी स्वदेशी
माता का नाम	—	प्यारीबाईजी
निवास स्थान	—	इन्दौर
जन्म तिथि एवं जन्म स्थान	—	३०-११-१९५१, श्री सिद्धक्षेत्र माँगीतुंगी
लौकिक-अध्ययन	—	बी. कॉम
दीक्षा तिथि एवं स्थान	—	प. पू. आचार्य १०८ श्री धर्मसागरजी महा०
धार्मिक अध्ययन	—	प्रायः चारों अनुयोग



आर्यिका अनन्तमतीजी

आपका जन्म जिला औरंगाबाद में कन्नड़ नामक ग्राम में सेठी कुलोत्पन्न श्रीमान सेठ हीरालालजी के घर माता सरूपाबाई की कोख से सं० १९३९ में हुवा । जन्म के समय आपका नाम सोनाबाई रक्खा ।

आपके माता पिता अत्यन्त सरल स्वभावी दानी और जैनागम के परम श्रद्धानी थे । इनके सुलक्षणों का प्रभाव इनकी सन्तान पर पड़ा ।

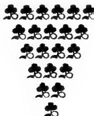
बालिका सोनाबाई का पाणिग्रहण १३ वर्ष की अल्प आयु में आहूल निवासी श्री सुखलालजी काशलीवाल के साथ हुवा था । आपके एक पुत्र तथा एक पुत्री थी । कर्म की गति विचित्र है । विवाह के ९ वर्ष बाद आपके पति श्री सुखलालजी का देहावसान हो गया ।

आपके दोनों कुल सम्पन्न और ऐश्वर्यशाली थे किसी भी प्रकार की चिंता नहीं थी। आपने अपने कर कमलों द्वारा दान भी खूब दिया। आपने चालीस हजार की धनराशि पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में तथा पांच हजार दीक्षा के शुभावसर पर दान किए थे। इसके अलावा और भी हजारों रुपयों का दान आपने किया। अनेकों जगह जिनेन्द्र प्रभु की मूर्तियां स्थापित कराईं। श्री महावीरजी क्षेत्र में भगवान महावीर की ३ फुट उत्तुंग प्रतिमा स्थापित कराई।

इस प्रकार धन वैभव से सम्पन्न, प्रतिष्ठा और मान-मर्यादा में उत्तम, दान में शिरोमणि होती हुई भी आपने इन सब सांसारिक वैभवों को क्षणभंगुर समझा। आप बाल्यकाल से ही इस असार संसार से उदासीन थी और पति के स्वर्गारोहण हो जाने से आपने अपने अन्तर में आत्म कल्याण की भावना को प्रोत्साहन दिया। फलतः उदयपुर में हुए आचार्यवर चारित्र चक्रवर्ती श्री शान्तिसागरजी महाराज के चातुर्मास के शुभावसर पर आचार्य श्री के सद्उपदेशों से प्रभावित होकर ७ वी प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिए, संघ में रहकर आपने अनेकों वर्षों तक संघ की तन मन धन से भक्ति पूर्वक सेवा की। इतने पर भी आपको सन्तोष न हुआ फलतः आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज की सम्मति से आचार्य वीरसागरजी महाराज से नागौर नगर में मंगसिर शुक्ला षष्ठी शुक्रवार विक्रम सं० २००६ को क्षुल्लिका की दीक्षा ग्रहण कर ली। आचार्य श्री ने आपका नाम बदलकर श्री 'अनन्तमतीजी' रखा।

माता अनन्तमतीजी क्षुल्लिका की दीक्षा के बाद अनेक परिषहो को सहन कर कठोर व्रतों का पालन करने लगी और आत्म कल्याण की ओर तत्पर हो उग्र तप साधना के साथ कठिन व्रतों का अभ्यास करने लगी। आपकी इस आत्म-कल्याण की कठोर साधना को देखकर आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज ने कार्तिक सुदी एकादशी स० २०२२ को महाव्रतों के पालने का उपदेश व आज्ञा देते हुये, हजारों नर-नारियों के बीच आपको खुरई (सागर) में "आर्यिका" की दीक्षा दे दी।

इस प्रकार प्रारम्भ से आप धार्मिक प्रभावना व आत्म-कल्याण हेतु तप साधना में तत्पर व अग्रसर हैं। आपको शतशः नमन।



आर्यिका अभयमतीजी



जब परम पूज्य आचार्य श्री १०८ स्व० वीरसागरजी महाराज की शिष्या आर्यिका श्री १०५ ज्ञानमती माताजी ने हैदराबाद मे चातुर्मास किया तब ही परम पूज्य आचार्य श्री १०८ स्व० शिवसागरजी महाराज से आज्ञा प्राप्त कर पूजनीया ज्ञानमती माताजी ने ब्रह्मचारिणी मनोरमाबाई को क्षुल्लिका दीक्षा दी और इनका नाम अभयमती रखा। इस उपलक्ष मे मनोरमाबाई ने १४-८-१९६४ को अपनी ओर से उमास्वामी श्रावकाचार ग्रन्थ भी प्रकाशित करवाया था।

आपका जन्म आज से ३१ वर्ष पूर्व टिकेतनगर (बाराबंकी) उत्तरप्रदेश में हुआ। आपके पिता श्री छोटेलालजी गोयल है। और माता मोहनीदेवी है तथा पूजनीया ज्ञानमती माताजी आपकी बड़ी बहन हैं। बचपन में आपको मनोवती कहते थे। मनोरमा बहन की बाल्यकाल से ही घरेलू कार्यों की ओर उतना रुझान न था जितना कि साधु सत्संग धर्मोपदेश-लाभ की ओर था। घर पर आपने तत्वार्थ सूत्र तक धार्मिक शिक्षा ली। आप बचपन से ही उदार व सरल स्वभाव की थी।

सवत् २०१८ में फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष में जब लाडनू में मानस्तम्भ की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा थी और आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी महाराज ससंघ विराजमान थे तब आप मा के साथ दर्शन के लिए आई और मा को राजी कर आचार्य श्री से एक वर्ष के लिए ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया। सघ मे ही रहने लगी। सघ के साथ शिखरजी की यात्रा की। आरा नगर में पहुंचने पर आचार्यश्री १०८ विमलसागरजी महाराज से आपने पाचवी प्रतिमा के व्रत ले लिये थे। शिखरजी मे भगवान् पार्श्वनाथजी की टोंक पर आपने माताजी से सातवीं प्रतिमा के व्रत ले लिये थे। कलकत्ता से संघ पुन शिखरजी पहुँचा। फिर खण्डगिरि उदयगिरि होता हुआ हैदराबाद पहुँचा। आपने ज्ञानमती माताजी से आर्यिका दीक्षा देने के लिये आग्रह किया तो उन्होने आचार्यश्री की अनुमति आवश्यक बतायी। आपने आचार्य श्री १०८ धर्मसागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली।

आपने सर्वार्थसिद्धि, गोम्मटसार तक धार्मिक अध्ययन जहां किया वहां न्याय-व्याकरण के ग्रन्थ भी पढ़े। संघ के नियमानुसार आप अपना अधिकांश समय धर्म ध्यान व शास्त्र स्वाध्याय मे लगाती है।



आर्यिका श्री विद्यामतीजी



१० जनवरी १६१६ को मुबारिकपुर अलवर जिले मे आपका जन्म हुवा था। आपके पिताजी का नाम चिरजीलालजी एवं माताजी का नाम इमरतीबाई था। आप पालीवाल जाति की है। आपकी शादी पालम दिल्ली में हुई आपके दो लडके है। आपके पति का वियोग होने से आपको अपने आप पर निर्भर होना पडा तथा आपने शिक्षक का पद सम्भाला तथा २० वर्ष तक स्कूल में बच्चों को शिक्षा दी। संसार से अनायास वैराग्य आया तथा आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से महावीरजी में स० २०२५ में आर्यिका दीक्षा ली। आप कुशल वक्ता तथा तपस्वी साधु हैं। दशलक्षण, अठाई, सोलह कारण, आदि उपवास आप सदा करती रहती है।



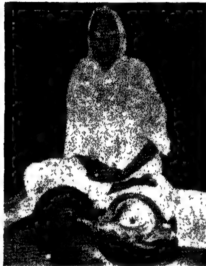


आर्यिका संयममतीजी

वि स० १६७६ मे मनोबाई का जन्म बागपत मेरठ यू० पी० में हुवा था। पिताजी का नाम श्री मोहनलालजी तथा माताजी का नाम श्री कमलाबाई था। आपने मगसिर सुदी दसमी सं० २०२९ मे क्षुल्लिका दीक्षा ली थी। तथा सं० २०३१ में आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली। आप सरल एव तपस्वी साध्वी है।



आर्यिका विमलमतीजी



श्री १०५ विमलमतीजी का गृहस्थावस्था का नाम फुलीबाई था। आपका जन्म आज से लगभग ७० वर्ष पूर्व अडंगाबाद (बंगाल) मे हुआ था। आपके पिता श्री छेगमलजी थे। जो प्रेस का काम करते थे। आपकी माता श्री दाखाबाई थी। आप खण्डेलवाल जाति की भूषण है। आपकी धार्मिक और लौकिक शिक्षा साधारण हुई। आपका विवाह भी हुआ। आपके परिवार में तीन भाई, दो बहन, तीन पुत्र व तीन पुत्रिया है।

गुरु संगति के कारण भावो में विशुद्धि आयी। अतः आपने विक्रम स० २०२६ में सुजानगढ़ (राजस्थान) मे श्री आचार्य विमलसागरजी से क्षुल्लिका दीक्षा ले ली। आपको णमोकार आदि मत्र का विशेष ज्ञान है। आपने तेल, दही आदि रसो का त्याग किया है तदनन्तर आचार्य धर्मसागरजी से आर्यिका दीक्षा लेकर आचार्य संघ में धर्म साधनारत है।



आर्यिका सिद्धमतीजी



आपका जन्म स० १९७१ वैसाख सुदी पूर्णिमा को जयपुर में हुवा था। आपका पूर्व नाम कल्लीबाई था। आपके पिताजी का नाम श्री केशरमलजी था। आपकी मा का नाम श्रीमति बच्ची-बाईजी था। आपकी शिक्षा दूसरी तक ही हुई। स० २०२९ में कार्तिक सुदी १२ जयपुर मे आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली। आप कठोर तपस्वी हैं। आप समय समय पर १०–१० उपवास करती रहती है।



आ० जयमती माताजी



सं० १९९३ में मुजफ्फरनगर (यू० पी०) में श्री पदमप्रसादजी के यहा जन्म लिया था । आपका पूर्व नाम शान्तिबाई था । आपकी माताजी का नाम मीना देवी था । आपने ११ वीं तक लौकिक शिक्षण प्राप्त किया । सं० २०२९ मे जयपुर में आपने आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली ।

आर्यिका शिवमती माताजी



श्री शीलाबाई का जन्म ३८ वर्ष पूर्व श्रवण बेलगोला (कर्नाटक) मे श्री धरणप्पाजी के यहां हुवा था । आपके ३ भाई तथा ६ बहिने है । आप बाल ब्रह्मचारिणी है । आपकी शिक्षा कन्नडी भाषा मे हुई थी । पू.आ. ज्ञानमतीमाताजी के उपदेश से आपने गृहस्थ जीवन का त्याग करके आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से मार्गशीर्ष वदी दसमी सन् १९७४ को भारतवर्ष की राजधानी दिल्ली में आर्यिका दीक्षा ग्रहण की आप निरन्तर आत्म साधना में रत हैं । आप सरल एव शान्त प्रकृति की हैं ।



आर्यिका नियममतीजी



आपका जन्म सदलगा कर्नाटक में हुवा था। आपके माता पिता धार्मिक प्रवृत्ति के थे। धार्मिक संस्कार आपमें छोटेपन से ही थे। आपके ३ भाई १ बहिन तथा मा एव पिताजी ने जैनेश्वरी दीक्षा ली। आपने भी अल्प वय मे आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से मुजफ्फर नगर (U. P.) में आर्यिका दीक्षा ली। आपका नाम नियममती रखा गया।



आ० समाधिमतीजी



जेठ सुदी दोज स० १९६० में रायपुर निवासी श्री मेहरचन्दजी अग्रवाल की धर्मपत्नी श्री भागवन्ती देवी की कुक्षि से फीरीबाई ने जन्म लिया था। जिन्होने माघ सुदी पचमी स० २०२३ मुजफ्फर नगर मे आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा लेकर आर्यिका समाधिमतीजी नाम धारण किया।



आर्यिका निर्मलमतीजी



जन्मस्थान--बैराठ (जयपुर) राजस्थान
जन्मदिवस—मगसिर बदी १२ सं० १९८०
माता का नाम-- गोपालीबाई
पिता का नाम — श्री महादेव सिंघई
जाति— अग्रवाल जैन
पूर्वनाम— मनफूलबाई

आपका जन्म राजस्थान के एक सम्पन्न परिवार मे हुआ। १३ वर्ष की आयु में आपका विवाह हो गया। परन्तु अशुभ कर्म के उदय से ११ महीने के बाद ही वैधव्य का भार आपके सिर पर आगया। इस अवस्था को देखकर घर वाले अनन्त शोक को प्राप्त हुए। परन्तु आपने इस दारुण कष्ट को सम भावना से सहन किया और परिवार के आग्रह करने पर भी दुबारा विवाह करने से मना कर दिया।

आपने आचार्य देशभूषणजी महाराज, आचार्य शिवसागरजी महाराज और मुनि अजित-सागरजी महाराज के दर्शन एव उनका धर्मोपदेश सुनकर वैराग्य का भाव जागृत हुआ आचार्य धर्मसागरजी महाराज से आर्यिका की दीक्षा अगीकार की। फिर मासोपवासी श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज के सघ मे सम्मिलित होकर सम्मेदशिखरजी आदि तीर्थों की वन्दना की। फिर श्री १०८ दया-सागरजी महाराज के सघ मे सम्मिलित होकर बाहुबलीजी की यात्रा की।



आर्यिका समयमतीजी



श्री १०५ आर्यिका समयमतीजी का जन्म सन् १९२१ में कर्नाटक प्रान्त के बेलगाव जिले के आकोला ग्राम में हुआ। प्रारम्भ से ही आप में धार्मिक प्रवृत्ति थी। जिनधर्म व पूजा आराधना में लीन रहती थी। श्री मल्लप्पाजी [वर्तमान में मुनि श्री मल्लिसागरजी] की सह धर्मचारिणी रही। आपका गृहस्थ नाम श्रीमति था। आपके चार पुत्रा एव दो पुत्रियों मे बडे पुत्र को छोड़कर पाचों पुत्र-पुत्रियों ने दीक्षा ले ली है। प्रख्यात युवा आचार्य विद्यासागरजी आपके ही पुत्ररत्न है। दोनों छोटे पुत्र भी मुनि है जो विद्यासागरजी महाराज के सघ में है। छोटी पुत्री स्वर्ण माला जो प्रवचन मति आर्यिका है। आपकी बहुत छोटी अवस्था है। आप सबने एक साथ सपरिवार विक्रम सवत् २०३२ माघ शुक्ला पचमी को मुजफ्फर नगर (उत्तर-प्रदेश) में आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से अपार जन समूह के मध्य दीक्षा ली। आप स्वाध्यायी सरल स्वभावी एव शान्त प्रकृति की है।

धन्य धन्य है समयमति ।
समय का मूल्य समझ लिया ।।
सभी पुत्र पुत्री को लेकर ।
समय का सदुपयोग किया ।।



आर्यिका गुणमतीजी



पू० गुणमतीमाताजी का जन्म श्री महावीरजी में हुवा था। आपके पिता का नाम मूलचन्दजी पांड्या था। आपका पूर्व नाम असर्फीबाई था। आपका विवाह भवरलालजी गंगवाल नीमाज (राजस्थान) के यहां हुवा था। आपके जन्म के समय पिता को धन की (असर्फियों) की प्राप्ति हुई थी इसीलिए आपका प्यार का नाम यही रहा। बचपन मे धर्म मे रुचि थी। पूजन, भजन, कीर्तन में विशेष रुचि रखती थी। सगीत में अच्छी आस्था रही। आपके २ पुत्र एव १ पुत्री हैं जो सम्पन्न एव धार्मिक वृत्ति के है।

आचार्य वीरसागरजी से सातवी प्रतिमा को धारण किया। महावीरजी मे पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के पुण्य अवसर पर आपने आर्यिका दीक्षा आचार्य धर्मसागरजी से ली।

दीक्षा के बाद आपने समस्त तीर्थों की पैदल वदना की। आप सरल एव प्रखर प्रतिभा की धनी है। प्रवचन शैली भी मनोरम है श्रोताओं के ऊपर आपके प्रवचनों की अमिट छाप पडती है आपके अन्दर गुरु भक्ति अटूट भरी हुई है। आपके द्वारा धर्म की महती प्रभावना होती रहती है। आप चारित्र शुद्धि के १२३४ उपवास भी कर रही है जो पूर्ण होने को है।

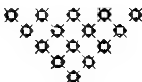


आर्यिका प्रवचनमती माताजी



आपका जन्म कर्नाटक प्रान्त के जिला बेलगांव के अन्तर्गत ग्राम सदलगा मे मातेश्वरी श्रीमती देवी की कोख से सन् १९५५ मे रक्षावन्धन के दिन हुआ था। आपका बचपन का नाम सुवर्णकुमारी था। क्योंकि आपके जन्म से १० दिन पहले ही आपके पिता ने २१ तोला सोना खरीदा इसलिए आपका नाम सुवर्णा रखा गया। आपके पिता का नाम श्री मल्लप्पाजी है, वर्तमान में श्री १०८ मल्लिसागरजी महाराज के नाम से मुनि पद मे विभूषित हैं और माता श्रीमती देवी वर्तमान में आर्यिका समयमती माताजी हैं।

आपके चार भाई व एक बहिन है, एक भाई सिर्फ घर मे रहा और सब दीक्षित हैं। आपकी शिक्षा मराठी व कन्नड़ में सातवी कक्षा तक हुई है। आपका पूरा परिवार धर्मनिष्ठ है, बच्चो पर माता पिता का असर हुए बिना नही रहता। आप बचपन से ही पूजा पाठ आरती भजन आदि गुणों में प्रवीण थी, आपके बड़े भाई श्री १०८ आचार्य विद्यासागरजी की दीक्षा व उनका प्रवचन सुनकर ही आपके मन में वैराग्य हुवा था। पर घर से कैसे निकले इस विचार में थे। सन् १९७५ मे आचार्य कल्प श्री सुबलसागरजी महाराज के संघ ने सदलगा ग्राम में चातुर्मास किया। रोजाना आहारादि देना, प्रवचन सुनना आदि करते थे। आ० विद्यासागरजी महाराज के दर्शन के लिए राजस्थान आये और ८ अप्रेल १९७५ मे सवाईमाधोपुर मे आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लिया और कुछ दिनो के बाद श्री १०८ आचार्य धर्मसागरजी महाराज के पास पहुँचे तथा खतोली ग्राम मे अक्षय तृतीया के दिन ७ वी प्रतिमा धारण कर ली इस प्रकार आपने माघ शुक्ला ५ वि० स० २०३२ को मुजफ्फर नगर (उ० प्र०) में परम पूज्य श्री १०८ आचार्य धर्मसागरजी से अपार जनसमूह के समक्ष आर्यिका दीक्षा ली, आपका नाम श्री प्रवचनमती रखा गया आप सतत् मनन चिन्तन अध्ययन करते रहते है, आपकी मुख मुद्रा प्रतिसमय प्रसन्न रहती है।



आर्यिका श्रुतमतीजी



आर्यिका श्रुतमती माताजी का पूर्व नाम सुशीला बाई था। आपका जन्म कलकत्ता में १४ अगस्त १९४७ में हुवा था। आपके पिता का नाम श्री फागुलालजी श्रावक (वर्तमान में आ० क० श्री श्रुतसागरजी महाराज) है तथा माता का नाम बसन्तीदेवी था। बचपन से धर्म प्रवृत्ति के कारण आपने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया। तथा आचार्य धर्मसागरजी महाराज से दूसरी प्रतिमा के व्रत धारण किए। आपने विशारद एवं शास्त्री की भी परीक्षा देकर ज्ञानार्जन किया। वर्तमान में पू० आदिमति माताजी से आप सस्कृत, न्याय, व्याकरण आदि का पठन पाठन करनी रहती है।

भ० महावीर स्वामी के २५०० वे निर्वाण दिवस के शुभ अवसर पर आपने भारत की राजधानी ऐतिहासिक नगरी दिल्ली मे आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली थी।

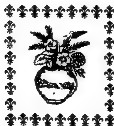
मोह ममता को छोडकर आप धर्म ध्यान-शास्त्र-स्वाध्याय को ही सर्वस्व समझने के लिए सभी को प्रेरणा दे रही है। आपने मुजफ्फर नगर, मदनगंज, पदमपुरी, भीलवाडा, लुहारिया आदि स्थानों पर चातुर्मास करके धर्म प्रभावना की।



आर्यिका सुरत्नमतीजी



आपका जन्म मध्यप्रदेश में पन्ना जिले के अन्तर्गत गुनौर गाव मे हुआ। आपके पिताजी श्री बेनीप्रसादजी व माताजी कमलाबाई जैन की आप तीन में से एक लाड़ली बेटी थी। आपका जन्म सवत् २०१४ में वैशाख बदी ऽऽ के दिन हुआ था। आपका जन्म नाम सुधाकुमारी रखा था। वैसे तो आपको बाल्यावस्था से ही धर्म में अधिक रुचि रही। आपके भाई की दीक्षा देखकर आपको सोलह वर्ष की अल्पायु मे ही इस ससार रूपी मोह जाल से वैराग्य हो गया। तभी से आपने घर का त्याग कर दिया और १०८ श्री दयासागरजी महाराज के सघ मे दो वर्ष तक रहकर धार्मिक मर्म एव शास्त्र ज्ञान का मार्मिक अध्ययन किया। २५०० वे निर्वाण महोत्सव के सुअवसर पर प्रात स्मरणीय आचार्य १०८ श्री धर्मसागरजी महाराज से आपने दिल्ली मे १८ वर्ष की अल्पायु मे आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया। उन्ही के सान्निध्य में सन् १९७६ में बसत पचमी शुक्रवार के दिन मुजफ्फरनगर (उ० प्र०) में आपने आर्यिका दीक्षा ग्रहण की। उसके बाद आप सम्मेदशिखरजी, गोम्मटेश्वर बाहूबलीजी, धर्मस्थल, मागीतुंगीजी, गजपथा, पोदनपुर समस्त भारतीय सिद्ध क्षेत्र की यात्रा करते हुए बम्बई मे चातुर्मास के साथ-साथ धर्म प्रभावना कर रही है।



आ० शुभमतीजी



आपने बैसाख सुदी तीज सं० २००४ में खुरई (सागर) में श्री गुलाबचन्दजी जैन के यहां जन्म लिया था। आपकी मां का नाम शान्तिबाई है। लौकिक शिक्षा चौथी तक ही रही। सन् १९७२ में आपने अजमेर नगर मे आर्यिका दीक्षा आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से ली।



आर्यिका धन्यमतीजी

ब्र० सोनाबाई का जन्म डेह (नागौर) मे हुवा था। बचपन में आपकी शिक्षा अल्प ही थी। आपका विवाह नागौर में हुवा था। आपकी एक पुत्री है। जो आज कटक में रहती है। आपका जीवन शान्ति के साथ व्यतीत हो रहा था कि अनायास आपके ऊपर वैधव्यता का बोझ आ पड़ा। आपने उसे सहन किया तथा आचार्य वीरसागरजी महाराज से सातवी प्रतिमा के व्रत धारण किए आपने ३० वर्ष तक सघों में रहकर साधुओं की सेवा वैयावृत्ति की। अन्त में आपने उदयपुर (राजस्थान) में आर्यिका दीक्षा आचार्य श्री धर्मसागरजी से ली। केशरियानाथ तीर्थ पर आपने सल्लेखना ली तथा समाधि मरण कर आत्म कल्याण किया इस अवसर पर ४० साधु थे।

आप सरल, दानसेवी, परोपकारी एवं मिलनसार साध्वी थीं। सारे साधु आपकी भक्ति से प्रभावित थे।

आर्यिका चेतनमतीजी



आपका जन्म राजस्थान प्रान्त में सीकर नगर में हुवा था आपका पूर्व अवस्था का नाम श्री वरगबाई था। आपकी मा का नाम दाखांबाई था। आप परम पू० आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा मुजफ्फर नगर मे माघ सुदी पंचमी को लेकर आत्म कल्याण के मार्ग मे संलग्न है।



आ० विपुलमतीजी



श्री भागवतीबाईजी बचपन से ही धर्म में रुचि रखने वाली बालिका थी। आपका विवाह शिवपुरी जिला गूडर मे श्री गुलाबचन्दजी के साथ हुवा था आपको १ पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई; पर कुछ समय बाद आपके पति का स्वर्गवास हो गया। आपने धर्म मार्ग को अपनाया तथा शेष समय धार्मिक कार्यों में लगाया। १६६२ में गृह त्याग कर आचार्य श्री से आ० दीक्षा लेकर संघ मे रहकर आत्म कल्याण के मार्ग मे सलग्न है। आपके सुपुत्र भी मुनि दीक्षा लेकर आत्म साधना मे निरत हैं।



आ० रत्नमतीजी



पू० आर्यिका रत्नमतीजी ने अवध प्रान्त में जन्म लेकर आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से दीक्षा ली है आपका विशेष परिचय प्राप्त नही हो सका है ।



क्षुल्लिका दयामतीजी



आपका जन्म छाणी निवासी हूमड जैन धर्मावलम्बी श्रीमती मणिकाबाई की कोख से स० १६६० में हुवा। आपके पिताश्री का नाम श्री भागचन्दजी था। आपकी गृहस्थावस्था का नाम फूलीबाई था। आप स्वर्गीय आचार्य श्री शातिसागरजी महाराज सा० (छाणी) की बहिन थी। आपका विवाह श्री फूलचन्दजी जैन हूमड के साथ हुवा था लेकिन बचपन से ही आपको ससार के प्रति विरक्ति हो गई थी। वैवाहिक जीवन मे ऐसे अनेक अवसर आये जब आप संसार की असारता का अनुभव कर धर्म मार्ग पर चलने को आसक्त हो गई। स० २०१६ मे डूगरपुर मे दर्शनार्थ भ्रमण करते हुये आपने स्व० आचार्य महावीरकीर्तिजी से सप्तम प्रतिमा धारण कर ली। तत्पश्चात् स० २०२० मे खुरई में प० पू० १०८ मुनिराज श्री धर्मसागरजी महाराज सा० (वर्तमान आचार्य) से क्षुल्लिका दीक्षा धारण की। दीक्षा के पश्चात् कलोल, डूंगरपुर, अजमेर, लाडनू, खुरई आदि स्थानों पर आपके चातुर्मास हुये ।

क्षुल्लिका यशोमतीजी



आपका जन्म सन् १६६१ में उदयपुर (राजस्थान) मे हुवा था आपके पिता का नाम श्री जवाहरलालजी तथा माता का नाम चम्पाबाई था । आपका पूर्व नाम सुरेखा था । शिक्षा ५ वी तक ही रही । आपने छोटी अवस्था में आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया था । उदयपुर में आपने आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से क्षुल्लिका दीक्षा ली । आपके बडे भाई भी वर्तमान में मुनि सम्भवसागरजी के नाम से जाने जाते है । बचपन में ही घर को छोड़कर आत्म कल्याण के मार्ग में निरत हैं । आप आचार्य सघ में रहकर आत्म साधना कर रही है ।



क्षुल्लिका बुद्धमतीजी

आपका जन्म वि० सं० १९६७ में गोलापुरा जाति मे जबलपुर में हुआ था । आपके पिता का नाम बसोरेलाल एव माता का नाम जमनाबाई था । पूर्व नाम कस्तूरीबाई था । आपने हिन्दी सस्कृत की शिक्षा प्राप्त की । सं० १६८३ मे खुरई में मुनि श्री धर्मसागरजी महाराज से क्षु० दीक्षा ग्रहण की ।



ब्र० श्री प्यारीबाई

जन्मस्थान	—	पारौल (ललितपुर उ० प्र०)
पिता का नाम	—	परमानन्दजी जैन
माता का नाम	—	नन्नीबाईजी
घर की स्थिति	—	सम्पन्न परिवार ।

जन्म लेने के बाद उसका भावी जीवन कैसा होगा, कहा नही जा सकता । कौन कितनी आयु लेकर आया, इसे तो केवल, केवली ही जानते है । साधारण मनुष्य के ज्ञान का यह विषय नही । पारौल (ललितपुर उ० प्र०) में समृद्ध परिवार मे श्री परमानन्दजी के घर जन्मी प्यारीबाई ने धीरे धीरे कुछ बसन्त पार कर लिये । माता-पिता को चिन्ता ने आ घेरा । बच्ची के हाथ पीले करने हैं । चिन्ता ने सोना, खाना सब खराब कर दिया । शुभ योग से अपने प्रयत्न के फलस्वरूप श्री परमानन्दजी ने मडावरा निवासी श्री रामचन्द्र को अपनी पुत्री के लिये वर रूप मे चुन लिया । घर सम्पन्न था । वर बनने वाला लडका घर मे ज्येष्ठ पुत्र था । उसके अन्य दो भाई परमलाल और प्रेमचन्द्र थे । शुभ मुहूर्त मे पिता ने श्री रामचन्द्र के साथ अपनी लाडली बच्ची का पाणिग्रहण कर दिया । पिता अपने कर्त्तव्य की पूर्णता पर खुश थे किन्तु दुर्दैव कही बैठा मन ही मन हँस रहा था । एक वर्ष के भीतर ही हँसती, मुस्कराती बालिका का मुंह, जैसे स्याह हो गया । उसके सारे स्वप्न स्वप्न की तरह ही विलीन हो गये । अब उसकी आंखो को केवल आसुओं का ही सहारा रह गया ।

उसने साहस बटोरा और अपना ध्यान अध्ययन में लगाने का निश्चय किया । इससे अच्छा शोक निरोध का दूसरा उपाय नही था । मड़ावरा से इन्दौर की ओर देखा और उसे कचनबाई दिगम्बर जैन आश्रम मे अध्ययन की सुविधा प्राप्त हो गई । आठवी कक्षा तक मन लगाकर अध्ययन किया और शुभोदय से उसे अपने पैरों पर खडे होने की सामर्थ्य प्राप्त हो गई ।

उज्जैन की जैन पाठशाला मे ९ वर्ष तक अध्यापन कार्य किया । बालक बालिकाओ में उसका समय बीतने लगा । समय ने पलटा खाया सौभाग्य से श्री धर्मसागरजी महाराज का समागम मिला । सिद्धवर कूट में आचार्य श्री विमलसागरजी से दो प्रतिमा के नियम ग्रहण किये । भावो मे विशुद्धि आने लगी । उत्तरोत्तर धार्मिक भावना प्रगाढ होती गई और आचार्य श्री धर्मसागरजी से सातवी प्रतिमा के व्रत ले लिये । कदम एक बार आगे बढे तो बढते ही गये । श्री १०८ मुनि पुष्पदन्तसागरजी का सान्निध्य मिला और उनसे ८ वी प्रतिमा के व्रत शिरोधार्य किये । वर्तमान में उनके संघ के साथ ही धर्म साधन करती हुई विचरण कर रही है । स्वभाव मे सरल एव मधुर है ।



नवदीक्षित मुनि अमितसागरजी

आपका जन्म दुगाह कलां (खुरई) म० प्र० मे श्रेष्ठि श्री गुलाबचन्दजी के घर पर दिनांक २६-६-६३ ई० सवत् २०२० को हुआ था । आपके ४ भाई २ बहने हैं, आपने ११ वीं कक्षा पास की, प्रारम्भ से आपकी प्रवृत्ति धार्मिक कार्यो मे अधिक समय लगाने की थी, केवल १८ वर्ष की अल्प आयु में ही आपने श्री पुष्पदन्तजी महाराज से १२-२-८१ को ब्र० व्रत ग्रहण कर लिये, जिन्हे आगे ही आगे बढने की एक ही लगन हो, उन्हें कौन रोक सकता है, विद्याध्ययन करते रहे, आप ५-१२-८२ को आचार्य महाराज के चरण सान्निध्य में आये, एवं भीमपुर मे आचार्य श्री से २ प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये । २१ वर्ष की अल्पायु में आपके भाव सर्वोत्तम उत्कृष्ट सयमी, महाव्रती मुनि बनने के हुए है वे न केवल प्रसशनीय हे, बल्कि स्तुत्य हैं जितना गुणानुवाद किया जाय कम है, आपने नन्हे नन्हे बालकों को जो प्रारम्भिक धार्मिक शिक्षण देकर इतने कम समय में सस्कार डाले हैं वे पौधे निश्चित रूप से अक्षुण्ण वट वृक्ष बनेंगे, आपका मृदुल स्वभाव, गुरु भक्ति, सच्ची लगन निश्चित रूप से देश समाज एवं धर्मानुरागी बन्धुओं को सन्मार्ग की ओर ले जाने में अत्यन्त सहायक होगी इसमे कोई सन्देह नही । धन्य है आपके माता पिता को जिन्होंने आपसा पुत्र रत्न उत्पन्न कर सम्पूर्ण कुल को गौरवान्वित कर दिया । ऐसे युवा मुनीश्वर को शत शत वन्दन ।



नवदीक्षित मुनि समकितसागरजी

आपका जन्म सिरगन (ललितपुर) मे का० शु० १० सवत् १९८८ मे गोलारे (जैन) परिवार में श्रेष्ठ श्री परमानन्दजो की धर्म पत्नी रामकुवरबाई की कुक्षि से हुआ । आपने सिरगन एवं अन्य स्थानो पर धार्मिक शिक्षण संस्थाओं मे विद्याध्ययन करके शास्त्री परीक्षा पास की । ५ वर्ष तक राजस्थान के धार्मिक विद्यालयो मे शिक्षक पद पर कार्य किया, २५ वर्ष किराना का व्यापार किया, आ० देशभूषण महाराज से फलटण मे ३-६-७७ को दूसरी प्रतिमा के व्रत लिये, श्रेयाससागरजी महाराज से तीसरी प्रतिमा के व्रत लिये, दिनाक ३-३-८२ को आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से ब्रह्मचर्यव्रत एव सातवी प्रतिमा के पारसोला मे व्रत लेकर घर चले गये, घर से विरक्ति होने लग गई थी और यदा कदा सघ में शामिल हो जाते थे । अजमेर आकर परम दयालु आचार्य श्री के चरणो मे मुनि दीक्षा का श्री फल चढाया, प्रार्थना स्वीकृत हो गई, सम्पूर्ण समाज जानकर हर्ष विभोर हो गया, और दिनाक ४-१०-८४ को आपने दि० जैन मुनि दीक्षा ली आपका कुल परिवार, माता पिता धन्य हो गये, धन्य है आपकी इस जैनेश्वरी दीक्षा को जो आप मोक्षमार्ग की ओर अग्रसर हो रहे है ।



आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज

द्वारा

दीक्षित शिष्य



आचार्य कल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज



मुनि श्री समतासागरजी

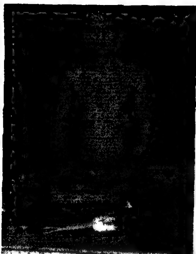
आर्यिका सरलमतीजी

आर्यिका शीतलमतीजी

आर्यिका दयामतीजी

मुनि श्री समतासागरजी

"जे कम्मे सूरा ते धम्मे सूरा"



जिसके आदर्श जीवन से दूसरों को अपने जीवन के लिए प्रेरणा मिले, जो कहने की अपेक्षा करके बताए, वास्तव में जीवन वह है । अन्यथा जीवन की घड़ियाँ बीतने में समय यों ही निकलता जाता है ।

विद्वत्ता और चरित्र परस्पर पूरक हैं । इनको सुदृढ़ बनाने के लिए श्रद्धा इनकी पृष्ठभूमि है । इन तीनों का सामजस्य ही जीवन का अन्तिम लक्ष्य रत्नत्रय बन जाता है । इस रत्नत्रय का भव भवान्तरों तक सतत् साधन ही एक दिन साधक को अपने चरम लक्ष्य तक पहुचाता है—वह चरम लक्ष्य है मुक्ति, निर्वाण या सिद्ध अवस्था ।

पण्डित महेन्द्रकुमारजी पाटनी जैसे बाहर रहे उसी तरह सदैव अन्तरङ्ग में भी । जीवन मे जो सोचा उसे जीवन मे उतारा । अवस्था के साथ साथ आत्महित में प्रवृत्त रहे । आत्मा की अन्तरग आवाज को बाहर साकार रूप देने में सदैव कटिबद्ध रहे । जीवन के प्रारम्भ मे सामान्य और उसके छोर पर जीवन को सार्थकता या कल्याण की ओर प्रवृत्त करना—यह जीवन की सफलता के लिए बडी महत्त्वपूर्ण बात रही है ।

परमश्रद्धेय धर्मवीर सेठ टीकमचन्दजी सोनी जब कभी हवेली मे घीमन्डी आ जाते थे तब सवारी आने में विलम्ब होने पर श्री महावीर दिगम्बर जैन विद्यालय (वर्तमान में राजकीय टीकमचन्द जैन हायर सैकण्डरी स्कूल) में पधारते और विद्यार्थियों से धर्म सम्बन्धी प्रश्न पूछ कर उनके लिए तत्काल पारितोषिक घोषित कर देते थे । प्रधानाध्यापकजी उनसे निवेदन करते थे कि इन बालको से गणित, अग्रेजी आदि विषय भी पूछे जाने चाहिए तो सेठ सा० बड़ी सहजता से कहते थे कि ये सब जीविका साधन के विषय हैं । बालक परिश्रम स्वतः करते रहेगे । विद्यालय की स्थापना का उद्देश्य है धर्मात्मा, चरित्रवान, विद्वान् बनाना—वह पूरा हो रहा है या नहीं, मैं यही देखना चाहता हूं । यदि यहाँ से एक भी छात्र ऐसा निकल गया तो मै समझूँगा कि मेरा और मेरे विद्यालय का ध्येय पूरा हो गया । मुझे यह लिखते हुए बडे गौरव का अनुभव हो रहा है कि सेठ सा० की

भावना को पूर्ण साकार बनाने में मेरे सहपाठी श्री पं० महेन्द्रकुमारजी पाटनी आगे आए। समाचार-पत्रों में जब यह समाचार पढ़ने को मिला कि श्री पाटनीजी सेवानिवृत्त हो क्षुल्लक दीक्षा लेने जा रहे हैं तो आत्मा हर्ष से गद्‌गद् हो गई। विचार आया कि ये जीवन के विकास में भी पीछे नहीं रहे तो जीवन समेटने के समय भी लक्ष्य को नहीं छोड़ा।

पण्डितजी अपने भरे पूरे गृहस्थ जीवन का दायित्व अपने सुयोग्य पुत्रों को प्रसन्नता पूर्वक सौंपकर आत्मकल्याण की ओर बढ रहे है—इससे अधिक प्रेरणादायक बात और नही हो सकती है।

पण्डितजी ने सन् १९१६ में अजमेर जिले के ऊँटड़ा ग्राम में खण्डेलवाल कुल के प्रतिष्ठित परिवार श्री फतेहलालजी पाटनी के यहाँ जन्म लिया। प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम में ही पाई अनन्तर अपने पितृव्य श्री मिश्रीलालजी पाटनी के कारण अजमेर में शिक्षा प्राप्ति के लिए आए तथा श्री महावीर दिगम्बर जैन विद्यालय में प्रविष्ट हुए। पण्डितजी सभी विषयों में परिश्रमशील और अत्यन्त सुशील छात्र रहे। यही कारण था कि विद्यालय के अध्यापक व प्रधानाध्यापक भी जब कभी किसी विवाद का फैसला करते थे तो इनकी राय को महत्त्व दिया करते थे।

विद्यालय मे समाज के मूर्धन्य विद्वान अध्यापक रहे थे। अनेक ग्रन्थो के टीकाकार प० लाला-रामजी शास्त्री, पं० मुन्नीलालजी, प० बनारसीदासजी शास्त्री, पं० जवाहरलालजी शास्त्री, पं० विद्या-कुमारजी सेठी एव प० वर्धमान पार्श्वनाथजी शास्त्री रहे। पं० मोतीचन्दजी पाटनी, लाला हजारी-लालजी जैन, पं० रामचन्द्रजी उपाध्याय आदि अन्य विषयों के अध्यापक थे। सभी अध्यापकों का जीवन आदर्श था। उनसे केवल पुस्तकीय ज्ञान की ही शिक्षा-दीक्षा नही मिली अपितु जीवन की रचनात्मक प्रेरणा भी मिलती रही।

सन् १९३० में पण्डितजी ने विद्यालय छोड दिया इसके बाद पं० विद्याकुमारजी के पास स्वयंपाठी बनकर पढते रहे।

वाराणसी की मध्यमा, कलकत्ता की काव्यतीर्थ और सोलापुर से शास्त्री परीक्षा दी। पं० जी ने दो विवाह किए—प्रथम पत्नी से आपके कोई सन्तान नहीं हुई। द्वितीय पत्नी से दो पुत्र हुए। दूसरी पत्नी का निधन हुए भी काफी समय हो गया है। तृतीय विवाह के लिए आपने कतई मना कर दिया।

पं० जी सबसे प्रथम श्री दि० जैन पाठशाला, केसरगंज अजमेर (वर्तमान में श्री दि० जैन उ० प्रा० विद्यालय) में धर्माध्यापक नियुक्त हुए। तीन वर्ष के बाद यहा से त्याग पत्र देकर स्व० रायबहादुर बाबू नानमलजी अजमेरा के प्राइवेट पण्डित बनकर कार्य करते रहे।

करीबन सन् १९३६ में मदनगज मे दि० जैन विद्यालय की स्थापना (वर्तमान में के० डी० जैन हायर सैकण्डरी स्कूल) हुई। उसके प्रथम अध्यापक पं० महेन्द्रकुमारजी पाटनी नियुक्त हुए। आपके सतत् प्रयास से विद्यालय प्रगति की ओर बढता गया। पण्डितजी के अध्यापन कार्य एवं कर्त्तव्यनिष्ठा की अमिट छाप विद्यालय मे सदा बनी रही। यह विद्यालय राजस्थान में एक सुप्रसिद्ध शिक्षण सस्था है। आप यहाँ से ३१ जुलाई १९७४ को सम्मान पूर्वक सेवानिवृत्त हुए। आपकी इस अनुपम सेवा पर मदनगंज जैन समाज ने भी आपको अभिनन्दन पत्र अर्पित किया।

आपने इस अवसर पर निम्नप्रकार से अपनी दान घोषणा की—

१००१) श्री जैन भवन, मदनगंज

१००१) श्री तेरह पथी मन्दिरजी मदनगंज

१००१) श्री मदिरजी ऊँटडा

१००१) श्री के डी. जैन हायर सै. स्कूल मदनगज

इसके अतिरिक्त छह हजार रुपयों की राशि अपने पुत्रों के पास रखदी है कि जहाँ उचित समझे वहाँ देते रहें। इस प्रकार आपने अपने उपार्जित द्रव्य का बडा सदुपयोग कर लिया। आपके दो सुयोग्य पुत्र हैं, बडे पुत्र श्री चेतनप्रकाश जोधपुर विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक हैं और छोटे पुत्र श्री पदमचन्द, केन्द्रीय भेड़ एवं ऊनशोध संस्थान अविकानगर (जयपुर) में वरिष्ठ शोधसहायक है। इसप्रकार दोनों पुत्र अच्छे पदो पर कार्यरत है।

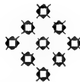
मदनगंज जैन समाज ने पण्डितजी से अपेक्षा की थी कि वे मदनगज में रहकर समाज व धर्म की सेवा मे अपना अधिक योग प्रदान करे। लेकिन पण्डितजी ने आत्म हितार्थ गृह-त्याग कर आचार्य-कल्प १०८ पूज्य श्री श्रुतसागरजी महाराज से क्षुल्लक पद धारण करने के लिए श्रीफल भेंट कर दिया और क्षुल्लक दीक्षा रेनवाल मे ली।

पण्डितजी विद्वान होने के साथ साथ दृढ़ चरित्रनिष्ठ भी हैं। आप जीवन में कई कठोर त्याग लेकर सदैव अपने हित मे लगे रहे। बडी प्रसन्नता की बात है कि वे जैसे अन्दर वैसे सदैव बाहर रहे। आपकी वृत्ति सादा एव विचार सदैव उच्च रहे।

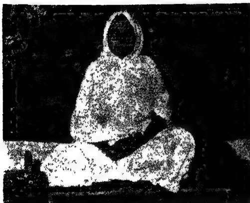
आदर्शता के साथ जीवनयापन किया उसी का परिणाम है कि सहर्ष दीक्षा लेकर आत्म कल्याण की ओर अग्रसर हैं तथा उनके सुयोग्य युगल पुत्र एवं सम्पूर्ण परिवार उनकी इस आत्मकल्याण की भावना में बडे सहायक रहे है। यह कहना होगा कि पण्डितजी ने जीवन में सभी कार्य सुन्दर रीति से सम्पन्न किए उसी का परिणाम है कि इनका यह सम्पूर्ण जीवन आदर्श रहा।

आचार्य सघ के साथ रहकर धर्मध्यान करते रहे थे। सघ का विहार श्री महावीरजी की ओर हुवा तब आपने श्री महावीरजी में मुनि दीक्षा ली। सघ का विहार सुजानगढ की ओर हुवा तब कालू चातुर्मास के बाद विहार हुवा कि बलूदां राजस्थान में आपकी समाधि हो गई।

आपने जैन समाज के विद्वानो को एक नई दिशा दी तथा त्याग मार्ग को स्वीकार कर आत्म कल्याण किया। आत्मगोपन की वृत्ति के कारण आप विज्ञापन बाजी और प्रचार प्रसार की भावना से कोसों दूर रहे धन्य है ऐसा मोहक व्यक्तित्व।



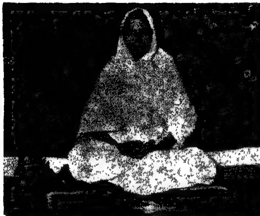
आर्यिका सरलमतीजी



आपका जन्म श्रावण शुक्ला १३ स० १६६० मे मध्य प्रान्त के टीकमगढ मे श्रेष्ठी श्री चुन्नीलालजी के यहाँ पर हुआ। आपकी माता का नाम सुगनबाई था। आपका पूर्व नाम ब्र० सुमित्राबाई था। उदयपुर मे वैसाख सुदी १० सं० २०२६ मे आचार्य कल्प श्री श्रुतसागरजी महाराजजी से आपने आर्यिका दीक्षा धारण की। आप अपने जीवन को सफल बना रही है। आपका त्याग प्रशसनीय है।



आर्यिका शीतलमतीजी



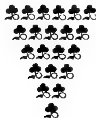
१०५ श्री शीतलमती माताजी की आयु इस समय ४२ वर्ष की है आपका स्वभाव अति ही शीतल है। आपका जन्म गांवडी मे श्रीमान् न्यालचन्दजी व माता भकुबाई की कोख से हुआ आपका जन्म नाम गेंदीबाई रक्खा आपके दो भाई तीन बहन है उसमें सबसे छोटे आप ही हैं। आपका विवाह साबला निवासी श्री गोरधनलालजी से हुआ परन्तु ५ महिने पश्चात् ही पति का तीन दिन की बुखार मे ही स्वर्गवास हो गया १८ वर्ष की आयु में ही ऐसी अवस्था देखनी पड़ी। छोटी उम्र मे ही इस पर्याय के दुःख का अनुभव करते हुये अपना समय स्वाध्याय में बिताया। धर्म शिक्षा नहीं मिलते हुये भी आपने अपना जीवन इस तरफ लगाने का ही भाव बनाया। साबला मे ज्ञानमती माताजी का आवागमन हुआ उन्ही की प्रेरणा से आपके विचार बदलते गये फिर आपका मन घर में नही लगा और माताजी के साथ ही वहाँ से चले गये कुछ दिन पश्चात् ही आपने प्रतापगढ मे सं० २०२५ मे आ० शिवसागरजी महाराज से श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को दूसरी प्रतिमा के व्रत ले लिये। फिर आप सघ मे ही रहने लगी और धर्म ध्यान करने लगी महावीरजी में आपने आ० शिवसागरजी म० के चरणों में दीक्षा का नारियल चढ़ाया परन्तु दुर्भाग्य-वश आ० म० का स्वर्गवास हो गया दीक्षा नही हो सकी फिर आपने आ० क० श्रुतसागरजी म० से उदयपुर में सप्तम प्रतिमा ग्रहण की। आपने चारो धाम की यात्रा की और फिर आकर दीक्षा का नारियल साहपुर में चढाया और आपने दीक्षा मदनगज-किशनगढ़ मे ली सं० २०२९ में क्षुल्लिका के रूप मे आ० क० श्रुतसागरजी म० मे ली और रेनवाल किशनगढ़ मे आ० दीक्षा स० २०३२ में उन्ही से ली। दीक्षा के बाद आपने अपना पठन पाठन मे मन लगाया और श्री अजितसागरजी म० से पढ़ना शुरू किया अब आप दैनिक कार्य सुचारू रूप से करती रहती हैं। स्वास्थ्य कमजोर रहने पर भी आत्म बल से जितना होता है उतना उपवास व्रत भी करती हैं इस प्रकार आत्म कल्याण की भावना बनी रहे यही हमारी भावना है।



आर्यिका दयामतीजी



पूज्य १०५ श्री दयामती माताजी का स्वभाव दयामय ही है। आपका स्वभाव हर समय पर उपकार में ही रहना है आपके पिता श्री गोरीलालजी सिघई माता श्री महारानी की कुक्षी से आपका जन्म सागर मे हुआ। आपका जन्म नाम नन्हीं-बाई रक्खा गया। नन्हींबाई १५ वर्ष की हुई और माता पिता को शादी की चिन्ता होने लगी और आप की शादी छोटेलालजी सिंघई से करदी परन्तु बाल बच्चे नही होने के कारण अपने धर्म ध्यान मे लीन होते रहे छोटी आयु में ही धर्म ध्यान मे रहने से २५ वर्ष घर में रहकर फिर वैधव्य अवस्था प्राप्त होने पर घर मे मन नहीं लगा और साधु सम्पर्क मे आगई और अपना धर्म ध्यान करती रही परन्तु मन मे शान्ति नही रहती थी फिर स० २०१८ मे आ० श्री धर्मसागरजी महाराज से दूसरी प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये और आ० क० श्री श्रुतसागर जी म० से टोडारायसिंह मे सातवी प्रतिमा ली। व्रतों में रहकर अपना धर्म साधन करते रहे फिर वैराग्य भावनाओं की जागृति हुई और श्रुतसागरजी म० से निवेदन किया कि मुझे आगे बढ़ना है इसमें रहकर आत्म कल्याण नही होता। म० श्री ने आपको किशनगढ़ में आर्यिका दीक्षा दे दी। स० २०२४ से आप अपना धर्म ध्यान सुचारु रूप से करती रही है।



मुनि श्री दयासागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



श्री दयासागरजी महाराज

मुनिश्री सुदर्शनसागरजी
मुनिश्री रयणसागरजी
मुनिश्री ऋषभसागरजी
मुनिश्री समाधिसागरजी प्रथम
मुनिश्री समाधिसागरजी द्वितीय
मुनिश्री समाधिसागरजी तृतीय
मुनिश्री निजानन्दसागरजी
मुनिश्री पार्श्वकीर्तिजी
क्षुल्लक समतासागरजी

क्षुल्लक निरजनसागरजी
क्षुल्लक उदयसागरजी
आर्यिका सुप्रकाशमतीजी
आर्यिका प्रज्ञामतीजी
आर्यिका सुवैभवमतीजी
आर्यिका निःसगमतीजी
आर्यिका भरतमतीजी
क्षुल्लिका वैराग्यमतीजी

मुनि सुदर्शनसागरजी महाराज



आपका जन्म राजस्थान प्रान्त के बासवाडा जिले में नरबाली ग्राम में हुवा था। आपके पिता की धार्मिक वृत्ति थी तथा आप पर बचपन से धर्म संस्कार थे। १० वर्ष की अवस्था से आप साधु संगति मे रहने लगे थे आपने आचार्य शान्तिसागरजी की काफी सेवा की सैंकडों मील तक आप आचार्य श्री के साथ पैदल विहार मे साथ रहे। गांव के आप नेता थे सभी मसलों का हल आपके माध्यम से ही होता था। आपने सम्मेदशिखरजी की १५ बार यात्रा की। घाटोल में सं० २०३४ पचकल्याणक प्रतिष्ठा के शुभ अवसर पर आपने मुनि दीक्षा श्री आचार्य धर्मसागरजी के शिष्य दयासागरजी मे ली। आपने बागड प्रान्त में भ्रमण कर जैन धर्म की प्रभावना की, अब आचार्य श्री के पास है।

मुनि रयणसागरजी महाराज



राजस्थान प्रान्त के डूंगरपुर जिले में सागवाडा नामक ग्राम में ७-१०-५४ को रुकमणी बाई के यहा जन्म लिया आपके पिता का नाम छगनलालजी गांधी था। आप ४ भाई १ बहिन है। आपकी लौकिक शिक्षा ८ वी तक ही हो पाई। आपका पूर्व नाम आनन्दकुमार था। २५ वर्ष की उम्र में आपके अन्दर वैराग्य के अंकुर प्रगट हो गये तथा आप अपना व्यापार छोडकर जैन साधुओं की संगति में लग गये तथा आपने ७ फरवरी १९७८ को मुनिदीक्षा श्री दयासागरजी महाराजजी से ले ली। धन्य है आपकी धम पौरुषता कि चन्द दिनो मे ही आप सर्व परिग्रह त्याग कर भरा पूरा परिवार छोड़कर निर्ग्रन्थ दीक्षा धारण की। आप इसीप्रकार तप और त्याग तथा संयम की दिशा मे अग्रसर रहें यही भावना है।



मुनि ऋषभसागरजी महाराज



आपका जन्म ईडर गुजरात मे हुवा था। गृहस्थ अवस्था का नाम श्री चम्पालालजी था। आप बचपन से धार्मिक कार्यों में विशेष भाग लेते थे, आपके ६ बच्चे थे जो सभी धर्म मे रुचि रखने वाले थे। आपने मुनि दयासागरजी महाराजजी से मुनि दीक्षा धारण की। आप तपस्वी मुनिराज थे। आपने अपने जीवन काल मे सैंकडो उपवास किये। आपने अन्तत श्रवण बेलगोला मे दीक्षा ली। मुनि दीक्षा के बाद आपने 'सर्वतोभद्र' नामक उपवास किए। इसी उपवास के बीच में १५ वें दिन समाधि युक्त मरण हुबली कर्नाटक मे किया।



मुनि समाधिसागरजी (प्रथम)



आपका जन्म दाहोद जि० पंचमहल गुजरात में हुवा था। आपका पूर्व नाम श्री बदामीलालजी था। आपकी लौकिक शिक्षा सामान्य ही रही। २० वर्ष की उम्र से व्यापार करना शुरू किया, आप कपडे के प्रतिष्ठित व्यापारी थे। ६० वर्ष की उम्र में आपने मुनि दीक्षा धारण की। १० उपवास कर सल्लेखना धारण कर समाधिमरण सन् १९७७ में दाहोद में किया। आप आचार्य श्री धर्मसागरजी के शिष्य मुनि दयासागरजी से दीक्षित थे।



मुनि समाधिसागरजी (द्वितीय)

श्री कस्तूरमलजी का जन्म राजस्थान के प्रसिद्ध नगर डूंगरपुर मे हुवा था। आपने लौकिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद अपना जीवन व्यापारिक कार्य में लगाया तथा सन् १९७७ में मुनि दयासागरजी से मुनि दीक्षा ली। तथा डूंगरपुर मे ही समाधि लेकर आत्म कल्याण किया।



मुनि समाधिसागरजी (तृतीय)

आप कर्नाटक श्रवण बेलगोला के वासी थे, आपका नाम श्री महादेव था। जैन मठ में आप भट्टारकजी की सेवा आदि किया करते थे। ८० वर्ष की उम्र में आपने मुनि दीक्षा श्री दयासागरजी से लेकर समाधिमरण श्रवणबेलगोला मे किया।



मुनि निजानंदसागरजी महाराज



जन्म :— ४-९-१९५३, शुक्रवार

स्थान :— हुबली (कर्नाटक मे दूसरा बड़ा शहर)

पूर्वनाम :— अनंतराज पार्श्वनाथ राजमाने

पिता :— पार्श्वनाथ भीमराव राजमाने (दंतमंजन व्यापारी)

माता :— श्रीमती कमलाबाई राजमाने

भाई :— १. बडा निर्मलकुमार-बी ई. सिविल इंजिनीयर
२. बाहुबली-व्यापारी
३. सनत्कुमार-बी. ई. सिविल इंजिनीयर
४. श्रेणिकराज-डिप्लोमा सिविल विद्यार्थी

पिताजी के दो बडे भाई, चार बहिने।

गर्भावस्था :—गर्भ में थे, उस समय माताजी १९५३ मार्च में हुई भगवान श्री बाहुबली की महामस्तकाभिषेक में गयी थी। धर्म की संस्कार गर्भावस्था में ही प्रारम्भ हुई।

बाल्यावस्था :—

१. मुनिराजों के दर्शन करने में उत्कट भक्ति।

२. मुनि बनने की इच्छा प्रकट करते।

३. शादी करने की तरफ निरुत्साह।

४. प्रति दिन मंदिर में जाना।

५. पिताजी-माताजी से धार्मिक सभायें घटनायें सुनना।

शिक्षण :—१. बी. कॉम., पदवीधर

बी. कॉम. परीक्षा में कर्नाटक विश्व विद्यालय से प्रथम स्थान।

२. डिप्लोमा धर्म शास्त्र और तत्वशास्त्र में।

३. एम. ए. के दो वर्ष सम्पूर्ण तत्वशास्त्र मे।

४ N. C. C. में Under Officer।

समाज संघटना कार्य :—

१. सेक्रेटरी तथा संस्थापक
हुबली जैन तरुण संघ

२. सेक्रेटरी-दक्षिण भारत जैन युवा परिषद्।

३. धारवाड जिल्हा मुनि स्वागत समिति, सेक्रेटरी।

४. सेक्रेटरी-संस्थापक—

(हुबली जैन समाज मुनि सेवा संघ)

—: त्याग मार्ग :—

१. शादी नही करने की प्रतिज्ञा।
३०-१-१९७६ शुक्रवार दोपहर मे।

प्रसंग : आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी से केशलोचन समारंभ में।

स्थल : बेलगाम (कर्नाटक)

२. सप्त व्यसन त्याग— १७-२-१९७६।

३. मुनि दीक्षा लेने की प्रतिज्ञा।

१. आरणी (मद्रास) १५-३-१९७६ सोमवार।

२ पोदनपुर (बम्बई) १८-३-१९७९ रविवार—

मुनि श्री निर्मलसागर महाराज के सान्निध्य—विशाल जन समुदाय में।

४. अशुद्ध जल का त्याग – २-१०-१९८० गुरुवार, सुबह

स्थान :—हुबली (कर्नाटक)

मुनि श्री दयासागर महाराजजी से।

५. दीक्षा लेने के लिए श्रीफल का अर्पण २२-१०-१९८० केशलोचन समारम्भ में स्थान– हुबली।

६. गृह त्याग :—२७-११-१९८० पूज्य श्री दयासागर महाराजजी के सघ में विहार।

७. ऐलक दीक्षा—२१-१२-१९८० रविवार सुबह।

श्री दयासागर महाराजजी से।

स्थल : दावणगेरी (कर्नाटक)।

८. मुनि दीक्षा—१६-२-१९८१ सोमवार दोपहर।

प० पू० श्री दयासागर महाराजजी से।

स्थल : श्रवण बेलगोला।

प्रसंग : भगवान श्री बाहुबली की सहस्राब्धी महामस्तकाभिषेक के संदर्भ में।

४८ मुनिराज तथा कुल १४० पिच्छीधारी त्यागी और हजारों जनता की उपस्थिति में।

९. चातुर्मास—

१. १९८१ नीरा (महाराष्ट्र)

२. १९८२ कापडणे जि० पूना (महाराष्ट्र) ।

३. १९८३ सूरत–गुजरात ।

६. पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महाराजजी के सान्निध्य में ।

१. अतिशय क्षेत्र महुवा जि० सूरत (गुजरात) ता० ५–५–१९८३ से १५–५–१९८३ ।

२. वेदी प्रतिष्ठा—सूरत (गुजरात) ता० २५–६–८३ से २७–६–१९८३ तक

३. सर्व धर्म सम्मेलनों का आयोजन ।

—. महाराजजी से दीक्षा :—

१. क्षुल्लक दीक्षा—११–९–१९८३ सूरत मे

२. मुनि दीक्षा—१३–९–१९८३ सूरत में

३. समाधि—१३–९–१९८३ सूरत में ।

मुनि श्री त्यागानंदसागर महाराजजी ।

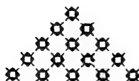
दीक्षा लेनेवाले :—

श्री नगीनदास कर्मचन्द झवेरी

बोम्बेवाले ।

७ वी प्रतिमाधारी

आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराजजी से ३५ बरस पहले लिए थे ।



मुनि पार्श्वकीर्तिजी महाराज



आपका जन्म जिला बासवाड़ा के तहसील गरी के लोहारिया गांव जाति नरसिंहपुरा में मातेश्वरी कंकूदेवी के कुख से सम्वत् १९७६ मे हुआ। आपका नाम जवेरचन्दजी व पिताजी का नाम दाडमचन्दजी था। आपकी माताजी भद्र परिणामी व दयालु थी। व्रत उपवास करती थीं। आपकी माताजी मे एक यह विशेषता थी कि प्रत्येक सन्तान की उत्पत्ति के समय उपवास रखती थी। आपके पिताजी गाव के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। आपने १५ साल की अवस्था में व्यापार करना शुरू कर दिया था। आपकी धर्मपत्नी का नाम श्रीमती अमृतबाई है। आपकी इच्छा शुरू से ही दीक्षा लेने की थी। आपने ३८ साल को अवस्था में मुनिश्री नेमिसागरजी महाराज बम्बई वालों से ब्रह्मचर्य व्रत लिया। सम्वत् २०३१ तारीख २३-२-७५ को श्री सम्मेदशिखरजी में आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ली। उसके बाद घाटोल मे श्री १०८ धर्मसागरजी के शिष्य दयासागरजी से ऐलक दीक्षा ली। आपकी यह इच्छा थी कि मै मुनि दीक्षा आचार्य श्री विमल-सागरजी के द्वारा श्री सोनागिरीजी मे लू। इस भाव के कारण आप ८ माह मे पन्द्रह सौ मील चलकर आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज के चरणो में सोनागिरी आये। यहा आकर आपने आचार्य श्री से सम्वत् २०३६ श्रावण सुदी ९ को चन्द्र प्रभु प्रागण में मुनि दीक्षा ली। तब से आपको मुनि पार्श्वकीर्तिजी के नाम से सम्बोधित किया जाने लगा।



क्षुल्लक समतासागरजी

आपका जन्म कर्नाटक श्रवण बेलगोला के समीप में हुवा था। आपका पूर्व नाम श्री राजेन्द्रकुमारजी था। आपने तीर्थक्षेत्र श्रवण बेलगोला में जैन गुरुकुल में इन्जीनियर तक शिक्षा प्राप्त की। आप कन्नड़, हिन्दी, अंग्रेजी के एक उच्चकोटि के प्रवक्ता हैं। मुनि श्री दयासागरजी महाराज से बम्बई पोदनपुर मे क्षु० दीक्षा लेकर आत्म साधना कर रहे है। आप बालब्रह्मचारी एव युवा सन्त है।

क्षुल्लक निरंजनसागरजी

आपका जन्म मुजफ्फर नगर (U. P.) जिले में मुबारिकपुर में हुवा था। आपकी बड़ी बहिन ने आर्यिका दीक्षा ली है। आप अग्रवाल जाति के रत्न हैं। ५० वर्ष की उम्र में घर गृहस्थी का त्याग करके महामस्तकाभिषेक गोमटेश्वर के शुभ अवसर पर आपने मुनि दयासागरजी से क्षु० दीक्षा अंगीकार की। आप धर्म साधना में निरत हैं।

क्षुल्लक उदयसागरजी



आपका जन्म उदयपुर जिले के सलुम्बर गांव जाति बीसा नागदा में सम्वत् १९६५ में हुआ। आपके पिताजी का नाम रूपचन्दजी व माताजी का नाम भुरीबाई था। आपका गृहस्थावस्था का नाम श्री उदयचन्दजी था। आपके पिताजी व माताजी का स्वभाव धर्म के प्रति बहुत अच्छा था। संवत् २०१८ में आपने ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया। उसके बाद आपने ७ वीं प्रतिमा श्री १०८ शिवसागरजी महाराज से उदयपुर मे ली। आप बाल ब्रह्मचारी हैं। उसके बाद संवत् २०३४ में घाटोल में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के समय मुनि दयासागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली। उस समय से आप उदयसागरजी के नाम से सम्बोधित किये जाने लगे। उसके बाद ऐलक पार्श्वकीर्तिजी महाराज के सघ के साथ में सोनागिर पधारे।



आर्यिका सुप्रकाशमतीजी

सुशीलाजी का जन्म कुण्डा जि० उदयपुर राजस्थान में १९ वर्ष पूर्व हुआ था। ११ वी तक आपने लौकिक शिक्षा प्राप्त की। १५ वर्ष की उम्र में आपने अजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर लिया था। बम्बई पोदनपुर त्रिमूर्ति में आपने मुनि दयासागरजी महाराज से १७ जनवरी ८२ मे आर्यिका दीक्षा धारण की। इस युवा अवस्था में आपने परिवार से मोह छोडकर जैनेश्वरी दीक्षा ली। आप सरल एवं तपस्वी साध्वी सन्त हैं। नव-युवतियों के लिये एक आदर्श मार्ग आपने प्रशस्त किया।



आर्यिका प्रज्ञामतीजी



आपका जन्म उदयपुर जिला कुंडां में हुवा था। आपकी माता का नाम कुनणबाई था। पिता का नाम श्री रामचन्द्रजी था। आपका पूर्व नाम ललिता था। आप नरसिंहपुरा जाति की हैं। १४ वर्ष की उम्र में आपका विवाह हो गया पर अभी मेहदी की लाली हल्की भी ना हो पायी थी कि उतर गई। शीघ्र ही अपना चित्त धर्मध्यान की ओर लगाया तथा मुनि दयासागरजी से अक्षय तृतीया के दिन घाटोल में पच कल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर आर्यिका दीक्षा धारण कर ली दीक्षोपरान्त आपका नवीन नामकरण प्रज्ञामतीजी हुवा।



आर्यिका सुवंभवमतीजी



आपका जन्म गुजरात प्रान्त मे जिला पंचमहल दाहोद नगर में हुवा था। आपके पिता का नाम पन्नालालजी गाधी तथा मा का नाम शान्तिबाई था। आप ५ भाई तथा ४ बहिन है। आपके पिता एक प्रतिष्ठित व्यापारी है तथा साधु भक्ति अपूर्व है। पू० मुनि दयासागरजी महाराज का चातुर्मास दाहोद मे हुवा तब मुनि श्री के प्रवचनो से आपके अन्दर वैराग्य जगा तथा तभी आपने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत अगीकार किया। आपकी शिक्षा १२ वी तक है व मूल भाषा गुजराती है तथा हिन्दी कन्नडी संस्कृत का भी ज्ञान आपको है। आपका जीवन सरल एव शान्तिमय है। निरन्तर पठन कार्य मे लगी रहती है। बम्बई मे परम पू० मुनि दयासागरजी महाराज से त्रिमूर्ति पोदनपुर मे आर्यिका दीक्षा १ जनवरी १९८२ में धारण की। आप निरन्तर ज्ञान साधना में निरत हैं।

आर्यिका निःसंगमतीजी



महाराष्ट्र प्रान्त की ऐतिहासिक नगरी नागपुर मे १३-२-३६ श्रेष्ठी श्री सुमेरुचन्दजी के घर जन्म लिया था। आपकी माता का नाम दशोदीबाई था। आपने ११ वीं कक्षा पास करने के बाद 'विज्ञान प्रशिक्षण' की ट्रेनिंग ली तथा छिन्दवाडा में कन्या विद्यालय में २० वर्ष तक अध्यापिका का कार्य किया। आपके पति का नाम श्री गुरुदयालजी जैन था। आपके ३ बच्चे हैं। आपकी धार्मिक रुचि अत्यन्त थी। पू० मुनि दयासागरजी महाराज के प्रवचनो से आपके अन्दर वैराग्य जागा तथा पति से आज्ञा लेकर परिवार के समक्ष छिन्दवाड़ा में मुनि दयासागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली। ज्ञानोपार्जन मे आपकी साधना अथक अनवरत और अध्यवसाय पूर्ण रही। आपने भरे पूरे परिवार के प्रति जितनी भी निर्ममता दिखाई सचमुच श्रद्धेय है।

✡

आर्यिका भरतमतीजी

आपका जन्म हमाई जिला डूंगरपुर निवासी श्री जीतमलजी सिघवी के यहा कार्तिक सुदी १५ सम्वत् १९८४ मे हुआ। आपकी माता का नाम श्रीमती माणकबाई था। आपका गृहस्थावस्था का नाम चमेलीबाई था। आपकी शादी रामगढ़ मे श्री गणेशलालजी के साथ हुई। अशुभ कर्मों के उदय से ५ वर्ष बाद आपको वैधव्य दुःख सहन करना पड़ा। आपने ब्रह्मचारी अजितसागर के निमित्त से दो प्रतिमा धारण की जिससे आपमें विशेष वैराग्य आया। उसके बाद आचार्य श्री १०८ धर्मसागरजी के शिष्य दयासागरजी से सम्वत् २०३४ में क्षुल्लिका दीक्षा ली उसके बाद आपने सघ सहित गाव लोहारिया में चातुर्मास किया। वहां आपने ३२ उपवास किए। उसके बाद ऐलक पार्श्वकीर्तिजी के सघ मे चलकर श्री सोनागिरि आयी। आने के पश्चात् आपने आर्यिका दीक्षा लेने का निर्णय लिया और आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से सम्वत् २०३६ श्रावण सुदी १२ रविवार तारीख ५-८-७९ को सोनागिर में आर्यिका दीक्षा ली। उस समय आपका नाम भरतमती माताजी रखा गया।



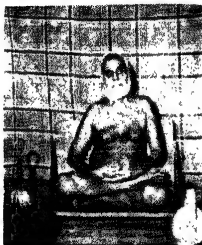
क्षुल्लिका वैराग्यमतीजी

आपका जन्म जिला डूगरपुर के साबला गाव मे जाति दशा हुमड़ में मातेश्वरी लक्ष्मीदेवी के कुख से सवत् २०१४ में हुआ। आपका नाम कचरीबाई पिताजी का नाम रोहिन्दा लक्ष्मीलालजी था। आपकी माताजी का स्वभाव भद्र परिणामी है और उनकी धर्म के प्रति अच्छी रुचि है। आपकी शादी जिला बांसवाडा के गांव खमेरा मे हेमराजजी के सुपुत्र कन्हैयालालजी के साथ हुई कन्हैयालालजी की यह दूसरी शादी थी। गृह कलह के कारण आपके जीवन मे मोड़ आया। इस कारण से आपमें वैराग्य आया। उसके बाद मुनि दयासागरजी का सघ मिला, जहां क्षुल्लक पार्श्वकीर्तिजी के सहयोग से गांव घाटोल में आपने क्षुल्लिका दीक्षा ली। तबसे आप वैराग्यमती माताजी के नाम से पुकारी जाने लगी।



मुनिश्री पुष्पदन्तसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



श्री पुष्पदन्तसागरजी महाराज

मुनिश्री पदमसागरजी

आर्यिका पार्श्वमतीजी

क्षुल्लक पदमसागरजी

क्षुल्लिका ध्यानमतीजी



मुनि श्री पवमसागरजी महाराज



आपका जन्म महाराष्ट्र प्रान्त के कोल्हापुर जिले में सन् १६०६ में हुआ था। पिता का नाम चम्पालाल एव माता का नाम गंगावाई था। आपका जन्म नाम अन्नू था। कन्नड़ो में अध्ययन किया। २५-२-१६६६ में घर बार छोडकर वीर ग्राम में क्षुल्लक दीक्षा ली तथा मुनि दीक्षा श्री सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखरजो में मुनि पुष्पदन्तसागरजी से ली। आप आत्मकल्याण के लिये प्रयत्नशील हैं, प्रतिदिन स्वाध्याय रत रहते है, हिन्दी भाषा का भी अध्ययन कर रहे है।

आर्यिका पार्श्वमतीजी



जन्मस्थान	—	दरियावाद (बाराबकी) उ० प्र०
नाम	—	स्नेहलता जैन
पितृ नाम	—	श्री बनारसीलालजी
मातृ नाम	—	श्रीमती मखानादेवी
शिक्षा	—	चौथी हिन्दी
जन्म सम्वत्	—	२००८ भाद्रपद कृष्णा अष्टमी
दीक्षा स्थान	—	त्रिलोकपुर (नेमनाथ अतिशय क्षेत्र)
दीक्षा गुरु	—	श्री १०८ मुनि पुष्पदन्तसागरजी
दीक्षा नाम	—	श्री १०५ पार्श्वमतीजी
पारिवारिक स्थिति	—	सुखी समृद्ध सम्पन्न परिवार
कुटुम्बी जन	—	पांच बहिनें, तीन भाई, तीन भोजाई, भतीजे, भतीजी लगभग १५० व्यक्तियों का परिवार छोड़कर दीक्षा ग्रहण की।



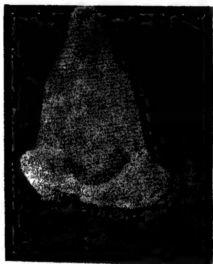
क्षुल्लक पदमसागरजी



गृहस्थ नाम— श्री गमकलालजी हुमड़
जन्म स्थान— सूरत (गुजरात)
दीक्षा गुरु — मुनि पुष्पदन्तसागरजी
दीक्षा — कार्तिक शुक्ल मास वीर नि० सं० २५०६ रविवार आपने अपने भरे पूरे परिवार को त्याग कर परमार्थ पथ का आश्रय लिया तथा आत्म कल्याण किया अन्त समय में आपने मुनि दीक्षा धारण कर समाधिमरण किया।



क्षुल्लिका प्यारमतीजी



आप मुनि पुष्पदन्तसागरजी महाराज द्वारा दीक्षित हैं। आपका विशेष परिचय अप्राप्य है।

आचार्यकल्प श्री सन्मतिसागरजी महाराज

द्वारा दीक्षित शिष्य



श्री सन्मतिसागरजी महाराज

मुनिश्री नेमिसागरजी
मुनिश्री विमलसागरजी
मुनिश्री पदमसागरजी
मुनिश्री कुन्थुसागरजी
आर्यिका चन्द्रमतीजी
आर्यिका शांतिमतीजी

क्षुल्लक सुपार्श्वसागरजी
क्षुल्लक हेमसागरजी
क्षुल्लक विजयसागरजी
क्षुल्लक चारित्रसागरजी
क्षुल्लक मानसागरजी

मुनिश्री नेमिसागरजी महाराज



आपका जन्म राजस्थान प्रदेश के प्रमुख नगर जयपुर मे हुआ था। आपके पिता का नाम जमनालालजी एवं माता का नाम गुलाबबाई था। सं० २०२१ में आपने श्री गजपथाजी के पुण्य तीर्थ पर क्षुल्लक दीक्षा ली एव मुनि दीक्षा (महाराष्ट्र) औरगाबाद में श्री सन्मतिसागरजी से ले ली। पश्चात वे गुरु के साथ विहार करते रहे एव अनेकों भाइयों को उपदेश देकर उनका कल्याण किया। वे महान तपस्वी थे और व्रत उपवास करते ही रहते थे। आप १-१ माह के उपवास करते थे। गाजियाबाद दिल्ली मे आपकी समाधि हुआ।



मुनिश्री विमलसागरजी महाराज



श्री १०८ श्री विमलसागरजी महाराज का जन्म राजस्थान के जयपुर राज्य मे अति ही सुरम्य गाव दोसा मे धर्मात्मा श्रेष्ठी श्री भुरामलजो की धर्म पत्नि गेंदीबाई छाबडा जाति खण्डेलवाल की कुक्षी से सं० १९६९ वैसाख शुक्ला ९ शुभ तिथि शुभ दिन मे हुआ। आपका जन्म नाम सोभागमल रखा गया। आप क्रम क्रम से वृद्धि को प्राप्त हुये। माता पिता ने आपको पाठशाला मे विद्याध्ययनार्थ रक्खा। १५ वर्ष की उम्र में ही आपकी शादी करा दी। आपकी धर्म पत्नि श्री कस्तूरीबाई से धर्मचन्द नामक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ। आप अपने माता पिता के इकलौते पुत्र थे और आपके भी एक ही पुत्र रत्न हुआ।

पार्श्वमती माताजी अजमेर वालों की प्रेरणा से आपने सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। कुछ समय उपरान्त आपने मुनि श्री १०८ श्री मल्लिसागरजी महाराज से सं० २००३ जयपुर में क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली और आपका नाम क्षुल्लक विजयसागर रखा। कुछ अशुभ कर्मों के उदय से आप को रोगो ने घेर लिया। पर आप कष्टों से डरने वाले नहीं थे आप दृढ़ता से रोगो का सामना करते रहे।

सं० २०२८ टोडारायसिंह में आप श्री ने मुनि दीक्षा आचार्य क० श्री सन्मतिसागरजी महाराज से ली। आपका जीवन अत्यन्त सरस है तथा अनेक प्रकार के कठिन व्रत उपवास करते हैं।

वर्तमान में आप अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी १०८ मुनिराज अजितसागरजी महाराज के संघ में रह कर निरन्तर धर्म ध्यान सेवन करते हुए चर्या का पालन करते है।





मुनिश्री पदमसागरजी महाराज

आप आ० क० श्री सन्मतिसागरजी महाराज द्वारा दीक्षित है, विशेष परिचय अप्राप्य है।



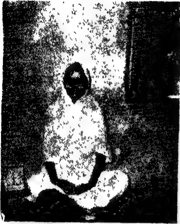


मुनिश्री कुन्थुसागरजी महाराज

आप आ० क० श्री सन्मतिसागरजी महाराज द्वारा दीक्षित है, विशेष परिचय अप्राप्य है।



आर्यिका चन्द्रमती माताजी



पूज्य आर्यिका रत्न विदुषी १०५ श्री चन्द्रमती माताजी अल्प उम्रवाली निशदिन पठन पाठन ज्ञान, ध्यान, तप, त्याग व सयम मे लवलीन रहती है आपकी उम्र करीब ३५ वर्ष की है आपका जन्म नावां (कुचामन रोड) में विक्रम् संवत् २००५ कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी को हुआ था। दीपावली का दिन था, चारो तरफ रोशनी ही रोशनी फैल रही थी इसलिए आपका जन्म नाम रोशनबाई रखा गया पिताजी का नाम श्रीमान सेठ सीतारामजी गोधा एवं माता का नाम श्री वृजेश्वरीबाई था। जब आपकी उम्र पॉच वर्ष की हुई तब माता पिता ने पढने हेतु विद्यालय मे भरती किया। पढ़ने में आप बहुत तेज थी परीक्षा मे भी सबसे प्रथम उत्तीर्ण होती थी। विद्यालय में पाचवी कक्षा तक अध्ययन किया। साथ साथ माता पिता जैन धर्म के सस्कार भी डालते गये। माता पिता को आपके प्रति बहुत ही लाड प्यार था जब आपकी उम्र १६ वर्ष की हुई तब आपका पाणिग्रहण खाचरियावास निवासी श्रीमान् सुकुमालचन्दजी के साथ विक्रम सवत् २०२१ मे हुआ था आपका सुहाग दस वर्ष तक रहा। आगे पाप कर्म के उदय से आपके पति श्री सुकुमालचन्दजी का अल्प उम्र मे ही स्वर्गवास हो गया। इस भारी दु ख का कोई पार नही, जो वैधव्य स्त्री होती है वो ही इन दु.खों को जान सकती है पति का वियोग होना स्त्रियो के लिए बहुत दु:ख की बात है परन्तु इतना भारी दु ख आने पर भी आपने रोने धोने व शोक सताप की तरफ मन को न लगाकर निशदिन धर्म के प्रति अपने मन को लगाकर दिन व्यतीत करते थे यह संसार असार है दु:खमय है प्रति समय आयु क्षीण होती जाती है मनुष्य जन्म बार बार मिलने वाला नही है ऐसा विचार कर आपने एक साल में ही आचार्य कल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज के सघ मे आ० सन्मति माताजी के पास आ गये। आने के बाद आ० विशुद्धमतीजी, विनयमतीजी व सन्मतिमाताजी से पठन पाठन अध्ययन किया। इसप्रकार वैराग्य के भाव बढते गये। माताजी ने सबसे प्रथम शान्तिवीर नगर मे आचार्य कल्प १०८ श्री श्रुतसागरजी महाराज से पचम प्रतिमा के व्रत लिये और त्याग व सयम को कष्ट नही जाना। आपने सुजानगढ में आ० कल्प श्री १०८ सन्मतिसागरजी महाराज से सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। सप्तम प्रतिमा लेने पर भी आपका मन तृप्त नहीं हुआ। फिर आपने विक्रम सवत् २०३४ में कार्तिक कृष्णा प्रतिपदा (एकम) के दिन नागौर में पूज्य आचार्य कल्प १०८ श्री सन्मतिसागरजी महाराज के

पास अल्पायु में ही आर्यिका दीक्षा ग्रहण की । दीक्षा के अवसर पर आपने एक घन्टा भर जनता को धर्मोपदेश व वैराग्य के भाव सुनाये । दीक्षा नाम आ० चन्द्रमतीजी है अब वर्तमान समय में भी आत्महित के कारण निरन्तर ज्ञान, ध्यान का अभ्यास करते ही रहते है चारित्र पालन के साथ साथ ज्ञानाभ्यास हिन्दी व संस्कृत का ज्ञान बढ़ाया । मधुर मधुर व्याख्यानों के द्वारा जनता को धर्मोपदेश सुनाते हैं उपदेश की शैली बहुत ही मीठी है व जनता को आकर्षित करती है शरीर से तो कमजोर व दुबले पतले दिखाई देते है परन्तु आत्म बल के द्वारा ज्ञान व चारित्र की वृद्धि के लिए निरन्तर ग्रन्थो का अध्ययन करते ही रहते है मन में क्लेश कषाय भाव जल्दी उत्पन्न नहीं होते हैं इसप्रकार स्वपर कल्याण करते रहे यही हमारी भावना है ।

आर्यिका शांतिमती माताजी



१०५ श्री शान्तिमती माताजी सबसे वयोवृद्ध आर्यिका हैं यथा नाम तथा गुण के वाक्यानुसार बडी शात प्रकृति की साध्वी हैं । तात्विक चर्चा में रुचि रखती है । आपका जन्म हमेरपुर में श्रीमान अम्बालालजी बड़जात्या की धर्मपत्नी श्री फुदीबाई की कुक्षी से हुआ । आपका जन्म नाम गुलाबबाई था आपका विवाह टोडारायसिंह निवासी श्री गुलाबचन्दजी पाटनी से हुआ । आपकी वैराग्य भावना बाल्यावस्था से ही थी परन्तु स्त्री पर्याय के कारण परिस्थिति वश शादी करनी पड़ी परन्तु वैराग्य भावना आगे बढ़ने लगी आपके तीन लडकियां और दो लडके हैं घर मे सब तरफ से सम्पन्न कार्य है परन्तु भावना नही रुकी और आर्यिका श्री इन्दुमतिजी का ससर्ग मिला और उनसे आपने दो प्रतिमा के व्रत लिये । पूज्य १०८ श्री वीरसागरजी महाराज का टोडारायसिंह में शुभागमन हुआ । उनके उपदेशों का ऐसा प्रभाव पडा कि आपने उनसे ही पांचवी प्रतिमा के व्रत धारण किये । और सीकर मे आ० श्री शिवसागरजी महाराज से आपने सातवी प्रतिमा धारण की । पश्चात् आर्यिका दीक्षा टोडारायसिंह में पूज्य मुनिराज श्री १०८ सन्मति सागरजी म० से वि० सं० २०२८ मे मंगसिर कृष्णा ६ को ग्रहण की । सम्पूर्ण परिवार आदि त्याग कर उत्तरोत्तर त्याग तपश्चर्या एवं ज्ञान को बढ़ाया । स्कूली शिक्षा बिल्कुल नहीं पाने पर भी आप अभ्यास के द्वारा स्वाध्याय पाठ क्रिया आदि सब करती हैं उपदेश भी देती हैं । तथा ज्ञान ध्यान स्वाध्याय मे अपना जीवन लगाकर स्वपर कल्याण कर रही हैं ।



क्षुल्लक सुपार्श्वसागरजी महाराज



पुरुषार्थ चतुष्टय मे अंतिम पुरुषार्थ मोक्ष को साधने के लिये संयम की चौखट पर थाप दिये बिना जो चल पड़ते है वे मारीचि की स्मृति जगाये रखने के सिवाय भला संसार मे और कौनसा महान् कार्य कर रहे है। टोडारायसिंह (टोंक) मे अध्यात्म की अनबूझ पहेली मे उलझे श्रावकों मे बहस की बात भी सदैव "मार्ग" की रही है। सनातनियों और अध्यात्मपंथियो की यह कोरी उठापटक द्रविड प्राणायाम ही सिद्ध होती यदि सुवालाल जैन क्षुल्लक दीक्षा लेकर हमारे मध्य न आये होते। खण्डेलवाल फूलचन्द जैन और उनकी पत्नी एजनबाई आर्ष परम्परा के उपासक तो रहे है। परन्तु यह तो उनने भी नही सोचा होगा कि फाल्गुन शु० १० स० १९६६ मे जन्मी उनकी यह संतान शास्त्रीय चर्चा को एक दिन आचरण का जामा पहन कर सबकी पूज्य बन जायगी। राजपूताने की तपती रेत मे तृषा शान्त करने के साधन सुदूर-दूर तक अलभ्य जैसे भले ही रहे आये पर धर्मामृत की वर्षा का कभी अकाल नही पडा। यह बात सुजानगढिया और लाडनू वाले भली भांति जानते हैं। पू० मुनि श्री सन्मतिसागरजी म० का सं० २०३३ कार्तिक शु० ९ को सुजानगढ़ मे पदार्पण हुआ तो गुरु सान्निध्य मिलते ही सुवालाल के हृदय में वैराग्य की तरंगे हिलोर मारने लगी। गुरु ने श्रावक समुदाय के समक्ष जैनेश्वरी क्षुल्लक दीक्षा प्रदान करते हुए आपको "सुपार्श्वसागर" के नाम से संबोधित किया। गुरू कृपा से आज ७१ वर्ष की आयु में भी पू० सुपार्श्वसागरजी म० निरन्तर शास्त्राभ्यास करते हुए असहाय संसारी प्राणियो की नैया भवसागर से पार उतारने में लगे हुए है। आपने दीक्षा काल से लेकर अब तक नागौर, उदयपुर, जयपुर, टोडारायसिंह नगरों में चतुर्मास करके अनगिनत प्राणियों को चारित्र धर्म का मर्म समझा कर उनका असीमित संसार सीमित कर दिया।



क्षुल्लक श्री हेमसागरजी

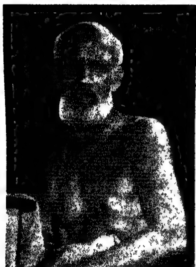


रजपूती साहस की कहानियों मे बूंदी को भी कुछ हिस्सा मिला है। नैनवा एक छोटा सा गाव इसी जिले की सरहदी में बसा है जिसके आंचल में विराग की साहस कथा सिमटी पडी है। श्री फूंदालाल खण्डेलवाल अपनी पत्नी केसरबाई के साथ हमेशा साधु सगति और वैयावृत्ति मे समय बिताते थे। स० १६७८ आषाढ की अमावस्या को उनके घर एक पुत्र रत्न का जन्म हुआ जो उनके गुणों की अनुकृति मात्र था। पिता ने स्नेह के साथ पुत्र का नाम कल्याणमल रखा। शायद ठीक भी था भविष्य मे इसमें जगकल्याण की सम्भावना उन्हे पालना झुलाते ही दिख गई थी। स० २०२३ कार्तिक शु० १३ को टोक मे पू० आ० श्री धर्मसागरजी म० के शुभागमन के समय कल्याण मल ने सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर स्वकल्याण पथ में अपने कदम बढा दिये। इससे ठीक आठ वर्ष बाद मालपुरा (टोक) मे स० २०३१ ज्येष्ठ शु० ५ को पू० मुनि श्री सन्मतिसागरजी म० (टोडारायसिंह वाले) से क्षुल्लक दीक्षा लेकर अपना नाम सार्थक कर दिया। दीक्षा देकर आचार्य श्री ने आपका नाम क्षुल्लक हेमसागर रखा। आप भी हेम सदृश अपनी काति से समाज में निर्मल रत्नत्रय के बीज बो रहे है। आपने अब तक मालपुरा नगरफोर्ट, उनियारा, सिवाड, दूनी मे चातुर्मास कर श्रावको पर अनुग्रह किया है। जिन शासन की प्रभावना के लिये वेदी प्रतिष्ठा, पचकल्याणक प्रतिष्ठा, मदिर जीर्णोद्धार आदि कार्यों के लिये सतत् प्रेरणा करते रहते हैं।



क्षुल्लक श्री विजयसागरजी

आपका जन्म दोसा जिला जयपुर (राजस्थान) मे श्री भूरामलजी की धर्मपत्नी श्री गेंदाबाई की कुक्षि से वैसाख सुदी नवमी स० १६६६ मे खण्डेलवाल जाति में जन्म लिया। आपकी शिक्षा सामान्य ही रही। स० २००३ मे मुनि मल्लिसागरजी महाराज से जयपुर में क्षुल्लक दीक्षा ली। आपने भारत वर्ष के अनेक प्रान्तो में विहार कर धर्म प्रभावना की। आज भी आप आ० क० सन्मतिसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा लेकर आत्म कल्याण के पथ पर संलग्न हैं।



क्षुल्लक चारित्रसागरजी

आपने देवगाव, तालुका कन्नड़ जिला औरंगाबाद में दिनाक २८-२-१९१८ में जन्म लिया था। आपका पूर्व नाम चन्दूलालजी शाह था। धार्मिक परिवार में जन्म होने के कारण आपने भी अपने मन को धर्म में लगाया तथा मुनि सुमतिसागरजी से ५ वी प्रतिमा के व्रत धारण किए। मराठी मे शिक्षा प्राप्त की तथा सन् १९६४ आडूल महाराष्ट्र में मुनि सन्मतिसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ली। आपने दहीगाव क्षेत्र पर एक गुरुकुल की स्थापना कराई जो विधिवत चल रहा है। आपके माध्यम से सैंकडों जीव आत्म कल्याण कर रहे है। 

क्षुल्लक मानसागरजी

वस्त्र व्यवसायी बाबूलाल जैन ने पुण्य की एक हल्की सी सुगन्ध न बिखेरी होती तो ऊँचे-ऊँचे सागौन वृक्षों से आच्छादित जबलपुर जिले के जंगलो में सुदूर तक बसी अकृतपुण्य के साकार रूप भील-कोल की बस्तियों के मध्य "बचैया" गाव महत्वहीन ही बना रहता। सन् १९७६ में श्रावक प्रमुख श्री उदयचन्द जैन एवं मोतीलाल जैन की विनती स्वीकार कर पू० आ० श्री सन्मतिसागरजी म० बाकलग्राम में पधारे तो पुण्य के सुवासित समीर से फिर वह समूचा इलाका ही नहा गया। गृह विरक्त बाबूलाल जैन ने गुरु आगमन की चर्चा सुनी तो चरणों का शरणा गहने दौड़ आया। गुरु कृपा से उसकी मुराद पूरी हुई। दम्पत्ति श्री भायकलाल फूलकबाई की संतान को आचार्य श्री ने ७ दिसम्बर ७९ को बाकल के श्रावकों के समक्ष क्षुल्लक दीक्षा प्रदान कर 'मानसागर" नाम विख्यात किया। इस प्रकार वि० सं० १९६५ से इस भव की नर पर्याय मे पडी आत्मा के कर्मास्रवों के स्रोतो पर संवर की डांट लगाई। गुरु चरणों में रहकर क्षुल्लक मानसागरजी शास्त्रो के अध्ययन-मनन में अपनी आत्मा को लगाकर वैराग्य भावना भा रहे हैं। 

मुनिश्री श्रेयांससागरजी नांदगांव

द्वारा दीक्षित शिष्य



श्री श्रेयांससागरजी महाराज

मुनिश्री धर्मेन्द्रसागरजी

आर्यिका सुगुणमतीजी



मुनिश्री धर्मेन्द्रसागरजी महाराज



आपका जन्म राजस्थान प्रान्त के ग्राम पारसोला में पिता श्री किशनलालजी के यहा हुआ। आपकी माता का नाम श्री घीसीबाई था। आपने मुनि श्रेयांससागरजी महाराज से मुनि दीक्षा फलटण महाराष्ट्र में २२ फरवरी १९७३ को ली। आपने फलटण, श्रीरामपुर, नांदगांव, इन्दौर, मुरेना, अजमेर, ईशरी आदि स्थानो पर चातुर्मास किए तथा धर्म प्रभावना की।



आर्यिका सुगुणमती माताजी



आपका जन्म नाम बसन्तीबाई था। आपके पिता का नाम गुलाबचन्दजी एवं माताजी का नाम असराबाई था। आप खण्डेलवाल जाति में उत्पन्न हुई। जन्म स्थान अकलूज था। आपने मुनि श्रेयाससागरजी से श्रावण सुदी सप्तमी दिनाक १६-८-७२ को दीक्षा ली।

आपने बारामती, फलटण, गजपन्था, नादगाव, अजमेर, ईशरी, सुजानगढ़ आदि स्थानो मे चातुर्मास किया।



आचार्य श्री ज्ञानसागरजी महाराज

द्वारा दीक्षित शिष्य



आचार्य श्री ज्ञानसागरजी महाराज



आचार्य श्री विद्यासागरजी
मुनिश्री विवेकसागरजी
क्षुल्लक श्री स्वरूपानन्दजी



आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज



पू० श्री विद्यासागरजी का समस्त परिवार जैन धर्म की साधना में है, आपका जन्म बेलगाव (कर्नाटक) सदलगा नामक ग्राम में हुआ, आपके पिताजी का नाम मल्लप्पाजी तथा माताजी का नाम श्रीमतिजी था। आपका जन्म स० २००३ आसोज सुदी १५ को हुवा था। आपका बचपन का नाम भी विद्यासागर ही था। आपकी मातृ भाषा कन्नड़ है। नवमी कक्षा तक आपकी लौकिक शिक्षा हुई। आप इस समय सस्कृत हिन्दी के उच्चकोटि के विद्वान है आपने हिन्दी एव सस्कृत मे उच्चकोटि की रचनाये की है। आपने असाढ सुदी पचमी सवत् २०२५ मे मुनि ज्ञानसागरजी से अजमेर में मुनि दीक्षा ली तथा आत्म साधना में सलग्न है। आप युवा मुनि है तथा आपका पूरा सघ युवा ही है। चारित्र के धनी युवा सघ दिगम्बरत्व की साधना कर भ० महावीर के मार्ग को आगे बढा रहे है। तपोनिष्ठ आचार्य श्री विद्यासागरजी की काया निरन्तर तप के कारण स्वर्णरगी दिखती है, आपके प्रवचनो के लिए भीड उमड़ पड़ती है। निर्मल चारित्र, बाल ब्रह्मचारी मुनि श्री विद्यासागरजी के २ भाई, पिताजी, माताजी एव दोनों बहिनें जैनेश्वरी दीक्षा लेकर आत्म साधना कर रहो हैं। आपके माताजी, पिताजी एव २ बहिने आचार्य श्री धर्मसागरजी से दीक्षा लेकर आत्म कल्याण के मार्ग मे निरत है।



मुनिश्री विवेकसागरजी महाराज



आपका जन्म ग्राम मरवा जिला जयपुर मे हुआ। आपके पिता का नाम श्री सुगनचन्दजी तथा माता का नाम रजमतीबाई था। आप छाबड़ा गोत्रज है आपकी प्रारम्भ से ही धर्म की ओर विशेष रुचि थी। पिताश्री परिवार सहित आजीविकोपार्जन हेतु बासम जाकर रहने लगे। आपके भाव दिन प्रतिदिन वैराग्य की ओर बढते रहे, आपको विद्यासागरजी का सयोग मिला, आपने पहली प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर वैराग्य मयी जीवन की ओर प्रवेश किया। कुछ दिन पश्चात् आचार्य विमलसागरजी से दूसरी प्रतिमा ली, तथा आर्यनन्दि गुरु के सान्निध्य में सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये। इसप्रकार उत्तरोत्तर त्याग मार्ग की ओर बढते-बढते आचार्य ज्ञानसागरजी से नसीराबाद (अजमेर) मे फाल्गुन कृष्णा ५ शुक्रवार स० २०२५ के दिन संसार तारक परम दैगम्बरी दीक्षा धारण की आचार्य श्री ने आपके विवेक की सराहना करते हुए आपका नाम विवेकसागर रखा। आप बहुत ही कठिन तपस्या में रत रहते है, आपकी प्रवचन शैली बहुत ही सरल है, गुरु आदेश से अपनी विवेक असि को भाजते हुए कर्मों की कड़ियां काट रहे है।



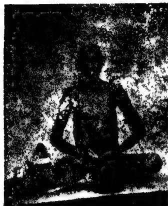
क्षुल्लक स्वरूपानन्दजी महाराज

आपका जन्म ५-७-५१ को ग्राम नादसी जिला अजमेर में हुवा था। आप खण्डेलवाल जाति में छाबड़ा गोत्रज है, बचपन का नाम श्री दीपचन्दजी था। आपकी शिक्षा एम० कॉम० तक हुई। आपने मुनि ज्ञानसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली। आप अच्छे वक्ता तथा उच्चकोटि के लेखक भी हैं। आपके प्रवचनों से जैन जगत मे काफी धर्म प्रचार होता था। संयोग से असाता कर्म का उदय हुआ। आपने क्षुल्लक दीक्षा का त्याग कर दिया। अब पुनः गृहस्थ के व्रतों को पाल रहे हैं।



मासोपवासी मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी

द्वारा दीक्षित शिष्य



श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज



१. मुनि श्री विनयसागरजी
२. मुनि श्री विजयसागरजी
३. क्षुल्लक श्री सुरत्नसागरजी



मुनि श्री विनयसागरजी



आपका जन्म बासवाड़ा जिले के पास घाटोल मे शक्तिचन्द्रजी कोठारी के यहा हुआ था। पिता के उत्तम सस्कारो से उनमे शुरू से ही धार्मिक संस्कार पड़े और आप मुनियो की भक्ति मे लीन हो गये। मुनिवरों के दर्शनार्थ मीलों तक पैदल ही चले जाया करते थे। एक बार आचार्य श्री शान्तिसागरजी के केशलोंच को देख कर वह बड़े प्रभावित हुए और संसार को असार जान कर उन्होंने उसी समय कुछ व्रत लिये। फिर घर रह कर ही धर्मसाधना करने लगे। पूज्य श्री १०८ सुपार्श्व-सागरजी के साथ उन्होंने सम्मेदशिखरजी की यात्रा की और वही पर स० २०२९ में श्री सुपार्श्वसागरजी से मुनि दीक्षा ले ली।



मुनि श्री विजयसागरजी



आपका जन्म स० १९६७ को देवपुरा में हुआ था। माता का नाम चुन्नीबाई और पिताजी का नाम श्री टेकचन्द्रजी चित्तौड़ा था आपका बचपन का नाम अम्बालाल था। आपका विवाह छोटी आयु में ही हो गया था। वर्तमान समय में ४ पुत्र व १ पुत्री है, जो धर्म ध्यान पूर्वक गृहस्थ जीवन यापन कर रहे हैं।

श्रावण सुदी तेरस सं० २०२९ को आपने घर बार छोड़ दिया और सिद्धक्षेत्र श्री सम्मेदशिखरजी में पूज्य मासोपवासी मुनिवर श्री सुपार्श्वसागरजी से आसोज सुदी दसमी सं० २०२९ को मुनि दीक्षा ली। आपका दीक्षा नाम श्री विजयसागरजी रखा गया।

क्षुल्लक श्री सुरत्नसागरजी

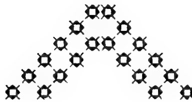


आपका जन्म गुनोर जि० पन्ना में श्री बैनीप्रसादजी के यहाँ हुआ था। आप ६ भाई बहिन हैं। आपकी बहिन पूर्वनाम सुधा जो अब आ० सुरत्नमती के नाम से जानी जाती है। आपने मासोपवासी मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज से कटनी में क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आप जैन ग्रंथों के उच्चकोटि के लेखक व वक्ता है। आप हिन्दी, अंग्रेजी, कन्नड़, मराठी, गुजराती आदि भाषा के जानकार हैं। आपकी प्रवचन शैली अति ही उत्तम है। आधुनिक शैली से विषय का प्रतिपादन करना आपकी विशेषता है। अल्प आयु के आप प्रभावी एवं तपस्वी साधु हैं।



आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित साधु वृन्द



मुनिश्री समयसागरजी
मुनिश्री योगसागरजी
मुनिश्री नियमसागरजी
मुनिश्री चेतनसागरजी
मुनिश्री ओमसागरजी
मुनिश्री क्षमासागरजी
मुनिश्री गुप्तिसागरजी
मुनिश्री संयमसागरजी

ऐलक श्री भावसागरजी
ऐलक श्री परमसागरजी
ऐलक श्री निःशंकसागरजी
ऐलक श्री समतासागरजी
ऐलक श्री स्वभावसागरजी
ऐलक श्री समाधिसागरजी
ऐलक श्री करुणासागरजी
ऐलक श्री दयासागरजी
ऐलक श्री अभयसागरजी



मुनिश्री समयसागरजी महाराज



आचार्य विद्यासागरजी के छोटे भाई श्री शान्तिनाथजी का आज से २५ वर्ष पूर्व सदलगा मे जन्म हुआ था। आपकी शिक्षा मराठी में हुई थी। आपके माताजी व पिताजी एव दो बहने आचार्य श्री शान्तिसागरजी के तृतीय पट्टाचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से मुनि, आर्यिका दीक्षा लेकर आत्म कल्याण कर रहे हैं। आपके भाव भी आत्म कल्याण करने के हुए तथा भाई (श्री विद्यासागरजी) के सान्निध्य मे १५-३-८० को आकर द्रोणगिरी क्षेत्र मे मुनि बन गये। तथा अब आप जैन धर्म की प्रभावना कर जैन धर्म के सिद्धान्तों को जन-जन तक पहुँचा रहे है। आप सघ के परम तपस्वी सन्तों मे मे एक सन्त है। निरन्तर ज्ञान ध्यान मे लीन रहते है।



मुनि श्री योगसागरजी महाराज



श्री अनतनाथ जी का जन्म २७ वर्ष पूर्व सदलगा जिला बेलगांव में हुवा था। आपके पिता का नाम श्री मल्लप्पाजी तथा माताजी का नाम श्रीमति देवी है। आपकी लौकिक शिक्षा आठवीं तक ही है। आपके २ भाई मुनि है। मां पिताजी एव दो बहिनें भी साधु पद पर हैं। आपने युवा अवस्था में १५-४-८० को सागर में मुनि दीक्षा ली। आप आत्म साधना मे तत्पर हैं तथा जैन धर्म की प्रभावना कर रहे हैं।



मुनिश्री नियमसागरजी महाराज

नियमसागरजी का जन्म २७ वर्ष पूर्व सदलगा (बेलगाव) में श्री बाबूरावजी पाटील के घर हुआ । आपके भाई ने मुनि दीक्षा ली तथा उनके उपदेशों से संसार को असार जानकर आप भी मुनि बन गये । आप कुशल वक्ता भी हैं । आपका पूर्व नाम श्री महावीर जैन था ।



मुनिश्री चेतनसागरजी महाराज

श्री आदिनाथ का जन्म लगभग ३० वर्ष पूर्व सदलगी जिला बेलगांव कर्नाटक मे श्री बाबूरावजी पाटील के घर हुआ । आपकी माता का नाम श्रीमति सोनादेवी था । आपकी शिक्षा ५ वी तक ही रही । सन् ८१ मे आपने मुनि दीक्षा ले ली तथा स्वपरोपकार मे निरत हैं ।



मुनिश्री ओमसागरजी महाराज



श्री नानूभाई का जन्म आज से ३७ वर्ष पूर्व मोरवी (गुजरात) में, श्री मूलजी भाई के घर हुआ था । आप अच्छे एवं कुशल सिविल इन्जीनियर पोलो टैकनिक थे । आप क्षत्रिय कुलोत्पन्न हैं । जैन धर्म में आपकी अत्यन्त श्रद्धा थी इसी कारण आपने अपना जीवन आत्म कल्याण में लगाया । दिनांक २९-१०-८१ को नैनागिरी क्षेत्र पर आपने मुनि दीक्षा लेकर मनुष्य पर्याय को सार्थक किया । आपका वर्तमान नाम ओमसागरजी है ।





मुनिश्री क्षमासागरजी महाराज

श्री वीरेन्द्रकुमारजी सिघई का जन्म सागर में श्रेष्ठी श्री जीवेन्द्रकुमार सिंघई के यहां हुवा था । आप सरल तथा शान्त स्वभावी एक युवा तपस्वी सन्त है । आपने एम० टेक० पास करने के बाद मुनि श्री विद्यासागरजी महाराज से क्रमशः क्षुल्लक एवं ऐलक दीक्षा ली दिनाक २०-८-८२ को आपने मुनि दीक्षा ली । आप आत्म कल्याण के मार्ग में निरत है । धन्य है ऐसे मानव जीवन को जो भ० महावीर के मार्ग को आज भी आगे बढ़ा रहे हैं ।





मुनिश्री गुप्तिसागरजी महाराज

श्री नवीनकुमारजी का जन्म गढाकोटा जि० सागर (M.P) मे हुवा था । हायर सेकण्डरी तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपने मुनि श्री विद्यासागरजी के निकट आकर नैनागिरी क्षेत्र पर मुनि दीक्षा ली ।



मुनिश्री संयमसागरजी महाराज

सतीशकुमारजी का जन्म कटगी जबलपुर मे श्री पन्नालालजी बडकुल के यहां हुआ था । हायर सेकण्डरी तक शिक्षा प्राप्त की । आप युवा अवस्था मे ही मुनि दीक्षा लेकर आत्म कल्याण के मार्ग में संलग्न है ।



ऐलक श्री भावसागरजी महाराज

महेन्द्रकुमारजी का जन्म शाहपुरा जि० जबलपुर में हुआ। आपके पिता का नाम बाबूलालजी था। बी० काम० तक लौकिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपने नैनागिरी क्षेत्र पर ऐलक दीक्षा ली।



ऐलक श्री परमसागरजी महाराज

जयकुमारजी का जन्म ईशरवारा जि० सागर में श्री रूपचन्दजी की धर्मपत्नी श्रीमति शान्तिदेवी की कुक्षि से हुआ आपने लौकिक शिक्षा बी० कॉम० तक प्राप्त की है। दि० १०-१-८० को नैनागिरी में ऐलक दीक्षा ली।



ऐलक श्री निःशंकसागरजी महाराज

श्री राजधरजी बण्डा के निवासी थे। आपके दूसरे सुपुत्र का नाम महेशकुमार था। आपकी लौकिक शिक्षा हायर सैकण्डरी तक ही हो पाई थी। आपने १०-२-८३ को मधुबन में ऐ० दीक्षा ली।



ऐलक श्री समतासागरजी महाराज

प्रवीणकुमारजी ने देवरी (सागर) में जन्म लेकर मध्यप्रदेश को पवित्र किया। हायर सैकण्डरी तक शिक्षा प्राप्त की। आपके पिता का नाम श्री राजाराम जी था। आपने मुनि विद्यासागरजी से ऐ० दीक्षा धारण की।



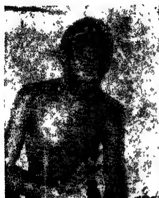
ऐलक श्री स्वभावसागरजी महाराज

अशोककुमारजी का जन्म देवरी (सागर) में हुआ। आपके पिताजी का नाम श्री फूलचन्दजी तथा माताजी का नाम श्रीमति गुलाबरानी था। आपकी शिक्षा एम० एस० सी० तक थी। १०-२-८३ को मधुबन में ऐलक दीक्षा ली। आप सरल स्वभावी एवं वैराग्य से ओतप्रोत थे। आपके आगे भी मुनि दीक्षा धारण करने के भाव हैं।

ऐलक श्री समाधिसागरजी महाराज

श्री राजेन्द्रकुमारजी का जन्म कुशम्बा (महाराष्ट्र) मे हुआ । आपने लौकिक शिक्षा बी०-कॉम० प्रथम वर्ष तक प्राप्त की । १०-३-८३ को सम्मेदशिखरजी पर आपने ऐ० दीक्षा धारण की ।





ऐलक श्री करुणासागरजी महाराज

श्री सुरेशकुमार जी का जन्म सगौरिया जि० नरसिंहपुर मे श्री भागचन्द्रजी के यहा हुआ था । आपने बी० एस० सी० तक शिक्षा प्राप्त कर शिखर जो में ऐलक दीक्षा ले ली ।



ऐलक श्री दयासागरजी महाराज

आपका जन्म बन्डावेलई जि० सागर मे श्री प्रभाचन्दजी जैन की धर्मपत्नी श्री बिमलादेवी को कुक्षि से हुआ था । आपका पूर्व नाम मनोशकुमार था आपने लौकिक शिक्षा हायर सैकेण्डरी तक प्राप्त की । १०-३-८३ को मधुबन में आपने ऐलक दीक्षा ली ।





ऐलक श्री अभयसागरजी महाराज

आपका पूर्व नाम श्री बाहुबली था, आपके पिताजी का नाम श्री हुकमचन्द जी सोधिया तथा माताजी का नाम श्रीमति चन्दानीदेवी था । आपकी लौकिक शिक्षा एम० कॉम० तक हुई थी । आपने १०-२-८३ को सम्मेदशिखरजी सिद्ध क्षेत्र पर ऐ० दीक्षा धारण की ।



मुनिश्री निजानन्दसागरजी महाराज

द्वारा दीक्षित शिष्य



मुनि श्री निजानन्दसागरजी महाराज



मुनिश्री त्यागानन्दजी

मुनिश्री त्यागानन्दजी महाराज

आपका पूर्व नाम नगीनदास भवेरी था। बोरीवली बम्बई मे आपका निवास स्थान था। १९४८ मे गजपंथा सिद्ध क्षेत्र पर आचार्य श्री शातिसागरजी महाराज से सातवी प्रतिमा के व्रत धारण किये। क्षु० दीक्षा ११-६-८३ को एवं मुनि दीक्षा १३-६-१६८३ को एव समाधि भी १३-६-८३ को सूरत गुजरात मे हुई। आपने मुनि निजानन्दसागरजी से मुनि दीक्षा अन्तिम समय मे ली थी।



मुनिश्री सुमतिसागरजी महाराज (दक्षिण)

द्वारा दीक्षित शिष्य



मुनि श्री नेमिसागरजी
मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी (दक्षिण)
मुनि श्री सीमंधरसागरजी
मुनि श्री नेमिसागरजी

मुनिश्री नेमिसागरजी महाराज

पूज्य मुनिराज का जन्म पजाब के एक छोटे से गांव मे हुआ था। बहुत छोटी सी अवस्था में आप देहली मे श्रीमान लाला रणजीतसिहजी के यहा गोद आ गये थे। आपका बचपन का नाम नेमीचन्द्र था। आप बचपन से ही सासारिक कार्यों में उदासीन रहे।

धार्मिक कार्यों में विशेष रुचि रखते थे। आप बाल ब्रह्मचारी हैं। आपने क्षुल्लक दीक्षा परम पूज्य मुनि १०८ श्री सुमतिसागरजी महाराज के पास कचनेर ग्राम में आज से २५ साल पहले ग्रहण की, पूज्य मुनि १०८ श्री सुमतिसागरजी महाराज के पास संवत् २०१२ में टांकाटुका ग्राम में मुनि-दीक्षा ग्रहण की। आप पूज्य महाराजश्री के साथ ही विहार करते हैं। आप स्वभाव के बड़े मृदु एवं मितभाषी हैं। आपके प्रवचन प्रभावशाली होते है। आपके ज्ञान का क्षयोपशम महान है। निरतिचार पूर्वक महाव्रतों का पालन करते हैं।



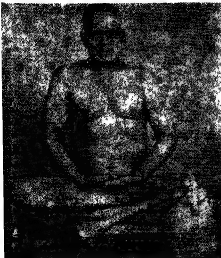
मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी महाराज (दक्षिण)



आपने महाराष्ट्र प्रान्त के औरंगाबाद जिले में महत ग्राम मे भीकमचन्द पिता एवं गऊबाई माता की कुक्षि मे चैत सुदी पंचमी को लुहाडे गोत्र मे जन्म लिया था। आपका पूर्व नाम श्री रतनलालजी था। आपने आचार्य शांतिसागर जी से १९९० मे क्षुल्लक दीक्षा ली। मुन्नूर ग्राम में स० २००३ मे सुमतिसागरजी महाराज से फाल्गुन सुदी तीज को मुनि दीक्षा स्वीकार की। भारत भर में विहार किया तथा अनेको जगह धर्म प्रभावना की, अन्त में उदयपुर मे आपने समाधि धारण की। आचार्य शिवसागरजी के सान्निध्य मे विधि पूर्वक समाधिमरण किया।



मुनिश्री सीमन्धरसागरजी महाराज



आपका जन्म हालगे (बेलगांव) कर्णाटक में हुवा था। आपके पिता खेती एव साहुकारी का कार्य करते थे। पूर्व नाम जिनप्पा चतुर्थ था। आपके पिता का नाम श्री मालप्पा तथा माता का नाम पद्मावती था। आपकी लौकिक शिक्षा मिडिल प्रवेशिका तक ही रही। आप १५ वर्ष की उम्र में ब्रह्मचारी बन गये। आपने ९-११-५३ को मुनि मल्लिसागरजी से बेलगाव मे क्षुल्लक दीक्षा ली। ऐलक दीक्षा १-७-५८ को मुनि सुपार्श्वसागरजी से औरंगाबाद में ली तथा मुनि दीक्षा भी श्री सुपार्श्वसागरजी से सिद्धक्षेत्र कुन्थलगिरी में २६-१२-५८ को ली। आपने अपने जीवन काल में

७ दीक्षाऐ दीं। जैन समाज ने आपको बाराबंकी में ४-३-१९७४ में आचार्य पद प्रदान किया। आप भारतवर्ष में विहार करके जैन धर्म की अपूर्व प्रभावना कर रहे हैं।



मुनिश्री नेमिसागरजी महाराज

आपका जन्म राजस्थान प्रदेश के प्रमुख नगर जयपुर में हुआ था। उनके पिता का नाम जमनालाल एवं माता का नाम गुलाब बाई था। स० २०२१ में उन्होंने श्री गजपंथा जी के पुण्य तीर्थ पर क्षुल्लक दीक्षा ली एव मुनि दीक्षा (महाराष्ट्र) औरंगाबाद में श्री सुमतिसागर जी से ले ली। फिर वह गुरु के साथ विहार करते रहे एवं आत्मार्थियों को उपदेश देकर उनका कल्याण किया। मुनि श्री महान तपस्वी है और व्रत उपवास करते ही रहते है।



आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



आ० श्री देशभूषणजी महाराज

मुनिश्री सुबलसागरजी
मुनिश्री ज्ञानभूषणजी
मुनिश्री सन्मतिभूषणजी
मुनिश्री विद्यानन्दजी
मुनिश्री सिद्धसेनजी
मुनिश्री बाहुबलिजी
मुनिश्री सुमतिसागरजी
मुनिश्री शातिसागरजी
मुनिश्री निर्वाणसागरजी
क्षुल्लक श्री चन्द्रभूषणजी
,, नन्दिषेणजी

क्षुल्लक श्री पदमसागरजो
,, भद्रबाहुजी
,, आदिसागरजी
,, इन्द्रभूषणजो
,, वृषभसेनजो
,, जिनभूषणजी
आर्यिका सुव्रतामतीजो
आर्यिका शातिमतीजी
,, यशोमतीजी
,, दयामतीजी
,, अनन्तमतीजी

क्षुल्लिका जिनमतीजी
,, चारित्रमतीजी
,, आदिमतीजी
,, अजितमतोजी
,, कमलश्री माताजी
,, जयश्री माताजी
,, चन्द्रसेनाजी
,, कृष्णमतीजी
,, वीरमतीजी
,, राजमतीजी
,, श्रेयांसमतीजी
,, विजयमतीजी

मुनिश्री सुबलसागरजी महाराज



आपका जन्म मैसूर प्रांत जिला बेलगाम, तहसील अथणी, नदगाव देहात मे पाटिल (क्षत्रिय) वंश मे शिवगौडा नाम के सम्यक्दृष्टि, सरल स्वभावी श्रावक की धर्मपत्नी, अनेक गुण सपन्न शीलवती श्री गन्धारी माता की कुक्षी से दिनांक ४-१-१९१६ में हुआ। आपका नाम परगौडा रखा गया। आपकी शिक्षा कक्षा ४ तक रही। माता-पिता के धर्म संस्कारों के साथ-साथ आप देव-दर्शन, शास्त्र-श्रवण आदि धार्मिक क्रियाओं का पालन करने लगे। अठारह वर्ष की आयु में आपकी शादी धर्मपरायणा सुश्री चंपावती बाई के साथ हुई। आपके चार पुत्रियाँ एव एक पुत्र हाते हुए भी गृहस्थाश्रम से उदासीन, जैसे जल से भिन्न कमल की तरह, आप धार्मिक कार्यों में बढ़ते रहे।

संसार से विरक्ति के कारण नसलापुर गाव मे चातुर्मास के समय श्री १०८ वीरसागरजी महाराज से १०-८-१९५६ शुक्रवार को क्षुल्लक दीक्षा ले ली। चन्द्रसागर नाम रखा गया। कुछ वर्ष यत्र-तत्र भ्रमण एवं चातुर्मास करने के बाद श्री देशभूषणजी महाराज से सन १९५९ फाल्गुन मास मे ऐलक दीक्षा धारण की। अनन्तर सन् १९६१ मे मागूर गाव में आचार्यरत्न देशभूषणजी महाराज ने श्री १००८ ऋषभनाथ तीर्थंकर पचकल्याणक किया तथा वही पर आचार्य रत्न महाराजजी के कर कमलो से जेठ शुक्ला दशमी सन् १९६१ को श्री चन्द्रसागर ऐलक को मुनि दीक्षा दी। उस समय आपका श्री १०८ सुबलसागर नाम रखा गया।

मुनि दीक्षा के २०-२५ दिन बाद असाता कर्म के उदय से आप अधिक बीमार हो गये। शरीर बहुत क्षीण हो गया। परन्तु आयु कर्म अवशेष रहने पर धीरे-धीरे आपका स्वास्थ्य ठीक हो गया। अस्वस्थ रहने के कारण गुरु संघ को छोड़कर दक्षिण मे यत्र-तत्र भ्रमण करते रहे।

इसी प्रकार भ्रमण करते हुए आपके संघ का पिछले वर्ष ग्राम डोड़वाल जिला बेलगाम में चातुर्मास हुआ। वहाँ पर धर्मोपदेश से वहा के समाज ने ३।। लाख रुपयो की लागत से "अनाथालय आश्रम" की स्थापना की, जिसका कार्य अभी शुरू है।

धर्मामृत व कल्याणकारी उपदेश जिनके मुखारविन्द से झरते हों, ऐसे श्री १०८ सुबलसागरजी महाराज कोटिशः दीर्घायु हो।



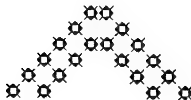
मुनिश्री ज्ञानभूषणजी महाराज



परम पूज्य विद्यालंकार बाल ब्रह्मचारी वाणी भूषण आचार्य रत्न देश भूषणजी महाराज के परम शिष्य दया निधान परम तपोनिधि आचार्य कल्प श्री १०८ ज्ञान भूषणजी का जन्म मध्य प्रदेश ग्वालियर स्टेट जिला मोरेना परगना अम्बाह ग्राम एसहा में शुभ नक्षत्र में हुआ। इनके पिता का नाम श्रीलाल व माता का नाम सरस्वती था। सरस्वती देवी के कूख से तीन पुत्र व एक पुत्री ने जन्म लिया। इनके बचपन का नाम श्री पोखेराम था तथा इनके बड़े भाई का नाम लज्जाराम व इनके छोटे भाई का नाम कपूरचद था व बहिन का नाम रामदेवी रखा गया। इन सभी मे पोखेराम अद्वितीय व कुलदीपक जन्में। पोखेराम का जन्म असाढ़ सुदी सप्तमी बुधवार की रात्रि मे वि० सं० १६७७ में हुआ था। श्री पोखेराम के पिता श्रीलालजी व्यापार के काम से कलकत्ता आया जाया करते थे। इनके घर मे घी का तथा गिरवी रखने का व्यापार होता था। श्री पोखेराम ने केवल चार वर्ष तक स्कूल मे शिक्षण प्राप्त किया व बाल्यकाल के व्यतीत होने के बाद आप अपने पिता के साथ कलकत्ता जाने आने लगे और बाद मे वहीं (कलकत्ता) मे वह बाजार में कपडे की दुकान पर काम करने लगे, बचपन से ही धर्म में रुचि थी तथा हमेशा जिन मदिर में सेवा पूजा करते थे। एक दिन रात्रि में सोते समय रात्रि के चार बजे एक भविष्य वोधक आश्चर्य जनक स्वप्न देखा, वह स्वप्न संकेत कर रहा था कि पोखेराम यह मार्ग तुम को सम्मेदशिखरजी का रास्ता बता रहा है इस मार्ग को छोडकर अन्य मार्ग से न जाना। इनकी प्रवृत्ति शुरू मे ही वैराग्य की ओर झुकी हुई थी।

यह पहला अवसर था कि एक दिन यह शुभ सूचक स्वप्न देखा, प्रातः उठते ही उस स्वप्न का ध्यान कर बिना किसी को कहे दुकान बन्द कर सम्मेद शिखर की यात्रा करने व स्वप्न को सार्थक करने निकल पड़े। माघ शुक्ला पचमी का दिन था, मीठी मीठी सर्दी भी थी, हावड़ा से गाड़ी में बैठ कर ईसरी स्टेशन पर उतर कर पैदल मार्ग से चल दिये। आपने स्वप्न में जो जो चिन्ह देखे थे वे अब प्रत्यक्ष दीखने लगे। जैसे जैसे मधुबन की ओर बढ़ते जा रहे थे कि स्वप्न की बाते स्मरण होनी आ

रही थी । शाम को आप सम्मेदशिखरजी पहुँचे तथा रात्रि वही बिताई और सुबह तीन बजे उठ कर पहाड़ पर दूसरे और लोगों के साथ चढे तथा सम्मेदशिखरजी की वदना की । पुनः दूसरे दिन वंदना करते हुए जब पार्श्वनाथजी के टोंक पर पहुँचे तो पारस प्रभु को प्रणाम कर आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया और कहा कि आज से मुझे सम्पूर्ण प्रकार की स्त्रियों का त्याग है । उस समय आपकी उम्र १८ वर्ष की थी । १८ वर्ष में ब्रह्मचर्य व्रत लेना इनके त्यागमयी एवम् संयमी जीवन एव उच्च विचार का परिचारक था । गिरि से लौटने के बाद पिताजी ने इनको शादी के लिये कहा लेकिन आपने तो व्रत धारण कर लिया था अत. इन्कार कर दिया कि मैं शादी नही करूंगा । कलकत्ता मे ही आपको आचार्य रत्न श्री १०८ श्री देश भूषणजी महाराज के दर्शनो का पुण्य लाभ मिला, आचार्य श्री का चातुर्मास कलकत्ता में हुआ तथा आप व आपकी बहिन रामदेवी ने चौका लगाया । चातुर्मास पूरा होने पर आचार्य श्री ने सम्मेदशिखर को प्रस्थान किया तो आप भी भक्तिवश सघ के साथ चल दिये । वहाँ पहुँच कर आपने दूसरी प्रतिमा के बारह व्रतों को धारण किया । तथा उसके बाद श्री १०८ आचार्य रत्न देशभूषणजी ने इनकी अगाढ भक्तिवश वैयावृत्ति की भावना देखकर आज्ञा दी कि पोखेराम बेटा तुम हमारे साथ बाहुबली की यात्रा के लिये चलो । महाराज की आज्ञा को पोखेराम ने सहर्ष स्वीकार किया और महाराज के साथ चल दिये । आप आचार्य देश भूषणजी के सघ में ही रहने लगे, तथा वैशाख सुदी तेरस स० २०२० बुधवार के दिन आचार्य श्री देशभूषणजी ने आपको क्षुल्लक दीक्षा दी और ज्ञानभूषण शुभ नाम आपका रक्खा । तीन वर्ष नो माह आपने क्षुल्लक अवस्था मे व्यतीत किये और श्री शान्तिमतीजी से आपने व्याकरण एव धर्म ग्रन्थो का ज्ञान प्राप्त किया तथा पडित अजितप्रसादजी से सर्वार्थसिद्धि पढी । इसके बाद माघ शुक्ला सप्तमी शुक्रवार सन् १९६९ मे आचार्य देशभूषण महाराज से मुनि दीक्षा लेकर महाव्रतो को धारण किया । इस प्रकार आप अनेक तीर्थों की वन्दना करते हुए, जगह जगह विहार करते हुए लोगो को धर्मोपदेश देते है ।



मुनिश्री सन्मतिभूषणजी महाराज



आपका जन्म हरियाणा प्रान्त के रोहतक जिला सोनीपत के पास हुलाहेडी में भादो सुदी चौदस स० १९६४ मे हुवा था। आपके पिता का नाम श्री दयाचन्दजी अग्रवाल था। आपका परिवार धर्मात्मा है। आप ७ भाई हैं। मां का स्वर्गवास छोटेपन मे हो गया था, उस समय आप ४ वर्ष के थे। आपकी भुआ सुखदेई देवी थी। आपने सातों भाईयों का पालन पोषण किया। आपकी शिक्षा सामान्य ही थी। आपने हिन्दी-मुन्डी पढ़कर बही खाते के काम में अपने आपको लगा दिया। आपका समय समय पर धर्म के कार्यों मे ध्यान रहता था। सभी प्रकार से सुख और शाति होने पर भी आपको स० २०१८ में वैराग्य हो गया तथा सर्वस्व परिवार वालों को सौपकर ५४ वर्ष की आयु मे सब परिग्रह का त्याग कर दिया। आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज से स० २०२९ मे मुनि दीक्षा ली। आपका नाम सन्मतिभूषणजी रक्खा। स० २०३६ मे आपने सिद्धक्षेत्र सोनागिर पर समाधिमरण कर इस पार्थिव शरीर का त्याग किया।



उपाध्याय मुनिश्री विद्यानन्दजी महाराज



आँखों में दिव्य ज्योति, अधरों पर बोध पूर्ण स्मृति-रेखा, छवि में वीतरागत्व की सौम्यता, दिगम्बर ऋषि जिनके प्रशस्त भाल पर चिन्तन और अनुभूति पक्ष का साधना-मूलक जीवन विसर्जन और तपोनिष्ठ व्यक्तित्व के धनी मुनिश्री विद्यानंदजी महाराज आज जैन जगत शिरोमणि संत हैं।

मुनिश्री का जन्म दक्षिण भारत के उसी बेलगांव जिले में २५ अप्रेल १९२५ में हुआ था, जिसे आचार्यरत्न चारित्र चक्रवर्ती श्री शान्तिसागरजी महाराज की कर्मभूमि होने का गौरव प्राप्त है। आपकी माता श्रीमती सरस्वती देवी और पिता श्री कालचन्दजी उपाध्याय बेलगांव के शेडवाल नामक ग्राम के रहने वाले है। माता पिता के धार्मिक विचारों का प्रभाव ही बालक सुरेन्द्र (मुनिश्री विद्यानंदजी का बचपन का नाम) के व्यक्तित्व और आचार विचार पर स्पष्ट परिलक्षित होता है। मुनि श्री विद्यानद की शिक्षा श्री शान्तिसागर विद्यालय मे हुई और ब्रह्मचर्य की दीक्षा दिसम्बर १९४५ मे तपोनिधि श्री महावीरकीर्तिजी महाराज ने दी। मुनिश्री के मन मे बाल्यावस्था से ही मुनि बनने की प्यास थी।

मुनिश्री की सबमे बडी विशेषता उनका बेलागपन और समन्वय की प्रवृत्ति है। आप प्राचीन धार्मिक विचारों के अनुशीलन के साथ साथ आधुनिक सभी अच्छाईयों के समर्थक हैं। समस्त धर्मों के मूल तत्वों का आदर करते है और जैनदर्शन एव आगम के अनुकूल आत्मिक साधना के पथ पर चलते है। मानव की समानता के पोषक एव "वसुधैव कुटुम्बकम्" मे इनकी आस्था है।

मुनिश्री जहाँ "स्वान्त:सुखाय" इन्द्रिय निग्रह और तपश्चरण द्वारा अपने आत्म-सृजन मे लीन है वहां वे "बहुजन हिताय बहुजन सुखाय" समीचीन धर्म का उपदेश भी करते है। सतत् लगन और स्वाध्याय द्वारा उन्होने तत्वो का यथार्थ ज्ञान एव वस्तु स्वरूप का मूर्त-अनुभव प्राप्त किया। अपने प्रवचन में जिन वचनामृतों का दान करते है उसे लेने हजारो की संख्या में धर्म श्रद्धालु आते है।

उनका शेष समय साहित्यसृजन में लगता है । आपकी भाषा अत्यन्त परिष्कृत, प्रांजल और प्रसादगुण युक्त है । आपके प्रवचनों में जैसे अमृत की मिठास घुली हो । एक सम्मोहन और आन्तरिक प्रभाव आपकी वाणी में है ।

विश्वधर्म की रूपरेखा, पिच्छी और कमंडलु, कल्याणमुनि और सम्राट सिकन्दर, "ईश्वर क्या और कहां है ? देव और पुरुषार्थ आदि ३० पुस्तकों की रचना की है । आपने भ० आदिनाथ पर विशेष शोध कार्य चल रहा है ।

आज धर्म को केवल मन्दिरों तक सीमित कर दिया है, परन्तु मुनि श्री के चरण जहां जहां जाते है एक नये तीर्थ की स्थापना हो जाया करती है । लाखो जैन बन्धुओ की अटूट भीड़ आपके दर्शनो और प्रवचनो के श्रवण हेतु उमड पडती है ।

जैन ग्रन्थो के अतिरिक्त गीता, वेद, स्मृति, पुराण, उपनिषद्, ग्रन्थसाहिब, मुस्लिम साहित्य एव बाईबिल आदि का गहन अध्ययन किया है । आपने ३२ प्रकार की रामायणो का अवलोकन एवं अध्ययन कर समीक्षात्मक विवेचन किया है । श्रमण सस्कृति के तपःपूत साधक मुनिश्री का दैनिक जीवन बडा ही अनुशासिन है और प्रत्येक कार्य ठीक समय से करते है । आपके पास ज्ञान का अथाह सागर जैसे भरा पडा है । आग्ल-भाषा का अच्छा ज्ञान है और आवश्यकता पडने पर आप विदेशी विद्वानों को इसी भाषा के माध्यम मे अपनी बात कहते है ।

आपने आकाशवाणी से जैन भजनों और गीतों के प्रसारण करने को प्रोत्साहन दिया और अनेको बडे काम किये । जैन नवयुवको को अपने संस्कारो के प्रति हमेशा सचेष्ट करते रहते है । और अपनी वाणी द्वारा एक धर्म क्रान्ति का मन्त्र फू क देते है । हजारो नास्तिक आपके प्रभाव से आस्तिक बन धर्म के प्रति श्रद्धालु बन गये ।

आप वर्ष मे एक माह से अधिक मौन रहते है और वह समय आत्म चिन्तन एव ग्रन्थों के गम्भीर अध्ययन मे लगाते है । हजारों विद्वानों, लेखको और इतिहास विशारदो को जैन सस्कृति पर नयी बात लिखने, अन्वेषण करने और शोधात्मक निबन्ध लिखने के लिए प्रेरित करते हैं ।

पू० ऐलाचार्य श्री विद्यानन्दजी महाराज के निर्देशानुसार भ० बाहुबली स्वामी का १००० वां महामस्तिकाभिषेक अति ही धूमधाम से सम्पन्न हुवा । धर्मचक्र, मंगलकलश आप की ही देन हैं। धर्मस्थल पर भी प्रतिष्ठा आप के निर्देशन मे हुई । आपके द्वारा जन कल्याण होता रहता है । आपकी प्रवचन शैली अभूतपूर्व है आप एक ऐसे युगीन आध्यात्मिक सत हैं जिन्होंने जैन दर्शन को विश्व-मंच पर लाकर खडा कर दिया और अहर्निश जिनकी साधना सिर्फ इस शाश्वत अहिंसा धर्म के उन्नयन हेतु चल रही है ।



मुनिश्री सिद्धसैनजी महाराज

जब आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज ने कोल्हापुर में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कराई थी तब आपने मधुर कठ से पूजा कराई थी। आप खोतसाहब के नाम से प्रसिद्ध थे, आपको हर व्यक्ति सम्मान की दृष्टि से देखता था। राजकीय क्षेत्र में आपका महत्वपूर्ण स्थान था। आप महाराष्ट्र मत्रीमडल के सदस्य रह चुके है। भ्रष्टाचार का बढ़ावा देखकर राजकीय कार्यो से घृणा होने लगी तथा वीतरागता का पथ अपनाया। आपने लौकिक शिक्षा L. L. B. तक की। आप निरन्तर धार्मिक चर्चा में लीन रहते थे। आपने भारतवर्ष में सर्वत्र पद विहार करके धर्म प्रभावना की। आप गिरनार क्षेत्र की वदना करने जा रहे थे, रास्ते में आपका स्वास्थ नरम हो गया तथा इसी बीच आपकी समाधि हो गई।



श्रीबालाचार्य १०८ बाहुबली मुनि महाराज



आपका जन्म शुक्रवार तारीख १६ दिसम्बर १९३२ शके १८५४ मार्गशीर्ष वद्य तृतीया पुष्य नक्षत्र पर रुकड़ी जिला कोल्हापुर महाराष्ट्र राज्य मे एक सीधेसाधे किसान परिवार में हुआ। रात के आठ बजे खेत पर घास फूस की कुटी में जन्म लेने वाला यह बालक साथ मे शुभ शकुन लेकर ही आया। जन्म से पहले आधा घँटा कुटी के बाहर सियारों ने शोर मचाया था मानों वे बता रहे थे कि "होशियार! इस महान भारत देश में एक महाज्ञानी महात्मा जन्म ले रहे है।"

वही बालक वर्तमान काल में अपने गाँव और देश का नाम रोशन कर रहा है।

आपके पूज्य माताजी का नाम आक्कुबाई और पिताजी का नाम बलवतराव था। अब वे दोनों स्वर्गवासी हैं।

बचपन में बदन से गठीले होने से लोग बंबू कहके बुलाते थे। आगे चलकर यही नाम संभू, संभाजी और संभवकुमार बन गया।

आप ७ साल की उम्र तक बीमार ही थे। सिर्फ ककड़ी खाने से बीमारी खतम हो गयी। नमक और मिरच खाना यह बचपन की खास आदत थी।

१९४२ से स्कूल की पढाई शुरू हो गयी। रुकड़ी के पाठशाला में चौथी तक पढाई हुई। स्कूल में आप सदा विनम्र होशियार रहे थे।

आगे की शिक्षा सातवी कक्षा तक बाहुबली गुरुकुल में हुई। वहाँ शिक्षा के साथ जैन धर्म के असली सस्कार हो गये। वही पर आपने मन में ख्वाब बनाये और निश्चय किया कि मै आगे चलकर धर्मसेवा ही करूँगा।

बाहुबली आश्रम के खर्च का बोझ ज्यादा होने के कारण आपके पिताजी ने आपको वापस रुकडी में महात्मा गाधी विद्या मदिर से आठवी कक्षा उत्तीर्ण कराई। जिसके बाद स्कूल छोडना पडा।

बाद में घर की छोटी सी दुकान और खेती का काम करने लगे। काम करते करते जब कभी फुरसत मिलती तो साइकिल लेकर बाहुबली या कहीं अन्य धार्मिक स्थान जहाँ जैन धर्म का पवित्र स्थान हो वहाँ जाया करते थे।

जिस तरह बचपन से ही आप सन्यस्त और धर्मशील रहना चाहते थे। ब्रह्मचारी रहकर संसारी जीवन छोड़ने की बचपन में ही आपने प्रतिज्ञा की थी।

सन् १९५३ से १९६० तक आपने जन कल्याण कार्य भी किया। छोटे बच्चों को नाट्य, गाना आदि सिखाते थे। गाँव के बाहर १९५९ मे एक घास-फूस की कुटी बनाकर बच्चों के पढ़ाई के लिये आश्रम भी खोला था। गाँव में एक नाटय संस्था भी खोली थी।

१९५९ में आपने किसान और शिक्षकों के साथ भारत दर्शन यात्रा भी की है।

महाराज के प्रवचन को सुनकर आपके मन में वैराग्य की भावना जागृत हो गई और महाराज के संघ मे पहुँचकर ब्रह्मचर्य और क्षुल्लक दीक्षा ले ली।

शुक्रवार तारीख २४ मार्च १९६७ को आचार्य रत्न श्री १०८ देशभूषण महाराजजी के शुभ हस्ते और श्री श्रवण बेलगोल के महा गोम्मटेश्वर मंदिर के पवित्र स्थान पर सुबह ८॥ से ९॥ तक

ब्रह्मचारी "संभवकुमार को" क्षुल्लक दीक्षा दी गयी और उसी वक्त आपको श्री क्षुल्लक १०५ बाहुबली नाम दिया गया।

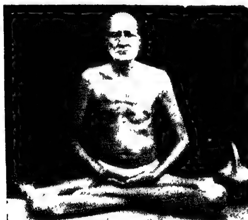
बुधवार तारीख २६ फरवरी १६७५ माघ बदी प्रतिपदा को दोपहर के ४.११ बजे तारंगा सिद्ध क्षेत्र में आचार्य श्री १०८ देशभूषण मुनिश्री ने आपको मुनि दीक्षा दी। आपने उस वक्त निश्चय-पूर्वक अपने वस्त्रों का और सर्वस्व का त्याग किया और १०८ बाहुबली मुनि बन गये।

जिसके बाद आपने गिरनार होकर दक्षिण भारत की तरफ विहार किया।

सन् १६७६ को आपका चातुर्मास कोथली-कुपानवाडी में हुआ। जहाँ पर आपने आचार्य श्री १०८ देशभूषण मुनिश्री को शातिगिरी का कार्य करने मे हाथ बँटाया था और वहाँ पर भी एक बड़े क्षेत्र का निर्माण जैसा कि जयपुर में चूलगिरी का है, हो रहा है।



मुनिश्री सुमतिसागरजी महाराज



अगहन बदी अमावस्या विक्रम सं० १६५२ में वृन्दावन मथुरा श्रेष्ठी श्री रामदयालजी गर्ग के यहा पर अग्रवाल जाति में जन्म लिया था। आपने हिन्दी की पूर्ण शिक्षा प्राप्त की। जैनागम के अनेकों ग्रंथों का विधिवत पारायण किया तथा संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, अंग्रेजी के अच्छे प्रवक्ता बन गये। आपने दिव्यसन्देश, सामायिकध्यानदर्पण, अहिंसा की पुकार, जैन धर्म प्रकाश, नामक ग्रन्थों को लिखकर समाज को नई दिशा दी। जहानाबाद में आपने व्रती गुरुकुल की स्थापना कराई। सामाजिक क्षेत्र मे आपका काफी योगदान रहा। जीवन में वैराग्य भावना थी अतः पायसागरजी महाराज से सं० २००५ मे सातवी प्रतिमा के व्रत धारण किए एव अयोध्याजी में आचार्य देशभूषणजी महाराज से सं० २००६ में क्षुल्लक दीक्षा ली। अन्त समय में मुनि बनकर समाधि प्राप्त की।



मुनिश्री शान्तिसागरजी महाराज

श्री १०८ मुनि शान्तिसागरजी का पहले का नाम शिवप्पा था। आपका जन्म आज से ७२ वर्ष पूर्व बेलगांव जिले के चन्दुर गाव में हुआ था। आपके पिता श्री सत्यन्धरजी थे। आपकी माताजी रुक्मणिदेवी थी। आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा ४थी तक हुई और धार्मिक शिक्षा प्रवेशिका तक हुई। आपका पैतृक व्यवसाय कृषि था। बाद में व्यापार करने लगे थे। आपके परिवार मे एक भाई दो बहनें हैं। आपका विवाह भी हुआ पर घर में मन नही लगा। आप घर मे रहकर भी वैरागी थे।

प्रतिदिन के शास्त्रश्रवण, देव पूजन और गुरू उपदेश से आपके भावों में विशुद्धता आई, अतएव आपने २-४-१९४३ को सागली जिले के भोमे गाव में श्री १०८ आचार्य देशभूषणजी महाराज से मुनि दीक्षा ली। आपने सांगली, इलाहबाद, मधुबन, बडौत, कलकत्ता आदि स्थानों पर चातुर्मास किए। वहा आपके रहने से बडी धर्म प्रभावना हुई। आपने मोक्षशास्त्र दशभक्त्यादि के पाठों का काफी मनन किया। आपने तेल दही का त्याग कर दिया है।



मुनिश्री निर्वाणसागरजी महाराज



परम पू० मुनि श्री का जन्म राजस्थान जयपुर के ढ़्घाणी आसलपुर ग्राम में भाद्रपद शुक्ला त्रयोदशी संवत् १९७६ को पू० मातेश्वरी रूणीबाई की कोख से हुवा था। आपका पूर्व नाम चिरजीलाल था। आप खण्डेलवाल वैश्य जाति छाबड़ा गोत्र से सम्बन्ध रखते है। बचपन से ही धार्मिक रुचि थी। आप बालब्रह्मचारी रहे। आप जैसे जसे बडे हुए वैसे वैसे ही ससार को असार जानकर उदासीनता की ओर बढ़ते गये जिसके फलस्वरूप आपने आचार्य विमलसागरजी से ईशरी में क्षुल्लक दीक्षा ली। तत्पश्चात् श्री १०८ आचार्य देशभूषणजी महाराज से माघ शुक्ला सप्तमी २०२५ को जयसिंहपुरा में मुनि दीक्षा ली। दीक्षा के बाद अनेकों स्थानो पर चातुर्मास किए। आपने फुलेरा चातुर्मास किया तथा यहीं पर समाधिमरण किया।



क्षुल्लक श्री चन्द्रभूषणजी महाराज



आपके पिता का नाम वीरगौड़ा पाटिल था। सदलगा तालुका चिकोडा जि० बेलगाव में १६३१ को आपका जन्म हुवा था। आपने मराठी में शिक्षा पाई, आपका गृहस्थ अवस्था का नाम जिनगौड़ा था। आप आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा लेकर आत्म कल्याण कर रहे हैं। आप निरन्तर स्वाध्याय में रुचि रखते हुए धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन करते रहते हैं।



क्षुल्लक श्री नन्दिषेणजी

श्री १०५ क्षुल्लक नन्दिषेणजी का पहले का नाम निंगप्पा सेठी था। आपका जन्म आज से लगभग पचहत्तर वर्ष पूर्व म्हेसवाड़ी जिला बेलगाव में हुआ। आपके पिता श्री धरमप्पा सेठी थे, जो कृषि फार्म पर कार्य करते थे। आपकी माता का नाम अम्मादेवी था। आप चतुर्थ जाति के भूषण हैं। आप सेठी गोत्रज हैं। आपने धार्मिक अध्ययन स्वय ही किया। आपके परिवार में तीन भाई और दो बहिने है। विवाह भी हुआ। तीन पुत्र और चार पुत्रियां हुई।

गुरुजनों के धर्मोपदेशों को सुनकर आपने संसार असार समझा। वैशाख शुक्ल पक्ष २०२५ में कोथली (बेलगाव) में श्री १०८ आचार्य देशभूषणजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपको दसभक्ति आदि पाठ कण्ठस्थ है आपने कोथली, टिकैतनगर आदि स्थानों पर चातुर्मास किये। आपने घी, गुड़ आदि रसों का त्याग भी किया।



क्षुल्लक श्री पदमसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक पदमसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम देवलाल मारवाड़ा था। आपका जन्म आषाढ बदी चौदस विक्रम संवत् १६५३ मे नैनवा (बूंदी) राजस्थान में हुआ था। आपके पिता श्री रामचन्द्रजी व माता श्री छन्नाबाई थी। आप अग्रवाल जाति के भूषण व गर गोत्रज हैं। धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण हुई। विवाह भी हुआ।

आपने स्वयं के अनुभव से संसार को नश्वर जानकर आचार्य श्री १०८ देशभूषणजी महाराज से वैशाख सुदी ११ को विक्रम संवत् २०२१ में सातवी प्रतिमा के व्रत ले लिये। इसके बाद आषाढ़ बदी चौदस विक्रम सवत २०२१ में आपने आचार्य श्री १०८ देशभूषणजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। टोंक, लावा, चोरू आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्मवृद्धि की। आपने तीनों रसों को त्याग दिया है।



क्षुल्लक श्री भद्रबाहुजी

मगुर (औरंगाबाद) में अम्बालालजी का जन्म हुवा था। आपकी मातृ भाषा मराठी रही है। आपके पिताजी का नाम श्री शंकरलालजी था। तीर्थराज सम्मेदशिखरजी में आपने चौथी प्रतिमा मुनि धर्मसागरजी से धारण की तथा सातवीं प्रतिमा आ० शन्तिसागरजी से ली। पश्चात् क्षुल्लक दीक्षा देशभूषणजी महाराज से १९५८ में ली। आपने महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, बिहार, गुजरात, राजस्थान, दिल्ली आदि प्रान्तों मे विहार कर, प्रवचन देकर धर्म प्रभावना की है। आप सरल एवं शान्तस्वभावी साधु थे।



क्षुल्लक श्री आदिसागरजी महाराज



आपका जन्म ई० सन् १८८९ में सिरस गांव तहसील एलिचपुर मे हुवा था। इनका गृहस्थावस्था का नाम देवीदास था। इनके पिता का नाम श्री काशीनाथजी तथा माता का नाम श्रीमती बनाबाई था। इनका जन्म विशुद्ध धार्मिक वश में होने के कारण जन्म से ही धर्म की भावना घर कर गई थी। इनके पिता श्री काशीनाथजी ने मराठी भाषा में आदि पुराण की रचना की थी। आपको भी बचपन से धर्म के प्रति रुचि होने के कारण धार्मिक छद एव कवित्त आदि लिखने का शौक था। युवा अवस्था में तो आप जैन कवियो मे श्रेष्ठ कवि माने जाने लगे थे। धार्मिक सस्कारों के कारण ६० वर्ष की आयु में आपको संसार से विरक्ति हो गई। आपने ई० सन् १९४९ में परम पू० १०८ श्री श्रुतसागरजी मुनिराज से सप्तम प्रतिमा धारण कर ली। तीन मास के पश्चात् ही आचार्य श्री १०८ श्री देशभूषणजी के पास पहुँचकर आपने क्षुल्लक दीक्षा धारण कर ली। आपने मराठी भाषा में पद्मपुराण की रचना की है जो मराठी भाषियो के लिये काफी हितकर साबित हुई है।



क्षुल्लक श्री इन्द्रभूषणजी महाराज



उत्तर भारत में जब विप्लव की आंधी चली तो सभी धर्मों के आयामों को कुछ न कुछ क्षति पहुँची। जैन धर्म-साहित्य का इतिहास पढने वाले सभी पाठक पचम काल के दुष्परिणामों से भली भाति अवगत है। मौर्य सम्राट के स्वप्नो मे यह बात झलकी थी। उस समय भी दक्षिण को टिमटिमाती धर्मज्योति का रक्षा स्थल समझा गया। आज भी जैनधर्म की प्रभावना करने वाले अधिकाश साधु दक्षिण की ही देन है। तमिलनाडु के मद्रास जिले मे टच्यूर एक छोटा सा कस्बा है। पुचामी नयनार श्रावक अपनी पत्नी पट्टममाल के साथ इसी ग्राम में रहकर धर्मसाधना किया करता था। पुण्ययोग से २४ अक्टूबर १६१० को उसे एक पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई जिसका नाम माणिक्य नयनार रखा गया। मणि की तरह ही निर्मल विचारों से उसका चित्त ओत-प्रोत रहता था। एक दिन गुरु-दर्शन से एकाएक उसके मन मे वैराग्य का बीज अकुरित हो उठा और उसने पू० विद्यासागरजी म० से सम्मेदशिखर के पादमूल में सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये। विराग की चरम परिणति २० मई ७० को शमनेवाडी स्थान मे पू० आ० श्री देशभूषणजी महाराज के पादमूल मे पूरी हुई। गुरु ने आपको क्षुल्लक दीक्षा देकर क्षुल्लक इन्द्रभूषण महाराज आपका नाम रखा। यद्यपि आपकी शिक्षा प्राइमरी तक है फिर भी आपने अपनी लगन से शास्त्रो का अध्ययन करके मेरूमदरा जीवसबोधना (तमिल-कन्नड) ग्रन्थ लिखकर अपने ज्ञान का क्षयोपशम कर डाला। सम्प्रति आप सदुपदेशों से श्रावको को लाभान्वित कर रहे है।



क्षुल्लक श्री वृषभसेनजी महाराज

पंच परावर्तन चक्र में भ्रमण करते हुए जीव को दो चीजें सदा अलभ्य ही बनी रहीं । एक तो सद्‌गुरु की संगति और दूसरी जिनधर्म की प्राप्ति । वैसे नरतन पाया तो अनेक बार परन्तु हर बार की कहानी एक नयी कहानी गढने के सिवाय कुछ और मुखरित नहीं हो सकी । शलाका पुरुषों का चारित्र जानने वाले भी इस बात से अनभिज्ञ नही हैं कि कर्म बिना किसी भेदभाव के अपना रस देने में जरा भी कंजूसी नहीं करते । यदि ऐसा न होता तो धर्म का इतिहास ही भ० वृषभदेव के समय से कुछ और ही लिखा जाता । अ० लाट (कोल्हापुर) के बलवंतराव भी अपने अनेक जन्मों के उत्थान-पतन की कहानी समेटे हुए आश्विन कृ० १४ वी० स० २४३५ सन् १९०८ को धुलाप्पा जनकाप्पा गिरिमल्ल के घर में जन्मे तो काललब्धि का साया लेकर ही जन्मे । शान्तप्पा लाल के लिए सुखद सपने संजोती हुई इस तथ्य से सर्वथा बेखबर ही रही कि विराग की प्रतिध्वनिया आंगन में गूंजने लगी । भला सुकोमल मातृत्व ने उसके अतीत के संस्कारों की ओर झाकने की फुर्सत ही कब समझी । सन् १९६२ मे वैशाख शु० १० की वह धन्य घड़ी भी आ पहुंची जब करुणानिधान पू० १०८ आ० श्री देशभूषणजी महाराज के दर्शन का सौभाग्य बलवतराव को अनायास ही मिल गया । आसन्न भव्य की काललब्धि आ चुकी थी । संसार सागर से तिरने के लिए भव्यात्मा ने गुरु चरणों मे निवेदन कर विराट् जनसमुदाय के समक्ष केशलोंच करके क्षुल्लक दीक्षा धारण कर ली और आपका नाम वृषभसेन घोषित हुआ । ससार सागर से तिरने के लिए पंथी को गुरुचरणों का आश्रय मिला । निरत स्वाध्याय करते हुए आपने जिनागम के रहस्य को प्रकट करने वाली हिन्दी मराठी कन्नड़ भाषाओं मे अनूठी रचनाएँ की जिनमे आहार शुद्धि और चौका बिधान, अडी प्राणि बुध, समाधिमरणोत्सव, अहिंसेचा विजय कृतियां प्रमुख है ।

७१ वर्ष की अवस्था में भी आप निरतिचार चारित्र का पालन करते हुए ग्राम ग्राम मे भ्रमण कर धर्म प्रभावना कर रहे हैं । निश्चय ही आज के समय में साधु समुदाय के समक्ष स्थिति-करण का महान कार्य उपस्थित है । पू० श्री वृषभसेनजी महाराज अहर्निश इस कार्य में लगे हुए है यह हम श्रावकों का अहोभाग्य ही है । अन्यथा इस कलिकाल में ऐसा सुमार्ग किसे कब कब मिल पाता है (खद्योतवत्सुदेष्टारो हा द्योतन्ते क्वचित्) ।



क्षुल्लक श्री जिनभूषणजी महाराज



आप आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज द्वारा दीक्षित हैं। विशेष परिचय अप्राप्य है।





आर्यिका सुव्रतामतीजी

विक्रम सं० १९५० में हुब्बड़ी तालुका धारवाड़ मे श्री रायप्पाजी के यहां पर अम्माचवा ने जन्म लिया। आपकी मातृ भाषा कन्नड़ी थी तथा स्कूल से शिक्षा प्राप्त की। १० वर्ष की उम्र में आपकी शादी रागप्पाजी के साथ हो गई। बचपन से ही धर्मपरायणता आपके हृदय में कूट कूट कर भरी थी इसी कारण दोनों ने छठी प्रतिमा के व्रत मुनिश्री पायसागरजी से ले लिए, घर में रहकर धर्मसाधना करते। वैराग्य तीव्र हुवा कि पति ने क्षुल्लक दीक्षा ली तथा स्वयं ने आर्यिका दीक्षा ले ली। आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज ने आपका नाम सुव्रतामती रखा। आपने १८ चातुर्मास किये तथा अपना सारा समय धर्मध्यान में लगाती थीं।

आर्यिका शान्तिमतीजी

बाराबकी निवासी श्री कुन्थुदासजी की धर्मपत्नी श्री पद्मावती की कूख से चन्द्रावती ने वि० स० १९८३ को जन्म लिया था। आपकी शिक्षा मिडिल तक थी। आपने छोटी सी अवस्था से जैन ग्रन्थो का अध्ययन किया। अष्टसहस्री, सर्वार्थसिद्धि, गोम्मटसार, न्यायदीपिका, आदि ग्रन्थों को कंठस्थ याद कर गुरु को सुनाये। आप प्रवचन कला मे दक्ष थी। आपको केसर की भी शिकायत थी फिर भी धर्मध्यान नहीं छोड़ा तथा तीर्थराज सम्मेदशिखरजी मे आर्यिका दीक्षा ली। आपने ३२ चातुर्मास विभिन्न प्रान्तों में किए तथा जैन समाज ने आपके प्रवचनों से लाभ उठाया। आपकी शैली सरल एवं आदर्शता लिए हुए थी।



आर्यिका यशोमती माताजी



आपका जन्म हरियाणा के सुप्रसिद्ध नगर सोनीपत में सवत् १९६७ मे श्रेष्ठी श्री कुंवरसैनजी अग्रवाल के यहा हुवा था। आपकी माताजी का नाम गिन्दोड़ीबाई था, आपका जन्म नाम मैनाबाई था। आपने पू० आचार्य देशभूषणजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली। आप धर्म साधना में संलग्न है।



आर्यिका दयामतीजी

कौन जानता था कि बालिका फूलीबाई एक दिन इस ससार के समस्त सुखों और वैभव की चकाचौध कर देने वाली चमक दमक को एक ही झटके में तिलान्जलि दे सघ में शामिल हो जाएगी।

आपका बचपन का नाम जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है फूलीबाई था। आपके पिताजी का नाम श्री भागचन्द्र एव माताजी का नाम मानकबाई था। आपका जन्म छाणी (उदयपुर) राजस्थान में हुआ। आप सुविख्यात आचार्य शान्तिसागरजी की सहोदरा बहिन है।

बचपन से ही आपके हृदय पटल पर वैराग्य भावना अंकुरित हो वर्द्धन एव संरक्षण पाती रही। निरन्तर सगति व उपदेश श्रवण करते रहने से एक दिन वैराग्य भावना जागृत हुई और हुआ यह कि आप सासारिक आकर्षणो से स्वय को मुक्त समझकर उससे परे हो गई।

नारी सहज मे ही ममत्व भरी होती है और फिर वह नारी जो मा बन चुकी हो उसके ममत्व का क्या कहना किन्तु धन्य है ऐसी नारी जिसको पुत्र, पति एव भ्रातृ प्रेम के बन्धनो ने भी न बांध पाया हो।

वि० सवत २०२० मे खुरई नामक स्थान मे आचार्य श्री धर्मसागरजी से आपने क्षुल्लक दीक्षा ली तथा आर्यिका दीक्षा सवत् २०२३ मे आचार्य देशभूषणजी महाराज से दिल्ली में लो। आप डूगरपुर में श्री १०८ आचार्य विमलसागर महाराज के सघ में शामिल हुई।

णमोकारादि मत्र का आपको विशेष ज्ञान है। धर्म प्रेम की जैसी सद्‌भावना आपके हृदय-स्थल मे है, वैसी भावना नारी जगत में यत्र तत्र सौभाग्य से ही मिलती है। महिला समाज को आप पर गर्व है।

दुर्ग, दिल्ली, जयपुर, उदयपुर और सुजानगढ नामक स्थानों में अपने चातुर्मास किया। दही, तेल और रस आपके लिए त्याज्य है।

आपके उपदेशों को सुनकर श्रोता स्वतः मत्र मुग्ध से रह जाते है।



आर्यिका अनन्तमतीजी

एक तपस्विनी नारी के कंकाल मात्र शरीर में कितनी सशक्त, कितनी तेजस्वी आत्मा निवास करती है यह जानना हो तो आर्यिका अनन्तमतीजी के दर्शन कर लीजिये। रोग की पीड़ा, अन्तराय का क्षोभ और कठोर क्लाति की साधना उनके मुख पर कदापि नही पावेंगे। आप एक ऐसी आर्यिका है जो वर्ष में ३-४ मास ही आहार लेती है। प्रायः मौन रहकर धर्म ध्यान मे लीन रहती है।

तपस्विनी आर्यिका अनन्तमतीजी का जन्म १३ मई १९३५ को गढी गाव मे हुआ था। आपके पिता लाला मिट्ठनलालजी थे और माता पार्वतीदेवी थी। दोनो ही धर्मपरायण थे। स्थानकवासी मान्यताओं के विश्वासी थे। आपके तीन पुत्र व चार पुत्रिया हुई। जिनमें से चौथी का नाम इलायची देवी था और जिसने इस युग में इलायची कुमारी की कहानी दुहरा दी।

बचपन में ही पिता की मृत्यु हो जाने से परिवार के लोग गढी छोड कर काधला आ गये थे। इलायची देवी ने ८ वर्ष की आयु से ही त्याग की दिशा मे बढना शुरू किया। काधला मे बालिका स्थानक और दिगम्बर जैन मन्दिर दोनो जगहों पर जाने लगी और दोष मूलक वस्तु जानकर त्याग करने लगी। १३ वर्ष की अवस्था मे तो रात्रि में पानी तक पीने का आजीवन त्याग कर दिया।

जब आपने भगवान महावीर का जीवन चरित्र पढ़ा तब आपके मन मे यह सुदृढ विश्वास हुआ कि अपरिग्रह मूलक दिगम्बर परम्परा से ही आत्मकल्याण होगा अन्यथा नहीं। फलत. आप जहां कट्टर दिगम्बर परम्परा की पोषक बनी वहा महावीर-सी विरक्ति हेतु तरसने लगी। आप भोग से योग की ओर चलने का उपक्रम करने लगीं। जिन आभूषणों के लिए अन्य स्त्रिया प्राण देती हैं उन्हे आपने हमेशा के लिए त्याग दिया। जिस वासना की पूर्ति के लिए अन्य महिलाए अनेक कुकृत्य करने में भी सकोच नही करती है आपने उस वासना का बलिदान ब्रह्मचर्य व्रत लेकर कर दिया। यद्यपि आप अभी न क्षुल्लिका थी न आर्यिका तथापि आपकी साधना उनसे किसी प्रकार कम नही थी।

आप घण्टो सामायिक करती, लोग देवी कहकर पूजते, दर्शनो के लिए भक्त उमडते, आशीर्वाद पाकर फूले नही समाते। आप विचारती कि बिना दीक्षा लिये जब यह हाल है तो दीक्षा लेने पर क्या होगा। १८ वे वर्ष मे आपने दीक्षा लेने का विचार परिवार के सामने रखा तब परिवार ने घर मे ही रहकर साधिका बनने के लिए कहा—पर अगले वर्ष जब आचार्य रत्न देशभूषणजी महाराज विहार करते हुए आ गये तब अपूर्व अवसर हाथ आया जानकर आपने दीक्षा देने के लिए

प्रार्थना की । परिवार की अनुमति लेकर आचार्य श्री ने दीक्षा देकर आपको अनन्तमती नाम दिया । केशलुन्चन की क्रिया देखते हुए तो लोग अतीव विरक्ति का अनुभव करते थे । शरीर से आत्मा की दिशा में बढ़ते देख कर सभी सन्तुष्ट दिखते थे ।

आहार सम्बन्धी कठोर नियमो के कारण अनेको बार अन्तराय आया और दस पन्द्रह दिन तक आया पर आपके सुमुख की सौम्यता शान्ति सुषमा नही गयो । आचार्य श्री के साथ सम्मेदशिखर पर पहुचने पर आपने आर्यिका दीक्षा देने की प्रार्थना की तो उपयुक्त समझकर आचार्य श्री ने दीक्षा भी दे दो । आठ वर्ष तक गुरू चरणो मे रहने के बाद—गिरनार क्षेत्र के दर्शन की लालसा लिये आप क्षुल्लिका विजयश्री के साथ चली, एक से अधिक उपसर्ग आये, रोगों ने घरा, शरीर ने साथ छोड़ना चाहा पर आपने चिन्ता नही की । गिरनार पहुचकर आपने चातुर्मास का सकल्प पूरा किया ।

क्षुल्लिकाश्री जिनमतीजी



माताजी का जन्म सिनोदिया ग्राम, जि० जयपुर, राजस्थान मे मंगसर बदी पंचमी स० २०७९ मे हुआ । इनके पिता का नाम श्रीगोपीलालजी सोगानी व माता का नाम किस्तूर बाई था । इनका जन्म नाम छिगनोबाई था । इनसे छोटे चार भाई क्रमश मोहनलालजी, भागचन्दजी, मदनलालजी, कैलाशचन्दजी तथा तीन बहिने गट्टूबाई, सन्तोषबाई एवं सुगनबाई है । आपकी शादी १३ (तेरह) वर्ष की अवस्था मे श्रीमान् रिखबचन्दजी पाटनी काकरा निवासी के सुपुत्र श्री मागीलालजी के साथ हुई । इनके क्रमश: दो पुत्रियां बिमलाबाई व ताराबाई हुईं । शादी के ९ साल बाद ही इनके पति श्री मागीलालजी का स्वर्गवास हो गया । अपनी दोनों पुत्रियों की शादी करने के बाद संसारी कार्यों से इनका मन उचट गया व भगवान की भक्ति की ओर ध्यान आकर्षित हो गया ।

आज से करीब २४ वर्ष पूर्व आर्यिका श्री धर्ममतीमाताजी का समागम हुआ । उन्हीं की प्रेरणा से आसाढ़ बदी १४ के दिन ग्राम कोछोर (सीकर) में आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से पांचवीं प्रतिमा के व्रत लिये । इसके बाद आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज का चातुर्मास सीकर हुआ । इसी चातुर्मास की आषाढ सुदी सप्तमी को आचार्य श्री से माताजी ने सातवीं प्रतिमा के व्रत लिये एवं माताजी ने दीक्षा हेतु श्री महाराज से निवेदन किया । महाराज ने कार्तिक बदी ४ का मुहूर्त दीक्षा हेतु निकाला किन्तु एन वक्त पर माताजी के घर वालों ने दीक्षा नहीं लेने दी व माताजी को घर ले गये । किन्तु माताजी का मन तो भगवान की खोज मे था अत: छः साल बाद एक रोज ८ (आठ) दिन का नाम लेकर माताजी देहली चले गये । वहाँ आचार्य देशभूषणजी महाराज एव धर्ममती माताजी के सान्निध्य मे महाराज श्री के कर कमलों से मंगसर सुदी २ स० २०२२ मे क्षुल्लिका दीक्षा धारण कर ली ।

क्षुल्लिका दीक्षा के बाद माताजी, आर्यिका धर्ममती माताजी के संघ में रहकर भारत के कोने कोने मे धर्म प्रचार करती रही है । माताजी अपने विभिन्न चातुर्मास क्रमशः जयपुर, स्योनिधि, (द० भा०) बेलगाव (दक्षिणी भारत) कोथली, फुलेरा, धूलिया (महाराष्ट्र) एव खानिया आदि कई स्थानों पर करती आ रही हैं ।

जहाँ जहाँ भी माताजी गयी है वहाँ वहाँ विभिन्न धार्मिक अनुष्ठान, जाप, मडल विधान आदि का आयोजन करवाती रही है । जयपुर में साधुओ हेतु शुद्ध वैयावृत्त औषधि निर्माण का कार्य भी इन्ही के प्रयासो से प्रारम्भ किया गया है । जिसका वर्तमान में वैद्य श्री सुशीलकुमार संचालन कर रहे है ।

सं० २०३९ में धर्ममती माताजी का स्वर्गवास हो जाने से माताजी अकेली रह गई ।

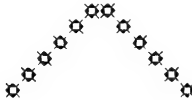
सौभाग्य मे इस साल १०५ क्षुलिका जिनमती माताजी का चातुर्मास ग्राम रानौली, जिला सीकर (राज०) में बडी धूमधाम से हो रहा है । ६१ वर्षीय माताजी के मृदुभाषी स्वभाव एवं सार-गर्भित उपदेश से न केवल जैन समाज के लोगों मे ही एक नया मोड़ आया है अपितु अन्य धर्माव-लम्बियों पर भी काफी अच्छा प्रभाव पड़ रहा है । कई क्षत्रियों ने तो रात्रि भोजन, माँस, मदिरा का त्याग एव आजन्म ब्रह्मचर्य का पालन करने का व्रत ले लिया है । जब से माताजी यहाँ पधारे है तब से ही विभिन्न विधानों, मंडलों, अखण्ड णमोकार मंत्र जाप आदि का कार्यक्रम बराबर चल रहा है । माताजी के उपदेशो का सबसे ज्यादा असर छोटे बच्चों पर पड़ रहा है । जिसका ज्वलन्त उदाहरण यह है कि शायद ही कोई बच्चा ऐसा होगा जो माताजी के उपदेश में न जाता हो । इनके आगमन से सारा दिगम्बर जैन समाज रानौली मत्र मुग्ध हो गया है ।



क्षुल्लिका चारित्रमतीजी

आपका जन्म बेलगांव दक्षिण में हुवा था। आपके पिता का नाम सगप्पा एवं माता का नाम जीवाका था। विक्रम सं० १९६५ में आपका जन्म हुआ था। वि० सं० १९७६ में आपकी शादी श्री वीरप्पा पाटिल के साथ हुई थी। आप चतुर्थ जाति की थी, सं० २००२ में मुनि पायसागरजी से आराद में सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण किए थे।

स० २००७ मे गुलबर्गा में आपने क्षुल्लिका दीक्षा ली तथा वि० स० २०१७ में आ० देशभूषणजी महाराज से आर्यिका दीक्षा धारण की, आप कन्नड़ी, मराठी, हिन्दी की उच्चकोटि की प्रवक्ता हैं तथा सरल एव शान्त जीवन है आपका।



क्षुल्लिका आदिमतीजी

श्री १०५ क्षुल्लिका आदिमतीजी का गृहस्थावस्था का नाम जुबाई है। फल्टन को आपका जन्म स्थान होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आपके पिता श्री फूलचन्द्रजी दशाहुमड़ थे। आपकी शिक्षा नाममात्र को कक्षा तीसरी तक ही हुई। जब आप असमय में ही विधवा हो गई तब आपने साधु सत्सग, धर्मश्रवण, धर्म-ध्यान मे मन लगाया।

कोल्हापुर नगर में सन् १९६० मे श्री १०८ आचार्य देशभूषणजी महाराज मे आपने क्षुल्लिका दीक्षा ले ली थी। आपने लाठी, आनन्द, फल्टन, आकुलज, भसवड़, गजपन्था आदि स्थानों पर चातुर्मास किये। आप अतीव सरल स्वभाव की धार्मिक प्रकृति वाली है। धर्मश्रवण, साधु सम्पर्क से आपने अच्छा खासा अनुभव प्राप्त कर लिया।



क्षुल्लिका अजितमतीजी

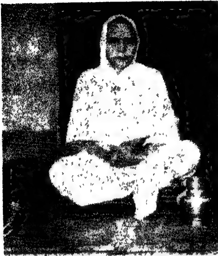


श्रीमती सुन्दरबाई का जन्म आज से करीब ५० वर्ष पूर्व जबलपुर में हुआ था। आपके पिता बशोरेलालजी एवं माता बुद्धिबाई थी। आप जाति से गोलापूर्व थी। आपका विवाह राजारामजी से हुआ। आपकी लौकिक शिक्षा नहीं के बराबर थी किन्तु धार्मिक शिक्षा रत्नकरंड श्रावकाचार तक हुई। आपके चार भाई, तीन बहिने एवं तीन पुत्र व सात पुत्रियां हैं। घर में व्यवसाय दुकानदारी व एजेन्सी है। जब आपके नगर मे आदिसागरजी महाराज आये तो उनके धर्मोपदेश से प्रभावित होकर आपने सं० २०२४ में चैत्रबदी पंचमी को श्रवणबेलगोला में आचार्य देशभूषणजी से दीक्षा ले ली। आप छहढ़ाला, वैराग्य-भावना का विशेष ज्ञान रखती है।

आपने कोथली, फुलेरा आदि स्थानों पर चातुर्मास कर बाहर की समाज को धर्म लाभ दिया। आप सोलहकारण, कर्मदहन, अष्टान्हिका, पंचकल्याण व दशलक्षण व्रतों का विधिवत पालन कर रही है। आप कई जगहों पर भ्रमण करके वहा के समाजो को धर्मलाभ दे रही है।



क्षुल्लिका कमलश्री माताजी



आपका जन्म ग्राम वसगडे जि० कोल्हापुर (महाराष्ट्र) में १९१५ अक्षय तृतीया को श्रेष्ठी श्री तोताबासौदे एव माता पद्मावती के यहां हुआ। रोहतक में आचार्य देशभूषणजी से १९५५ में सोमवार माघ सुदी पंचमी को दीक्षा ली। आप शान्त स्वभावी एवं गुरु भक्ति से परिपूर्ण हैं। धर्म प्रचार भी कर रही है। साथ ही साथ आत्म कल्याण भी कर रही हैं।



क्षुल्लिका जयश्री माताजी



आपका जन्म स्थान अक्कलकोट जि० सोलापुर (महाराष्ट्र) है। आचार्य देशभूषणजी से ई० सन् १९५९ जेष्ठ सुदी दसमी को श्रवण बेलगोला में आपने दीक्षा ली और आप अभी आचार्य सघ में रह रही हैं।



क्षुल्लिका चन्द्रसेनाजी

सं० १६५२ मे उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ मे चान्दीबाई ने श्री अनन्तमलजी की धर्म-पत्नी श्री चिरोंजादेवी की कुक्षी से जन्म लिया था। आप अग्रवाल जाति की हैं। हिन्दी भाषा का अच्छा ज्ञान था। श्रा० देशभूषणजो महाराजजी से बारबंकी में छठी प्रतिमा के व्रत धारण किए। आपने अपने पति की आज्ञा से आचार्य देशभूषणजी महाराज से जयपुर में सं० २०१२ में क्षुल्लिका दीक्षा ली। आपने अनेकों स्थानो में भ्रमण किया तथा धर्मोपदेश देकर श्रावक श्राविकाओं को सद्मार्ग मे लगाया। अंत मे समाधि लेकर आत्म कल्याण कर स्वर्ग सिधारी।



क्षुल्लिका श्री कृष्णमती माताजी



श्री कृष्णाबाई का जन्म पंढरपुर महाराष्ट्र में हुवा था। आपके पिताजी का नाम श्री बापूराव कटेक था। माताजी का नाम ठक्कूबाई था। १६७० वि० सं० में आपका जन्म हुआ था। आपने मराठी में शिक्षा प्राप्त की मुनि पायसागरजी से आपने दूसरी प्रतिमा धारण की, सातवीं प्रतिमा श्रवण बेलगोला में आ० देशभूषणजी से ली। सं० २०१६ में आ० देशभूषणजी से आपने क्षुल्लिका दीक्षा ली। आप आचार्य श्री की सेवा में रत रहती हुई आत्म साधना में रत रहती थी अन्त में समाधि धारण कर स्वर्ग पधारीं।



प्रार्यिका वीरमतीजी

आपका जन्म हिंगण गाव जि० कोल्हापुर (महाराष्ट्र) में हुआ। पिता देवप्पा एवं माता गगाबाई थीं। आपका पूर्व नाम उमादेवी था। आपका विवाह सखाराम पाटील से हुआ। मांगूर जि० बेलगांव (कर्नाटक) में रहते थे। आपने संसारिक जीवन से मुक्त होने के लिए आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज से दीक्षा धारण की। आप आचार्य श्री के संघ में रह रही हैं तथा आत्म साधना कर रही है।



क्षुल्लिका राजमतीजी



पार्वती का जन्म बूचाखेडी (काधला) उत्तर-प्रदेश में हुवा था। आपके पिताजी का नाम श्री शीलचद था मानाजी का नाम अगूरीदेवी था।

पू० आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज से क्षुल्लिका दीक्षा ली।

कोल्हापुर में दीक्षा लेने के पश्चात् आपने अनेकों स्थानो मे भ्रमण किया तथा समस्त भारत वर्ष मे विहार कर धर्म प्रभावना की।

जयपुर के निकट चूलगिरी क्षेत्र का विकास आपके अथक प्रयत्न का फल है जो जयपुर की शोभा मे अद्वितीय है तथा आज जो एक क्षेत्र के रूप में प्रगट हो रहा है। आपने जैन धर्म जागृति के कार्यों में विशेष सहयोग दिया है।

आप अभी क्षेत्र पर रहकर क्षेत्र की रक्षा तथा उसका विकास कर रही हैं। धन्य है आपके त्याग को तथा आपके जीवन को जो मान कषाय को तथा अभिमान को त्याग कर आत्म साधना में तत्पर है।

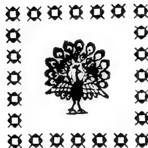


क्षुल्लिका श्रेयासमतीजी



गृहस्थ नाम	—	कुमारी केसरबाईजी
जन्म सम्वत्	—	१६२५ स्थान नातेपुते जि० सोलापुर
पिता का नाम	—	श्री खेमचन्दजी
माता का नाम	—	श्री जियाबाईजी
लौकिक शिक्षा	—	पाँचवी
ब्र० व्रत धारण	—	१६५० आ० शातिसागरजी
क्षुल्लक दीक्षा	—	श्री देशभूषणजी से १६६७

आपने अपने जीवन मे अनेक धार्मिक ग्रन्थो का अध्ययन किया एव अजितमतीजी की सेवा वैयावृत्ति मे तत्पर रहती हैं।



आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज

द्वारा दीक्षित शिष्य



आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज

आचार्य विमलसागरजी
मुनि श्री कुन्थसागरजी
मुनि श्री नेमिसागरजी
मुनि श्री सुधर्मसागरजी
मुनि श्री वासुपूज्यसागरजी
मुनि श्री वर्धमानसागरजी
मुनि श्री आदिसागरजी
मुनि श्री संभवसागरजी
मुनि श्री नमिसागरजी
क्षुल्लक आनन्दसागरजी
क्षुल्लक आदिसागरजी
क्षुल्लक नमिसागरजी
क्षुल्लक संभवसागरजी
क्षुल्लक नेमिसागरजी
क्षुल्लक चन्द्रसागरजी
क्षुल्लक शीतलसागरजी
आर्यिका श्रेयासमतीजी
आर्यिका वीरमतीजी
आर्यिका शीलमतीजी
आर्यिका सुपार्श्वमतीजी
क्षुल्लिका आदिमतीजी
क्षुल्लिका जिनमतीजी
क्षुल्लिका नेमीमतीजी
क्षुल्लिका चन्द्रमतीजी

आचार्य विमलसागरजी महाराज



परम पूज्य प्रातः स्मरणीय ज्योतिर्विद, तपस्वी, चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी महाराज जिनके श्री आगमन की सूचना मात्र से ही प्राणियों के हृदय कमल खिल उठते हों, जिनके नगर प्रवेश के समय से ही समस्त भक्त जीवो के हृदय में धर्म की अजस्र धारा बहने लगती हो, जिन्होंने कितने ही भव्य जीवों का कल्याण किया हो, जिनके समक्ष राजा-रंक, अमीर-गरीब, शत्रु-मित्र का भेद भाव न हो, जो सब पर सदा सर्वदा वात्सल्य दृष्टि रखते हों, ऐसी महान आत्मा की यशोगाथा लिखना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है ।

जन्म एवं शिक्षा :

आचार्य श्री का जन्म आश्विन कृष्णा ७ सं० १९७२ को उत्तरप्रदेश के एटा जिलान्तर्गत जलेसर कस्बे से लगभग डेढ मील दक्षिण में 'कोसमा' नामक गांव में हुआ । आपका नाम श्री नेमीचन्द रखा गया । आपके पिता श्री लाला बिहारीलालजी सुप्रतिष्ठित गृहस्थ थे तथा माता कटोरीबाई धर्म के प्रति बडी आस्थावान थी । जन्म के छः मास पश्चात् ही आपकी माता का स्वर्गवास होने से आपका लालन-पालन आपकी बुआ श्रीमती दुर्गाबाई के संरक्षण मे हुआ ।

प्रारम्भिक शिक्षा के बाद उच्च शिक्षा हेतु आपने लगभग १० वर्षों तक गोपाल सिद्धान्त विद्यालय मुरैना मे अध्ययन किया और वहां से शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की । वहां विद्यागुरू न्यायालंकार प० श्री मक्खनलालजी शास्त्री के सानिध्य मे आपने धार्मिक संस्कारो एव आगम में पूर्ण श्रद्धा और

दृढ़ता प्राप्त कर जैन सिद्धांतों के रहस्य को हृदयांकित किया। तदुपरान्त आपने नौगामा (कुचामन सिटी) विद्यालय में अध्यापन कार्य किया।

तपस्या के क्षेत्र में पदार्पण :

प्रारम्भ से ही आपमें वैराग्य भावना कूट-कूट कर भरी गई थी। अतः आप प्रायः शान्ति की खोज में धर्म स्थानों की यात्रा करते रहते थे। एक बार आप साइकिल से सम्मेद शिखर की यात्रा करने निकल गए जहाँ पहुंच कर आपने वन्दना की और तत्पश्चात सम्पूर्ण भारत के तीर्थ क्षेत्रों की यात्रा की। आपको वैराग्य भावना से विमुख करने हेतु आपके पिता ने आपके लिए एक कपड़े की दुकान भी खुलवा दी किन्तु पिता के प्रयास भी आपको सांसारिक बन्धनों मे न बाध सके। परिणाम-स्वरूप आपने आत्म कल्याण हेतु श्री १०८ आचार्य कल्प श्री चन्द्रसागरजी से शुद्धजल का नियम ले लिया। पुनः परमपूज्य आचार्य श्री सुधर्मसागर महाराज का उपदेश और उनकी प्रेरणा का प्रभाव आप पर इतना गहरा पडा कि आपमें संसार निवृत्ति तथा वैराग्यवृत्ति की भावना एकदम जाग्रत हो गई।

दीक्षा :

आषाढ सुदी ५ स० २००७ आपके जीवन का वह जाज्वल्यमान दिवस है जिस दिन आपने समस्त सासारिक जीवन त्याग कर गृहस्थ जीवन से पूर्ण मुक्ति हेतु आचार्य श्री १०८ महावीर कीर्तिजी महाराज के पास बडवानी सिद्ध क्षेत्र पर क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। आपको वृषभसागर नाम से विभूषित किया गया। सात माह की अल्प अवधि में ही क्षुल्लक वृषभसागरजी ने कठोर, तप, सयम, साधना और स्वाध्याय द्वारा आचार्य श्री को इतना अधिक प्रभावित किया कि उन्होंने स्वतः ही माघ सुदी १२ सं० २००७ को धर्मपुरी दिल्ली में आपको ऐलक दीक्षा दी तथा सुधर्मसागर नाम प्रदान किया। दो वर्षों के अन्तराल में ही आपने अपने आपको पूर्ण निर्ग्रन्थ दीक्षा के लिये गुरुचरणों मे अर्पित कर दिया। परिणामस्वरूप फाल्गुन बदी १३ सं० २००९ को इसी स्वर्णगिरी की पावन तपो भूमि पर आचार्य श्री १०८ महावीर कीर्तिजी महाराज द्वारा आपका निर्ग्रन्थ दीक्षा समारोह सोनागिर सिद्ध क्षेत्र पर सम्पन्न किया गया तथा १०५ ऐलक श्री सुधर्मसागरजी ने श्री १०८ विमल-सागर नाम ग्रहण कर सर्वोच्च मुनि पद प्राप्त किया।

आचार्य पदवी :

मुनि श्री १०८ विमलसागरजी महाराज श्री जिनेन्द्र भगवान के वचनामृतों का पान जन-जन को कराते हुए जब टूंडला (जनपद-आगरा) में पधारे तब वहाँ की धर्म प्राण जनता एवं बाहर से

आए जैन मतावलम्बियों ने आपको यथोचित गरिमायुक्त सम्माननीय पद प्रदान करने हेतु एक विशाल समारोह का आयोजन किया। अगहन बदी दूज सं० २०१८ को आयोजित इस विशाल समारोह में धर्म रत्न सरस्वती दिवाकर पं० लालाराम शास्त्री तथा पं० माणिकचन्द्रजी शास्त्री भी उपस्थित थे। तब दीक्षा गुरु आचार्य महावीरकीर्तिजी का आदेश प्राप्त कर उपस्थित जन समूह के जनघोष के बीच मुनि श्री विमलसागरजी ने आचार्य पद धारण किया। आपको आचार्य पद पर विभूषित करते हुए आपसे यह निवेदन किया गया कि इस घोर कलियुग में धर्म रक्षा का भार अपने सुदृढ़ कन्धों पर ग्रहण करते हुए समस्त निरीह, अबोध प्राणियों के हृदय मे धर्म का बिगुल बजाये और सदैव उनका मार्गदर्शन करते रहे।

उपसर्ग एवं अतिशय :

जैन साधुओं के जीवन मे उपसर्ग का बहुत ही महत्व है यही वह महत्त्वपूर्ण सीढ़ी है जो जैन मुनियों को आत्मोन्मुख कर मोक्ष पथ की ओर अग्रसर करती है। निश्चयनय के धारक सम्यग्दृष्टि साधु जब निर्विकारभाव से उपसर्गों को सहन करते हैं तो अतिशय का प्रकट होना स्वाभाविक है। आचार्य श्री का जीवन घोर उपसर्गों और अतिशयों से युक्त है। यही कारण है कि हर साधु त्यागी व्रती एवं श्रावक हृदय आपके श्री चरणो में स्थान पाने को सदैव लालायित रहता है जिन्हे आपके चरणों में स्थान मिल जाता है उन्हे नवनिधि एवं समस्त सिद्धिया स्वयमेव प्राप्त हो जाती है।

आपके अतिशय की गाथायें आज भी बन्धाजी एवं जूडा पानी तीर्थ क्षेत्रो के निवासियों तथा आस-पास के लोगों के मुंह कही सुनी जाती हैं। इन दोनों तीर्थ क्षेत्रों में स्थित कुओं में पानी न होने से वहाँ के लोगों को अत्याधिक परेशानी होती थी। आपके चरण कमल इन स्थानो पर जब पड़े आपने तुरन्त आदिनाथ भगवान की प्रक्षाल करा उसके जल से कुंओं में पानी ही पानी भर दिया। अटूट जल से भरे वे कुए आज भी आपके अतिशय का ज्वलन्त उदाहरण प्रस्तुत करते है।

आपके अतिशय का एक अन्य उदाहरण उस समय दृष्टिगोचर हुआ जब कि आप जालेटन गाँव से मिर्जापुर जा रहे थे। रास्ते में आप एक जगह शौच हेतु रुके। शौच से निवृत्त होने पर आपने अपने समक्ष एक भयकर शेर को देखा जिसे देखकर आप रचमात्र भी विचलित नही हुए। आत्म-ध्यानी आचार्य श्री ने उपसर्ग निवारण पर्यन्त तक सकल सन्यास ले णमोकार मन्त्र का पाठ प्रारम्भ कर दिया। आपके ध्यानस्थ होते ही वनराज सिह आपके समक्ष और नजदीक आया तथा मस्तक नवाकर छलागे लगाता हुआ जगल मे चला गया। आपके साथ में उस समय उपस्थित श्रावक जो कि भय से किंकर्तव्य विमूढ हो गया था इस घटना को देखकर आश्चर्यचकित रह गया। आपकी निर्ग्रन्थ

मुनि तपस्या से अर्जित शक्ति के प्रभाव से श्री सम्मेदशिखरजी की यात्रा करते समय अनेक बार चन्द्र-प्रभु टोंक, पार्श्व प्रभु टोंक एवं जलमन्दिर पर सिंहों ने आपके चरणों में नमन किया है। एक बार आप जब संघ सहित अकबर से जौनपुर जा रहे थे तब रात्रि में आपको एक रेल्वे चौकी पर शयन करना पड़ा। उस समय कहीं से एक भयानक दो हाथ लम्बा काला सर्प आकर आपके हाथ पर क्रीडा करने लगा। मानो कोई दुलारा पुत्र अपने पिता की गोद मे अठखेलियाँ कर रहा हो। तीन घण्टे तक क्रीडा करने के पश्चात् सर्प आचार्य श्री की प्रदक्षिणा देकर अपने स्थान को चला गया। इस घटना को देखकर वहाँ उपस्थित व्यक्ति घोर आश्चर्य में डूब आचार्य श्री की जै-जै कार करने लगे।

तीव्र तपोबल :

आपकी आत्म साधना की प्रखर ज्योति एवं तपोबल के समक्ष आपके प्रति दूषित भावनायें रखने वाले व्यक्ति भी नतमस्तक हो जाते है। एक बार पावापुर के समीप भदरिया ग्राम में वहाँ के निवासियो के झुण्ड आपको मारने पहुचे किन्तु आपके तपोबल के प्रभाव से वे नतमस्तक होकर चले गये। निरन्तर साधना से आपने बौद्धिक एव मात्रिक ज्ञान मे श्रेष्ठता अर्जित कर ली है। आपका निमित्त ज्ञान भी अति निर्मल है। मनुष्य के मुख को देखकर ही उसके अन्तःकरण में घुमडती भावनाओ का आप सहज ही अनुमान लगा लेते है और तत्सम्बन्धी आपके कथन सत्य होते है। अपने इस गुण से आपने हजारों नर नारियो को असीम कष्टो से मुक्ति प्रदान की है। यही कारण है कि आपके चहु ओर सदैव एक मेला सा लगा रहता है।

संवर्द्धन एवं संरक्षण क्षमता :

"शिष्यानुग्रह कुशला" के गुण से युक्त आचार्य श्री के कोमल स्वभाव एव करुणार्द्र हृदय में शिष्यों का संवर्द्धन एवं सरंक्षण करने की अभूतपूर्व क्षमता है। आपने अनेक व्रतीगणों को ब्रह्मचारी, क्षुल्लक, क्षुल्लिका, ऐलक, आर्यिका एवं मुनि दीक्षा प्रदान की है तथा अब भी निर्ग्रन्थ साधु वृत्तियों को उत्पन्न करने में लगे है। इस प्रकार आप अनेकों भव्यात्माओं को दीक्षा दे देकर मोक्षमार्ग पर अग्रसर कर रहे है। आप अपने समस्त शिष्यो को ज्ञान ध्यान तथा तप में लीन रखते हैं।

जनकल्याण :

परोपकार आपका विशेष गुण है। आपने अब तक हजारों व्यक्तियो को शुद्धजल के नियम दिलाये है। अनेक मासाहारियों को शाकाहारी बनाया है तथा कई श्रावकों को त्यागी बनाया है। आप हर स्त्री, पुरुष, बालक, वृद्ध, युवा एव युवती को व्रती संयमी देखना चाहते है। छोटे-छोटे व्रतों द्वारा भी प्राणी मात्र के कल्याण की भावना आपके हृदय में कूट-कूटकर भरी है आपकी वाणी में

मिश्री सा माधुर्य, दृष्टि में आकर्षण शक्ति तथा व्यवहार में अनोखा जादू भरा है। आप तरण-तारण निज-परहित दक्ष, मंगल भावना के संगत अनेक गुणों से मंडित होने के कारण एक विशाल मुनि संघ के अधिपति श्री हैं और गुरु परम्परानुसार शिष्यों पर वात्सल्य दृष्टि रखते हुए उन्हें ज्ञानार्जन कराते रहते हैं। आप यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र, विशारद तथा भविष्य वक्ता तपस्वी होने से असख्य जन का कल्याण कर रहे हैं।

त्याग की मूर्ति :

६४ वर्ष की अवस्था होने पर भी आप मे रंचमात्र प्रमाद नहीं है। आप रात्रि मे मात्र तीन घण्टे की नींद लेते हैं तथा वह भी ध्यानस्थ मुद्रा मे। अपने दैनिक षट आवश्यक कार्यो मे जरा भी शिथिलता नही बरतते आपने चारित्र शुद्धिव्रत तथा अन्य कई व्रतों को पूर्णता दी है। आप प्रत्येक चातुर्मास अवधि में एक दिन आहार तथा एक दिन उपवास अर्थात् ४८ घण्टे बाद आहार लेते हैं। वह भी बिना किसी अन्तराय के सम्पन्न हो तब, इन उपवासों के अतिरिक्त अन्न का त्याग तो आप अनेक बार काफी लम्बी अवधि के लिए कर चुके हैं। अपनी अभूतपूर्व त्याग एव संयम की क्षमता से आचार्य श्री एक इतने बड़े संघ को संगठन देकर देश और समाज का कल्याण कर रहे है।

धार्मिक संस्थाओं की स्थापना :

अनेक धार्मिक संस्थाये, चैत्यालय, मन्दिर, स्वाध्यायशाला, औषधालय एवं धर्मशालायें आपके उपदेश एव प्रेरणा से अनेक स्थानों पर स्थापित की गई है। जिनके माध्यम से वर्तमान मे अनेक भव्य प्राणी पुण्योपार्जन कर रहे हैं। गुनौर मे जैन पाठशाला, टूंडला मे औषधालय, श्री सम्मेदशिखरजी पर भव्य समवशरण और राजगृही मे आचार्य महावीर कीर्ति सरस्वती भवन आज भी आपकी यशोकीर्ति गा रहे हैं। आपने कई पच कल्याणक प्रतिष्ठाये कराई है जिनका वर्णन लेखनी से बाहर है। आपके सोनागिरि चातुर्मास अवधि में आपकी प्रेरणा से क्षेत्र मे एक विद्यालय की स्थापना की गई है तथा पर्वत पर चन्द्रप्रभ भगवान के मन्दिर के बाह्य प्रागण मे बाहुबली स्वामी की मूर्ति के दोनों ओर नग एव अनंगकुमार मुनियों की मूर्तिया स्थापित की जा रही हैं एव कमेटी के पास एक विशाल सरस्वती भवन तथा सभा-भवन का निर्माण कार्य चालू है। यही कारण है कि आचार्य श्री को जैन समाज की आध्यात्मिक सम्पत्ति कहा जाता है।

आपके द्वारा हाल ही में सोनागिर मे चन्द्र प्रभू चौक में एक मुनि दो आर्यिका एक क्षुल्लक एवं क्षुल्लिका दीक्षा करायी गई है। आचार्य महाराज अत्यन्त शान्त परिणामी, महान तपस्वी विद्वान साधु हैं। आपके माध्यम से समाज और राष्ट्र का बहुत कल्याण हो रहा है। आपने अपने दायित्वों

का पूर्ण निर्वाह करते हुए समस्त विश्व में न केवल जैन धर्म को विश्व धर्म की मान्यता दिलाई है अपितु जन-जन में व्याप्त भ्रान्तियों को बड़ी ही सहृदयता से दूरकर अनेकानेक प्राणियों को आत्म कल्याण के सन्मार्ग में लगाया है। ऐसे विद्वान तपस्वी आचार्य रत्न श्री चिरायु हों, यही मंगल कामना है।



मुनिश्री कुन्थसागरजी महाराज

श्री १०८ मुनि कुन्थसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम कन्हैयालालजी था। आपका जन्म ज्येष्ठ सुदी तेरस विक्रम सवत् २००३ मे बड़ा बाढ़रहा स्थान पर हुआ था। आपके पिता श्री रेवाचन्द्रजी हैं व माता श्री सोहनबाई है। आप नरसिंहपुरा जाति के भूषण है व लोलावत गोत्रज है। आपकी लौकिक तथा धार्मिक शिक्षा साधारण हुई। आपने विवाह नही किया। आप बाल-ब्रह्मचारी ही रहे। आपने पहले दुकान पर नौकरी भी की। आपके परिवार में एक भाई व तीन बहिने है।

धार्मिक प्रेम होने के कारण आपने श्री १०८ मुनि सन्मतिसागरजी से दूसरी प्रतिमा के व्रत धारण कर लिए। इसके बाद आचार्य श्री १०८ महावीरकीर्तिजी महाराज से आपने अषाढ़ सुदी दूज विक्रम संवत् २०२४ मे हुमच (दक्षिण) मे मुनि दीक्षा ले ली। आपने हुमच, कुन्थलगिरि गंजपंथा आदि स्थानो पर चातुर्मास कर धर्मवृद्धि की। आपने तीनों रसो का त्याग कर दिया है।



मुनिश्री नेमिसागरजी महाराज

आठ मार्च सन् उन्नीस सौ तीस में राजस्थान के नरवाली (बांसवाड़ा) नामक स्थान में माता श्रीमती जवकुबाई की पुनीत कुक्षि से आपका मगलमयी जन्म हुआ। आपके पिताजी का नाम श्रीमान् नाथूलालजी है। आपका बचपन का नाम छगनलाल था। बचपन से ही आप अचंचल एवं सारल्यगर्भित थे।

आपने कक्षा चार तक शिक्षा पाई। छात्र जोवन में आप एकदम गम्भीर रहते थे ऐसा लगता था जैसे अनवरत किसी चिन्तन में लगे रहते हों और फिर

भोला वचपन सारल्य लिए जब यौवन उपवन में आया।
असमर्थ हुई उलझाने में तब पुष्पों की चितवन माया ।।

निष्काम भावना के आगे कलियो की गन्ध विलीन हुई।
सासारिक छलनाए सबही जिनके समक्ष अब क्षीण हुई ।।

ऐसे विभूति धारी महन्त को शत-शत सादर वन्दन है।
जिनके चरणों की रज कठोक सम्मुख नगण्य नंदन वन है ।।

बाल हृदय पर जब सांसारिक छलनाऐं आती तो चिकने घडे मे पानी की बूंदों जैसी क्षणांकार्थ भी पराश्रय न पाती यह देखकर लोगों को आश्चर्य होता था कि इतनी छोटी उम्र और ऐसे गम्भीर विचार। बचपन गया, यौवन आया किन्तु उसमें बसन्ती बू नहीं आई। वासना ने आपके प्रशान्त मानस की ओर आंख उठाकर देखने तक की हिम्मत स्वप्न में भी नही की। आपने बालब्रह्मचारी का पुनीत और कठिन व्रत लेकर संसार की समस्त सुख सामग्री एवं भोगविलासों को नगण्य एवं सर्वथा उपेक्षित सिद्ध किया।

आप पिता श्री के साथ व्यापार किया करते थे। धार्मिक प्रवृत्ति ने आपके हृदय में बचपन से ही अपना एक कोटर बना लिया था। उम्र के साथ साथ स्वाध्याय एवं धर्म प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ती गई। साथ ही संसार के प्रति उदासीनता का भाव भी पुष्ट होना चला गया।

सांसारिक चमक दमक बचपन में ही जिनके सामने पराजित हो चुकी थी उनको गार्हस्थ्य बन्धन भला कबतक बाध सकता है। वैराग्य भावना बढ़ती गई और आपने सवत् २०२४ ६ सितम्बर सन् ६७ में हुमच पदमावत (शिवभोगा) मैसूर स्टेट मे श्री १०८ आचार्य महावीरकीर्तिजी से मुनि दीक्षा ग्रहण की और संघ मे सम्मिलित हो गये।

तत्पश्चात् वही हुआ जो संघों मे सदैव से होता आया है। आचार्यजी से ज्ञानार्जन कर सर्व साधारण को उनके बताए हुए मार्ग पर चलने की प्रेरणा प्रदान करना तथा उपदेश देना यही विषय अब आपके जीवन के पहलू हैं। अष्टमी और चतुर्दशी को आप व्रत रखते हैं। आपने चार रसों का त्याग किया है। आपकी कीर्ति उज्ज्वल है। मुनि धर्म का पूर्ण पालन करते हुए आपने न जाने

संसार सागर के कितने गुमराह व्यक्तियों का पथ प्रदर्शन किया । आज भी आप अपने ज्ञान के अक्षय भण्डार से लोगों को संतृप्त करते हुए उनको उचित मार्ग का निर्देशन करते हैं । आपका अलौकिक व्यक्तित्व अनुकरणीय है ।



मुनिश्री सुधर्मसागरजी महाराज

आपकी जन्म भूमि धरियाबाद है आपके पिताजी फतहचन्द काजी है । काजी दशाहुमण गोत्र बुद्धेश्वर है आपकी मातेश्वरी चम्पाबाई बोदावत मूलचन्दजी की लड़की थी उनकी दो सन्ताने हुई एक लडकी रूपाबाई और एक आप (केसरीमल) थे ।

श्री केसरीमलजी का जन्म विक्रम स० १९६६ में फाल्गुन बदी १० के दिन हुआ आपने चौथी कक्षा तक पढाई की । एक ब्राह्मण पन्नालाल जो कि गूबर गौड जाति के थे । उनके पास भक्तामरजी व मोक्ष शास्त्र पढे आपकी शादी विक्रम स० १९८१ फाल्गुन बदी अष्टमी के दिन श्री चन्दावत चुन्नीलालजी मोतीलालजी की सुपुत्री रूपारीबाई के साथ हुई जो कि गामडी दशा हुमण जैन जाति की थी उसकी कोख से तीन लड़के व १ लड़की उत्पन्न हुये उनके नाम है । भँवरलाल, बालचन्द्र और एक छोटी लडकी का नाम कान्तादेवी है आप अपनी आजीविका गल्ले व परचूनी की दुकान से चलाते थे ।

गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुये भी आपका मन सदैव ससार से विरक्त रहा ।

सासारिक प्रलोभन आपकी आत्मा को जरा भी विचलित न कर सके ।

सं० २०१६ की कार्तिक सुदी मे १००८ श्री सिद्धचक्र विधान मुगाणे मे आपने करवाया आपने वहा पर सभा मे धर्मोपदेश के बीच तीन हजार जनता की साक्षी में श्री १०५ क्षुल्लक धर्मसागरजी से पहली प्रतिमा ली । स० २०१७ मे श्री १०८ वर्द्धमानसागरजी महाराज से छठी प्रतिमा के व्रत लिये । सं० २०१८ में श्री १०८ मुनिराज आदिसागरजी महाराज से सातवीं प्रतिमा के व्रत लिये । फिर आपने श्री १०८ मुनिराज आदिसागर महाराज की समाधि में भाग लिया ।

आपने श्री १०८ चारित्र चक्रवर्ती आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से आसोज सुदी १० शनिवार को ११ बजकर १५ मिनिट पर क्षुल्लक दीक्षा ली । और वहाँ से रवाना होकर गिरनार

आये और वहां पर अषाढ़ सुदी मे १०-६-७० शनिवार को मुनि दीक्षा हुई और फिर चातुर्मास पूर्ण होने पर वहाँ से विहार करके पावागढ़ पहुंचे वहाँ से अहमदाबाद आये रास्ते में गणेशपुर में गुरु महाराज की समाधि कराई। वहा से उदयपुर खानिया में चातुर्मास किया फिर सम्मेदशिखर में चातुर्मास किया फिर खण्डगिरी उदयगिरी आकर पौष सुदी १४ को केश लोंच किया और फिर वहा से विहार कर कटक आये वहा ३॥ महीना रहे फिर १९७५ वैसाख बदी १३ को कलकत्ता को विहार किया फिर कलकत्ता में चातुर्मास की स्थापना हुई।

श्री महाराजजी का तप बहुत श्रेष्ठ है। पग पग पर कर्म पीछा कर रहे है फिर भी महाराज अपने तप को दृढता पूर्वक पालन करते हुए मोक्ष के मार्ग की तरफ कदम बढाते जा रहे हैं महाराजजी का बहुत ही सरल स्वभाव है और हर समय धर्म में लीन रहते हैं। समाज को आप जैसे मुनिराज पर महान गर्व है।

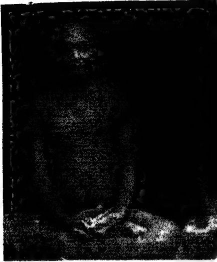


मुनिश्री वासुपूज्यसागरजी महाराज

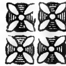
आपका जन्म कार्तिक बदी १० सम्वत् १९८१ मे ग्राम गढमोरा जिला गंगापुर (राजस्थान) में सेठ श्री छगनमलजी काला के यहा पर हुआ। आपका बचपन का नाम श्री कपूरचन्द एवं माता का नाम मूलीबाई है। आपने सन् १९६४ में गृह त्याग दिया एव क्षुल्लक दीक्षा ले ली। तदुपरान्त सन् १९७० मे श्री १०८ आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज से मांगीतुंगी क्षेत्र पर मुनि दीक्षा ली। तबसे आपका नाम वासुपूज्यसागरजी हो गया। आप बहुत ही मृदुभाषी हैं। आपका अधिकतर समय धर्म ध्यान एवं अध्ययन मे व्यतीत होता है। भिन्न-भिन्न स्थानों पर चातुर्मास करते हुए आप धर्म वृद्धि कर रहे है।



मुनिश्री वर्धमानसागरजी महाराज



आपका जन्म धरमपुरी जिला (धार) निमाड़ म० प्र० के निवासी श्री हजारीलालजी की धर्मपत्नी श्रीमती कस्तूरीबाई की कोख से श्रावण शुक्ला त्रयोदशी स० १९८४ को हुवा। आपका गृहस्थ अवस्था का नाम श्री मागीलालजी था। आपके वंशज धर्म परायण वृत्ति के होने के नाते आपमें बचपन से ही धर्म के प्रति श्रद्धा एव पूर्ण आस्था थी। आपने स० १९९७ में ही दूसरी प्रतिमा के व्रत इंदौर में ले लिये थे। तत्पश्चात् २००८ में सप्तम प्रतिमा ली और स० २००९ में ही चंदेरी मे क्षुल्लक दीक्षा धारण कर ली। भ्रमण करते हुये आप स० २०११ में श्री सम्मेदशिखर पहुचे जहा आपने फागुन शुक्ला १५ को आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज सा० से मुनि दीक्षा धारण कर ली। आपको सस्कृत, हिन्दी, प्राकृत, मराठी, गुजराती, अग्रेजी, कन्नड़ आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त है। आप ज्योतिष-शास्त्र के भी अच्छे ज्ञाता है। अब तक आपके चातुर्मास इंदौर, भोपाल, कटनी, सम्मेदशिखरजी, चापानेर, फुलेरा, जयपुर, टोडारायसिह, प्रतापगढ़, धरियावद, श्रवणबेलगोल उदयपुर आदि स्थानों पर सानन्द सम्पन्न हुये है।



मुनिश्री आदिसागरजी महाराज

पूज्य आदिसागरजी महाराज उदारमना सरलाशय परम तपस्वी महाव्रती संत हैं। आपका जन्म दक्षिण प्रांत में कांगनौली नामक गाव मे हुआ है तथा तालुका चिकौडी जिला बेलगांव में पडता है।

कांगनौली गांव है तो छोटा पर बड़ा सुन्दर है । यहाँ के निवासियों को सभी सुविधाये प्राप्त हैं । इस गांव में दिगम्बर जैन धर्म का आराधन करने वाले एक श्रावक दंपति रहते थे जिनका नाम देवगोडा नरस गोडा पाटील व इनकी पत्नी का नाम सौ० मदनावली था । ये दोनों परम धार्मिक दान पूजा में आसक्त परम संतोषी थे । इनके दो पुत्र व तीन पुत्रियां हुईं । १. आक्कताई, २ बापू-साहेब, ३. कुसुमताई, ४. आना साहेब, ५. गगूताई ।

पूज्य स्व० १०८ श्री आचार्य शातिसागरजी महाराज जिस परदाशुद्ध पाटीदा वंश में उत्पन्न हुये थे उसी चतुर्थ जैन पाटीदा वंश में आपने जन्म लिया है । आपका जन्म कागनौली गांव में दिनांक १४-१-१६१८ को पौष में हुआ है । आपकी प्राथमिक शिक्षा भी कागनौली में ही हुई पर मराठी सप्तम कक्षा तक का शिक्षण आपने वेदागाव में प्राप्त किया था । जब आपकी बडी बहिन आकाताई के विवाह का दिन निश्चित हुआ और उसके लिये भोजगांव से बरात आई तो उसमें श्री ··· ··· ·······भी आये थे उन्होंने बापू साहेब के साथ अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव रक्खा जिसे श्री देवगोड़ाजी ने तत्काल स्वीकार कर लिया बस फिर क्या था बहिन के विवाह के अवसर पर ही आपका विवाह भी श्री देवेन्द्र मानगाव, भोजकर की पुत्री सौ० कास्मिणी मुरदेवी के साथ सन् १६३७ मे १६ वर्ष की अवस्था मे हो गया । उभय दम्पत्ति तब श्रावक धर्म की परिपालना करते हुये अपना समय व्यतीत करने लगे ।

कुछ समय बाद श्री बापू साहेब अर्थोपार्जन की दृष्टि से बडौदा पहुच गये और वहा (सैकिन्ड बडौदा इन्फेन्ट्री में) मिलिट्री में भरती हो गये । मिलिट्री मे आप अनुशासन प्रिय दृढ़ निश्चयी सत्य निष्ठ सैनिक सिद्ध हुये । आपकी इस सत्य निष्ठा से प्रभावित होकर अधिकारियो ने सैनिकों की भोजन व्यवस्था का भार भी आपको ही सौप दिया ।

सन् १९४० में जब युद्ध छिड़ा तो अंग्रेज सरकार की प्रेरणा से बड़ौदा सरकार ने एक मिलिट्री भेजी, जिसमे १५०० सैनिक थे । श्री बापू साहेब को भी इस मिलिट्री मे जाना पडा, सारी व्यवस्था का भार तो आप पर ही था । आपने बड़ी कुशलता के साथ व्यवस्थाये स्थान-स्थान पर करते रहे । इस तरह यह मिलिट्री बडौदा से रवाना होकर लाहौर आगरा होते हुये कलकत्ता पहुंची और वहां फैनी-चटगाव बन्दरगाह पर व्यवस्था हेतु आयी । इसी समय कागनौली से आपके छोटे भाई श्री आना साहेब का तार मिला, पिताजो की तबियत खराब है शीघ्र आओ पर सैनिको की व्यवस्था का भार सैनिकों का अनुशासन—आप तत्काल वापिस न लौट सके । एक माह बाद जब आप वापिस लौटे तो गांव के बाहर ही आपको पिताजी के स्वर्गवास के समाचार मालूम पड़े । आपको उस समय पिता के

असह्य वियोग का दु:ख तो बहुत ही हुआ पर उपाय क्या था भवितव्यता को कौन टाल सकता है ऐसा सोचकर आपने दु:ख के वेग को कम किया। घर पहुंचे माता बहिन भाई सबको बिलखते दु:ख से कातर देख स्वय भी एक बार तो विचलित हो गये पर तुरन्त प्रकृतिस्थ हो परिवार को समझाया शांत किया तथा गांव में ही रहने लगे। गृहस्थी का सारा भार आप पर ही आगया था उसको आप वहन करने लगे। भाई बहिन सभी का विवाह आदि गृहस्थ सम्बन्धी कार्य सब आपको ही करना पड़ता था।

कुछ दिनों बाद आपकी माताजी का स्वर्गवास हुआ, इसके छ माह बाद ही आपकी पत्नी का भी स्वर्गवास हो गया आपके कोई संतति भी नही थी। यह सब देखकर आपके हृदय में बड़ा दु:ख हुआ। लोगों ने पुनः विवाह के लिये प्रेरणा भी दी पर आपने अब आजीवन पर्यंत ब्रह्मचर्य व्रत का नियम ले लिया। अब आप संसार की वास्तविकता का विचार करने लगे और आत्म सुधार करने का अपने हृदय में दृढ निश्चय कर लिया।

उस समय सन् १९४२ मे श्रवणबेलगोला में श्री गोमटेश्वर भगवान का महामस्तकाभिषेक होने वाला था, इस महाभिषेक महोत्सव को देखने के लिये पूज्य १०८ श्री महावीरकीर्तिजी महाराज ससघ श्रवणबेलगोल पधारे थे। उस समय आपके भी भाव श्रवणबेलगोल जाने के हुये। तत्काल आप श्रवणबेलगोल पहुचे गोमटेश्वर भगवान का दर्शन मिला, अभिषेक देखा तथा श्री मुनि संघ के भी दर्शन किये। वहा प्रतिदिन पूज्य आचार्य श्री महावीरकीर्ति महाराज का प्रवचन होता था आप उसे बडे मनोयोग से प्रतिदिन सुनते। इस तरह श्रवणबेलगोल में जीवन में प्रथम बार आपको एक दिगम्बराचार्य के १० दिन तक लगातार प्रवचन सुनने का अवसर मिला इससे आपको बड़ी शांति मिली। इसके बाद आप अपने गांव लौट आये जहां किराने की दुकान कर गार्हस्थिक विधि का कार्य करने लगे। तभी से जहां जहां मुनि संघ का चातुर्मास होता वहां वहां पर आप जाते। मुनिराजों के प्रवचन सुनते ऐसा क्रम आपने बना लिया था।

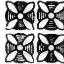
सन् १९६७ मे पुन: आप श्रवणबेलगोल महामस्तकाभिषेक देखने गये। इस समय यहां पर श्री पूज्य १०८ आचार्य देशभूषण महाराज का तथा श्री पूज्य आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज का संघ विराजमान था। उभय आचार्यों के वहां नित्य प्रवचन होते जिन्हें सुनकर आप आत्म विभोर हो

उठते थे । आपके हृदय में अंकुरित वैराग्य पल्लवित होने लगा । आप सोचने लगे ऐसा अवसर मुझे कब आयेगा जब मैं घर छोड़ वन को जाऊंगा—आत्म सुधार के मार्ग पर लगूंगा । जब आचार्य देशभूषण महाराज का चातुर्मास १९६७ में स्तवनिधि मे हुआ तो आप वहा पहुचे और आचार्य देशभूषणजी महाराज से निवेदन करने लगे हे स्वामी मैं आत्म सुधार हेतु इस परम पवित्र प्रव्रज्या को धारण करना चाहता हूं—अनुग्रह करें । तभी आचार्य श्री ने कहा कुछ दिन घर में धार्मिक ग्रन्थों का अभ्यास-मनन करो । आचार्य श्री के उक्त आदेश को आप स्वीकार कर घर लौट आये और विशेष रूप से जैन धर्म की प्राथमिक पुस्तकों को पढ़ने लगे व तत्व बोधक शास्त्रों का अभ्यास करने लगे । तीनों टाइम सामायिक का भी आप अभ्यास करने लगे । चातुर्मास पूरा होने पर ये संघ में गये और आचार्य देशभूषण महाराज से सघ में रहने की प्रार्थना की पर आपको उत्तर मिला । अभी आप कुछ दिन घर में रहें, हम स्वतः आपको उचित समय पर सघ में बुला लेंगे । इस तरह संघ दर्शन, साधु सेवा का आपका क्रम चलता रहा ।

सन् १९६८ मे आचार्य महावीरकीर्ति महाराज का ससघ चातुर्मास हुम्मच पद्मावती मे हुआ था । चतुर्मास के बाद सघ हुबली बेलगाव स्तवनिधि क्षेत्र निपाणी होते हुये सौदलगा गाव पहुंचा । तब आप स्वय गाँव के नर नारियों के साथ संघ को लेने पधारे, गाजे बाजे एव बडी प्रभावना के साथ सघ का अपने गाव कागनौली में प्रवेश कराया । प्रतिदिन आचार्य जी का प्रवचन होता था । बडी धर्म प्रभावना हुई । यहा संघ २० दिन ठहरा, यहा पर आपने प्रतिदिन आचार्य श्री के उपदेश को सुना और परिणामो को सुधारा । यहाँ से सघ विहार कर कुम्भोज बाहुबलि आदि स्थानों पर विहार करता हुआ कुंथलगिरि पहुचा एव महावीरकीर्तिजी महाराज ने इसी सिद्धक्षेत्र पर चातुर्मास किया ।

यह वही कुन्थलगिरि सिद्धक्षेत्र है जहा पर कुलभूषण देशभूषण मुनिराज ने भयकर उपसर्ग सहकर मुक्ति प्राप्त की थी । यह वही पावन क्षेत्र है जिस पर स्व० पू० आचार्य शांतिसागरजी महाराज ने जगत को चकित करने वाली ४० दिन की सल्लेखना धारण की थी । इसी सिद्धक्षेत्र पर पुन: आप श्री आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज के सघ में पहुचे आचार्य श्री के दर्शन किये तथा श्री १०८ मुनि श्री सन्मतिसागरजी महाराज को अपना दृढ़ निश्चय प्रकट कर दिया कि मुझे अब निश्चित ससार का त्याग करना ही है पर फिर भी इस सुयोग में कुछ कमी थी । जब पुनः आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज ने सन् १९६९ में गजपंथा मे चातुर्मास किया तब उनके समक्ष पहुंचे व दीक्षा लेने का दृढ निश्चय प्रकट किया । आचार्य श्री ने इसे स्वीकार कर लिया । तभी आपने घरवालों को इस महान निर्णय से सूचित कर दिया और दिनाक २०-१०-६९ को आपने आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज

के समक्ष सैकड़ों नर-नारियों के बीच क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली और उसके एक वर्ष बाद जब संघ का चातुर्मास मांगीतुंगी में हुआ तो आपने दिनांक १०-१०-१९७० शनिवार के दिन मुनि दीक्षा ग्रहण करली और आत्म कल्याण में प्रवृत्त हुये । आप परम शांत ज्ञान ध्यान तपोरक्त महान तपस्वी है । आपके चरणों में शत-शत प्रणाम ।



मुनिश्री सम्भवसागरजी महाराज



पूज्य महाराज श्री का जन्म ३ मई सन् १९४१ को शनिवार के दिन दक्षिण भारत के मैसूर प्रात में मगलोर जिले के वैन्दूर गाव में क्षत्रिय कुल मे हुआ । आपके पिता का नाम स्व० श्री वालैय्या होवलीदार एव माता का नाम श्रीमती पार्वती देवो है । जिनके पूर्वज अपनी क्षत्रियोचित वीरता के लिए प्रसिद्ध रहे है । होवलीदार की उपाधि उन्हे टीपू सुल्तान द्वारा प्राप्त हुई थी, जो अंग्रेजों के आक्रमण के समय [पूर्वजों को] इन क्षत्रियों के पराक्रम से अत्यन्त प्रभावित हुआ था । आपके अन्य पाच भ्राता एवं तीन बहिने है । सभी व्यापार एवं कृषि कार्य में सलग्न है ।

बाल्यावस्था मे ही आपने अपनी मातृभाषा कन्नड एवं हिन्दी, अग्रेजी, संस्कृत आदि कई भाषाओ का प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त कर लिया । धीरे धीरे आप युवावस्था में प्रवेश करने लगे, किन्तु आपका मन इस संसार के क्रियाकलापों के प्रति उदासीन रहने लगा और शीघ्र ही आपका चिन्तन-शील मन इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि संसार में सब जीव दु:खी रहते हैं तथा ये सभी सांसारिक सुख क्षणभंगुर हैं । गृह मे रहते हुए निराकुलता की प्राप्ति संभव नही है । इन्ही सब विचारों के चिंतन करने से आपका मन संसार से उचट गया । बस फिर क्या था वैराग्य की भावना लिए हुए आप २२

वर्ष की उस भरपूर युवावस्था (इस उम्र में सामान्यतया लोग विलासिता के बिस्तरों पर पड़े हुए मीठे सपनों में खोये रहते हैं) मे आप गृह त्याग कर मंदारगिरि पहाड (जिला तुमकूर) में पहुंचे। वहाँ उस समय एक क्षुल्लक पार्श्वकीर्तिजी विराजमान थे वही पर आप रहने लगे और उनसे तत्व चर्चा करने लगे। वेदान्त और जैन दर्शन पर वाद विवाद का परस्पर सिलसिला भी चलता रहता था। अंत में आप जैन दर्शन से इतने प्रभावित हुए कि आपने आजन्म (आजीवन) ब्रह्मचर्य रहने का व्रत ले लिया और आपका नया नामकरण "श्री चन्द्रकीर्ति" नाम से हुआ।

आपके मन में धीरे धीरे जैन धर्म के प्रति उत्कृष्ट श्रद्धा उत्पन्न हो गई। आप क्षु० पार्श्व-कीर्तिजी के साथ साथ विभिन्न जैन तीर्थ क्षेत्रों के दर्शन करते हुए महामस्तकाभिषेक के पुनीत अवसर पर श्रवण बेलगोला पहुंचे। जिस समय श्री बाहुबली स्वामी (गोमटेश्वर) का महामस्तकाभिषेक हो रहा था, उस समय वहां लाखो भक्त एवं अनेक मुनिगण उपस्थित थे। आचार्य शिरोमणि श्री १०८ आ० श्री महावीरकीर्तिजी महाराज के दर्शन करने का सौभाग्य भी आपको वही मिला। ज्ञान गरिमा से दीप्त, उत्कृष्ट साधना से परिपूर्ण ऐसे आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज से आप अत्यन्त प्रभावित हुए और असीम श्रद्धा से मस्तक झुकाकर आपने इनका शिष्यत्व स्वीकार कर मुनि दीक्षा के लिए विनम्र प्रार्थना की। आचार्य श्री ने अनेक प्रश्नोत्तर के बाद आप से दीक्षा के सम्बन्ध मे हुम्मच पद्मावती में होने वाले चातुर्मास के अवसर पर सपरिवार आने के लिए कहा। वैराग्य की उत्कृष्ट भावना लिए हुम्मच पद्मावती मे आप सपरिवार पहुचे। अनेकानेक प्रश्नोत्तर के बाद आचार्य श्री ने आपके पारिवारिकजनो से अनुमति लेकर दिनाक ६–७–६७ रविवार को पुष्य नक्षत्र एवं सिह लग्न मे आपको निर्ग्रन्थ मुनि दीक्षा दी। जिस समय आपने समस्त वस्त्रों का त्याग किया, उस समय आकाश भक्तजनों की तुमुल हर्षध्वनि से गु जित हो उठा। आपका मुनि नाम श्री संभवसागर रक्खा गया। २२ वर्ष की आयु में ब्रह्मचर्य व्रत एव २५ वर्ष की आयु में मुनि दीक्षा लेकर आपने सम्पूर्ण जैन जगत को ही नही अपितु समस्त देश वासियो को चमत्कृत कर दिया। विभिन्न स्थानों कुन्थलगिरि तीर्थ, गजपथा, मागीतुंगी, गिरनार आदि तीर्थ क्षेत्रो पर आपने आचार्य श्री गुरु के संघ के साथ चातुर्मास किया। गिरनारजी तीर्थ क्षेत्र पर आ० श्री महावीरकीर्तिजी महाराज पर वैष्णव बाबाओ द्वारा उपसर्ग किया गया जिसे आचार्य श्री ने समतापूर्वक सहन किया तथा अहिंसा एवं क्षमा के बल पर विरोधियो को झुकना पड़ा।

मुनिश्री का जीवन शीतल और स्वच्छ जलधारा की तरह निर्मल है। भव्य जीवो को वह यह बोध दे रहा है कि सयम और साधना के द्वारा बूंद भी समुद्र बन सकती है। एक बूंद का सागर

बनना संभव हुआ, इसीलिए तो इनका नाम संभवसागर है। प्रस्तुत मुनि श्री का संक्षिप्त जीवन परिचय सबको ज्ञान, ध्यान, संयम, तप, त्याग और वैराग्य की प्रेरणा दे रहा है।



मुनिश्री नमिसागरजी महाराज



आपका जन्म मजले ग्राम कोल्हापुर (महाराष्ट्र) मे हुवा था। आपके पिता का नाम यवगोडाजी तथा माताजी का नाम श्री लक्ष्मीबाई था। आपका पूर्व नाम सुरगोडा यवगोड़ा पाटिल था। आपने मराठी मे ७ वी तक शिक्षा प्राप्त की थी।

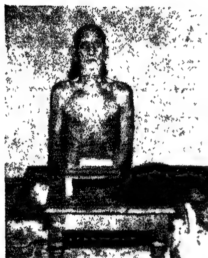
२८ वर्ष की उम्र में आचार्य महावीरकीर्तिजी से क्षुल्लक दीक्षा ओरंगाबाद में ली तथा १०-१०-१९७० में मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र पर आपने आचार्य श्री से मुनि दीक्षा ली।

दीक्षा लेने के पूर्व एवं पश्चात् निरन्तर चारों अनुयोगों का स्वाध्याय करना, चिन्तन करना ही आपका लक्ष्य रहा। अब तक आपने ५१ बार समयसार का स्वाध्याय किया है। आपने भगवती आराधना नामक ग्रन्थ को हस्त लिखित किया। आपके सदुपदेश से तमदलगे नामक स्थान पर मन्दिर का निर्माण कार्य चल रहा है। सं० १९८३ मे आपका चातुर्मास सामंती मे हुआ।

धन्य है आपकी तपस्या, त्याग जो निरन्तर ज्ञान ध्यान में लीन रहते है।



मुनिश्री आनन्दसागरजी महाराज



आप आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज द्वारा दीक्षित है । विशेष परिचय अप्राप्य है ।



क्षुल्लकश्री आदिसागरजी महाराज

श्री बापू साहब का जन्म मोगनोली नामक स्थान पर हुआ था । आपके पिता श्री देवगौड़ाजी पाटील थे एव माता मदनाकर थी । आप जाति से दिगम्बर जैन चतुर्थ थे । आपकी धार्मिक एव लौकिक शिक्षा साधारण ही रही । आपके एक भाई व एक बहिन है । आप आजीविका के लिए दुकानदारी करते थे । आपने आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी से गजपथाजी सिद्धक्षेत्र पर २० अक्टूम्बर को दीक्षा ले ली । आपने गजपंथाजी मे चातुर्मास भी किया ।



क्षुल्लकश्री नमिसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक नमिसागरजी का पूर्व नाम सुरगोड़ाजी था। आपका जन्म दिनांक १३-२-४१ को मदले (कोल्हापुर) में हुआ। आपके पिता श्री यवगोड़ाजी थे, जो नौकरी करते थे। आपकी माता का नाम लक्ष्मीबाई था। आप चतुर्थ जाति के भूषण हैं। आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा ७ वी तक हुई। धार्मिक शिक्षा बालबोध जैनधर्म चौथा भाग तक हुई। आप बाल ब्रह्मचारी हैं। आपके परिवार में पाच भाई व दो बहिनें हैं।

साधु-समागम व उनके धर्मोपदेश के श्रवण-मनन से आपके मानस में वैराग्य की भावना बढी। आपने दो फरवरी उन्नीस सौ उनहत्तर को औरंगाबाद में श्री १०८ आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपने एक से अधिक स्थानों पर चातुर्मास किये। धर्म और समाज की सेवा की।



क्षुल्लक श्री सम्भवसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक सम्भवसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम मागीलाल जैन था। आपका जन्म पचहत्तर वर्ष पहले मण्डलेश्वर में हुआ। आपके पिता श्री वीरासा जैन थे, जो नौकरी करते थे। आपकी माताजी का नाम कस्तूरीबाई था। आप पोरवाल जाति के भूषण हैं। आपकी लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा साधारण हुई। आप बाल ब्रह्मचारी हैं। अकेलेपन के कारण आप धर्म की दिशा में सहज ही बढ़ सके।

आपने विक्रम संवत २००८ में इन्दौर मे श्री १०८ आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपको भजन स्तुतियों पदो से बड़ा प्रेम है। आपने फुलेरा, भवानीगंज, औरंगाबाद गिरनारजी, इन्दौर, गजपन्थाजी, उज्जैन आदि नगरों में चातुर्मास किये। आप रविवार को कभी भी नमक नही लेते हैं।



क्षुल्लकश्री नेमिसागरजी महाराज

गिणोई जिला जयपुर (राजस्थान) में श्री सुवालालजी के यहा श्री किस्तूरचन्द ने जन्म लिया था । आपकी जाति खण्डेलवाल गोत्र गंगवाल थी । शिक्षा साधारण ही थी । सं० १९१६ में आ० महावीरकीर्तिजी से क्षुल्लक दीक्षा ली । आपके आ० क० चन्द्रसागरजी महाराज के प्रवचनों से प्रभावित होकर दीक्षा धारण करने के भाव हुए थे । झाबुआ व थादला मे सवत् २०१८ में पेचिस, बुखार व खून आदि की भयकर बीमारिया हुई तब आपने किसी भी प्रकार का इलाज नही कराया श्रावकों के अनेक आग्रह करने पर भी कोई उपचार नही कराया और सब रोगों को शाति पूर्वक सहन किया । धन्य है आपका जीवन जो आत्म साधना व स्वाध्याय रत रहकर आगे भी चारित्र बढ़ाने की भावना रखते है आगे आपने मुनि दीक्षा लेकर आत्म उत्थान किया ।



क्षुल्लकश्री चन्द्रसागरजी महाराज



उपादान में शक्ति तो है किन्तु निमित्त पाकर ही जाग्रत होती है । क्षुल्लक चन्द्रसागरजी म० (दीक्षा पूर्व) के वैराग्य में प्रमुख निमित्त कारण पारिवारिक घटना चक्र और गुरुदर्शन रहा है । अग्रवाल जैन परिवार में जन्मे मगलराम जैन मात्र अपनी जन्म-भूमि पहाड़ीग्राम (भरतपुर) की विभूति न रहकर समूचे श्रावक समुदाय की विभूति बन चुके हैं । सं० २००६ मे पू० आ० श्री महावीरकीर्तिजी म० से सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर संसार सुखों से जो मुख मोड़ा तो वह विराग की बढ़ती धारा स० २००७ में मल्हारगंज इन्दौर में क्षुल्लक दीक्षा के रूप में सामने आई । तभी से आप कठिन तपश्चर्या करते हुए अपनी आत्मा को शिवपथगामी बनाने में तत्पर हैं ।



क्षुल्लकश्री शीतलसागरजी महाराज



गोपीलाल और तुलसादेवी अग्रवाल दोनो को अच्छी तरह मालूम था कि उनकी संतान शादी से इंकार कर रही है। पर सरखडिया (राज०) मे हलचल तो तब मची जब लोगो ने सुना कि बद्रीलाल वैरागी हो गया। 'कारण' बद्रीलाल को कही से कुछ जुटाना नही पड़ा। उसकी किस्मत ने खुद उसे सम्मेदाचल के पादमूल में विराजमान गुरुवर आ० श्री महावीरकीर्तिजी म० के चरणों तक पहुचा दिया। पूज्य श्री ने आश्विन शु० ८ सन् १९५५ को जब दीक्षार्थी नवयुवक को उपकृत करने की स्वीकृति प्रदान की तब सुकुमार युवक के बाहों की मसे ठीक से भीगी भी न थी। जन्म और दीक्षाकाल में फासला मामूली सा था। वि० स० १९८९ आषाढ़ शु० ६ को इस पृथ्वी पर आख खोली और सन् ५५ मे दीक्षा। पर वैराग्य के लिये उमर कभी बन्धन कारक नही हुई। दीक्षार्थी की मुराद पूरी हुई। आचार्य श्री ने आपका नाम 'शीतलसागर' रखकर जिनधर्म की सेवा करने का आदेश दिया। शास्त्रों का गहन अध्ययन करके आपने सदुपदेश दृष्टान्त माला, भद्रबाहुचरित, गौतम चरित्र लिखे तथा आ० महावीरकीर्ति स्मृति ग्रंथ प्रकाशित करने की दिशा मे अग्रसर हैं। पाठशालाओं की स्थापना शिक्षण शिविर यत्र तत्र लगाते रहते हैं। अवागढ़ में आ० महावीर कीर्तिस्तम्भ तथा धर्मप्रचारणी संस्था की स्थापना करके श्रावकों का मार्गदर्शन किया। फिरोजाबाद जयपुर खानियां, नागौर, डेह, सुजानगढ, लाडनू, हिगोनिया, झाग, मौजमाबाद, सागानेर, चन्दलाई, निवाई, टोंक, बनेठा, नैनवा, अवागढ एटा मे चातुर्मास कर भव्यो को धर्मामृत पान कराया। पू० आ० श्री शिवसागरजी म० आ० श्री ज्ञानसागरजी महाराज, मुनि श्री पार्श्वसागरजी महाराज के साथ भी चातुर्मास करके आपने अपनी वैराग्य भावना को दृढ़ किया है।



आर्यिका श्रेयांसमतीजी

श्री १०५ आर्यिका श्रेयासमतीजी का गृहस्थ अवस्था का नाम शिवदेवी था। आपका जन्म राजकुमार गुडी में हुआ। आपके पिता का नाम श्री वर्द्धमान मुदालिया एवं माता का नाम श्रीमती गुणमती था। आप मुदालिया जाति की भूषण है। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण ही रही। आपका विवाह भी हुआ। जिससे आपको दो पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई। ३८ वर्ष की अवस्था में आपके पति का देहान्त हो गया।

शास्त्र पढ़ने से आप में वैराग्य वृत्ति जागृत हुई इसलिये आपने सन् १९५८ में श्री १०८ आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से नागौर में आर्यिका दीक्षा ले ली। आपकी वर्तमान में आयु ६४ वर्ष की है। आपने नागौर, अजमेर, पावागढ, बड़वानी, गजपन्था, कुन्थलगिरि आदि जगहो पर चातुर्मास किये। आपने लोगो को धर्म ज्ञान की बातें सिखाई।



आर्यिका वीरमती माताजी

उत्तरप्रान्त में गाजियाबाद के पास लोनी में आपने सेठ बसन्तीलालजी के यहां जन्म लिया। आपका पूर्व नाम जम्बूबाई था। आपकी इस समय उम्र ७५ वर्ष की हो रही है। आपने आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से दीक्षा ली। आप समाधि की साधना कर रही हैं।



आर्यिका शीलमती माताजी



पू० अम्मा का जन्म शिरसापुर जिला परभणी महाराष्ट्र में हुवा था। आप बाल ब्रह्मचारिणी है। आपका बाल्यकाल से धर्म कार्यों के प्रति रुझान रहा तथा संस्थाओं का संचालन किया। सं० २०१५ में उत्तरप्रदेश फिरोजाबाद में श्री आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली। धार्मिक भावना आपके अन्दर कूट-कूट कर भरी हुई है।

आपने अनेकों मन्दिरों मे जिन प्रतिमाएँ स्थापित की तथा सारी सम्पत्ति धार्मिक कार्यों मे ही लगाई। अब आप ६७ वे वर्ष मे प्रवेश कर रही है।



आर्यिका सुपार्श्वमती माताजी

१०५ श्री सुपार्श्वमती माताजी का जन्म बासवाडा मे हुआ। आपके पिता का नाम अजबलालजी व माता का नाम सिगारीबाई था तथा आपका जन्म नाम रूपारीबाई था। स्कूली शिक्षा कुछ भी प्राप्त न होने से कुछ भी स्वाध्याय वगैरह घर मे नही कर सके परन्तु अब आपने विमलसागरजी महाराज के पास कुछ अध्ययन किया तब से अपनी दैनिक क्रिया सुचारु रूप से करती हैं आपका उपदेश भी बागडी भाषा मे अच्छा होता है कुछ शास्त्र का ज्ञान भी हुआ है। आपने सप्तम प्रतिमा के व्रत प्रतापगढ़ में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में आ० श्री महावीरकीर्तिजी से लिये व्रत लेकर घर पर ज्यादा नहीं रहे परन्तु दोनों दम्पत्ति साथ में ही व्रती बने और दोनों ने साथ में ही रहकर चौका वगैरह का कार्य किया आपने फिर शिखरजी में विमलसागरजी महाराज से कार्तिक सुदी प्रतिपदा के दिन आ० दीक्षा ग्रहण कर ली और आपके पति ने भी गिरनारजी में फाल्गुन में अष्टाह्निका की चतुर्दशी को महावीरकीर्तिजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की और शिखरजी में विमलसागरजी से मुनि दीक्षा ग्रहण की। अभी डूंगरपुर में आप की समाधि हो गई। आपके गृहस्थ

अवस्था के तीन पुत्र और पुत्री हैं । आपका जीवन बडा ही सुचारु रूप से चलता था परन्तु मन वैराग्य की ओर बढ़ने लगा और अपने जीवन को संसार विच्छेद व स्त्री लिंग छेदन के उपाय में लगाया । अत. अब आप अपने चारित्र को दृढ़ता से पालन करते हुये जीवन व्यतीत कर रहे हैं । आपने दीक्षा लेकर शिखरजी खडगिरि उदयगिरि आदि की यात्रा भी करी आप अपने जीवन में प्रति धर्म कार्य को ही करते रहे और अपने पति को भी आप प्रेरणा देती रहीं कि संसार असार है । आपकी प्रेरणा सफल हुई जो आप तथा आपके पतिदेव दोनों ने दीक्षा लेकर अपना आत्म कल्याण का मार्ग अपनाया इसी मार्ग का अच्छी तरह पालन करते रहे यही हमारी हार्दिक भावना है ।



क्षुल्लिका आदिमतीजी

श्री १०५ क्षुल्लिका आदिमती का गृहस्थावस्था का नाम शशिकुमारी था । आपका जन्म राजमन्नारगुड़ी (मद्रास) मे हुआ । आपके पिता श्री का नाम वर्धमान है । माता पूर्णमतीजी है । आपकी लौकिक शिक्षा नाममात्र की कक्षा दूसरी तक हुई पर स्वभाव में चन्द्रमा सी शीतलता होने से आप दोनो कुलो मे सम्मान्य हुईं । आपके पति अपाड़मुदलिया वैदारवीया निवासी थे । जब वे ही नही रहे तब आपको घर भार लगने लगा ।

आपने भाईयो से अनुमति ली और नागौर में श्री १०८ आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से सन् १६५८ मे दीक्षा ले ली । आपने नागौर, अजमेर, कल्लोल, पावागढ़, मांगीतु गी, गजपन्था, कुन्थलगिरि आदि स्थानों पर चातुर्मास किये । धर्म प्राण जनता को अच्छी बाते सिखायी ।



क्षुल्लिका जिनमतीजी

आपके पिता श्री चन्द्रदुलजी एवं माता श्री दुरीबाई की पुत्री है । आपका गृहस्थावस्था का नाम मकुबाई था । जन्म सं० १६७३ स्थान पाड़वा सागवाडा (राजस्थान) जाति नरसिंहपुरा है । पहली प्रतिमा आचार्य १०८ महावीरकीर्तिजी, सातवी प्रतिमा मुनि वर्द्धमान सागरजी से ली थी । क्षुल्लिका दीक्षा २०२४ फागुन सुदी १२, स्थान पारसोला में ली थी । विवाह के छः महीने बाद वैधव्य हो गया । आपके दो भाई हैं । आप भी विदुषी तपस्विनी क्षुल्लिका हैं । आप स्वभाव से शान्त प्रकृति की है ।



क्षुल्लिका नेमिमतीजी

आपका जन्म फलटन (महाराष्ट्र) में बीसा हूमड गोत्रीय श्री बंडोबा की धर्मपत्नी श्रीमती सोनाबाई की कोख से हुआ । बचपन मे आपका नाम सोनाबाई था । आपका विवाह सूरत निवासी जरीवाला श्री गुलाबचन्दजी साकर चंदनास वालों के साथ सम्पन्न हुआ । आपकी शिक्षा मराठी भाषा में हुई । वैवाहिक जीवन में आदि पुराण का स्वाध्याय करते हुये आपको वैराग्य भाव उत्पन्न हो गये । परिणाम स्वरूप प्रतापगढ़ में आपने स्वर्गीय आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज सा० से ब्रह्मचर्य प्रतिमा धारण करली । पश्चात् स० २०१३ में नागौर में आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज से आपने क्षुल्लिका दीक्षा धारण की । तत्पश्चात् उदयपुर, तलोद, पावागढ़, ऊन, धरियावद आदि स्थानों पर चातुर्मास करते हुये आपने खूब धर्म प्रभावना की ।



क्षुल्लिका चन्द्रमतीजी

अलवर राजस्थान मे श्री केशरबाई का जन्म हुवा । आपके पिता श्री सरदारसिहजी थे तथा माताजी का नाम भूरीबाई था । बचपन से धर्म मे प्रवृत्ति थी । सदा पूजा पाठ सामायिक आदि किया करते थे । आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज के प्रभाव से आपने अपने जीवन को पवित्र बनाया तथा आचार्य श्री से व्रत धारण किए । आप गृहस्थ में रहकर श्राविकाओं को धर्मोपदेश दिया करती थी । वैराग्य भाव तीव्र हुए तथा सोनागिरजी की वंदना को गये वहाँ आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से आपने क्षुल्लिका दीक्षा ली तथा आपने अपने जीवन मे स्त्रियों को शिक्षा देकर उन्हे शिक्षित किया । आप बाल विधवा हैं आपका विवाह ८ वर्ष की उम्र मे हो गया था । हाथ की मेहदी भी नही उतर पाई थी कि वैधव्यता का पहाड़ सिर पर आ पड़ा उसी समय से आपने अपना जीवन सयम म व्यतीत किया ।



आचार्यश्री विमलसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित साधुवृन्द



आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज

आचार्य श्री सन्मतिसागरजी	मुनिश्री सुव्रतसागरजी
मुनिश्री वीरसागरजी	मुनिश्री अरहसागरजी
मुनिश्री अनन्तसागरजी	मुनिश्री सम्भवसागरजी

मुनि बाहुबलीसागरजी
मुनि भरतसागरजी
मुनि पार्श्वसागरजी
मुनि उदयसागरजी
मुनि मतिसागरजी
मुनि पुष्पदन्तजी
मुनिश्री भूतबलीजी
मुनिश्री सुधर्मसागरजी
मुनिश्री आनन्दसागरजी
मुनिश्री पार्श्वकीर्तिजी
मुनिश्री श्रवणसागरजी
मुनिश्री वर्धमानसागरजी
मुनिश्री समाधिसागरजी
मुनिश्री पार्श्वसागरजी
ऐलक चन्द्रसागरजी
ऐलक कीर्तिसागरजी
ऐलक विजयसागरजी
ऐलक वृषभसागरजी
क्षुल्लक अनेकांतसागरजी
क्षुल्लक मतिसागरजी
क्षुल्लक चन्द्रसागरजी
क्षुल्लक समतासागरजी
क्षुल्लक रतनसागरजी
क्षुल्लक नगसागरजी
क्षुल्लक उदयसागरजी
क्षुल्लक ज्ञानसागरजी
क्षुल्लक धर्मसागरजी
क्षुल्लक सिद्धान्तसागरजी
(जिनेन्द्रवर्णी)
क्षुल्लक प्रबोधसागरजी

क्षुल्लक विजयसागरजी
क्षुल्लक वृषभसागरजी
क्षुल्लक सुमतिसागरजी
क्षुल्लक शांतिसागरजी
क्षुल्लक नेमिसागरजी
क्षुल्लक आदिसागरजी
क्षुल्लक समाधिसागरजी
आर्यिका विजयमतीजी
आर्यिका गोम्मटमतीजी
आर्यिका आदिमतीजी
आर्यिका जिनमतीजी
आर्यिका नन्दामतीजी
आर्यिका नगमतीजी
आर्यिका स्याद्वादमतीजी
आर्यिका पार्श्वमतिजी
आर्यिका ब्रह्ममतीजी
आर्यिका निर्मलमतीजी
आर्यिका सूर्यमतीजी
आर्यिका शांतिमतीजी
आर्यिका सिद्धमतीजी
आर्यिका सरस्वतीमतीजी
क्षुल्लिका शांतिमतीजी
क्षुल्लिका सयममतीजी
क्षुल्लिका चेलनामतीजी
क्षुल्लिका पद्मश्रीजी
क्षुल्लिका विशुद्धमतीजी
क्षुल्लिका कीर्तिमतीजी
क्षुल्लिका श्रीमतीजी
क्षुल्लिका वीरमतीजी
क्षुल्लिका विमलमतीजी

आचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज



जीर्ण-शीर्ण मटमैला कागज मुट्ठी में भीचे जयमाला पडितजी की ड्योढी से बाहर निकली तो ज्योतिष से उसका सारा विश्वास जाता रहा । दो डब्बल पोथी-पत्तर पर दक्षिणा के रखने पडे इसका मलाल दिल में उसे कतई नही था । पर पुरखो को भी जो नसीब नही हुआ, कम से कम तीन पीढियों की बात तो उसे याद है, वही बात पडितजी उसके लाल को बतायें, गरहन की गिनती में जरूर कहीं गल्ती है .... बुदबुदाती सी बारम्बार हौले से अपना सिर मटकाती जाती । कानो मे रह-रहकर पडितजी के शब्द गू ज उठते, "अरी भागवान ! जा जा, शादी की बात पूछती है," अरे तेरा लाला तो महाराजा बनेगा, महाराजा ।" प्यारेलाल ने सुना तो वह भी अचरज मे आ गये । भला फफोतू (एटा) जैसा गाव और पडितजी की बात । वे दम्पति यह न समझ सके कि माघ शु० ६ स० १९९५ में जिस सतान ने उनके आगन को पवित्र किया है, वह मुरराजो को भी अलभ्य ऐसी जैनेश्वरी दीक्षा से विराग की धारा में संसार को डुबोता हुआ मुक्ति श्री का अधिपति बनने चल पड़ेगा । उन्हे इसका भी ध्यान नही रहा कि उन्होंने ही तो पंचपरमेष्ठी वाचक 'ओम' के साथ उसका नाम 'प्रकाश' रखा था । पडितजी की ग्रह गणना इसी की टीका थी ।

प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त होने के पश्चात् ओमप्रकाश ने छद, व्याकरण, ज्योतिष, आगम-शास्त्र, साहित्य का गहरा अध्ययन किया । फलत· विवेक चक्षु खुल गये । स० २०१८ में पूज्यपाद आ० श्री महावीरकीर्तिजी म० से मेरठ की पुण्यभूमि मे "ब्रह्म" बनने की चाह से ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया और एक मास बाद क्षुल्लक दीक्षा लेकर धर्म नौका पर सवार हो गये । निरन्तर गुरु सेवा और शास्त्र स्वाध्याय करते हुए आपने शाश्वत तीर्थ राज सम्मेदशिखर के पादमूल में आ० श्री विमलसागरजी म० से शेष परिग्रह हरण की प्रार्थना की । शिष्य की योग्यता और भावों की विशुद्धि देखकर आचार्य श्री ने स० २०१९ कार्तिक शु० १२ को निर्ग्रन्थ पद देकर "सन्मति सागर" नाम दिया तथा कर्मबेडियों को चटकाने का आदेश दिया । आपने गुरु आज्ञा स्वीकार कर घोर तपश्चरण

करके जिनधर्म की सतत् प्रभावना की । कालान्तर में आप आ० श्री महावीरकीर्तिजी म० के संघ में प्रविष्ट हो गये । आचार्य श्री ने मेहसाना मे माघ कृ० पचमी २०२८ को आचार्य पद पर आसीन किया ।

प्रभावना :

आपने निरन्तर महाव्रत की निरतिचार चर्या का पालन करते हुए सम्पूर्ण भारत में भ्रमण करके भव्यों को संबोधा । बाकल [जबलपुर] मे घोर कायोत्सर्ग तप करके अजैन जनता को भी इतना प्रभावित किया कि हजारो स्त्री-पुरुषों ने जैन धर्म की महत्ता को स्वीकार कर अणुव्रत ग्रहण कर देव दर्शन की प्रतिज्ञा ली । श्राविका श्रीमती प्यारीबाई जैन के गृह में निरन्तराय आहार होते ही दो भव्यों को प्रतिबोध प्राप्त हो गया और उन्होंने उसी दिन क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर ली । आचार्य ने ठीक ही कहा है—कि द्रव्य में योग्यता होने पर भी निमित्त की जरूरत होती है ।

निमित्त मान्तर तत्र योग्यता वस्तुनि स्थिता ।
बहिर्निश्चय कालस्तु निश्चितस्तत्व दर्शिभिः ।।

विधान और प्रतिष्ठा कराने के लिये आप सतत प्रयत्नशील रहते हैं ।

चातुर्मास :

बाराबंकी, बड़वानी, मांगीतुंगी, श्रवणबेलगोल, हूमच, कुंथलगिरि, गजपंथा, दुर्ग (म० प्र०) आदि में चातुर्मास करके रत्नत्रय की आराधना की । आपकी विद्वत्ता और तपश्चर्या से प्रभावित होकर समाज ने सम्मेदगिरि में चारित्रनायक, इटावा मे अध्यात्म योगी सम्राट, जबलपुर में चारित्र चक्रवर्ती की उपाधियों से आपके गुणों की स्तुति की ।

तपश्चर्या :

आगम सम्मत "तप" तपते हुए इस काल में महाव्रतियों की चर्या को उजागर करते रहते हैं । खारा, मीठा, स्निग्ध, दही, समस्त मसाले, अनाज, तिलहन आदि का आजन्म त्याग है । इटावा में कड़ाके की धूप में एक पहर तक खड़े रहे, जिसे देखकर जनता आश्चर्यचकित हो गई ।

संघ विस्तार :

आपके चरण युगलों में तेरह भव्यात्माओं ने आश्रय लेकर अपने कर्मास्त्रवों के आवेग को रोका है—

मुनिश्री शीतलसागरजी, मुनिश्री पार्श्वसागरजी, मुनिश्री ऋषभसागरजी, मुनिश्री महेन्द्रसागरजी, मुनिश्री आनंदसागरजी, मुनिश्री पद्मसागरजी, मुनिश्री हेमसागरजी, क्षु० श्री रविसागरजी, क्षु० श्री मानसागरजी, क्षु० श्री पूर्णसागरजी, आर्यिका नेमामतीजी, वीरमतीजी, क्षु० निर्मलमतीजी ।

आप श्री ने सम्यक्त्व की भावना से परिपुष्ट सघ के साथ श्रावकों को धर्मामृत पान कराया । निर्मल रत्नत्रय का मार्ग भव्यो को दिखाते हुए धर्म की ज्योति जगाने का आप जैसा साहस विरले ही साधकों में पाया जाता है ।

सुलभाधर्म वक्तारो यथा पुस्तक वाचकः ।
ये कुर्वन्ति स्वय धर्म विरलास्ते महीतले ।।



मुनिश्री वीरसागरजी महाराज

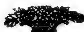
श्री १०८ मुनि वीरसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम मोहनलालजी था । आपका जन्म कार्तिक सुदी दशमी, विक्रम सवत् १६५१ को आज से ८० वर्ष पूर्व कटेरा झासी उत्तरप्रदेश में हुआ । आपके पिता का नाम श्री मिश्रीमलजी था, जो घी का व्यापार किया करते थे । आपकी माता श्रीमती रूपाबाईजी थी आप गोलालारी जाति के भूषण हैं । आपकी लौकिक शिक्षा एवं धार्मिक शिक्षा साधारण ही हुई । आप बाल ब्रह्मचारी रहे । आपके पांच भाई और तीन बहिने थी ।

सत्संगति एवं उपदेशश्रवण से आपमें वैराग्य भावना जागृत हुई एवं आपने विक्रम सवत् २०२१ मे बडवानी में मुनि दीक्षा ले ली । आपने बड़वानी, कोल्हापुर, सोलापुर, ईडर, सुजानगढ़ आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्मवृद्धि की । आपने नमक, घी, तेल, दही का त्याग कर रखा है ।



मुनिश्री अनन्तसागरजी महाराज

आप पिता श्री हीरालालजी एवं माता श्री मेनकाबाई के पुत्र हैं। गृहस्थावस्था का नाम नेमचन्द्रजी था। जन्म सं० १९६० में पुनहरा (ऐटा) में हुआ। जाति पद्मावती पुरवाल थी। आपने शादी नही की। बाल ब्रह्मचारी रहे। क्षुल्लक दीक्षा, सं० २०२१ कोल्हापुर मे विजयसागर के नाम से, ऐलक दीक्षा कार्तिक सुदी ५, स० २०२६ दिल्ली मे एवं मुनि दीक्षा फाल्गुन स० २०२७ को सम्मेदशिखर पर श्री अनंतसागरजी के नाम से पूज्य आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से ली। ये ध्यान, अध्ययन, जप-तप मे हमेशा लीन रहते हैं।



मुनिश्री सुव्रतसागरजी महाराज



आप श्री सूरजपालजी एवं माता श्री सूर्यदेवी के पुत्र है। जन्म स्थान भिंड (ग्वालियर), जन्म सं० १९७३ व जाति गोलसिंघारे है। आपका गृहस्थावस्था का नाम श्री पन्नालालजी है। मुरैना विद्यालय से न्यायतीर्थ की परीक्षा पास की। इन्होंने दूसरी प्रतिमा स० २०१०, चौथी प्रतिमा सं० २०१८, सातवी प्रतिमा सं० २०२० में ली। क्षुल्लक दीक्षा सं० २०२४ आसोज सुदी १० को ईडर में पूज्य श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी से ली और नाम श्री प्रबोधसागरजी रखा गया। आप बराबर तप में रत रहते हैं तथा व्याख्यान देने में बड़े पटु है। राजगृही में ही अनन्त चतुर्दशी तारीख ४-९-७१ को मुनि दीक्षा ली।



मुनिश्री अरहसागरजी महाराज



आप पिता श्री रज्जूलालजी एव माता श्री मांडया-देवी के पुत्र रत्न है । आपका जन्म सं० १९७२ में परवार जाति मे टीकमगढ़ में हुआ था । आपके दो भाई हैं । आपका गृहस्थावस्था का नाम लखमीचन्द था । आपने दूसरी प्रतिमा आ० विमलसागरजी से तथा सातवीं प्रतिमा आ० श्री महावीरकीर्तिजी से चम्पापुर में ली । क्षुल्लक दीक्षा स० २०१५ मे श्री सम्मेदशिखरजी मे तथा मुनि दीक्षा सं० २०१८ में अगहन बदी ११ को बड़ौत में आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी से ली । आप बाल ब्रह्मचारी हैं तथा अहर्निश जप, तप, ध्यान में लीन रहते हैं ।



मुनिश्री बाहुबलिसागरजी महाराज

आपका जन्म थिड़ावा जि० झालरापाटन निवासी श्री भवरीलालजी एवं माता श्री ताराबाई के घर स० १९९० में हुआ था । आप जैसवाल जाति के रत्न हैं तथा आपका गृहस्थावस्था का नाम गिरवरसिह था । आपने सातवी प्रतिमा सं० २०१९ में कम्पिलाजी क्षेत्र पर तथा क्षुल्लक दीक्षा सं० २०२१ मे मुक्तागिरीजी क्षेत्र पर ली । श्री सम्मेदशिखरजी में सं० २०२९ कार्तिक सुदी १ सोमवार ३-११-७२ वीर नि० सं० २४९९ को आचार्य श्री विमलसागरजी से आपने निर्ग्रन्थ दीक्षा धारण की तथा मुनि श्री बाहुबलि सागरजी नामकरण हुआ । आप संघ के शान्त, तपस्वी साधु है एव बाल ब्रह्मचारी है ।



मुनिश्री सम्भवसागरजी महाराज



आपका जन्म रेमजा (आगरा) निवासी श्री पन्नालालजी एवं माता श्री दुर्गाबाईजी जाति पद्मावती पोरवाल के घर में श्रावण शुक्ला ३ रविवार सं० १६४६ में हुआ। आपने ब्र० शातिकुमार के नाम से मिर्जापुर में ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया। कामा भरतपुर में माघ शुक्ला १३ स० २०१५ को क्षु० दीक्षा ग्रहण की तथा श्री आदिसागरजी के नाम से विख्यात हुए। श्री सम्मेदशिखरजी मे कार्तिक शुक्ला १२ सं० २०१६ को आचार्य श्री विमलसागरजी से मुनि दीक्षा ग्रहण की और श्री सम्भवसागरजी का नाम धारण किया। आप आचार्य श्री के गृहस्थावस्था के बुआ के लड़के हैं तथा बाल ब्रह्मचारी है, आप संघ के वयोवृद्ध शान्त परिणामी तपस्वी साधु हैं।

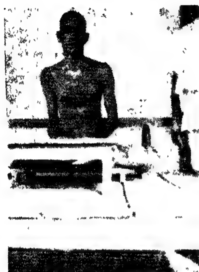


मुनिश्री भरतसागरजी महाराज

आप पिता श्री किशनलालजी एवं माता श्री गुलाबबाईजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० २००६ चैत्र शुक्ला ९ गुरूवार को पु० नक्षत्र में हुआ। आपका जन्म स्थान जोहरिया (बांसवाड़ा) है। आप दशा नरसिहपुरा जाति के हैं। दूसरी प्रतिमा चैत्र शुक्ला २ सं० २०२५ मे भवानीमन्डी में ली तथा क्षुल्लक दीक्षा स० २०२५ जेठ बदी ४ को अजमेर में ली। श्री सम्मेदशिखरजी में सं० २०२६ कार्तिक शुक्ला १ सोमवार दिनाक ३-११-७२ वीर सं० २४६६ मे आचार्य श्री विमलसागरजी से मुनि दीक्षा ग्रहण की। आप गृहस्थावस्था में तीन भाई और एक बहन हैं। लौकिक अध्ययन मैट्रिक तक किया है। आप बाल ब्रह्मचारी तथा संघ के सबसे कम उम्र के साधु है। आप बराबर अध्ययन, ध्यान तथा मौन मे लीन रहते हैं।



मुनिश्री पार्श्वसागरजी महाराज



आपका जन्म ग्राम समोना जिला आगरा में सम्वत् १६८५ मे हुआ। आपके पिताजी का नाम श्री दातारामजी एवं माताजी का नाम चन्दनबाला था। आप ५ भाई व ३ बहिने है। आपने पाचवी कक्षा तक श्री कुन्दकुन्द दिगम्बर जैन विद्यालय राजाखेड़ा में विद्या अध्ययन किया। उसके बाद रत्नकरण्ड श्रावकाचार आदि धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन किया। आप गृहस्थ अवस्था में प्रतिदिन पूजन करते थे। आपके माता पिता का स्वर्गवास आपकी छोटी आयु के समय ही हो गया था। इस कारण ससार की असारता को देखकर आपको वैराग्य उत्पन्न हुआ। आपने १७ साल पहले मथुरा में आचार्य श्री विमल-सागरजी महाराज से दूसरी प्रतिमा धारण की। उसके थोडे दिन बाद सोनागिरजी मे ७ वी प्रतिमा भी श्री विमलसागरजी महाराज से ली। सम्वत् २०२१ मे बड़वानी मे आचार्य श्री विमलसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली। सम्वत् २०२२ मे मागीतुंगीजी मे आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा ली। और श्री पार्श्वसागरजी महाराज नाम पाया। मुनि दीक्षा के बाद नांदगांव मे आप पर बिजली का प्रहार हुआ। जिससे आपके दिमाग व आख मे कमजोरी आ गई। आप बाल ब्रह्मचारी हैं। धार्मिक भजन व कविता खुद बनाकर सुनाते है।



मुनिश्री उदयसागरजी महाराज

आपका जन्म जिला उदयपुर (राजस्थान) के एक छोटे से ग्राम बड़ा बाढेड़ा मे सम्वत् १९७८ में नरसिंह पुरा जाति के श्री खेमराजजी के यहा हुआ। आपकी माताजी का नाम भूरीबाई था। आपका गृहस्थावस्था का नाम मगनलाल है। आपका पूरा परिवार धार्मिक प्रवृत्ति का था। आपका विवाह सं० २००० में ग्राम कुरावड के नरसिंह पुरा जानि के श्री मारूलालजी की सुपुत्री कमलाबाई के साथ हुआ। आपके ८ पुत्र-पुत्रियां उत्पन्न हुए परन्तु भाग्योदय से उनमे से केवल एक पुत्र ही जिन्दा रहा जिसका नाम महावीर है आपका गृहस्थावस्था का अधिकाश समय जैन मुनियो के बीच एव तीर्थ वन्दना में ही व्यतीत हुआ। आपकी रुचि जैन धर्म के प्रति शुरु से ही अधिक रही है। आपने ब्रह्मचर्य व्रत स० २०२९ मे आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज से सिद्ध क्षेत्र पावागढ़ में लिया। ७ वी प्रतिमा आपने आचार्य श्री १०८ सन्मतिसागरजी से ली। आपने मुनि दीक्षा आचार्य श्री १०८ सन्मतिसागरजी से ग्वालियर में जेष्ठ सुदी ८ स० २०३५ मे ली तभी से आप मुनि उदय सागरजी के नाम से जाने जाते है। आप अपना अधिक समय धर्म ध्यान एवं अध्ययन में व्यतीत करते है।

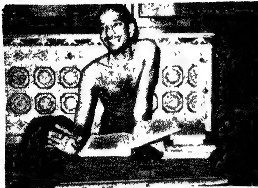


मुनिश्री मतिसागरजी महाराज

आपका जन्म स० १९७६ में पौषवदी १४ शनिवार को पिता श्री इन्दरलालजी एवं माता श्री भूरीबाई की उज्ज्वल कोख से ग्राम सागौनी कला जिला दमोह (म० प्र०) पोस्ट तेजगढ मे हुआ। गृहस्थावस्था का नाम श्री छोटेलालजी था। आप परवार जाति में गोहिल्ल गौत्र नगाडिम मूरो हैं। आपकी स० १९९६ मे शादी हुई और ६ सताने हुई। तत्पश्चात् आपने गृहस्थाश्रम से उदासीन हो वैराग्य की ओर अग्रसर होकर ७ वी प्रतिमा मुनि श्री पुष्पदन्तसागरजी से ग्रहण की। क्षु० दीक्षा सम्मेदशिखरजी में फाल्गुन शु० १५ सं० २०३३ को एवं मुनि दीक्षा अयोध्या में आचार्य विमलसागरजी महाराज से ग्रहण की। नाम करण श्री मतिसागरजी हुआ आप सरल एवं शान्त स्वभावी है।



मुनिश्री पुष्पवंतजी महाराज



महाराष्ट्र राज्य के भंडारा जिले के गोन्दिया नगर में आपका जन्म श्री कोमलचन्दजी के घर मे १ जनवरी १९५२ को हुआ। इनका गृहस्थ अवस्था का नाम सुशीलकुमार था। इनकी सम्पूर्ण शिक्षा छतरपुर (म० प्र०) में हुई। इन्होने रींवा विश्वविद्यालय से बी० एस० सी० किया। आप पढ़ने मे बहुत तेज थे एवं कॉलेज मे राजनैतिक क्षेत्र मे भी अग्रणी रोल अदा करते थे। इनकी इच्छा आगे एम० कॉम० व एल० एल० बी० करने की थी। आप विद्यार्थी जीवन में घोर अनास्थावादी रहे। धर्म व धार्मिक कार्यों में अरुचि आपके माता-पिता को काफी कष्ट देती थी। किन्तु एक पारिवारिक घटना ने आपके जीवन का नक्शा ही बदल दिया। संयोग मे इसी समय आप युवाचार्य श्री विद्यासागरजी के सम्पर्क में आये। आचार्य श्री के जादुई व्यक्तित्व से प्रभावित होकर आपने सन् १९७८ मे आचार्यश्री से ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया।

अब आप आचार्य श्री के चरणो मे बैठकर जिनवाणी का अवगाहन करने लगे। आचार्य श्री ने इनकी ज्ञान गरिमा, तप, निष्ठा एव कठोर साधना को देखकर इन्हें २ नवम्बर १९७८ को नैनागिरि तीर्थ क्षेत्र में क्षुल्लक दीक्षा दी एव शील सागर नाम रखा। १४ नवम्बर १९८० को आचार्य श्री से ऐलक दीक्षा ग्रहण की।

मन मे मुनि दीक्षा की तीव्रतम इच्छा सजोये अपनी छटपटाती आत्मा के साथ आचार्य श्री की आज्ञा से २१ जनवरी १९८० को ललितपुर की तरफ विहार किया।

बालवेट अतिशय क्षेत्र ललितपुर मे आचार्य श्री विमलसागरजी ने इनकी साधना, चारित्र एवं अगाध ज्ञान को देखते हुए इन्हे ३१ जनवरी १९८० को माघ शुक्ला पूर्णमासी के दिन गुरुवार को मुनि दीक्षा दी।

आचार्य श्री ने इनके उत्कृष्ट ज्ञान, उत्तम तार्किक बुद्धि, मुखरित वाणी, युवा हृदय, कठोर साधना एवं अनूठी श्रद्धा को देखते हुए इन्हें स्वपर कल्याण हेतु विहार की आज्ञा दी।



मुनिश्री भूतबलीजी महाराज



श्री भूतबलीजी महाराज का जन्म कर्नाटक राज्य के बेलगाम जिले के सहूदी ग्राम में ४ अप्रेल १९४४ मे हुआ। उनका नाम भीमसेन जुंजाड़कर रखा गया। वे चार बहनों के बीच अपने पिता के इकलौते लाड़ले पुत्र थे। साधारण शिक्षा प्राप्त करके खेती-बाड़ी करने मे लग गए। प्रारम्भ में आपको देव-दर्शन करने जाने से भी चिढ़ थी किन्तु एक बार इनके कुछ दोस्त इन्हें धोखे से १०८ श्री महाबल महाराज के पास दर्शन हेतु ले गए। वहाँ पर इन्हें परम शाति प्राप्त हुई। अब आप नियम से महाराज श्री की वैयावृत्ति करने जाने लगे। एक दिन महाराज श्री ने भीमसेन को समझाया कि "प्रत्येक माता-पिता अपने पुत्रों को स्वार्थ से प्यार करते हैं। यदि विश्वास न हो तो आज ही घर जाकर परीक्षा कर सकते हो। तुम घर जाकर अपने माता-पिता का काम नही करना और न ही खेत पर काम करने जाना, उसके बदले घर मे ही धर्म-ध्यान करना।" भीमसेन ने महाराज श्री की आज्ञा के अनुरूप आचरण किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि इनकी घर में बहुत पिटाई की गई। बस यही से भीमसेन के जीवन मे अद्भुत परिवर्तन आ गया। एक तरफ इनके माता-पिता घर में बहु लाने का स्वप्न देख रहे थे और भीमसेन ने अपने मन में कुछ और ही सोच रखा था। उन्होंने विवाह को टालने के उद्देश्य मे महाराज श्री के पास दो वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया। वे वैराग्य की ओर कदम बढ़ाने लगे।

सन् १९७३ में वे, चारित्र के अनूठे सयोजक, माँ शारदा के अनुपम पुत्र, युवाचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज की दर्शनाभिलाषा से अजमेर पहुचे। आचार्य श्री के व्यक्तित्व से अत्यधिक प्रभावित होकर इन्होंने आजन्म ब्रह्मचर्य का व्रत ग्रहण किया। समय व्यतीत होता गया एवं वे आचार्य श्री के सानिध्य में शनै: शनैः अपनी वैराग्य भावना को पुष्ठ करते रहे।

सन् १९७६ में पुनीत अष्टाह्निका पर्व पर आचार्य श्री ने इन्हे क्षुल्लक दीक्षा एवं उसी वर्ष ८ माह पश्चात् इनके कठोर तप, निष्ठा एवं वैराग्य साधना को देखकर ऐलक दीक्षा दी। ४ वर्षों

तक अपने को इस अवस्था में पूर्ण परिपक्व कर जनवरी १९८० को विहार कर संघ से निकल गए।

विहार करते हुए "बालावेहट" अतिशय क्षेत्र ललितपुर पहुंचे जहाँ आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज का सघ विराजमान था। वे दर्शन की अभिलाषा से आचार्य श्री के पास पहुँचे। आचार्य श्री ने इन्हे आशीर्वाद देते हुए कहा कि वे बेकार ही ऐलक अवस्था का विकल्प लिये क्यों जा रहे हैं? इनके दिल मे तो तीव्र वैराग्य की भावना थी एव वे भी इसी क्षण का इन्तजार कर रहे थे।

३१ जनवरी ८० को माघ शुक्ल पूर्णमासी के दिन गुरुवार को आचार्य श्री ने इनके कठोर चारित्र व साधना को देखते हुए मुनि दीक्षा दी।

मुनि दीक्षा के उपरात गुरू की आज्ञा से धर्म प्रचार हेतु नव दीक्षित साथी मुनि श्री पुष्पदन्तजी के साथ धर्म प्रभावना पैदा करते हुए मध्यप्रदेश के छिन्दवाड़ा शहर मे पधारे एव जहाँ इनका मुनि अवस्था मे प्रथम वर्षा योग साधना बड़े ही प्रभावोत्पादक ढग से हुई। वे अपने सौम्य स्वभाव, गम्भीरता एव कडी तपस्या से जन-जन का हृदय जीत धर्म-प्रभावना पैदा कर रहे है।



मुनिश्री सुधर्मसागरजी महाराज



मुनि श्री सुधर्मसागरजी का जन्म तमिलनाडू प्रान्तर्गत निरूपणपुर ग्राम में सन् १९३० ई० मे हुवा था। आपके पिता का नाम श्री वज्रबाहु तथा माता का नाम रुक्मिणीदेवी था। माता-पिता अत्यन्त सात्विक प्रवृत्ति के थे। बाल्यकाल में आपका नाम पार्श्वनाथ रखा गया। जिन धर्म पर विशेष श्रद्धा होने के कारण आपके पिता ने मुनि दीक्षा धारण की, जिसका प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से आपके जीवन पर पडा और आपने धर्म साधन तथा संयम को ही अपने जीवन का आधार बना लिया। सन् १९६६ में सोलापुर मे आपने आ० विमलसागरजी से निर्ग्रन्थ जैनेन्द्री दीक्षा धारण की। आप एकान्तप्रिय और अधिकतर मौन में समय व्यतीत करते थे।

अनेक तीर्थों की यात्रा करते हुए आप पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव पर पोदनपुर बम्बई आए । शरीर में निर्बलता दिखी तो आपके सल्लेखना धारण करने के भाव हुए । तथा गजपन्था सिद्ध क्षेत्र पर सात माह तक लगातार क्षेत्र की वंदना की, श्रावण शुक्ला १५ दिनाक १३ अगस्त १९७३ को रक्षा बन्धन पर्व के पावन अवसर पर दूध पानी का संकल्प लेकर आपने सल्लेखना व्रत धारण किया । भाद्रप्रद प्रतिपदा को दूध का भी परित्याग कर दिया । दिनांक ९ सितम्बर १९७३ को अन्तिम बार पानी ग्रहण कर आपने यम सल्लेखना धारण कर ली । समाधि अवस्था में शान्तिपूर्वक विमोह वृत्ति से २४ सितम्बर ७३ को आपने इस नश्वर शरीर का त्याग किया ।

निःसन्देह महाराज श्री रत्नत्रय के तेज से सुशोभित एक महान आदर्श सत्पुरुष, निस्पृह तपस्वी एवं निर्मोही साधु पुरुष थे । ऐसे ही महान पुन्यशाली आदर्श वीतराग साधु पुरुषों से भारत वसुन्धरा की गरिमा बढती है ।



मुनिश्री आनन्दसागरजी महाराज

आपका जन्म वि० स० १९६२ पोष बदी तीज को नौगावाँ जि० बांसवाड़ा राजस्थान में हुवा था । आपके पिता का नाम श्री खेमराजजी हुम्मड तथा माता का नाम कस्तूरीबाई था । आपका पूर्व नाम श्री माणिकलालजी जैन था । लौकिक शिक्षा ५ वी तक ही रही । आपके बचपन के संस्कार उत्तम थे जिससे आप प्रतिदिन देवपूजा आहारदान आदि किया करते थे ।

साधुओं के प्रवचनों से प्रभावित होकर आपने वि० सं० २०२८ आषाढ बदी दूज को आचार्य महावीरकीर्तिजी से क्षुल्लक दीक्षा ली तथा वि० स० २०२९ में तीर्थराज सम्मेदशिखर मधुबन में आचार्य विमलसागरजी से मुनिदीक्षा ली । आपके द्वारा समाज मे काफी धर्म प्रभावना होती रही ।



मुनिश्री पार्श्वकीर्तिजी महाराज

आपका जन्म जिला बासवाड़ा तहसील गरी के लोहारिया गांव जाति नरसिंहपुरा में मातेश्वरी कुरीदेवी की कूख से सवत् १९७६ मे हुआ । आपका नाम जवेरचन्दजी व पिताजी का नाम दाड़मचन्दजी था । आपकी माताजी भद्र परिणामी व दयालु थी । व्रत उपवास करती थी आपकी माताजी में एक यह विशेषता थी कि प्रत्येक सन्तान की उत्पत्ति के समय उपवास रखती थी । आपके पिताजी गांव के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे । आपने १५ साल की अवस्था मे व्यापार करना शुरू कर दिया था । आपकी धर्म पत्नी का नाम श्रीमती अमृतबाई है । आपकी इच्छा शुरू से ही दीक्षा लेने की थी । आपने ३८ साल की अवस्था में मुनि श्री नेमिसागरजी महाराज बम्बई वालों से ब्रह्मचर्य व्रत लिया । सवत् २०३१ ता० २३–२–७५ को श्री सम्मेदशिखरजी में आचार्य श्री विमलसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली । उसके बाद घाटोल मे श्री १०८ धर्मसागरजी के शिष्य दयासागरजी से ऐलक दीक्षा ली । आपकी यह इच्छा थी कि मैं मुनि दीक्षा आचार्य श्री विमलसागरजी के द्वारा सोनागिरजी मे लूं । इस भाव के कारण आप ८ माह मे पन्द्रह सौ मील चलकर आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज के चरणों में सोनागिरी आये । यहा आकर आपने आचार्य श्री से सवत् २०३६ श्रावण सुदी ९ को चन्द्र-प्रभु प्रागण मे मुनि दीक्षा ली । तब से आपको मुनि पार्श्वकीर्तिजी के नाम से सम्बोधित किया जाने लगा ।



मुनिश्री श्रवणसागरजी महाराज

आपका जन्म सन् १९४८ मे नरसिहपुरा जाति मे प्रतापगढ़ में हुवा था । आपका विवाह भी हुआ था । आपके दो पुत्र १ पुत्री भी था । पत्नी, पुत्र, पुत्री सभी का स्वर्गवास हो गया । ससार की ऐसी स्थिति को जानकर आपके मन में वैराग्य आया फलस्वरूप आचार्य विमलसागरजी से मुनि दीक्षा लेकर आत्म साधना रत है ।



मुनिश्री वर्धमानसागरजी महाराज

आपका जन्म ई० सन् १९१४ में खडी ग्राम जिला अहमदनगर महाराष्ट्र में हुवा। गृहस्थावस्था का नाम चन्द्रकान्तजी था। आपने मुनि श्री ऋषभसागरजी से सातवी प्रतिमा के व्रत ग्रहण किए। मुनि दीक्षा ई० सन् १९८१ में आ० विमलसागरजी से ली। आप शान्त स्वभावी, सदैव आत्मकल्याण हेतु धर्मध्यान में लगे रहते हैं।



मुनिश्री समाधिसागरजी महाराज

श्री परमपूज्य १०८ दिगम्बर मुनिराज श्री समाधिसागरजी महाराज का जन्म वि० स० १९५२ वैशाख सुदी ३ दाहोद (गुजरात) में दशा हुमड़ जातीय श्री जयचन्द्र गांधी के घर हुआ था। आपकी माताजी का नाम जीवीबाई था, आपका बचपन का नाम श्री सूरजमल था। माता श्री का स्वर्गवास तब हुआ जब आपकी उम्र सिर्फ एक मास की थी। आपने दाहोद के विद्यालयो में ही गुजारती तथा हिन्दी का अभ्यास इन्दौर, ईसरी आश्रम व बडवानो मे किया।

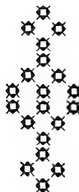
आपका विवाह दाहोद निवासी सर्राफ सुन्दरजी की सुपुत्री मोतीबाई के साथ हुआ। आपके तीन पुत्र तथा चार पुत्रियाँ है आपकी धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा प्रारंभ से ही थी। इसी का परिणाम है कि आपने अपने गृहस्थ जीवन में ही दाहोद में दो मंदिरजी का निर्माण कराकर पंच कल्याणक प्रतिष्ठा कराई तथा छात्रावास की स्थापना की और निवास मे महावीर चैत्यालय बनवाया था।

आपने पच्चीस वर्ष तक पुराने मदिरजी तथा पाठशाला का बहीवट निःस्वार्थ सेवाभाव से चलाया आप छः वर्ष तक दाहोद नगरपालिका तथा तीन वर्ष तक स्कूल बोर्ड के और नागरिक बेंक के सदस्य रहे। आपका कपड़े का व्यापार था। आपने अपने गृहस्थ जीवन में विभिन्न कार्यों के लिये लगभग दस हजार का दान किया। आपने तीर्थराज श्री सम्मेदशिखरजी की आठ बार तथा अन्य सभी तीर्थों की यात्राएं की है।

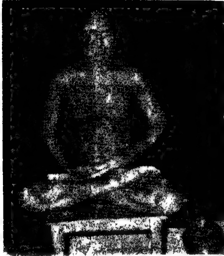
धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत श्री सूरजमल गांधी ने श्री १०५ परमपूज्य गुरूवर्य श्री वज्र-कीर्तिजी महाराज से पावागढ़ (गुजरात) में सपत्नी आजन्म ब्रह्मचर्य-व्रत सं० २०११ में लिया था ।

संसार की असारता जानकर तथा आत्म कल्याण के निमित्त घर की माया ममता छोड़कर श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी महाराज से स० २०२४ आसोज सुदी १० के दिन कोल्हापुर (महाराष्ट्र) मे क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की । आपने अपने आत्म कल्याण के लिये सं० २०३६ मंगसर सुदी २ को परमपूज्य श्री १०८ विनयसागरजी से लोहारिया मे मुनिदीक्षा ग्रहण की ।

अब तक आप क्रमश. कोल्हापुर, फलटन, हुबली, इन्दौर, घाटोल (बांसवाड़ा) लोहारिया, रामगढ़, सागवाडा गलीयाकोट, सोजीत्रा, माडवी (सूरत) अथु'णा धरियावद, पारसोला, खादु में चातुर्मास कर चुके है तथा जहाँ-जहाँ आपका विहार एवं वर्षायोग हुआ । वहां-वहां आपने जेन धर्म के शिक्षण हेतु विद्यालयों की स्थापना कराई और धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय कर जनता को लाभ देते रहे । वि० स० २०३८ मंगसिर बदी ५ को सागवाड़ा मे आपका स्वर्गवास हुआ ।



मुनिश्री पार्श्वसागरजी महाराज



परम पूज्य श्री १०८ पार्श्वसागरजी महाराज का जन्म कार्तिक सुदी ७. सवत् १९७२ को आगरा जिले के कोटला ग्राम में हुआ था। आपका दीक्षा पूर्व का नाम राजेन्द्रकुमार था। आपके पिताश्री का शुभ नाम श्री रामस्वरूपलाल एवं मातुश्री का जानकीबाई था। वर्तमान में आपकी आयु के ६८ वर्ष पूर्ण हो चुके हैं। आपकी जाति पद्मावत पुरूवाल थी। माता-पिता के आप अकेले पुत्र थे। आपके कोई अन्य भाई-बहिन नही हैं। लौकिक शिक्षा के अन्तर्गत मिडिल तक हिन्दी-उर्दू का ज्ञानार्जन किया। धर्म-शिक्षा के अन्तर्गत मुरैना विद्यालय से विशारद की पदवी धारण की।

आप बाल ब्रह्मचारी है। पन्ना म० प्र० मे पन्ना ग्राम मे ही कार्तिक सुदी १२ तारीख १२ नवम्बर सन् १९५९ को सातवी प्रतिमा धारण की। १२ मार्च १९६० को सोनागिरी सिद्ध-क्षेत्र मे क्षुल्लक दीक्षा धारण की एवं श्रावण सुदी ८, सन् १९६१ को मेरठ उत्तरप्रदेश में मुनि दीक्षा धारण की।

समस्त सयम एव व्रतों मे केवल एक आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी महाराज आपके धर्मगुरू है। आपके परम तपस्वी होने का पता इसी बात से चल जाता है कि आपने अब तक लगभग ३००० उपवास कर लिये हैं।



ऐलक श्री चन्द्रसागरजी महाराज

आपका जन्म कैलवारा (ललितपुर) निवासी पिता श्री दरयावसिंह एवं माता श्री सरस्वती-बाई के घर सं० १९६२ में हुआ । गृहस्थावस्था का नाम गोरेलाल था । आपने २ शादियाँ की । आपको ३ लड़कियाँ तथा २ लड़के हुए । आपने सातवी प्रतिमा आचार्य श्री विमलसागरजी से कोल्हापुर में ली क्षुल्लक दीक्षा आचार्य श्री विमलसागरजी से बाराबकी में ली तथा ऐलक दीक्षा आचार्यश्री १०८ विमलसागरजी से श्री सम्मेदशिखरजी मे ली एव श्री चन्द्रसागर नामकरण हुआ । आप सघ के तपस्वी एवं शान्त परिणामी साधु हैं ।



ऐलक श्रीकीर्तिसागरजी महाराज

श्री मोतीलालजी का जन्म कार्तिक शुक्ला १४ वि० स० १९६४ को लखुरानी (फतिहाबाद) जि० आगरा मे हुवा था । आपके पिता का नाम चुन्नीलालजी वरैया तथा माताजी का नाम पूरनदे था । आपकी शिक्षा सामान्य ही थी । आप गृहस्थ अवस्था को सं० २०१३ में छोड़कर क्षुल्लक बन गये । इटावा (U P) में मुनि विमलसागरजी से ऐलक दीक्षा २०२० में धारण की ।

आपने अनगार, सागार, व्यवहार, प्रवचनसार, आदि अप्रकाशित ग्रन्थों का संकलन किया आपने अपना ज्यादा समय ज्ञानार्जन मे व्यतीत किया तथा आजन्म बाल ब्रह्मचारी रहे ।



ऐलकश्री विजयसागरजी महाराज

मोहनलालजी का जन्म कटेरा झांसी में स० १९५१ में गोलालारे जाति में श्री तीजूलालजी के यहां हुआ था । सामान्य शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपने व्यापारिक कार्य संभाला । ६८ वर्ष तक गृहस्थ में रहने के बाद आपका मन वैराग्य की ओर गया तथा सं० २०२० में बाराबंकी U. P. में ऐलक दीक्षा धारण की । आपने संघ में रहकर आत्म साधना की ।

आपके गुरु आचार्य विमलसागरजी रहे ।



ऐलकश्री वृषभसागरजी महाराज

आपका जन्म ग्राम गढ़ी (मोरेना) सं० १९६२ में हुआ था। नाम श्री शिखरचन्दजी था। पिता श्री पातीरामजी, खरौवा जाति एवं पाण्डे गौत्र थी।

पिता के साथ सिरसागंज (मैनापुरी) में लालन पालन एव वही १० वर्ष की आयु तक विद्याध्ययन किया। १८ वर्ष की आयु में श्री जानकीप्रसादजी की सुपुत्री श्रीमती रतनाबाई के साथ वैवाहिक संस्कार हुआ।

२५ वर्ष की आयु में माता-पिता का देहावसान हो गया। अर्थ उपार्जन हेतु खड़गपुर में कपड़े की दुकान पर मुनीमी करने लगे। बाद मे दुकान मालिक के पंजाब चले जाने से स्वयं के कपड़े का व्यापार करने लगे। यहीं दो पुत्र और एक पुत्री का योग मिला।

गार्हस्थिक प्रपंच में निमग्न आपको विचार आया कि पुत्र के आत्म निर्भर होने पर मैं स्वयं का आत्मकल्याण करूंगा। सुयोग से कुछ वर्ष बाद वहा पूज्य श्री १०८ विमलसागरजी महाराज का उदयगिरि, खण्डगिरि यात्रा करते समय आगमन हुआ। आपने श्री महाराजजी से द्वितीय प्रतिमा धारण कर तीन वर्ष के अन्दर क्षुल्लक दीक्षा धारण करने का सकल्प किया। ३ वर्ष बाद महाराजजी के स्मरण (पत्र द्वारा) दिलाने पर आप फल्टण पहुंचे और वि० स० २४८५ में आपने सात प्रतिमाये धारण कर गृहत्याग की दीक्षा ली। आपका नाम संस्करण "शिवसागर" किया गया। श्री सम्मेदशिखर की यात्रा के पश्चात् फाल्गुन मास मे आपने क्षुल्लक दीक्षा धारण की और नवीन नाम "ज्ञानसागर" से सस्कारित हुए। कुछ समय तक श्रीमहाराज के संघ के साथ विहार किया। फिर अस्वस्थ हो जाने के कारण भागलपुर से सघ छूट गया और आप वहां से खड्गपुर आये जहां पहला चातुर्मास व्यतीत किया।

तब से आपने कुरावली (मैनापुरी) झांसी, चन्देरी, ललितपुर, सैदपुर, महरौनी, मड़ावर, जतारा (टीकमगढ़) आदि बुन्देलखण्ड प्रान्त को मुख्य मुख्य धार्मिक जगहों पर आपने चातुर्मास सम्पन्न किये।

परिणामों की गति बड़ी विचित्र है। यदि जीव के परिणाम सुलट जाये तो यह थोडे से प्राप्त मनुष्य जीवन में अपना कल्याण कर सकता है। महाराजजी का जब अशुभ कर्म था तब गिरी हालत में गृहस्थी का मोह नही छोड़ सके और जब शुभ कर्म आया तो इष्ट सामग्रियाँ प्राप्त होने पर भी घर छोड़ दीक्षा ग्रहण की। [जीव की गति ही ऐसी है यदि यह गिरने का नाम-काम करने लगे

तो नारकी हो जाता है और यदि नहीं उठने के संकल्प से मर जाये तो सिद्धालय में सिद्ध बन सकता है ।]

आप भेदज्ञान के पारखी उत्तम संयम को धारण करते हुए अपने जीवन को चारित्र की कसौटी पर कसते हुए धर्माराधन पूर्वक ऐलक जीवन बिता रहे है ।



क्षुल्लकश्री अनेकान्तसागरजी महाराज

आपका जन्म बुर्ली (जि० सागली) ई० सं० १९५५ में जीवंधर के घर हुवा था । आपका जन्म नाम दिलीप था । आपने २७ मई १९८२ मे सतारा में सात प्रतिमा के व्रत धारण किए तथा १० दिसम्बर ८२ मे आचार्य विमलसागरजी से पोदनपुर बम्बई में क्षुल्लक दीक्षा ली । आप अध्ययन प्रिय ध्यान मे मग्न रहते है । आपने B. Sc. की पूर्व मे परीक्षाएँ दी हैं ।



क्षुल्लक श्री मतिसागरजी

ग्राम-सगोनी कलाँ पो० तेजगढ जनपद-दमोह (म० प्र०) निवासी श्री सिघई इन्दरलालजी अग्रवाल जैन एव माता श्रीमती भूरीबाई के आप सबसे छोटे पुत्र हैं । गृहस्थावस्था का नाम श्री छोटेलाल जैन था । आपने दूसरी प्रतिमा के व्रत वैशाख बदी २ स० २०२९ एवं सातवी प्रतिमा के व्रत मि० वैशाख बदी ७ सं० २०२९ को श्री १०८ मुनि पुष्पदन्तसागरजी से लखनऊ मे ग्रहण किये । तथा क्षुल्लक दीक्षा आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी महाराज से श्री सम्मेदशिखरजी में मि० फाल्गुन शु० १५ सं० २०३३ दिन शनिवार तारीख ५-३-७७ को ली । आपके सांसारिक जीवन में २ भाई, ३ बहन, २ पुत्रो मे एक विवाहित तथा दो विवाहित पुत्रियाँ एवं पत्नी का भरा पूरा परिवार है । आपकी लौकिक शिक्षा प्राइमरी तक है ।



क्षुल्लक श्री चन्द्रसागरजी

भरतपुर स्टेट (राजस्थान) के पहाड़ी ग्राम व तहसील में जन्में श्री ताराचंदजी अपने पिता श्री मंगलरामजी एव मातुश्री रोमाली देवी के सबसे बडे पुत्र हैं । यद्यपि आप २ भाई एवं ४ बहनों से युक्त परिवार में सबसे बडे हैं फिर भी दो-दो शादियों के बाद भी आपका अपना परिवार में कोई

नहीं है। आपने लौकिक शिक्षा प्राइमरी तक ही प्राप्त की है। आपने श्री बड़वानीजी में सं० २००७ के जेठ माह में आचार्य श्री १०८ महावीरकीर्तिजी महाराज से सातवी प्रतिमा के व्रत लिये और पुनः स० २००८ के श्रावण मास मे क्षुल्लक दीक्षा भी आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से ही धारण की है। विगत वर्ष से आप अपने दीक्षा गुरू आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज के संघ में सम्मिलित हो धर्मध्यान कर रहे हैं।



क्षुल्लक श्री समतासागरजी



जन्म — २-११-१९१९ धारीसणा गाँव में

पूर्व नाम — शाह अमृतलाल केशवलाल मु० उजेडिया प्रांतीज।

शिक्षा — प्रथम वर्ष आर्ट्स।

चार अनुयोगों का सामान्य अभ्यास—

वृत्ति — रेल्वे स्टेशन मास्टर (वेस्टर्न रेल्वे में सर्विस)

सेवानिवृत्ति — २४-६-७५ स्वेच्छा से

सप्तम प्रतिमा ग्रहण-१३-७-७५ श्री १०८ ज्ञानभूषण मुनिराज से)

क्षुल्लक दीक्षा — पोदनपुर, बोरीवली में श्री १०८ आचार्य दीक्षा गुरु श्री विमलसागरजी से तारीख ९-२-७१ के दिन।

चातुर्मास — बम्बई, अहमदाबाद, घाटोल, उदयपुर और हिम्मतनगर (गुजरात)।

सर्विसकाल मे — प्रमाणिक जीवन, साधुसगम, वैयावृत्य, पठन-पाठन

प्रभावना के कार्यों मे दिलचस्पी निरहंकारी, सादाई और परोपकार भावनाओं में रत थे।



क्षुल्लक श्री रतनसागरजी महाराज



कषायो का रंग समय पाकर छूट जाता है पर चम्बल के पानी की यह खूबी है कि पियो तो मन पक्का हो जाता है। दृढ़ता की सुगन्ध से सनी मिट्टी में मचलता बचपन जब कुछ करने की ठान लेता है तो साध पूरी करने के लिए अंतिम सांस तक मचलता ही रहता है। इस राह मे उसे हर रुकावट मात्र खिलौना प्रतीत होने लगती है। मोनी (भिण्ड) ग्राम के निवासी इस तथ्य से भली भांति परिचित है। दुर्दान्त दस्युओं के शोर को विराग के घोष मे क्षीण कर देने वाले श्रावकों के थोड़े मे घर इस गांव मे भी हैं। श्री श्यामलाल राजमती गोलालारे दम्पत्ति के घर मे भाद्र कृ० ८ सं० १९८५ को एक ऐसे नररत्न का जन्म हुआ। जिसका नाम रामचरण रखा गया। रामचरण को बीहड की गूंज नित्यप्रति देखने-सुनने को मिलती रहती थी जिससे उसका कोमल हृदय संसार से विरक्त हो उठा। साधुओं की संगति और तीर्थाटन उसकी प्रमुख रुचि बन चली। आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी म० का सान्निध्य पाकर तो गृह त्याग के भाव प्रवल हो उठे। सुजानगढ में आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से कार्तिक कृष्ण अमावस्या सं० १९२५ (सप्तम प्रतिमा के व्रत लिये तथा कार्तिक पूर्णमासी) को विशाल जनसमुदाय के समक्ष क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। आचार्य श्री ने आपका नाम "रतनसागर" रखा। गुरु के साथ रहकर वैयावृत्ति करते हुए तथा शास्त्राभ्यास करते हुए रत्नत्रय की आराधना मे निमग्न हैं। आपने अब तक निम्नलिखित स्थानों मे चातुर्मास करके धर्म उद्योत किया—दिल्ली, सम्मेदशिखर, जयपुर, खानियां, इटावा, आवागढ, निवाई, सुजानगढ, आनन्दपुरकालू, अजमेर, ब्यावर आदि।

सम्प्रति अनेक स्थानो में पूजा प्रतिष्ठा विधि-विधान कराते हुए धर्म प्रभावना कर रहे हैं।



क्षुल्लक श्री नंगसागरजी

आपके पिता का नाम श्री भूपाल उपाध्यायजी एवं माता का नाम श्री चम्पाबाई है। आपका जन्म जैन बाड़ी महाराष्ट्र प्रान्त मे हुआ। आपके बचपन का नाम चन्द्रकांत उपाध्याय है। आपकी तीन बहिनें है। आप अपने पिता के इकलोते पुत्र हैं। आपने ब्रह्मचर्य व्रत श्री १०५ भट्टारक श्री लक्ष्मीसेनजी से लिया। सात प्रतिमा के व्रत श्री १०८ बालाचार्य मुनि बाहुबलोजी से लिये। आपका लौकिक अध्ययन कक्षा ९ तक का है। आपने क्षुल्लक दीक्षा पौष सुदी १ गुरुवार दिनांक २०-१२-१९८० को सोनागिरी सिद्धक्षेत्र पर सन्मार्ग दिवाकर श्री १०८ आचार्य श्री विमलसागरजी से ली।



क्षु० श्री उदयसागरजी



आपका पूर्व नाम श्री चन्दनमलजी पाड्या था आप कुचामन (राज) के है, आपका जन्म पूज्य छगनलालजी के यहां संवत १९५८ ई० १९०१ में कुचामन सिटी मे हुआ।। ६ भाई थे जिनमें तीसरे भाई श्री चन्दनमलजी थे आप ३० ग्रामों के जागीरदार राजपूतों के बारे में लेनदेन करते थे तथा करीब १ लाख बीघा जमीन पर बतोरे स्वामी थे। तथा बडे-बडे व्यापार भी किया करते थे आपके ३ पुत्र, ३ पुत्रियां है जिनको पढ़ा लिखाकर व्यापार में लगाकर विवाह शादी कर दी। पुत्र पौत्रिया सपत्ति भाईयों व उनकी संतानें आदि १०५ परिवार जनों का मोह त्याग कर आपने १०८ श्री चद्रसागरजी व वीरसागरजो से २० बरसों से प्रतिमा धारण कर अंत में श्री १०८ श्री आचार्य विमलसागरजी से सुजानगढ़ में पत्नी सहित सं० २०२५ में क्षुल्लक, क्षुल्लिका दिक्षा ली।



क्षु० श्री ज्ञानसागरजी



दीक्षा के पश्चात्—क्षुल्लक ज्ञानसागरजी

दीक्षा से पहले —सूरजमल

१. श्रीजी की दीक्षा का कारण—सत्संग

२. कहां और कब—संवत् २०२१ कोल्हापुर में श्री आचार्य श्री विमलसागरजी के द्वारा आसोज सुदी १०

३. योग्यता—गुजराती व हिन्दी भाषा का अच्छा ज्ञान है। कई शास्त्रों का अध्ययन किया है तथा प्रचार किया है।

४. रुचि—१. शास्त्र स्वाध्याय

२. धर्म ध्यान

३. लेखों कविताओं का सग्रह कर पुस्तकों का प्रकाशन कराना।

४. पंच कल्याणक प्रतिष्ठा कराना।

५. मंदिरों का निर्माण करवाना।

६ जगह-जगह जैन पाठशालाएं चालू करवाना।

७. चैत्यालयों का निर्माण कराना।

विशेष :—चार रसो का त्याग।

चतुर्मास के स्थान :—कोल्हापुर, फलटन, हुपरी, इन्दौर, घाटोल (बासवाड़ा), लुहारिया (बासवाडा), रामगढ (डूंगरपुर), सागवाड़ा (डूंगरपुर), गलियाकोट (डूंगरपुर), सोजित्रा (गुजरात), मांडवी (सूरत), गलियाकोट (डूंगरपुर)।

वि० वि० :—आपने जहां जहां विहार किया, वहां जैन पाठशालाए आरंभ कराई तथा लेख-कविता, पूजा का संग्रह कर पुस्तकों का प्रकाशन कराया।

१. जिनेन्द्र भक्ति, २. श्री श्रुत स्कध विधान श्री सम्मेदशिखर पूजा सहित ३ श्री श्रुत स्कंध विधान सामायिक पाठ सहित।

महाराज श्री ने दाहोद में दो मन्दिरों का निर्माण कराकर पंच कल्याणक उत्सव कराया तथा एक चैत्यालय का निर्माण स्वयं के घर पर कराया। भिन्न-भिन्न स्थानों पर २ चैत्यालयों का निर्माण भी कराया है। तथा जहां आप पधारे है और जहां जैन पाठशालाए नहीं थी, जैन पाठशालाएँ प्रारम्भ कराई हैं।

❋

क्षु० धर्मसागरजी महाराज

वि० सं० १६६४ में आपका जन्म सौरम जि० मुजफ्फरनगर (उ० प्र०) में श्री न्यादरमलजी की धर्मपत्नी श्री भागीरथीदेवी की कुक्षी से हुआ था। आपका पूर्व नाम उग्रसेनजी था। आप अग्रवाल जाति में उत्पन्न हुए थे। आपकी लौकिक शिक्षा मिडिल तथा उर्दू चार कक्षा तक हुई। आचार्य विमलसागरजी से दूसरी प्रतिमा बडौत में ली। स० २०१६ में तीर्थराज सम्मेदशिखरजी में आपने क्षुल्लक दीक्षा ली। बचपन से साधु बनने की भावना थी वह मधुवन सम्मेदशिखर पर जाकर पूर्ण हुई। गृहस्थ अवस्था में सैनिक रहे, सिंहापुर युद्ध के मैदान में आपने भाग लिया था आपको सरकार की ओर से बड़ा ही सम्मान मिला। मुजफ्फर नगर जिले में आपका अपूर्व प्रभाव था। अन्त मे जो भावना थी वह पूर्ण कर समाधि को प्राप्त हुए। धन्य है आपकी वीरता।



क्षुल्लकश्री जिनेन्द्रवर्णीजी (सिद्धान्तसागरजी)



श्री जिनेन्द्रवर्णीजी का जन्म सन् १९२१ में पानीपत के सुविख्यात विद्वान श्री जयभगवानजी जैन एडवोकेट के यहां हुआ। आपकी बुद्धि बड़ी कुशाग्र थी। परन्तु उन दिनों पानीपत मे उच्च शिक्षा का कोई प्रबन्ध न था। १६३७ मे मैट्रिक करने के पश्चात वे अध्ययन के लिए देहली चले गए, परन्तु वहा की जलवायु अनुकूल न पड़ने से क्षय रोग से ग्रस्त हो गये। दोनों फेफड़े खराब हो गये और उन्हें १६३६ मे चिकित्सार्थ मिरज भेज दिया गया। यद्यपि बचने की कोई आशा न थी परन्तु अपनी दृढ़ संकल्प शक्ति से आपने उस रोग को परास्त कर दिया। केवल २० महीने मे ४ आप्रेशन कराकर पूर्ण स्वास्थ्य लाभ किया। डाक्टरों के आग्रह करने पर भी मांस व अण्डे का प्रयोग करना स्वीकार न किया, यहां तक कि इसी आशंका से सैनेटोरियम की औषधि का सेवन भी नही किया।

यद्यपि विद्याध्ययन की बहुत रुचि थी, परन्तु स्वास्थ्य के भय से प्रेम वश पिताजी ने उन्हें पानीपत से बाहर भेजना स्वीकार न किया। इतने पर भी उनका संकल्प न रुका और घर पर ही इलेक्ट्रिक व रेडियो इन्जीनियरिंग का पूरा कोर्स पढ़ डाला। इसी विषय का व्यापार प्रारम्भ किया और कलकत्ता एम० ई० एस० में बडे जटिल जटिल कार्यों के ठेके लेकर वहा के इन्जीनियरों को चकित कर दिया।

सन् १९५० में धार्मिक रुचि सहसा जागृत हुई। प० रूपचन्दजी गार्गीय से इस प्रसंग में सहयोग व उत्साह प्राप्त करके उनके जीवन मे धर्म तथा ज्ञान का संचार होने लगा। पहले से ही एकान्त प्रिय थे। अब विचार मग्न रहने लगे। व्यापार करते हुये भी अधिक समय शास्त्राध्ययन मे जाने लगा। घर मे किसी को पता न चला कि इनको क्या संकल्प जागृत हुआ है। सन् १९५२ में एक दिन अकसमात् बिना कहे साधुओं के समागम के लिये प्रस्थान कर दिया। चार महीने के पश्चात् लौटे तो बिल्कुल बदल चुके थे। मन्दिर में ही रहने लगे। यद्यपि ज्ञान व वैराग्य दिनो दिन बढ़ रहा था परन्तु छोटे भाईयों के प्रति अपने उत्तरदायित्व को, उनकी कर्तव्य निष्ठ बुद्धि भूल न सकी। फलस्वरूप व्यापार में डगमगाते उनके पाव वहां स्थिर करने के लिये पुन: १९५४ में उन्हें कलकत्ता जाना पड़ा। निःस्वार्थ भाव से व्यापार मे सहयोग देते थे, परन्तु पैसे मे कोई सरोकार न था।

सन् १९५७ मे भगवान के समक्ष ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर लिये। १९५८ में सर्व प्रथम पूज्य गणेशप्रसादजी वर्णी की सगति के लिये ३ महीने ईशरी रहे। तत्पश्चात् कुछ भ्रमण किया और सन् १९६१ मे ईशरी मे ही आचार्य विमलसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा धारण कर ली।

एकान्त प्रिय होने के कारण तथा एक मात्र आत्म साधना के प्रति लक्ष्य व रति होने के कारण प्रारम्भ से ही अपनी योग्यताओं का प्रदर्शन करना वे विघ्न समझते रहे। गुप्त व गूढ़ साधना ही कल्याण मार्ग है, ऐसा उनका विश्वास है, फिर भी पुण्य की गन्ध छिपी न रह सकी। भ्रमर की भाति प्रेमी जन उनके निकट मंडराने लगे। बहुत बचने का प्रयत्न करते हुए भी किन्ही के अतीव प्रेम पूर्ण आग्रह को वे ठुकरा न सके। फलस्वरूप मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, ईशरी, इन्दौर नसीराबाद, अजमेर, बनारस, रोहतक तथा एक दो और स्थानो में कुछ कुछ समय उन्हे रहना पड़ा, जिसमे वहां की तथा आसपास की जनता पर बहुत प्रभाव पडा।

यद्यपि लोगो का आग्रह बढता रहा, परन्तु उन्होंने बल पूर्वक अपनी इस भ्रमण वृत्ति पर प्रतिबन्ध लगाकर अपनी एकान्त साधना की रक्षा करना ही कर्तव्य समझा और वे प्राय: पानीपत या रोहतक इन दो ही स्थानों मे रहते हुये, अधिकतर ध्यान निमग्न रहने लगे।

उनका विशाल अध्ययन तथा समन्वयात्मक स्वतन्त्र व व्यापकदृष्टि शब्दों द्वारा वर्णन नहीं की जा सकती । जैन वाङ्मय का तो सांगोपाग गहन अध्ययन उन्होंने किया ही है; परन्तु इसके अतिरिक्त न्याय, वैशेषिक, साख्य योग वेदान्त शैव व शाक्त आदि दर्शनों मे भी उनकी अच्छी गति है । शब्द पढ़कर उन्हें याद कर लेना अथवा शाब्दिक व साम्प्रदायिक बन्धन मे जकडे रहना उन्हें पसन्द नहीं है । स्वतन्त्र वातावरण में खडे होकर केवल तत्व दर्शन करने पर ही उन्हें विश्वास है । यही कारण है कि उनकी कथम व लेखन शैली बिल्कुल स्वतन्त्र है, जिसमे उपरोक्त सभी दर्शनो के सिद्धान्तों व शब्दों का समावेश रहता है । आधुनिक युग के वैज्ञानिक दृष्टान्त देकर तथा सामान्य भाषा का प्रयोग करके वर्तमान युग के पढे लिखे व्यक्तियों के लिये अत्यन्त विमूढ़ तात्विक रहस्य को भी सरल बना देना उनकी विशेषता है । उसमे साम्प्रदायिकता का लेश भी नहीं होता । यही कारण है कि जैन व अजैन साधारण व्यक्ति से लेकर बडे बडे डाक्टर्स तक उसे रुचि पूर्वक सुनते व पढते है ।

उपरोक्त सभी स्थानो मे दिये गये उनके विद्वत्ता पूर्ण रहस्यात्मक प्रवचन दो ग्रन्थों के रूप में प्रकाशित हो चुके है । "शान्ति पथ प्रदर्शन" और नय दर्पण । इनमें से पहला आध्यात्मिक है और दूसरा स्याद्वाद न्याय विषयक । इनकी एक महान कृति "जैन सिद्धान्त शिक्षण" भी है जो अभी अप्रकाशित है, यह ग्रन्थ वीतराग वाणी को समझने के लिये गागर मे सागर के समान है । आशा की जाती है कि जैन सिद्धान्त शिक्षण भी शीघ्र ही प्रकाशित होगा । इनके अतिरिक्त कुन्दकुन्द दर्शन, कर्म सिद्धान्त, पदार्थ विज्ञान, श्रद्धा बिन्दु, अध्यात्म लेख माला आदि अन्य भी अनेको ग्रन्थ लिखे जा चुके है । जिनमे इन सबमे ऊपर जैनेन्द्र सिद्धान्त कोष तो उनके जीवन का एक चमत्कार ही है । ४००० बडे पृष्ठो में निबद्ध समस्त जैन वाङ्मय का यह महाकोष उनके विशाल अध्ययन, कर्म-निष्ठा, सकल्प शक्ति व अथक परिश्रम का जीता जागता प्रमाण है । जैन वाङ्मय का कोई विषय ऐसा नही जिसका पूरा परिचय वर्णानुक्रम से इसमें न दिया गया हो, यह आदर्श कृति भारतीय ज्ञान-पीठ से प्रकाशित हो चुकी है । इसके साथ साथ ही एक और चमत्कार किया है जो जैन संस्कृति भिन्न भिन्न सम्प्रदायो में बिखरी हुई थी उसको बाबा विनोबा भावेजी के सकेत मात्र से, अथक परिश्रम करके चारों सम्प्रदायों की एक पुस्तक जैन धर्मसार तैयार की और सर्व सेवा-संघ प्रकाशन से छपकर देश के विद्वत विद्वानो के हाथ मे पहुँचा दी गई इस पुस्तक का नाम समणसुत्त है । असाता कर्म के उदय से आपने क्षुल्लक पद छोड़ दिया तथा सामान्य श्रावक के रूप में रहने लगे ।

पुन: आपके मन में वैराग्य आया तथा आचार्य विद्यासागरजी से क्षुल्लक दीक्षा २१ अप्रेल १९८३ को ईसरी में ली । आपका नाम क्षु० सिद्धान्तसागर रखा गया । २४ मई १९८३ को ईसरी में आपका समाधिमरण हुवा ।



क्षुल्लक प्रबोधसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक प्रबोधसागरजी के गृहस्थावस्था का नाम पंडित पन्नालालजी था। आपका जन्म कार्तिक शुक्ला छठ विक्रम संवत् १६७३ को जारी (भिण्ड ग्वालियर) म० प्र० में हुआ था। आपके पिता श्री सुरजमलजी व माता श्रीमति सुरजदेवी थी। आप गोलसिंघारे जाति के भूषण है व सिंघई गोत्रज हैं। धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण हुई। विवाह भी हुआ। परिवार में दो भाई दो बहिन, दो पुत्र व दो पुत्रिया हैं।

स्वयं का अनुभव व आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी महाराज की सत्संगति के कारण आपमे वैराग्य प्रवृत्ति जाग उठी। विक्रम संवत २०२४ में ईडर (गुजरात) मे आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपको पाठ कटस्थ याद है। आपने सुजानगढ़ आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म वृद्धि की।



क्षुल्लक विजयसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक विजयसागरजी का बचपन का नाम नेमीचन्द्रजी था। आपका जन्म आज से ७० वर्ष पूर्व पुन्हेरा (एटा) में हुआ। आपके पिता का नाम हीरालालजी था जो एक सफल व्यापारी थे। आपकी माता मणिकबाई थी। आप पदमावती पुरवाल जाति के भूषण है। आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा ५ वी तक हुई। आप बालब्रह्मचारी रहे। आपके चार भाई और चार बहिने है।

संतों की सगति से आपमें वैराग्य भावना बढ़ी व आपने वि० स० २०२० में क्षुल्लक विजयसागरजी से दूसरी प्रतिमा धारण करली। बाद में विक्रम संवत २०२१ में कोल्हापुर स्थान पर आचार्य श्री विमलसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपने सोलापुर, ईडर, सुजानगढ़ इत्यादि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म वृद्धि की। आपने घी, तेल, दही, नमक आदि का त्याग किया है।



क्षुल्लक वृषभसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक वृषभसागरजी का गृहस्थ अवस्था का नाम ब्र० रतनलालजी था। आपका जन्म मंगसिर सुदी तीज संवत १९५२ को दूदू (जयपुर) में हुआ। आपके पिता का नाम श्री सुरजमलजी है। आपकी माता का नाम जड़ावबाईजी है। आप खण्डेलवाल जाति के भूषण हैं। आप लुहाड़िया गोत्रज हैं। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण ही रही। आप बाल-ब्रह्मचारी रहे।

आचार्य विमलसागरजी की सगति से आपमे वैराग्य भावना बढ़ी। आपने फाल्गुन बदी चौथ वि० सं० २०२५ में पदमपुरा पंचकल्याणक में आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपने रेनवाल-मांजी, जयपुर में चातुर्मास कर धर्म प्रभावना की। आपने दो रसों का त्याग किया है।



क्षुल्लक सुमतिसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक सुमतिसागरजी का पहले का नाम गिरवरसिंह है। आपका जन्म आज से लगभग ४० वर्ष पूर्व पिड़ावा (झालरापाटन) राजस्थान में हुआ। आपके पिता श्री भंवरलालजी है जो कृषि और दुकानदारी में निपुण है। आपकी माता ताराबाई है। आप जैसवाल जाति के भूषण हैं। आपकी लौकिक शिक्षा साधारण ही रही। आप बाल ब्रह्मचारी हैं। आपके तीन भाई व तीन बहिने है। आपने धार्मिक उपदेशों का श्रवण किया, सत्संगति में जीवन व्यतीत किया, अतएव शीघ्र ही वैराग्य के संस्कार पनपे। आपने कम्पिला क्षेत्र मे श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी से सातवीं प्रतिमा ले ली। आपने मुक्तागिरि तीर्थक्षेत्र पर विक्रम संवत् २०२१ मे श्री १०८ आचार्य विमल-सागरजी से क्षुल्लक दीक्षा लेली। आपने कोल्हापुर, सोलापुर, ईडर, सुजानगढ़ आदि जगहों पर चातुर्मास किये। आपने नमक, तेल, दही आदि रसों का त्याग किया है। आप बड़े ही मिलनसार व मृदुभाषी हैं।



क्षुल्लक शान्तिसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक शान्तिसागरजी का गृहस्थ अवस्था का नाम छोटेलालजी था। आपका जन्म आज से लगभग पच्चीस वर्ष पहले लुहारिया (बांसवाड़ा, गढ़ी तहसील) में हुआ। आपके पिता श्री किशनलालजी हैं, जो किराने के व्यापारी है। आपकी माता गुलाबबाई है। आप नरसिंहपुरा जाति के भूषण हैं। आपकी लौकिक शिक्षा हाई स्कूल तक हुई। आप आरम्भ से ही विषय वासनाओं से विरक्त रहे। धार्मिक वातावरण में पले। अतएव बाल ब्रह्मचारी रहे। आपके परिवार में तीन भाई और एक बहिन हैं।

आपने श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी की विमलवाणी से प्रभावित होकर विक्रम सवत २०२५ अजमेर में क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपने भक्तामर छहढ़ाला आदि का अध्ययन किया। आपने सुजानगढ़ मे चातुर्मास किया।



क्षुल्लक नेमिसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक नेमिसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम आलमचन्द्रजी था। आपका जन्म आज से लगभग अस्सी वर्ष पूर्व बहटा (शिवपुरी) म० प्र० में हुआ। आपके पिता श्री अमरचन्द्रजी थे, जिनकी परचूनी की दुकान थी। आपकी माता क्षेमश्री थी। आप अग्रवाल जाति के भूषण हैं। आप मित्तल गोत्रज है। आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा ५ वी तक हुई। विवाह भी हुआ। एक पुत्र व दो पुत्रियां हुईं।

सत्सगति और धर्मोपदेश श्रवण से आपको ससार से विरक्ति होने लगी। आपने विक्रम संवत २०१६ में अकाझिरी मे श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपको बारह भावना एव अनेक सुभाषित श्लोक पढने का बड़ा शौक है। आपने दस स्थानों पर चातुर्मास किये। आप हमेशा पर्व के दिनों में अष्टमी–चतुर्दशी को उपवास करते हैं। आप अपनी भांति अन्य लोगों को भी सयम और विवेक के मार्ग पर लाने में समर्थ हों यही कामना है।



क्षुल्लक प्राविसागरजी महाराज

श्री शीलचन्द्रजी जैन का जन्म सं० १९६९ में कार्तिक बदी बारस को फिरोजपुर छावनी में हुआ। आपके पिता श्री बाबू हीरालालजी अग्रवाल एवं माता मनभरीदेवी थी। आप जाति से अग्रवाल थे। आपका गोत्र मित्तल था। आपकी धार्मिक एव लौकिक शिक्षा सामान्य ही रही। आपकी शादी भी हुई। आपके एक भाई व दो बहिनें हैं। आजीविका के लिए पिता एव भाई सर्विस कर रहे है। आपके पूर्व जन्म के संस्कार होने से आपके भाव वैराग्य की ओर बढे। उसी समय छोटे भाई की मृत्यु हो जाने के कारण आपमे काफी उदासीनता आ गई। आपने शरीर को नश्वर जानकर स० २०१८ में आसोज सुदी चौदस को मुनि श्री १०८ विमलसागरजी से लखनऊ मे दीक्षा ले ली।

आप प्रतिक्रमण एव तत्वार्थसूत्र के ज्ञाता है। आपने लखनऊ, सीकर, हिंगूणियां, फुलेरा, रेवाड़ी आदि गांवों में चातुर्मास किये एव मुनि श्री ज्ञानसागरजी के साथ मदनगंज-किशनगढ़, अजमेर, हरियाणा आदि स्थानो पर चातुर्मास किये।

आपने रसों का त्याग किया एवं कर्मदहन के लिए जिनगुणसम्पत्ति एव सोलहकारण का व्रत लिया। आपने तीर्थयात्रायें भी की।



क्षुल्लक श्री समाधिसागरजी महाराज



आप आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज द्वारा दीक्षित है, आपका विशेष परिचय अप्राप्य है।



आर्यिका विजयमती माताजी



श्री १०५ आर्यिका विजयमतीजी का गृहस्थावस्था का नाम शान्तिदेवी था। आपका जन्म वैशाख सुदी १२ विक्रम संवत १६८५ में कामा (भरतपुर) में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री संतोषीलालजी व माताजी का नाम चिरोंजीबाई था। आप खण्डेलवाल जाति की भूषण हैं। आपकी धार्मिक तथा लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। आपका विवाह श्री भगवानदासजी बी० ए० लश्कर वालों के साथ हुआ। परन्तु दुर्भाग्य से आपको वैधव्य प्राप्त हुआ। परिवार में आपके पाच भाई व तीन बहिने है।

संसार की नश्वरता को जानकर आपमें वैराग्य प्रवृत्ति जागृत हुई एवं आपने आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज की प्रेरणा से आगरा सन् १६५७ में आर्यिका दीक्षा ली। आपने कई स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म वृद्धि की।



आर्यिका गोम्मटमती माताजी

आपका जन्म स्थान पारसोला (प्रतापगढ़) तथा जन्म नाम सीधराबाई था। विवाह दीपचन्दजी से हुवा। एक पुत्र भी हुवा था। आपने दूसरी प्रतिमा आचार्य शान्तिसागरजी से धारण की थी। आचार्य महावीरकीर्तिजी से क्षुल्लिका के व्रत धारण किए तथा आचार्य विमलसागरजी से फरवरी सन् ८१ में आर्यिका के व्रतो को अंगीकार किया। आपका नाम गोम्मटमतीजी रखा है।

आर्यिका आदिमती माताजी

आपका जन्म कामा (भरतपुर) निवासी अग्रवाल जाति के श्री सुन्दरलालजी एवं माता श्री मोनीबाई के घर में हुआ । आपका गृहस्थावस्था का नाम मैनाबाई था । आपका विवाह कोसी निवासी श्री कपूरचन्दजी से हुआ । १ वर्ष बाद ही वैधव्य ने आ घेरा । जगत को असार जान सं० २०१७ मे कम्पिलाजी में क्षुल्लिका दीक्षा ली । तदुपरान्त सं० २०२१ में मुक्तागिरी पर आचार्य श्री विमलसागरजी से आर्यिका व्रत लिये । आप संघ की परम तपस्वी आर्यिका हैं ।



आर्यिका जिनमती माताजी

आपका जन्म पाडवा (सागवाडा) निवासी नरसिंहपुरा जाति के श्री चन्द्रदुलाजी के घर सं० १९७३ मे हुआ । आपकी माताजी का नाम दुरोंबाई एव आपका नाम मकुबाई था । आपके दो भाई, दो बहिने है । आपका विवाह पारसोला मे हुआ । ६ माह बाद ही वैधव्य का भार आ गया अत वैराग्य धारण कर आ० महावीरकीर्तिजी म० से पहली प्रतिमा, वर्धमानसागरजी से ७ वी प्रतिमा एव क्षुल्लिका दीक्षा सं० २०२४ में एव आर्यिका पद सम्मेदशिखरजी मे आ० विमलसागरजी से वीर स० २४९९ में कार्तिक सुदी २ को लिया । आप सघ मे तपस्विनी आर्यिका है ।



आर्यिका नन्दामतीजी

आपका जन्म अहारन (आगरा) निवासी पद्मावती पोरवाल जाति की श्रीमती कपूरीदेवी एव पिता श्री मुन्नीलालजी के घर भादों सु० ११ सन् १९२९ में हुआ । गृहस्थावस्था में आपका नाम जयमाला देवी था । आपका विवाह आगरा निवासी श्री सुगघीलाल खाडा से हुआ । कर्मोदय से २।। वर्ष बाद ही वैधव्य आ गया । आप घर मे अध्यापिका का कार्य करती थी । आचार्य श्री की प्रेरणा से आपने आगरा मे ज्येष्ठ सु० ६ सन् १९६६ में दूसरी प्रतिमा तथा सन् १९६९ भाद्र सु० ११ को फिरोजाबाद के मेले पर क्षुल्लिका दोक्षा एवं श्री सम्मेदशिखरजी में कार्तिक सु० २ मंगलवार वीर नि० सं० २४९९ में आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ग्रहण की । आप संघ की विदुषी एवं शान्त परिणामी आर्यिका हैं ।



आर्यिका नंगमती माताजी



आपका जन्म सन् १९५१ में इन्दौर में हुआ । आपके पिताजी का नाम श्री माणिकचन्दजी कासलीवाल एवं माताजी का नाम माणिकबाई है । आपका पूर्व नाम सुदर्माबाई था । आपका पूरा परिवार धार्मिकता से ओतप्रोत रहा है । आपने १८ वर्ष की आयु में ही श्री १०८ ज्ञानभूषणजी महाराज से ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया था । ७ वीं प्रतिमा श्री १०८ आ० श्री विमलसागरजी से श्री शिखरजी मे ली । आपने जीवकांड कर्मकान्ड आदि परीक्षा उत्तीर्ण की है । आपने आर्यिका दीक्षा सोनागिरिजी में सावन सुदी १५ तारीख ८-८-१९७९ को श्री चन्द्रप्रभु प्रांगण में श्री १०८ आ० श्री विमलसागरजी महाराज से ली । आप बहुत सरल स्वभावी मृदुभाषी एव गुरुभक्त है ।

आर्यिका स्याद्वादमती माताजी



आपका जन्म १४ मई सन् १९५३ को इन्दौर (म० प्र०) में हुआ । आपके पिताजी का नाम श्री धन्नालालजी पाटनी एवं माताजी का नाम श्रीमती कमलादेवी है । आपके १ भाई एव ७ बहिने है । आपका पूर्व नाम एरावती पाटनी था । आपने बी. ए. फाइनल की परीक्षा उत्तीर्ण की है । १६ वर्ष की उम्र में मुनि श्री ज्ञानभूषणजी महाराज के उपदेश से धर्म की ओर मोड़ लेकर ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया तथा साथ ही धार्मिक ग्रथों का अवलोकन करते हुए ज्ञानार्जन किया । आपने अपने जीवन काल मे अध्ययन मनन चिन्तन के साथ ही श्रेष्ठ साध्वी जीवन व्यतीत करने का निश्चय कर लिया आप में बचपन से ही वैराग्य की भावना थी । इस कारण से आपने राग-द्वेषादिक से युक्त सासारिक सुखो को तिलाजलि देकर आत्म साक्षात्कार करने के लिये श्रावण सुदी १२ तारीख ५-८-७९ रविवार को श्री सोनागिरीजी सिद्धक्षेत्र पर आचार्य श्री विमलसागरजी से क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण की उस समय आपका नाम अनंगमती रखा गया । गोमटेश्वर महामस्तकाभिषेक में आपने आर्यिका दीक्षा लेकर स्याद्वादमती नाम सार्थक किया ।

आर्यिका पार्श्वमती माताजी



आपका जन्म पाणूर जिला उदयपुर निवासी नरसिंहपुरा जाति के श्री हुकमचन्दजी एवं माता श्री केसरबाई के घर मे हुआ। गृहस्थावस्था का नाम सागरबाई था। आपके ४ बहिने तथा एक भाई है। आपके पतिदेव श्रीपाल जैन कूड के निवासी थे। आपने धार्मिक भावों से प्रेरित होकर सं० २०२४ फाल्गुन सुदी १२ को पारसोला में क्षुल्लिका दीक्षा तथा वीर स० २४९९ में कार्तिक सुदी २ को श्री सम्मेदशिखर पर आर्यिका दीक्षा आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी से ग्रहण की। आप बहुत ही स्वाध्याय प्रिय जप, तप मे लीन रहने वाली शान्त प्रवृत्ति की साध्वी हैं।



आर्यिका ब्रह्ममती माताजी

आपका जन्म राजस्थान मेवाड के छाँड़ी ग्राम मे हुआ था। आपके पिता का नाम श्री खूमजी दशा हूमड़ एवं माता का नाम श्रीमती चम्पादेवीजी था। आपकी संयम व्रतादि में स्वभाव से ही प्रीति थी। सन् १९७० में श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी महाराज से आपने राजगृही में रक्षा-बन्धन के पुनीत पर्व के दिन पूर्णिमा, श्रमण नक्षत्र में आर्यिका दीक्षा ग्रहण की थी। आप ५ वर्ष तक तो आचार्य श्री के संघ मे ही रही फिर आचार्य श्री के सघ से आप ईसरी आश्रम में आ गई। आपने १ चातुर्मास ईसरी में किया फिर आप श्री १०५ आर्यिका रत्न विजयमती माताजी के पास श्री सम्मेदशिखरजी में आ गईं अभी भी आप परम पूज्या श्री १०५ आर्यिका विजयमतीजी के साथ हैं।



आर्यिका निर्मलमती माताजी

गेंदा बाई का जन्म सं० १९६८ मे पवई जि० पन्ना (म० प्र०) में हुवा था। आपके पिताजी का नाम श्री बिसारेलालजी तथा माताजी का नाम श्री ललिताबाई था। आपकी शिक्षा सामान्य ही थी। सं० २०१० मे गुनोर मे आचार्य श्री विमलसागरजी से दूसरी प्रतिमा धारण की। सं० २०११ मे सातवी प्रतिमा खण्डगिरी में ली तथा २०१९ मे आचार्य विमलसागरजी से क्षुल्लिका के व्रत धारण किए। आप आचार्य संघ में रहकर आत्म साधना करती थी। आपका दीक्षा के पश्चात् आचार्य श्री ने निर्मलमती नाम रखा था।



आर्यिका सूर्यमती माताजी



श्री पू० माताजी का जन्म बुढार (बिलासपुर) में सवत् १९६५ में श्रावण बदी १५ को हुवा था। आपके पिताजी का नाम श्री विशाललालजी तथा माताजी का नाम श्री ललिताबाईजी था। आपका पूर्व नाम ब्र० गेन्दाबाई था। आपने आषाढ़ बदी ३ सं० २०१७ मे खण्ड-गिरी-उदयगिरी में आचार्य श्री विमलसागरजी से क्षुल्लिका दीक्षा ली। माघ सुदी १४ संवत् २०२१ को आचार्य श्री से मुक्तागिरी में आर्यिका दीक्षा धारण की। आप वयोवृद्ध होते हुए भी त्याग मार्ग मे संलग्न हैं।



आ० शान्तिमती माताजी

आपका जन्म कोल्हापुर जिले में सागली (महाराष्ट्र) मे हुवा था आप बाल्यकाल से ही धर्म प्रवृत्ति की थी । आपने आचार्य विमलसागरजी से तीर्थराज सम्मेदशिखरजी सिद्धक्षेत्र मे ७-११-१९७२ मे आर्यिका दीक्षा धारण की । आपने दीक्षा लेने के बाद सिद्धान्त ग्रन्थों की ओर लक्ष्य किया एव स्वाध्याय करने के भाव हुए । आप इस समय जैनागम के उच्चकोटि के ग्रन्थों का स्वाध्याय कर रही है । धन्य है आपकी तपस्या, धन्य है आपका त्याग ।



आर्यिका सिद्धमती माताजी



श्री १०५ आर्यिका सिद्धमतीजी का पहले का नाम सोनाबाई था । आपका जन्म भादो बदी ७ सं० १९९० मे मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल में हुआ था । आपके पिता श्री मन्नुलालजी और माता भंवरीबाई थी । आपके परिवार में दो बहिने भी हैं । आप परवारजाति की भूषण है । आपकी लौकिक व धार्मिक शिक्षा आरा महिलाश्रम मे हुई थी । आपका विवाह श्री गोकुलचन्द्रजी के साथ हुआ था । परन्तु छह महीने बाद ही आपको पति वियोग को सहन करना पडा ।

शोक को भुलाने के लिए और अपनी आत्मा का उद्धार करने के लिए, आपने धर्म-चर्चा, जिनेन्द्र-पूजन आदि मे मन लगाया । परिणामों मे आशातीत विशुद्धता आई तो आपने बड़वा में फागुन सुदी १० स० २०१३ को क्षुल्लिका दीक्षा ले ली । दीक्षित नाम चन्द्रमती रखा गया और मागीतुंगी क्षेत्र पर पौष बदी २ स० २०१४ को आर्यिका दीक्षा ग्रहण करली । आपके दीक्षा गुरू श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी थे । आपके चातुर्मास इन्दौर, ईसरी, कोल्हापुर, सुजानगढ़ आदि स्थानों पर हुए । जनता आपसे बड़ी प्रभावित हुई, आपने जनता को काफी धर्मलाभ दिया । आपने घी, तेल, दही आदि रसों का त्याग कर दिया ।



आर्यिका सरस्वतीमतीजी



आप आचार्य विमलसागरजी महाराज द्वारा दीक्षित है । आपका विशेष परिचय अप्राप्य है ।



क्षुल्लिका शान्तिमती माताजी

श्री १०५ क्षुल्लिका शान्तिमतीजी का पहले का नाम सुमनबाई था । आपका जन्म आज से लगभग ३० वर्ष पूर्व कोल्हापुर नामक नगर मे हुआ था । आपके पिता का नाम बापू है, आपकी माता का नाम सोनाबाई है । आप जाति से पचम है । आपके परिवार में एक भाई है । आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा पाचवी तक हुई । आपका विवाह हुआ और विवाह के एक वर्ष बाद ही दुर्भाग्य ने आपको आ घेरा । पति-वियोग जैसी विषम विपत्ति को आपने धैर्यपूर्वक सहा ।

आपके नगर मे जब मुनि-संघ आया तब उनके उपदेशो से आपके परिणामो मे विशुद्धता आई । अतएव आपने दीक्षा लेने की बात विचारी और फिर डिप्टीगंज दिल्ली में दीक्षा ली । आपकी दीक्षा तिथी वीर निर्वाण सं० २४९५ है । आपके दीक्षा गुरु श्री आचार्य १०८ विमलसागरजी है । आपने भक्तामर, छहढाला आदि का विशेषतया अध्ययन किया । आपका प्रथम चातुर्मास दिल्ली में ही हुआ था । आपने तेल और नमक का त्याग कर दिया है ।



क्षुल्लिका संयममती माताजी

आपका जन्म ग्राम निवारी (भिण्ड म० प्र०) मे सवत १९८६ माघ सुदी १४ को हुवा था। आपने पू० आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से सुजानगढ़ राजस्थान मे सम्वत २०२५ कार्तिक सुदी १५ को क्षुल्लिका दीक्षा धारण की। अद्यप्रभृति आत्म कल्याण कर रही है।



क्षुल्लिका चेलनामती माताजी



पू० माताजी का जन्म गढी (हसनपुर) जि० मुजफ्फर नगर मे श्री प्रकाशचन्द्रजी के यहा सन् १९२८ मे हुवा था। आपकी शिक्षा सामान्य ही रही। आपने पू० आचार्य विमलसागरजी से क्षुल्लिका दीक्षा तीर्थराज सम्मेदशिखरजी मे ली। आपका स्वभाव सरल है तथा आपकी बचपन से ही धार्मिकता की ओर रुचि रही यही कारण है जो आप दीक्षा लेकर आत्म कल्याण के पथ मे अग्रसर हैं।



क्षुल्लिका पद्मश्रीजी

आपके पिता का नाम श्री पूनमचन्दजी एवं माता का श्रीमती रूपीबाई था। आपका जन्म स्थान पारसोला (प्रतापगढ़) है। गृहस्थावस्था का नाम सीधार बाई था। आपके पति का नाम दीपचन्दजी था। आपके १ पुत्र भी हुआ था। आपने दूसरी प्रतिमा मुनि श्री शान्तिसागरजी से सातवी प्रतिमा आचार्य महावीरकीर्तिजी से ग्रहण की। क्षुल्लिका दीक्षा आचार्य श्री विमलसागरजी मे संवत् २०२४ फाल्गुन सुदी १५ को पारसोला मे हुई। आपका सारा समय, वैयावृत्ति, जप, तप, स्वाध्याय में ही जाता है।



क्षुल्लिका विशुद्धमती माताजी

कमलाबाई का जन्म राजस्थान में हुवा था। आपके पिता का नाम गुलाबचन्द्रजी था। आपकी शिक्षा चौथी कक्षा तक ही हुई थी। आपको हिन्दी एवं मराठी का ज्ञान था। आत्म हित हेतु आपने आचार्य विमलसागरजी से दूसरी प्रतिमा के व्रत सं० २०१५ मे धारण किए। सं० २०१६ बड़ौदा में आचार्य विमलसागरजी से क्षुल्लिका दीक्षा ली। आपका जीवन धर्म मे ही व्यतीत हो रहा है।



क्षुल्लिका कीर्तिमती माताजी

आपका जन्म कुसुम्बा जिला धूलिया (महाराष्ट्र) मे हुआ। पिता का नाम श्री हीरालाल व्रजलाल शहा तथा माता का नाम झमकोर बाई है। १५ वर्ष की आयु मे ग्राम सिरसाले जिला जलगाव के श्री गोकुलदास दोधुसा शहा के सुपुत्र श्री खरदुमन दास शहा के साथ आपका पाणिग्रहण हुआ। आपके दो बच्चे है। बचपन से ही वैराग्यमयी परिणाम होने से २४ वर्ष की आयु में आपने आ० देशभूषणजी से सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये। दो वर्ष तक संघ में भी रही। आचार्य श्री देशभूषणजी ने आपको आर्यिका ज्ञानमती माताजी के पास पढने की प्रेरणा दी थी। लेकिन फलटण अधिवेशन मे आपकी भेंट क्षु० चारित्रसागरजी से हुई इनके साथ आपने शिखरजी आकर आ० श्री विमलसागरजो से फाल्गुन शु० ५ स० २०३३ को क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण कर ली। आप शान्त स्वभावी सतत अध्ययन शीला है।

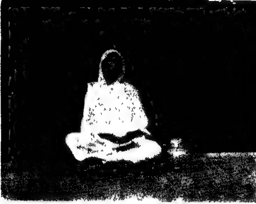


क्षुल्लिका श्रीमति माताजी

आप पिता श्री नेमीचन्दजी माता श्री सोनाबाई की पुत्री है। आपका जन्म सकडी (कोल्हापुर) में हुआ। गृहस्थावस्था का नाम मालती बाई था। आपका विवाह छीरी शिरहट्टी (बेलगांव) निवासी श्री पारिसा आदिनाथ उपाध्याय से हुआ। दुर्भाग्य से १० वर्ष बाद ही आपको वैधव्य का दुःख उठाना पड़ा। आपको एक पुत्री हुई थी उसका भी स्वर्गवास हो गया। आपने आचार्य श्री विमलसागरजी के संघ में ३-४ वर्ष रहकर धर्मध्यान किया। बाद में चैत्र सुदी ४ शनिवार १८-३-७२ को राजगृहीजी क्षेत्र पर क्षुल्लिका दीक्षा ली। आप काफी शान्त, भद्र परिणामी अध्ययनशीला एवं जिज्ञासु क्षुल्लिका है।



क्षुल्लिका वीरमती माताजी



बैसाख कृष्णा अमावस्या सं० १९७२ को परवार जाति में चरगवां जि० जबलपुर में श्री फूलचन्दजी के गृह जन्म लिया। आपकी लौकिक शिक्षा कक्षा चार तक ही हुई थी। आचार्य श्री के प्रवचनों से प्रभावित होकर आपने कपिलाजी क्षेत्र पर सं० २०१९ में क्षुल्लिका दीक्षा धारण की और आत्म कल्याण के मार्ग मे निरत रही।



क्षुल्लिका विमलमती माताजी



आप आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज द्वारा दीक्षित है। आपका विशेष परिचय अप्राप्य है।



मुनिश्री अनंतकीर्तिजी महाराज द्वारा

दीक्षित साधुवृन्द



श्री अनन्तकीर्तिजी महाराज



मुनिश्री जयकीर्तिजी

क्षुल्लक श्री महावीरकीर्तिजी

मुनि श्री जयकीर्तिजी महाराज



क्षु० विमलसागरजी लेगड़े ने पवनकुमार के सुकोमल मन में सस्कारों की नीव इतनी गहरी जमा दी थी कि उसके जागृत विवेक ने उसे पूज्य आ० श्री अनतकीर्तिजी म० के चरणो मे लाकर बिठा दिया और जब वह वहां से उठा तो उनके पथ का अनुगामी बन कर ही उठा। इस चिरकुमार के मन में वैराग्य के भाव अक्कलकोट में हुए। स्व० आ० श्री पायसागरजी म० के चातुर्मास काल में सघ सेवा करते ही उदित हो गये थे पर शायद दीक्षा का समय नही आ पाया था सो रुका ही रहा। समय पाकर ही तरुवर पकते हैं भले ही कितना जल सीचो। १४ दिसम्बर सन् ६१ का शुभ दिन कोल्हापुर मे कुछ विशेष चहल-पहल भरा दिखा। चर्चा एक ही थी कि अक्कलकोट का कोई नवयुवक आ० श्री अनंतकीर्तिजी म० से अपना अनुगामी बना लेने के लिये मचल रहा है और यह चर्चा थी भी प्रशंसा-लायक। भवभोगों से भीत पवनकुमार पर कृपादृष्टि डालते हुए आचार्य श्री ने उसे मुनि दीक्षा प्रदान कर दी। श्रावकों ने इस निर्णय की पू० जयकीर्तिजी म० की जय हो के जयघोषों से अनुमोदन कर पुण्यबंध किया। श्रावक पार्श्वनाथ उर्फ बाबूराम जैन ने अपनी धर्मपत्नी-पद्मावती के साथ पच्चीस वर्षीय युवा पुत्र के इस साहस को भूरि-भूरि प्रशसा करके उसे गृह त्याग की अनुमति प्रदान कर श्रावक वर्ग पर भी महान् उपकार किया। अन्यथा ६ मई १९३५ को जन्मी इस विभूति की कृपा से यह अनाथ जगत वचित ही रह जाता।

दीक्षा ग्रहण करने के बाद आपने आगम का निरन्तर मनन करते हुए हिन्दी कन्नड और मराठी भाषा में ८ ग्रन्थो का निर्माण किया है। पद विहार करते हुए गुरु के आदेश से धर्म प्रभावना में तत्पर है।



क्षुल्लक श्री महावीरकीर्तिजी महाराज



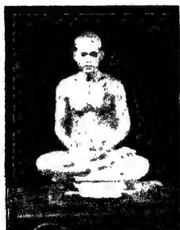
सावलवाडी (सांगली) ग्राम के (पंचम जैन) पारीसा शान्तप्पा उपाध्ये की सुयोग्य संतान पंडित शांतिनाथ आज क्षु० महावीरकीर्तिजी म० के रूप में हम श्रावकों पर अनुग्रह बुद्धि से धर्मामृत की वर्षा कर रहे हैं। १५ जुलाई १९०५ को माता रुक्मणी देवी ने धर्म प्रभावक इस ज्योतिपुंज को जन्म देकर मराठों की गौरव गाथा में एक नयी कड़ी को और जोड दिया कुल परम्परा से चली आ रही त्याग और तपस्या की धारा शांतप्पा को स्वयमेव विरासत में मिल गई। सिर्फ संयोग का इंतजार था सो वह धन्य घड़ी भी १० अगस्त ६२ को हुपरी (कोल्हापुर) में आ० श्री अनन्तकीर्तिजी म० के दर्शन करते ही आ गई। पितृवियोग की असामयिक घटना से चित्त वस भी संसार से विरक्त हो छटपटा रहा था। आचार्य श्री से उद्‌बोधन प्राप्त कर तुरन्त क्षुल्लक दीक्षा लेकर इस नश्वर संसार के समस्त रिश्तो का मोहजाल भंग कर दिया। विराग को छोटी सी चिनगारी ज्वाला बनकर कर्म शत्रुओ को भस्म करने लगी। निरन्तर स्वाध्याय में तल्लीन रहते हुए आपने अब तक निम्नलिखित स्थानो मे चातुर्मास करके श्रावको को चारित्र मार्ग मे स्थिर किया। (सन् १९६२–७४ तक)—हुपरी, आलते, शांतिग्राम, हालोंड़ी, शाहपुरी, नादणी, वस्तवाड, रूई, कुलघटगी, कोगनोली, शिमोगा, करनूर, करुंदवाड, जुगुवचदूर, चिकोडी आदि।

जैन साहित्य निर्माण, पंचकल्याणक पूजा-प्रतिष्ठा आदि कार्यों द्वारा जिनशासन की प्रभावना कर रहे है।



आचार्य श्री जयकीर्तिजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



आ० श्री जयकीर्तिजी महाराज



आचार्य श्री देशभूषणजी

मुनि श्री देवेन्द्रकीर्तिजी

मुनि श्री कुलभूषणजी

आर्यिका धर्ममतीजी

आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज



आचार्य देशभूषणजी महाराज एक शान्त वीतरागी साधु है। निरन्तर ध्यान स्वाध्याय मे रत रहते हैं। संस्कृत, अंग्रेजी, भाषा के अलावा कन्नडी और मराठी भाषा के भी महान् विद्वान है। भरतेश वैभव, रत्नाकरशतक, परमात्म प्रकाश, धर्मामृत, निर्वाण लक्ष्मीपति स्तुति, निरजन स्तुति आदि कन्नड़ी भाषा के महान् ग्रन्थों का हिन्दी गुजराती–मराठी भाषा में अनुवाद किया है। गुरू शिष्य संवाद, चिन्मय चिन्तामणी आदि स्वतत्र रचनाये तथा अहिंसा का दिव्य सन्देश आदि अनेक ग्रन्थ लिखकर भव्य जीवों का कल्याण किया है। कुछ वर्ष से चातुर्मास के समय जो आप प्रवचन करते हैं उनके पुस्तकाकार बन जाने से वे भी मननीय शास्त्र सम बन गए हैं। आपका शान्त स्वभाव, अमृतमय धर्मोपदेश बडा ही सुन्दर होता है।

आपने बेलगाव जिले के कोथलपुर गाव मे जन्म लिया है। आपके पिता का नाम श्री सत्य-गोडा और माताजी का नाम श्रीमती अक्कावती था। वे दोनो ही धर्मपरायण थे। आपका जन्म संवत् १९६५ मे हुआ था और जन्म का नाम बालगोड़ा था। आपकी माता आपको तीन मास की अवस्था में ही छोडकर स्वर्गस्थ हो गई और पिता के भी ७ वर्ष की अवस्था में ही स्वर्गस्थ हो जाने से आपकी नानी ने आपका पालन पोषण किया और संपत्ति की भी संभाल की।

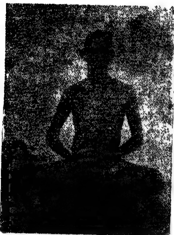
१६ वर्ष की अवस्था तक आपने कन्नडी और मराठी भाषा में अच्छी शिक्षा प्राप्त की परन्तु धर्म मे रुचि न थी। आप सदैव कुसगति मे रहने लगे। देव शास्त्र गुरु जैन मन्दिर सभी से पराङ्-मुख थे। एक समय ऐसा आया कि वहां श्री १०८ आचार्य जयकीर्तिजी पहुच गये। थोडे दिन तो आप उनके पास ही न गये। जाते भी कैसे? रुचि तो उधर थी ही नही परन्तु एक दिन उनके उपदेश सुनने का प्रसंग आ ही गया। बस उसी उपदेश ने आपके हृदय में धर्म का बीज डालने का काम किया फिर तो रोज जाने लगे। उधर आपके विवाह करने की नाना ने चर्चा की। उनके प्रबल अनुरोध और चारों तरफ से दबाव पड़ने पर भी विवाह के प्रस्ताव को स्वीकार न कर ठुकरा दिया और उक्त

महा मुनि के साथ हो गये । मुनि महाराज ने इनको धर्म के पठन स्वाध्याय के लिए कहा और थोड़े दिनों में अनेक ग्रन्थों का पठन तथा स्वाध्याय कर लिया । आचार्य महाराज के साथ ही थोडे दिन बाल ब्रह्मचारी रहकर रामटेक तीर्थ क्षेत्र पर ऐलक दीक्षा ले ली और सम्मेदशिखरजी साथ चले गये । तत्पश्चात् २० वर्ष की अवस्था में श्री कुन्थलगिरि सिद्ध क्षेत्र पर आचार्यश्री से मुनि दीक्षा भी ले ली और मुनि अवस्था मे खूब विद्याभ्यास किया । अयोध्या जैसी सुन्दर नगरी में जैन जनता का अभाव होने से वह तीर्थस्थान सूना सा लगता है अत आचार्य महाराज ने वहा एक गुरुकुल स्थापित कर जैन समाज का बड़ा काम किया है । यह गुरुकुल उन्नति करता जा रहा है । इस तीर्थ को उन्नत बनाने के लिए आचार्यश्री ने ३१ फुट ऊँची श्री आदिनाथ भगवान् की विशाल प्रतिमा सुन्दर बगीचे मे स्थापित कराई है । जिससे यह क्षेत्र उत्तर प्रान्त का एक दर्शनीय स्थान बन गया ।

प्रत्येक चातुर्मास मे आपके धार्मिक, सामाजिक और नैतिक भाषणो मे जनता पर्याप्त मात्रा में प्रभावित है कारण कि आपके भाषण जन साधारण की भाषा में सुन्दर और चित्ताकर्षक, तत्काल हृदय को उल्लासित करने वाले, व्याख्येय विषय को स्फुट करने में सफल, साधक उदाहरणो से ओत-प्रोत रहते हैं । आपकी अमृतमयी वाणी से जो विषय बोला जाता है वह श्रोताओं के कर्ण विवर द्वारा सीधा हृदय मे प्रवेश कर मन संताप को शान्त करने मे समर्थ होता है । आपके भाषण इतने गम्भीर होते है जिन्हे सुनकर जनता मन्त्र मुग्ध हो जाती है । आप लगातार घन्टो बोलते रहते है । फिर भी आपको जरा भी थकावट नहीं आती है । यह आपकी सतत् तप साधना का ही माहात्म्य है । आचार्यश्री की विद्वत्ता, गम्भीरता, ओजस्विता, तपस्तेजस्विता, निरीहिता, नि:स्पृहता, दयालुता, कष्ट सहिष्णुता, अनुपम क्षमता आदि अनेक गुणगरिमा, जनता के आकर्षण का केन्द्र बनी हुई है ।

आपने बगाल, बिहार, उडीसा, निजाम, महाराष्ट्र, गुजरात, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, तमिलनाडू आदि सभी प्रान्तों मे धर्म प्रभावना की । अपने युग के आप आलौकिक सन्त हुए है । आपने कोथली में भव्य जिनालय का भी निर्माण कराया है ।





मुनिश्री देवेन्द्रकीर्तिजी महाराज

आपका जन्म दक्षिण प्रान्त के धामना ग्राम में हुवा था आपके पिता का नाम श्री वासप्पा तथा माता का नाम मुगलादेवी था । आपका परिवार धार्मिक वृत्ति का था । आपने मुनि जयकीर्तिजी से क्षुल्लक दीक्षा ली । आपका पूर्व नाम देवेन्द्रकुमार था । पू० मुनि श्री ने आपका मुनि अवस्था का नाम भी देवेन्द्रकीर्ति ही रखा था । आपका तप व त्याग सराहनीय था ।



मुनिश्री कुलभूषणजी महाराज



आपका जन्म सोमवंशीय हरवरहही तह० बैलहोंगल जि० बेलगांव कर्नाटक राज्य मे हुवा था । यक्काप्पा पिता का नाम था माता का नाम गगदेवी था । स० १९७० म आपका जन्म हुवा था । आपका नाम जिन्नाप्पा रखा था । बाल्यकाल में :आपके ग्राम मे आचार्य पायसागरजी महाराज एव जयकीर्ति मुनिराज का दो माह प्रवास रहा तबसे आप साधुओ के सम्पर्क में आये तथा पू० मुनि श्री के प्रवचन सुनकर आपके मन में वैराग्य के अकुर निकल पड़े तथा परिवार वालों ने रोका पर आप रुके नहीं । आपने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया । वि० सं० १९९३ माघ शु० ९ शुक्रवार को ब्र० जिन्नाप्पा ने मुनि जयकीर्तिजी से क्षु० दीक्षा ली । वि० सं० १९९४ मे जयकीर्तिजी महाराज से ऐलक दीक्षा ली । आप अपने व्रतों का निरतिचार पूर्वक पालन करते थे । स्तवन निधो क्षेत्र पर आपने मुनि दीक्षा ली । आपने १५ मन्दिरो का निर्माण कार्य कराया तथा जैन धर्म की प्रभावना करने में संलग्न है । आपने अनेकों ग्रन्थों का सम्पादन कार्य किया है समयसार, प्रवचनसार आदि 'आध्यात्मिक ग्रन्थों पर आपका प्रभुत्व है ।

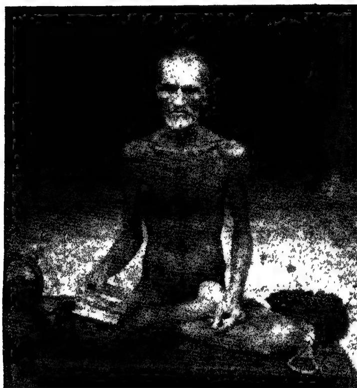
आर्यिका धर्ममती माताजी

मारवाड़ प्रान्त के अन्तर्गत कुचामन शहर के पास लूणवाँ नामक एक ग्राम है। ग्राम मे वेश्य शिरोमणी खण्डेलवाल जात्युत्पन्न चंपालालजी जैन श्रावकोत्तम रहा करते थे। धर्मपरायणा धर्मपत्नी के यहां सन् १८६८ में श्रावण शुक्ला द्वितीया के दिन कन्यारत्न ने जन्म लिया था। आप ५ भाई-बहिन थे। ९ वर्ष की उम्र में शादी हो गई। पर दुर्भाग्यवश लखमीचन्दजी का असामयिक स्वर्गवास हो गया। संसार का नियम जानकर आपके मन मे वैराग्य भाव जागृत हुवा तथा आपका मन धार्मिक काया में लगना शुरु हुआ, साथ ही नाना प्रकार के व्रत उपवास करना। आप बीस वर्ष तक दश-लक्षण पर्व मे दश उपवास अष्टान्हिका मे ८ उपवास एव सोलह कारण के १ माह का उपवास करती थी। पूज्य माताजी ने सन् १६३५ में ३३ दिन का उपवास किया। सन् १९३६ दुर्ग में जयकीर्तिजी महाराज का वर्षायोग हुवा तब आपने सातवी प्रतिमा धारण की। सन् १६३६ मे आपने जयकीर्तिजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली तथा आपका नाम धर्ममती रखा। पू० माताजी ने अपने जीवन काल में ३ हजार उपवास किये। अन्त में जयपुर के समीप खानिया में आचार्य देशभूषणजी महाराज के सान्निध्य में समाधि धारण कर शरीर त्याग किया। धन्य है आपकी तपस्या तथा त्याग।



आचार्यकल्प श्री चन्द्रसागरजी महाराज

द्वारा दीक्षित शिष्य



आचार्यकल्प श्री चन्द्रसागरजी महाराज

मुनि श्री सिद्धसागरजी
मुनि श्री जयकीर्तिजी
मुनि श्री ज्ञानसागरजी
आर्यिका पार्श्वमति माताजी
क्षुल्लक नेमसागरजी
क्षुल्लिका कीर्तिमतीजी

आर्यिका पार्श्वमती माताजी



श्री पार्श्वमतीजी का जन्म राजस्थान प्रान्त के प्रसिद्ध नगर अजमेर मे सं० १९५६ मगसिर बदी १२ को हुवा था। आपका जन्म नाम बारसीबाई था पिता का नाम श्री सौभाग्यमलजी सोनी था। माता का नाम सुरजीबाई तथा आपके पति का नाम श्री जसकरणजी गंगवाल कडेल निवासी थे। आपके पति का शादी के कुछ दिनों बाद ही स्वर्गवास हो गया था। पुण्य योग से आप आचार्य कल्प श्री चन्द्रसागरजी के सम्पर्क में आये तथा पू० महाराजजी से क्रमश: क्षुल्लिका एव आर्यिका दीक्षा धारण की आपने सारे भारतवर्ष में विहार कर धर्म प्रभावना की है। आज भी आचार्य धर्मसागरजी महाराज के सघ में रहकर धर्म साधना मे रत है। इस समय कठोर व्रतो को पाल रही है। मात्र हड्डियों का ढाचा ही है पर तप त्याग अपूर्व है।



मुनि श्री सिद्धिसागरजी महाराज



आपने परम पू० आचार्य कल्प चन्द्रसागरजी महाराज से दीक्षा ली तथा महान कष्टों को सहते हुए समाधिमरण प्राप्त कर आत्म कल्याण किया।



मुनि श्री जयकीर्तिजी महाराज

आपने पू० आचार्य कल्प श्री चन्द्रसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा ली है आप उग्र तपस्वी साधु थे।



मुनि श्री ज्ञानसागरजी महाराज



आपने पूज्य श्री चन्द्रसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा ली तथा समाधि प्राप्त की।



क्षुल्लक श्री नेमसागरजी



आपका जन्म पचार सीकर राजस्थान में हुवा था। आपने आचार्य कल्प श्री चन्द्रसागरजी महाराज से दीक्षा ली थी। आप बाल्टी बाबा के नाम से जाने जाते थे। आपके पुत्र श्री पूनमचन्दजी गंगवाल हैं जो धार्मिक कार्यों में भाग लेते हैं। आपने अपना समाधि मरण कर आत्म साधना की।

क्षुल्लिका कीर्तिमती माताजी



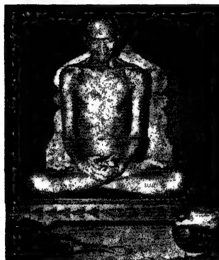
तरण तारण पूज्यपाद परम तपोधन आ० क० चन्द्रसागरजी महाराज से आपकी दीक्षा वीर नि० सं० २४६४ में जयपुर नगर में दि० जैन पाटोदी के मन्दिर के विशाल सभागार मे हुई थी। आपका पूर्व नाम ब्र० गुलाबबाई था आप जयपुर की ही थी तथा पाटोदी गोत्र खण्डेलवाल जाति में जन्म लिया था। आपने अपने जीवन काल में १-१ माह के उपवास भी किये हैं। दीक्षा लेने से पूर्व सारी सम्पत्ति धार्मिक कार्यो मे लगा दी थी।





मुनिश्री नेमसागरजी (दिल्ली)

द्वारा दीक्षित साधुवृन्द



मुनि श्री नेमसागरजी

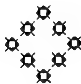


क्षुल्लक श्री वर्द्धमानसागरजी

क्षुल्लक वर्द्धमानसागरजी

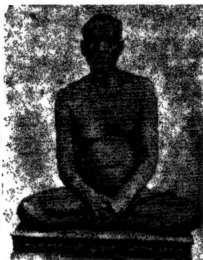


बुन्देलखण्ड के ठकुरासों की राजसी ठाट की कहानियां इतिहास के पन्नों मे सिमट कर अब स्मृति के दायरे टटोल रही है। लगता है औकात की बात पूछना मानो आज भी उसकी शान के खिलाफ हो। हो भी क्यों न, शान ही तो उनकी आन है। हर चौखट मे उठती हुई जोश की एक लहर हर पल देखी जा सकती है। पहले यह जोश वैभव के लिये होता था और आज यह वैभव त्याग के लिये है। कथ्य वही है पर तथ्य बदल चुका है। सिमरिया (ललितपुर) के श्री खुशालचद मोदी अपनी पत्नी सहोद्राबाई के साथ इसी बुन्देलखण्ड की भूमि में साधारण व्यवसाय करते हुए श्रावक के व्रत पाल रहे थे। स० १९८६ भाद्र शु० ३ को इनके घर एक पुत्र रत्न का जन्म हुआ जिसका नाम बच्चूलाल रखा गया। साधारण परिवार मे जन्मे हुए बच्चूलाल में बचपन से ही धर्म प्रचार-प्रसार के प्रति अत्यन्त जोश था और उसका यह जोश स० २०३२ पौष शु० १४ को आहार सिद्धक्षेत्र पर पू० मुनि श्री नेमसागरजी म० का सान्निध्य पाकर चरम सीमा पर जा पहुँचा। गुरु दर्शन मात्र से जिसके अतरंग चक्षु खुल जाय भला उसकी पात्रता मे भी किसी को संदेह हो सकता है ! मुनि श्री ने भव्यात्मा को सबोधित करते हुए क्षुल्लक दीक्षा प्रदान कर दी तथा आपका नाम वर्द्धमानसागर लोक मे प्रसिद्ध किया। गुरु आदेशानुसार आप भी रत्नत्रय चारित्र को निरन्तर वृद्धिगत करते हुए जिनमार्ग की प्रभावना मे लीन है। बरौदिया कला में चातुर्मास करके वहा पाठशाला की स्थापना कराके बालको को धर्म शिक्षा के प्रति उन्मुख किया जो कि कल के श्रावको के लिये भित्ति का कार्य कर रही है।



आचार्य श्री पायसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



आ० श्री पायसागरजी महाराज



मुनि श्री नेमिसागरजी

आचार्य अनन्तकीर्तिजी

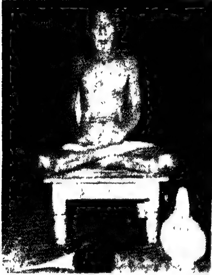
आर्यिका चारित्रमतीजी

क्षुल्लक जयकीर्तिजी

क्षुल्लिका चन्द्रप्रभतीजी

क्षुल्लिका राजमतीजी

मुनि श्री नेमिसागरजी महाराज



बालक के शिक्षण में जननी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान होता है । यह तथ्य मुनि श्री के चरित्र से पूर्णतया ज्ञात होता है, मुनि श्री की वंदनीय जननी ने अपने संस्कारों से मुनि श्री को भी वदनीय बना दिया ।

मुनि श्री का जन्म महाराष्ट्र प्रदेश में सागली जिले के आरग गाव के यादवराऊ के प्रतिष्ठित कुल में हुआ । आपकी माताजी का नाम रतनदेवी सार्थक है । वे स्त्रीरत्न हैं और उनका अपना सिद्धान्त है कि अपने को दैव-भाग्य से सब कुछ मिलता है फिर चिन्ता क्यो की जावे । मुनि श्री के पिता का नाम नरसुदास था । वे व्यावहारिक व धार्मिक व्यक्ति थे । मुनि श्री के चार बडे भाई थे । यशोधर ने आचार्य १०८ पायसागरजी से मुनि दीक्षा ली थी । दो भाई गृहस्थ जीवन बिता रहे है और मुनि श्री सब भाईयो मे छोटे थे । इनका नाम इन्द्रजीत था । ये बचपन से ही धार्मिक कार्यो मे रुचि लेते थे । आपके मन मे धार्मिक सस्कार सुदृढ़ थे । आपकी दो शादिया हुई और कुल छह पुत्र पुत्री हुए । पर फिर भी आपका शास्त्र स्वाध्याय विषयक प्रेम बढ़ता ही गया । आपने मुनि श्री शान्तिसागरजी के वचनामृत को सुनने के लिए सैकडों रुपये किराये में दिए । आपसे मुनिदीक्षा लेने की प्रबल इच्छा थी, पर शान्तिसागरजी की सल्लेखना पूर्ण हो जाने से आपने आचार्य पायसागरजी से सातवी ब्रह्मचर्य प्रतिमा लेकर घर रहे ।

सिरगुणी नामक ग्राम मे पंचकल्याणक महोत्सव था । वहा पर आप मुनि श्री १०८ वर्धमान सागरजी से दीक्षा लेने के विचार मे थे । परन्तु घरवालों ने बाधा डाल दी फिर भी आप घर वापिस नहीं आये बल्कि कुशनाई गाव में रहे । और जब सकनवाडी मे पंचकल्याणक हुआ तब क्षुल्लक दीक्षा ली इसके बाद आचार्य पायसागरजी से आपने गिरिनारजी में मुनि दीक्षा ले ली तथा उनके सघ में रहे ।

आपने गाजियाबाद, हस्तिनापुर, खतौली, जयपुर नगर, सरधना, बिजनौर, नजीबाबाद, नगीना, नहटौर, एटा आदि स्थानो की जनता को धर्म लाभ दिया ।



आचार्य श्री अनंतकीर्तिजी (महाराज)

महाराष्ट्र प्रान्त के शोलापुर के समीप कडवी नामक स्थान में जन्म लिया। आपका परिवार धर्म श्रद्धा से बडा ही प्रभावित था। बचपन के संस्कारों ने आपको मुनि दीक्षा धारण करा दी।

आपके दीक्षा गुरु श्री आचार्य पायसागरजी महाराज थे। दीक्षा स्थल अक्कोल था। आप वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध एवं अनुभवी तपस्वी थे। आपके सम्बन्ध मे ऐसा ज्ञात हुवा कि मुरेना (ग्वालियर) मे आपका पैर जल गया था। उस समय असह्य पीडा होने पर स्वभाव से आपने सहन की। आप घन्टों लगातार कठोर तप किया करते थे। आपके प्रवचनों में भारी भीड होती थी तथा जनता पर काफी प्रभाव पड़ा।

अन्त मे समाधिमरण करके नश्वर शरीर को त्याग दिया। पर आपने अन्तिम समय तक व्रतो का पूर्ण रूप से पालन किया। धन्य है ऐसे परीपहजयी मुनिराज।



आर्यिका चारित्रमतीजी



श्री चलनादेवी का जन्म वि० सं० १९६५ मे बेलगाव मे हुवा था। आपके पिता जागीरदार थे। पिताजी का नाम श्री संगप्पाजी तथा माताजी का नाम बाकदेवी था। शिक्षा सामान्य ही रही, आपके ३ पुत्र पुत्रियाँ थी। पति एव तीनों बच्चो के स्वर्गवास होने से आपके मन में वैराग्य आया तथा आचार्य श्री पायसागरजी के प्रवचनों ने आपके अन्दर ऐसी अमिट छाप छोड़ी कि आपने परिवार को छोडकर व्रती जीवन जीना शुरु किया। वि० सं० २०१७ में आर्यिका दीक्षा ली। आपने आत्म साधना करते हुए परिणामों को विशुद्ध कर चारित्र रथ पर आरूढ होकर स्वर्ग के लिए प्रस्थान किया।





क्षुल्लक जयकीर्तिजी महाराज

ब्र० पवनकुमारजी का जन्म अक्कलकोट में श्री बाबूरामजी की धर्मपत्नी श्री पद्मावति की पवित्र कुक्षि से सन् १९३४ मे हुआ था।

आपने क्षुल्लक दीक्षा मंगसिर सुदी सप्तमी को ली एवं कुछ समय के बाद आपने आचार्य श्री से पुनः मुनि दीक्षा ली।

आपने आयुर्वेद पर ५ पुस्तकें लिखी हैं। अमोलक माणिक्यमात्रा, योग प्रदीप, आहारदान आदि पुस्तकों का लेखन कार्य किया है। आप निरन्तर लेखन आदि कार्य में लगे रहते है। ❖

क्षुल्लिका श्री चन्दनमती माताजी

कापशी (कोल्हापुर) दक्षिण मे श्रेष्ठी श्री नातप्पाजी की धर्मपत्नी श्री गोदावरी देवी की कुख से मनोरमादेवी ने जन्म लिया था। आपकी शिक्षा कन्नड़ भाषा मे हुयी। १६ वर्ष की उम्र में सोलापुर में आपकी शादी हुई। विवाह के कुछ महिने बाद ही पति का वियोग हो गया। आपने अपने जीवन को मोड़कर धर्म मे चित्त लगाया तथा श्री पायसागरजी महाराज से जन्म स्थल पर ही क्षुल्लिका दीक्षा ली। आपने अपना विहार अक्कूतकाटे, डूण्डी, मंगलूर, निपानी, मालेगाव, दिल्ली आदि स्थानों पर गुरुवर्य के साथ किया तथा अन्त में धर्म ध्यान करते हुए शरीर को छोड़ा। आप कन्नड़ भाषा की अधिकारी साध्वी थी। घन्टों मातृ भाषा मे धारा प्रवाह प्रवचन देती रहती थी। ❖



क्षुल्लिका राजमती माताजी



आपने पू० पायसागरजी से क्षु० दीक्षा ली। आप मुनि जम्बूसागरजी महाराज की पूर्व अवस्था की धर्मपत्नी है। आप धर्म साधना मे लीन रहती थी। पू० मुनि श्री के सम्पर्क से आपने दीक्षा ले ली। आप निरन्तर पूजा पाठ विधि विधान आदि बराबर कराती रहती है। आपका जन्म दक्षिण भारत में हुवा था। आप अभी भी धर्म प्रभावना कर रही है।



मुनिश्री वर्धमानसागरजी (दक्षिण)

द्वारा दीक्षित शिष्य



श्री वर्धमानसागरजी

मुनि श्री नेमिसागरजी

मुनि श्री समन्तभद्रजी

मुनि श्री आदिसागरजी





मुनिश्री नेमिसागरजी महाराज

पूज्य मुनिश्री नेमिसागरजी ने गृहस्थ अवस्था मे सन् १९२४ मे ५० साल पहिले आचार्य श्री १०८ शान्तिसागरजी के पास आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत लिया था। क्षुल्लक दीक्षा श्री १०८ वर्धमान सागरजी के पास ली थी । सन् १९५८ में श्री १०८ शान्तिसागरजी महाराज के जेष्ठ भ्राता श्री १०८ मुनि श्री वर्धमानसागरजी महाराज के पास निर्ग्रन्थ दीक्षा ली । आप मराठी, कन्नड हिन्दी, भाषा जानते हैं, पढ़ते है । पिताजी का नाम सावतापा है और गृहस्थावस्था का महाराज का नाम नेमाराणा है । सम्मेदशिखरजी की यात्रा सम्पन्न कर चुके है । मंद कषायी मितभाषी हैं परिणाम शान्त हैं । मुनि आचार पालन में दक्ष हैं । संघ में महाराज श्री ही गुरु हैं । सब तीर्थ स्थलों की वंदना गृहस्थावस्था में की, तीस चौबीसी, भक्तामर, कर्म दहन आदि व्रत किये । बचपन से ही अत्यन्त शान्त भद्र परिणामी हैं । ❖

मुनिश्री समन्तभद्रजी



श्री १०८ मुनि समन्तभद्रजी महाराज का गृहस्थ अवस्था का नाम देवचन्द्रजी है। आपका जन्म २७-१२-१८९१ में करमोले (सोलापुर) मे हुआ। आपके पिता श्री कस्तूरचन्द्रजी थे व माता ककुबाई थी। आपने सोलापुर मे माध्यमिक शिक्षा प्राप्त की। बम्बई में निवास करके आप स्नातक (बी० ए०) हुए। आप उच्चकोटि की धार्मिक शिक्षा की प्राप्ति के लिए जयपुर गए। आप विषय वासनाओ से दूर रहे व बाल ब्रह्मचारी हैं। आपने आत्मकल्याण हेतु १९५२ में श्री १०८ मुनि वर्धमानसागरजी से मुनिदीक्षा ली।

आपने कारंजा, सोलापुर, एलोरा, खुरई आदि बारह स्थानों पर गुरुकुलों की स्थापना की (जो आज भी समाज मे विधिवत् अपना कार्य कर रहे है) क्योकि आपकी यह मान्यता है कि गुरुकुल शिक्षा की पद्धति ही असत्य से सत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर, ले जाने मे समर्थ है। आपने सन् १९१८ में कारजा मे महावीर ब्रह्मचर्याश्रम नाम से गुरुकुल की स्थापना की। सन् १९३४ में कुम्भोज मे पाच छात्रों से गुरुकुल की स्थापना की थी आज उसमें ५०० छात्र अध्ययन रत हैं।

मुनि श्री समन्तभद्रजी स्वय एक सजीव सस्था है। वे शारीरिक और मानसिक तथा आध्यात्मिक दृष्टियो मे स्वस्थ रहकर सहस्र बसन्त देखें। उनके निर्देशन मे एक नही अनेक गुरुकुल खुलें जिसमे देश और समाज, शरीर से आत्मा की ओर, भौतिकता से मानवता की ओर बढ़ने में समर्थ हो सकें।



श्री १०८ आदिसागरजी महाराज



कार्तिक सुदी पंचमी वी० नि० सं० २४१८ सं० १९९२ मे शेडबाल मे श्री देवगौडाजी पाटील की धर्मपत्नी श्री सरस्वती बाई की कोख से जन्म लिया था । आपकी लौकिक शिक्षा B. A. फाइनल कन्नड मे थी । आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज से वीर स० २४७१ मे ब्रह्मचर्य व्रत फलटण मे लिया । संघ मे रहकर पठन पाठन करते रहते थे । वीर नि० सं० २४८० मे १५-३-५४ को शेडबाल मे ही मुनि वर्धमानसागरजी से मुनि दीक्षा ली तथा साधु पद की साधना करने लगे ।

आप चारो अनुयोगों के अच्छे प्रवक्ता थे । अनेको ग्रन्थों का सम्पादन कार्य किया । साहित्य के क्षेत्र मे आपका महत्वपूर्ण स्थान रहा है । आपके द्वारा लिखे ग्रन्थ त्रिकालवर्ती महापुरुष, आहारदान विधि, सूतक विधि, यह कौन है, श्रावक नित्य क्रिया कलाप, चौतीस स्थान दर्शन, नित्य प्रतिक्रमण विधि आदि ने समाज को महत्वपूर्ण दिशा बोध दिया था ।

आपकी सामाजिक सेवा भी महत्त्वपूर्ण रही । आपके माध्यम से दक्षिण भारत मे जैन धर्म की काफी प्रभावना हुई तथा सर्वत्र विहार कर भ० महावीर के सिद्धान्तों को जन-जन तक पहुचाया । धन्य है ऐसे ज्ञानी मुनि वृन्द जो आत्म कल्याण के साथ-साथ पर कल्याण करते हुए निरन्तर सही मार्ग प्रशस्त कर रहे है ।



मुनिश्री नेमिसागरजी (दक्षिण)

द्वारा दीक्षित शिष्य



श्री नेमिसागरजी

मुनि श्री जम्बूसागरजी
मुनि श्री आदिसागरजी
मुनि श्री सन्मतिसागरजी
क्षुल्लक पद्मसागरजी
क्षुल्लक वर्धमानसागरजी
क्षुल्लक शांतिसागरजी
क्षुल्लक गुणभद्रजी

श्री जम्बूसागरजी



आपका जन्म शान्तिग्राम मैसूर प्रान्त मे ई० सन् १९०४ में हुवा। आपका पूर्व नाम वम्मरणा था। २० वर्ष की उम्र मे आपकी शादी हो गई तथा आप गृहस्थ धर्म का पालन करने लगे। १४-५-३७ में आपने ५ वी प्रतिमा धारण करली तथा आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत युवा अवस्था मे लेकर काम देव पर विजय प्राप्त किया। पूज्य आचार्य जयकीर्तिजी महाराज से आप एव आपकी पत्नी ने तीर्थराज शिखरजी में क्षुल्लक दीक्षा ली। आपका नाम जम्बूसागरजी तथा धर्मपत्नी का नाम राजमतीजी रखा। जो आज भी बड़ी धर्म प्रभावना कर रही हैं। पू० नेमिसागरजी महाराज से २१-८-३९ मे मुनि दीक्षा ली। आपने २७ चातुर्मास भारत के सभी प्रान्तों में विहार कर अभूतपूर्व प्रभावना की। अनेकों ग्रन्थों की रचना की तथा अनेकों ग्रन्थों की टीका की। जगह जगह प्रतिष्ठा आदि भी आपके आदेश से हुई। आपने यज्ञोपवीत संस्कार नामक पुस्तक का भी लेखन कार्य किया है। आचार-विचार पर आपका महत्व ज्यादा था तथा प्रवचनों के माध्यम से जैन धर्म की प्रभावना की।

मुनिश्री आदिसागरजी



बेलगाव जिले के अक्किवाट ग्राम मे आपका जन्म हुआ। पिताजी का नाम दडाप्पा था। महाराजजी का गृहस्थाश्रम का नाम शिवा था। शादी हुई थी। दो सन्ताने भी हुई। श्री १०८ वीरसागरजी महाराज के पास १३ साल तक क्षुल्लक अवस्था में रहे। सागली मे ४-१२-६२ को श्री १०८ नेमिसागरजी के पास निर्ग्रन्थ दीक्षा ली। आपने समस्त तीर्थ स्थलो की यात्रा की है। मराठी कन्नड़ और हिन्दी भाषा का आपको ज्ञान है। क्षुल्लक शांत अवस्था मे एक साथ नव उपवास कर अचाम्ल व्रत निरन्तराय किया है। परिणाम बिल्कुल शांत हैं। शान्त स्वभावी और मितभाषी है। मुनि आचार निरन्तराय पालन करने में दक्ष हैं। सघ के वयोवृद्ध अत्यन्त भद्र सरल स्वभावी मुनिराज हैं।



सन्मतिसागरजी महाराज

पूज्य श्री का जन्म गलतगा मे शक० सं० १८०४ मे हुवा था। आपकी मूल भाषा कर्नाटक तमिल थी। गृहस्थ अवस्था का नाम पार्श्वनाथ था। आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज के प्रवचन सुनकर वैराग्य हुवा तथा उसी समय आपने ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर लिया। कौन्नूर में मुनि वर्धमान-सागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। विहार करते हुए आप सागली पधारे यहां पर मुनि नेमिसागरजी से आश्विन शुक्ला पचमी वीर स० २४८८ में ४-१०-६२ को मुनि दीक्षा ली। आपने चारों अनुयोगों का अध्ययन किया। आपकी वाणी मे काफी प्रभाव था प्रवचनों में हजारों बन्धु आकर अमृत पान करते थे। सरलता एव सौम्यता के धनी पू० मुनिराज थे। ❖

क्षुल्लक श्री पद्मसागरजी महाराज



त्याग और तपस्या के कारण पू० क्षु० १०५ श्री पद्मसागरजी म० का नाम आज के साधु संघ में प्रमुख स्थान रखता है। दीक्षा पूर्व आपका नाम पन्नालाल जैन वरैया था। आश्विन शु० ५ सं० १९५१ को ग्राम गढीरामवल कुरीचित्तरपुर (आगरा) में आपका जन्म श्री चुन्नीलाल जैन के घर हुआ। आपकी माता का नाम दुर्गावती था। चालीस वर्ष की उम्र तक आप पैतृक व्यवसाय (गल्ला-कपडा साहूकारी) करते रहे। तत्पश्चात् संसार स्वरूप का चिंतवन करते हुए एक दिन पू० जम्बूस्वामीजी म० से धर्म-श्रवण करके सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। आचार्य सूर्यसागरजी महाराज से उज्जैन में दशवी प्रतिमा ग्रहण कर गृह त्याग दिया। सं० २०२२ देवगढ़ में पू० नेमसागरजी म० के चरण सान्निध्य का सुयोग मिलते ही आपने 'क्षुल्लक' दीक्षा ग्रहण कर ली। दीक्षोपरान्त आपका नाम पद्मसागर रखा गया। आप निरन्तर स्वाध्याय में तत्पर रहते हैं तथा अपने सदुपदेश से निरीह संसारी प्राणियो को सन्मार्ग की ओर उन्मुख करते रहते हैं। आपने अब तक कई स्थानों पर वर्षायोग करके समाज को लाभान्वित किया है, शास्त्रोक्त विधि से रत्नत्रय की आराधना करते हुए आप स्व-पर कल्याण मे निरत है।



श्री वर्द्धमानसागरजी महाराज



बुन्देलखण्ड के ठकुरासों की राजसी ठाट की कहानियां इतिहास के पन्नों में सिमट कर अब स्मृति के दायरे टटोल रही है। लगता है औकात की बात पूछना मानों आज भी उसकी शान के खिलाफ हो। हो भी क्यों न, शान ही तो उनकी आन है। हर चौखट से उठती हुई जोश की एक लहर हर पल देखी जा सकती है। पहले यह जोश वैभव के लिये होता था और आज यह वैभव त्याग के लिये है। कथ्य वही है पर तथ्य बदल चुका है। मिमरिया (ललितपुर) के श्री खुशालचन्द मोदी अपनी पत्नी सहोद्राबाई के साथ इसी बुन्देलखण्ड की भूमि में साधारण व्यवसाय करते हुए श्रावक के व्रत पाल रहे थे। स० १९८६ भाद्र शु० ३ को इनके घर एक पुत्र रत्न का जन्म हुआ जिसका नाम बच्चूलाल रखा गया। साधारण परिवार मे जन्मे हुए बच्चूलाल में बचपन से ही धर्म प्रचार-प्रसार के प्रति अत्यन्त जोश था और उसका यह जोश सं० २०३२ पौष शु० १४ को आहार सिद्ध क्षेत्र पर पू० मुनि श्री नेमसागरजी म० का सान्निध्य पाकर चरम सीमा पर जा पहुंचा। गुरुदर्शन मात्र से जिसके अतरग चक्षु खुल जांय भला उसकी पात्रता में भी किसी को सदेह हो सकता है। आचार्य श्री ने भव्यात्मा को संबोधित करते हुए क्षुल्लक दीक्षा प्रदान कर दी तथा आपका नाम वर्द्धमान सागर लोक मे प्रसिद्ध किया। गुरु आदेशानुसार आप भी रत्नत्रय चारित्र को निरन्तर वृद्धिगत करते हुए जिनमार्ग की प्रभावना मे लीन हैं। बरौदियाकला में चातुर्मास करके वहां पाठशाला की स्थापना कराके बालकों को धर्म शिक्षा के प्रति उन्मुख किया जो कल के लिये भित्ति का कार्य कर रही है।



क्षुल्लक श्री शान्तिसागरजी

श्री १०८ क्षुल्लक शान्तिसागरजी का पहले का नाम भरम नरसिप्पा चौगले था। आज से लगभग ७५ वर्ष पूर्व आपका जन्म गल्तगा (बेलगाव) मे हुआ। आपके पिता श्री नरसिप्पा चौगले थे, जो कृषि फार्म पर कार्य करते थे। आपकी माता श्रीमती गंगाबाई थी। आप चतर्थ जाति के भूषण है, आपका गोत्र खेत्री है। आपने धार्मिक अध्ययन स्वयं ही किया। आपके परिवार में एक भाई और तीन बहन हैं। आपका विवाह हुआ। आपके तीन पुत्र और दो पुत्रियां हुईं।

गृहस्थ अवस्था में ही आप शास्त्र श्रवण करते थे। दशलक्षण धर्म का मनन करते थे। सोलह कारण भावनाओं पर चिन्तन करते थे। इसलिये आपमें वैराग्य के संस्कार बढ़े। आपने दिनांक २५-२-१९६६ को बारेगाव (बेलगाव) मे श्री १०८ आचार्य नेमिसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा लेली। आपको दशभक्ति पाठ कण्ठस्थ हैं। आपने हुपरी, इगार, गेडवाल, टिकंतनगर आदि स्थानों पर चातुर्मास किये आपने जीवन पर्यन्त के लिये मिष्ठान्न और हरे शाक का त्याग कर दिया है। आप संयम और विवेक की दिशा मे और भी आगे बढ़े और देश तथा समाज को बढ़ावे।



क्षुल्लक श्री गुणभद्रजी

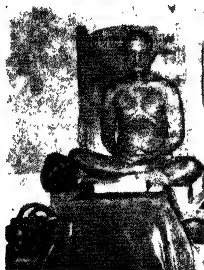
आपका गृहस्थ अवस्था का नाम सुखलाल था। आपके पिताश्री प्यारेलालजी थे और माता का नाम भगवन्तीबाई था। आपका जन्म खिस्टोन जिला टीकमगढ़ मे हुआ था। आपके घर पर साहुकारी व खेतीबाडी का धन्धा होता था। जब आप १३ वर्ष के थे तब आपकी मा का स्वर्गवास हो गया था। आप पिता की देखरेख मे बढ़ने व पढने लगे। खिस्टोन में ही आपने कक्षा ४ तक प्राथमिक शिक्षा पाई। इसके बाद पाच वर्ष तक कुण्डपुर में रहकर धार्मिक शिक्षा प्राप्त की। आपने ब्र० गजाधरप्रसादजी, ब्र० अमरचन्द्र, ब्र० गोकुलप्रसाद को गुरु रूप मे स्मरण किया। आपने ईसरी में प० शोभनलालजी से द्रव्यसग्रह पढी। द्रोणगिरि मे क्षुल्लक १०५ श्री चिदानन्दजी महाराज से तत्वार्थ सूत्र पढ़ा।

जब आप २२ वर्ष के थे तब आपका गौरारानी से विवाह हुआ। आपके दो पुत्र और तीन पुत्रिया हुई। आपको नाटकों से बडा लगाव था, पृथ्वीपुर, बछोडा नाटक मण्डलियो में रहे। कविता करने का भी चाव था प्रतिक्रमण कविता मेरठ से प्रकाशित भजनमाला मे संग्रहीत है। सत्संगति धर्मश्रवण से विरक्ति बढ़ी तो आपने क्षुल्लक आदिसागरजी से दूसरी प्रतिमा ली और गणेशप्रसादजी वर्णी से चौथी प्रतिमा ली। ब्रह्मचारी गोकुलप्रसाद को दिये गये वचन के अनुसार आपने ५० वर्ष की अवस्था में ब्रह्मचर्य प्रतिमा ले ली। आपके गुरु अनन्तकीर्तिजी महाराज थे। ८० वर्ष की अवस्था मे पवाजी के वार्षिक मेले में आपने मुनिश्री नेमीसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली।



मुनिश्री महाबलजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



श्री महाबलजी महाराज



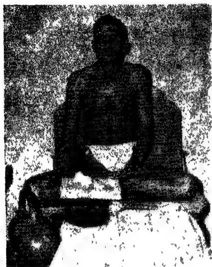
ऐलक जयभद्रजी

क्षुल्लक गुणभद्रजी

क्षुल्लक मणिभद्रसागरजी

क्षुल्लक विजयभद्रजी

ऐलक श्री जयभद्रजी महाराज



मराठा और राजपूतों का इतिहास गौरव गाथाओं का इतिहास है। युद्धवीरता की तरह धर्म-वीरता की कथाएँ यहा की मिट्टी मे रली-मिली हैं जिसे हर आगन्तुक को यहा के निवासी अनथक रूप से सुनाना नही भूलते। ऐसी ही एक गाथा औरंगाबाद जिले के गांव पुरी के साथ भी जुड़ गई। श्री धर्मचद तेजाबाई बाकलीवाल दम्पत्ति के घर फाल्गुन कृ० १२ सन् १६३८ को एक पुत्र का जन्म हुआ जिसका नाम रामचंद रखा गया। बचपन से ही यह बहुत धार्मिक तथा भव भोगों से भीत रहता था जिससे आपके माता-पिता सदैव आशकित रहते थे कि कही उनका यह पुत्र वैराग्य मार्ग पर न चल पडे और उनकी यह आशका एक दिन सच निकली। काललब्धि हो अथवा क्षेत्र का प्रभाव, गुरुदेव आ० श्री समन्तभद्रजी म० के चरणो का आश्रय पाकर गाव पुरी का साधारण मा रामचन्द ऐलक जयभद्र बनकर मोह बन्धन को काटने शिवपथ पर चल पडा। चैत्र शु० २ सन् १६५९ को ब्रह्मचर्य व्रत, श्रावण शु० ७ सन् १६६७ को सप्तम प्रतिमा बाहुबली क्षेत्र पर ग्रहण की। भाद्र कृष्णा ९ सन् १६७४ मे श्री निर्मलसागरजी म० से क्षुल्लक दीक्षा औरंगाबाद के विशाल श्रावक समूह के मध्य ग्रहण की। मुनिश्री ने आपका नाम क्षु० वर्धमान सागर रखा। चार वर्ष तक धर्मसाधना करते हुए सन् १६७८ वैशाख पूर्णमासी को १०८ पू० महाबलजी महाराज से खंवटकोप में ऐलक दीक्षा ग्रहण की और आप जयभद्रसागर म० के नाम से लोक में प्रसिद्ध हुए। आचार्य श्री समन्तभद्रजी म०, पू० १०८ मुनि आर्यनंदीजी म०, पू० १०८ महाबलजी म० की प्रेरणा से स्थान २ पर भ्रमण कर धर्म प्रचार कर श्रावको को सदमार्ग दिखा रहे है।



क्षुल्लक श्री गुणभद्रजी महाराज



सातवीं पास जिन्नाप्पा उमलवाड ग्राम (कोल्हापुर) की सीमा छोड़कर विराग की लोरियां गाने लगा तो दम्पति कल्लाप्पा अक्कुबाई के दिल सहम से गये। गाव-गवई के वातावरण मे भला विराग का क्या काम ! माता-पिता का दुलारना-पुचकारना आखिर काम न आया और जिन्नाप्पा ने जो राह पकडी सो थमे ही नही। २ दिसम्बर ६८ का दिन शायद जिन्नाप्पा के लिये ही था। बाहुबली विद्यापीठ मे जग उद्धारक १०८ मुनि श्री महाबलजी म० का शुभा-गमन हुआ। अन्धे को दो आंखें मिली। मुनिश्री ने जिन्नाप्पा को अपनी शरण में ले लिया और उसे क्षुल्लक दीक्षा देकर क्षु० गुणभद्र म० के नाम से पुकारा। विनीत शिष्य गुरु चरणों मे शास्त्राभ्यास करता हुआ अपने सदुपदेश से दीन ससारियो की भटकती नौका को पार लगा रहा है।



क्षु० श्री मणिभद्रसागरजी

आपने सन् २२-५-१९२६ में हारुगेरी (बेलगाव) कर्नाटक मे श्री लक्कप्पाजी के गृह में जन्म लिया था। आप ४ भाई ४ बहिन है। प्रारंभिक रुचि कृषि करना ही था। आपके ६ पुत्र पुत्रियां हैं। श्री मुनि महाबलजी महाराज के दर्शन एवं प्रवचन से प्रभावित होकर पचकल्याणक पूजा के समय मुनि श्री महाबलजी महाराज से हलिन्गली (कर्नाटक) में क्षुल्लक दीक्षा ली। अब तक आपने १२ चातुर्मास किए है।

निरन्तर आप पठन पाठन मे लिप्त रहते है।



क्षुल्लक विजयभद्रजी महाराज



जन्मस्थान — कोकुटपुर त० अथणी (कर्नाटक)
जन्म सन् — ८-४-१९३८
गृहस्थ अवस्था का नाम—वीरगोडाजी पाटील
शिक्षा — तीसरी
विवाह — सन् १९६७ में सन् १९७४ तक गृहस्थ में रहे तथा आचार्य सबलसागरजी महाराज से जैन धर्म स्वीकार किया ।

१४-२-१९८१ को श्री महाबलजी महाराज से कुम्भोज बाहुबली नामक स्थान पर दीक्षा धारण की आप सरल स्वभावी, परम तपस्वी साधु है ।





मुनिश्री वज्रकीर्तिजी महाराज

द्वारा

दीक्षित शिष्य

मुनि श्री धर्मकीर्तिजी महाराज



श्री वज्रकीर्तिजी महाराज



मुनिश्री धर्मकीर्तिजी महाराज

आपका जन्म भावनगर में संवत् १६५६ में हुआ था। १७ वर्ष की अवस्था में शादी की। पावागढ़ में आचार्य कुन्थुसागरजी महाराज के पास दूसरी प्रतिमा के व्रत धारण किए थे। आप इन्टर पास है। दीक्षा पूर्व आपने सब वाहनों का त्यागकर दिया था। वीर स० २४८२ वैशाख शुक्ला ३ रविवार के दिन शत्रुंजय तीर्थ क्षेत्र में मुनि श्री वज्रकीर्ति से मुनिदीक्षा ली।

आपकी प्रवचन शैली अति ही उत्तम रही। प्रवचनों मे हजारो की उपस्थिति रहती थी। आपके द्वारा गुजरात प्रान्त में महती धर्म प्रभावना हुई। आपने एक पुस्तक भी लिखी जो सरल एव प्रश्नोत्तर रूप में है जो मानव समाज के लिए शिक्षाप्रद सिद्ध हुई।



आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज (छाणी)

द्वारा दीक्षित शिष्य



आ० श्री शांतिसागरजी महाराज



मुनि श्री ज्ञानसागरजी

मुनि श्री आदिसागरजी

मुनि श्री नेमिसागरजी

मुनि श्री वीरसागरजी

आचार्य श्री सूर्यसागरजी

मुनि श्री ज्ञानसागरजी (धार)

इस कुटिल पंचम काल मे ऐसे जीव बहुत ही थोडे हैं, जो आदर्श पथ पर गमन कर अपने अमूल्य मानव जीवन की चरम सीमा प्राप्त करने का प्रयास करते है। जिन जिन आत्माओं की, अपनी निज आत्म विभूति की ओर दृष्टि गई है, वे आत्माए इस संसार में प्रातः स्मरणीय एव जगद्वन्दनीयता को प्राप्ति होकर, चरम सीमा को प्राप्त हुई हैं। वे आत्माएं आज इस संसार मे नहीं हैं और पंच परावर्तन रूपी रहट (यंत्र) के भी परिचक्र को उन्होंने परिपूर्ण कर दिया है तथा वे निजानंद में लीन होकर लोकाग्र भाग में निवास करती है।

आज ऐसी पवित्र आत्माओ के दर्शन होना दुर्लभ है, परन्तु उनके आदर्श और उच्च पथ पर अपितु उनके सदृश मोक्ष मार्ग पर गमन करने वाली आत्माओं का अब भी अभाव नहीं है, उन्ही के दिव्य दिगम्बराभूषण को धारण करने वाली महात्माओं के दिव्य दर्शनों का सौभाग्य भी प्राप्त हुवा है यह हमारे सातिशय पुण्य का उदय है परन्तु ऐसी पवित्र आत्माये इस समय २०-२५ से अधिक नही है।

उन्हीं पवित्र आत्माओ में से एक महात्मा श्री दि० गुरु ज्ञानसागरजी महाराज (धार) जो आचार्य श्री शान्तिसागरजी (छाणी) के एक आदर्श और आद्य शिष्य हैं, जिनके चरण कमलो मे यह "पूजन" रूप तुच्छ भेंट सादर समर्पण करने के लिये समुन्नत हुआ हू। जिनका महात्म्य इस भारत के मुख्य केन्द्र मालवा सी. पी. यू. पी. भद्र देश, ढूंढार देश हाडोती आदि २ में प्रकाशित हो रहा है, जिनके धवल गुण रूप पताका यश रूप में फहरा रही है।

आपमें आकर अनेक सद्गुण निवास करते है, परन्तु हमें यह बताना है कि आपका पाण्डित्य, तपोविशेषता, वक्तृत्व शैली, चारित्रबल और सहनशीलता उपसर्ग विजयता भी कुछ कम नही है। यहां पर उपर्युक्त बातों का सक्षिप्त दिग्दर्शन कराना भी अनुचित न होगा।

पाण्डित्य--आप एक बहुत बडे भारी उद्भट विद्वान हैं, आपका बाल्यकाल से ही स्वाध्याय आदि पठन-पाठन की ओर सदैव लक्ष्य रहता था तथा आपने अनेक आचार्य प्रणीत उच्च कोटि के ग्रन्थों का स्वाध्याय कर अपूर्व ज्ञान का सम्पादन किया है, इसलिये आपकी पाण्डित्यता से जैन तथा जैनेतर समाज भली प्रकार सब ही परिचित है, आपका युक्तिवाद तो इतना प्रबल है कि सामने वादी ठहरते नहीं हैं तथा आगमवाद के सागर ही हैं इसीलिये आपका नाम "ज्ञानसागरजी" ही है, "यथा नाम तथा गुण" वाली कहावत यथार्थ चरितार्थ की है।

तपो-विशेषता—तप की भी आपमें बड़ी ही विशेषता है, आपने हमारे दि० जैनाचार्य प्रणीत बड़े बड़े कठिन व्रत जैसे—आचाम्ल वर्द्धन, मुक्तावली, कनकावली, जिनेन्द्र गुणसम्पति, सर्वतोभद्र, सिंहविक्रीडतादि अनेक तप आपने किये है तथा करते रहते है, जिनके महात्म्य द्वारा आपके दिव्य देह मनोहरता को प्राप्त हुई है तथा व्रतादि उग्र तप करते समय आपका शरीर बिल्कुल शिथिलता को प्राप्त नही होता था ।

वक्तृत्व शैली—भी आपकी कम नही है, आपका व्याख्यान हजारो की जनसख्या मे धारा प्रवाही होता है, जिसको श्रवण कर अच्छे २ व्याख्याता चकित होते है । आपमे एक अपूर्व विशेषता यह है कि आप एक निर्भीक और स्पष्ट वक्ता है वस्तु के स्वरूप को आप जैसे का तैसा ही प्रतिपादन करते है जिस कारण पर मतावलम्बी तो आपके सामने ही थोड़े ही समय मे परास्त हो जाते है ।

आपके वाक्य बडे ही ललित, सुश्राव्य एवं मधुर निकलते है जिनके कारण जनता आपके वचनामृत श्रवण करने के लिये सदैव उत्सुक और लालायित रहती है, इसलिये आपके उपदेश का प्रभाव जनता पर काफी प्रकाश और प्रभाव डालता है ।

चारित्र बल—इसके बताने की कोई आवश्यकता नही है, क्योंकि आप एक उच्च आदर्श लिङ्ग जो मुनि मार्ग उसके शरण को प्राप्त हुये है, ऐसी अवस्था मे चारित्र आपका कैसा है ? उसे ज्ञानी जन स्वय समझ गये होंगे, किन्तु आपके अपूर्व चरित्र के प्रभाव द्वारा, आपकी चिरकीर्ति इस भूमंडल में विद्युतवत् चमत्कार दिखलाती हुई अलोकित कर रही है और इसी के प्रभाव से बड़े-बड़े राजा-महाराजा और बडे-बडे प्रतिष्ठित पुरुष आकर आपके चरणो मे नत-मस्तक करते है और बडे-बडे राज्याधिकारी-गण आकर सिर झुकाते हैं यह सब चारित्र की विशेषता का महत्व है ।

सहनशीलता या उपसर्ग विजयता—आप मे अपूर्व है, महान कठिन से कठिन उपसर्गों की आप पर्वाह न करते हुये उन्हे बडे ही शान्ति पूर्वक सहन करते है । एक समय आप बादा से झासी की ओर आ रहे थे बीच में अतर्रा नामक ग्राम मे आपके सम्पूर्ण शरीर से भंवर मच्छो (भोरमक्खी) लिपट गई थी, परन्तु आपने इस महान उपसर्ग की कुछ भी परवाह न की । दूसरी बार आप जब नरवर (ग्वालियर) से आमोल को जारहे थे उस समय शेर ने आकर आपका सामना किया था परन्तु वहां भी विजय प्राप्त की, इसी प्रकार झांसी के मार्ग में सामायिक करते समय गोहरा आपके बदन पर इधर-उधर फिरता रहा, परन्तु आपने कुछ भी परवाह न की और भी अनेक उपसर्ग आपने आने पर सहे हैं विस्तार भय से यहा उल्लेख नही किये ।

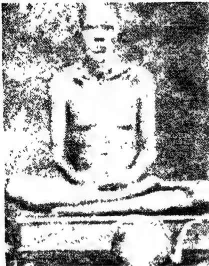
आपको निद्रा भी बहुत कम आती है, हमारा पूर्व में आपसे कई वर्षों तक सहवास रहा है, हम समय—समय पर जाकर गुप्त रीत्यानुसार परीक्षा किया करते थे, परन्तु जब कभी जाते थे तभी आप जाग्रत अवस्था में मिलते थे। विशेष कर आपका लक्ष्य आत्म-ध्यान में अधिक रहता है।

गृहस्थों के चारित्र को समुज्ज्वल बनाने के लिये आप रात्रि दिवस चिन्तित रहते हैं, जहा कहीं आपका विहार होता है वहां पर श्रावकाचार का प्रचार काफी होता है और सच्चे सद्-गृहस्थ बनाते हैं। इस गृहस्थागार में गृहस्थ धर्म को सम्पादन करनेवाली श्राविकाये होती हैं बहु भाग श्रावकाचार का इन्हीं पर निर्भर रहता है। उन्ही को आप उचित शिक्षा देकर व्रतादि ग्रहण करा श्रावकाचार धर्म स्वीकार कराकर उन्हें सच्ची श्राविकाऐ बनाते हैं।

आपका लक्ष्य विशेष कर स्त्रियों को सदाचारिणी बनाने की ओर रहता है तथा उनके संयम, शील की रक्षार्थ सतत् प्रयत्न करते रहते है। आपका विहार अभी ४-५ वर्ष से मालवा और मारवाड़ तथा हाड़ोती प्रांत मे हो रहा है यहा पर व्रत विधान क्रिया बहुत ही उच्च और आदर्श है तथा प्रायः सर्व व्रतों का भार स्त्री समाज पर निर्भर है उन्ही के लाभार्थ आपने 'व्रत कथा कोष' नामक ग्रन्थ अनेक शास्त्रों की खोज पूर्ण लिखा है, जो कि व्रत विधान करनेवालों को अवश्य एक बार देखना चाहिये। इत्यादि प्रयत्न आप गृहस्थो को आदर्श बनाने के लिये सदैव करते रहते हैं।



मुनि श्री आदिसागरजी महाराज



आपका जन्म बुन्देलखंड के अन्तर्गत बम्होरी ग्राम में मिती कार्तिक सुदी २ विक्रम सं० १९४१ मे हुआ था। आपके पिताजी का नाम गोपालदास था और माता का नाम लटकारी था। आप गोला पूर्व चोसरा वश के सुयोग्य जैन है। आपके आजा का नाम वहोरेलाल था। उनके यहा गोपालदास, नन्हेंलाल, हलकाई, हजारीलाल और बारेलाल आदि ५ पुत्र थे। आप भी अपने ४ भाइयो मे से मझले भाई हैं। भाइयो के नाम इस प्रकार है खूबचन्द, खुमान, मोतीलाल और छोटेलाल। आपका विवाह स० १९५५ मे १४ वर्ष की आयु मे सरखड़ी मे हुआ था। आप बचपन से ही सदाचारी थे। विवाह के समय से दो बार भोजन करना रात्रि को पानी तक नही लेना और पूजन करने का आपका नियम था। आपने अध्ययन किसी पाठशाला मे नही किया। निज का अनुभव ही कार्यकारी हुआ है। आप घी, धातु, गल्ला और कपडा का व्यापार करते थे। आपके सुयोग्य दो पुत्र है जो कि चिंतामन और धर्मचन्द, बम्होरी मे रहते है। आपके वश द्वारा रेशदीगिर के उद्धार का कार्य हुआ है। ऐसा जैन मित्र से ज्ञात हुआ है कि आपके पूर्वजो ने यहा जगली झाडिया सफाई कराके नैनागिर क्षेत्र को प्रकाश में लाया था, फिर आपके द्वारा तो पूर्ण उद्धार हुआ है। पच कल्याणक, गजरथ आदि बड़े मेले तो आपके प्रयत्न के सफल नमूने है। क्षेत्र की उन्नति करना आपका मामूली कार्य नही था बल्कि कठोर त्याग का फल था आपको बचपन मे खुमान कहा करते थे और भविष्य मे तो मान खोने वाले ही निकले। आपने मिती ज्येष्ठ सुदी ५ स० १९८४ को द्रोणगिर मे मुनि अनतसागरजी और शातिसागरजी महाराज क्षाणी से दूसरी प्रतिमा ली थी तब आपका नाम ब्र० खेमचन्द रखा। मिती आषाढ़ बदी ८ स० १९९५ में अजड बडवानी मे मुनि सुधर्मसागरजी से ७ वी प्रतिमा ली थी। फिर सागर में माघ मास के पर्यूषण पर्व स० २००० मे दशवी प्रतिमा धारण की थी। सं० २००१ से वर्णी गणेशप्रसादजी के सघ मे रहकर जबलपुर मे वीर जयन्ती पर वीर प्रभू के समक्ष क्षुल्लक दीक्षा ली और आपका नाम क्षु० क्षेमसागर रखा गया। आपने क्षुल्लक दीक्षा से ही केश लोंच करना चालू कर दिया था। वर्णीजी तो आपके चरित्र की प्रशंसा किया ही करते है।

इसके पश्चात् आपने सं० २०१२ को श्री रेशदीगिर गजरथ के दीक्षा कल्याणक के दिन भगवान आदिनाथ के दीक्षा समय भगवान आदिनाथ के समक्ष मुनि दीक्षा धारण की तब उसी दिन मिती माघ सुदी १५ शनिवार को आपका नाम मुनि आदि सागर रखा गया।



मुनि श्री नेमिसागरजी महाराज

सरल स्वभाव, शान्तचित्त, शरीर से कृश किन्तु तपस्तेज मे दीप्त, हृदय के सच्चे, लंगोट के पक्के, अपनी परिस्थिति अनुकूल चलने वाले, प्रयोजन वश बोलने वाले, प्रतिष्ठा, वैद्यक, ज्योतिष, गणित, मंत्र, तंत्रयंत्र, संगीत एवं नृत्यकलाओं मे शिरोमणि, धर्मशास्त्र के पूर्णज्ञाता, मधुर किन्तु ओजस्वी वाणी में बोलनेवाले वक्ता, पण्डितो के पण्डित, सफल साधक, जीव मात्र के प्रति अहिंसा का भाव रखनेवाले, न किसी के अपने न पराये, न सपक्षी न विपक्षी, स्वाभिमान निर्भीकता से धर्म साधन करनेवाले विलासो एवं भोगो से अछूते, इन्द्रियो का दमन करने वाले, कषायों का निग्रह करने वाले, समाज के गौरव एवं देश के अनमोल रत्न तपोनिधि अध्यात्म योगी श्री १०८ मुनि नेमिसागरजी का जन्म मगलमय एवं परम पवित्र माता श्री यशोदा देवी की पुनीत कुक्षि से पिता श्री मुन्नालालजी के पुत्र के रूप मे विक्रम सवत् १९६० के फाल्गुन शुक्ला द्वादशी रविवार को पठा (टडा) ग्राम में हुआ।

आपने बाल्यकाल मे ही बाबा गोकुलप्रसादजी पूज्य गणेशप्रसादजी वर्णी एवं पूज्य मोतीलालजी वर्णी के सान्निध्य मे रहकर उक्त गुरुजनो की कृपा द्वारा सवत् १९७८ में पूज्य पिताजी का स्वर्गारोहण हो जाने के कारण घर पर ही रहकर अनेको विद्याओं के अथाह वारिधि बने।

आपका बचपन का नाम हरिप्रसाद जैन था। आपने विवाह का परित्याग कर बालब्रह्मचारी व्रत धारण किया। ८ वर्ष की आयु में पाक्षिक व्रतो तथा १५ वर्ष की आयु में नैष्ठिक श्रावक के रूप मे दूसरी प्रतिमा ग्रहण की। सन् ५६ मे इन्दौर आए। वि० स० १९९६ में माघ कृष्णा प्रतिपदा गुरूवार मु० पटना पो० रहली जिला सागर के जलयात्रा महोत्सव पर श्री १०८ मुनि पदमसागरजी द्वारा सप्तम प्रतिमा ग्रहण की तथा आपका नाम रखा गया श्री विद्यासागर।

फाल्गुन शुक्ला ३ सोमवार सवत् २०१६ में म० प्र० के देवास जिलान्तर्गत लुहाखा नामक ग्राम में श्री पंचकल्याणक महोत्सव पर दीक्षा कल्याणक के समय श्री १०८ मुनि आचार्य योगेन्द्रतिलक शान्तिसागरजी महाराज द्वारा आपने ११ वी प्रतिमा धारण की और नाम पाया श्री १०५ क्षुल्लक

नेमिसागरजी। वि० सं० २०२४ के शुभ मिती मार्गशीर्ष शुक्ला १५ को आचार्य योगेन्द्रतिलक शांतिसागरजी महाराज द्वारा मुनिदीक्षा ग्रहण की।

आपने लगभग १६ वर्ष की अवस्था से लिखना आरम्भ किया। आपने अपनी मनोवृत्तियों को शब्दों के माध्यम से व्यक्त किया। आपका गद्य एवं पद्य दोनों पर समान रूप से अधिकार रहा। आपकी कृतियां निम्नलिखित है :—

१	—	श्रावक धर्म दर्पण	प्रकाशित
२	—	हरि विलास	प्रकाशित
३	—	प्रतिष्ठासार–सग्रह	शास्त्राकार सजिल्द यह ग्रन्थ लगभग २००० पृष्ठों का होगा
४	—	आध्यात्म सार–संग्रह	
५	—	कविता संग्रह (स्वरचित)	अप्रकाशित

सामाजिक क्षेत्र में आपने जो कार्य किए उनका विवरण सिर्फ इतना कह देने में ही पूर्ण-रूपेण दृष्टिगोचर होने लगता है कि क्षेत्र पपौरा, अहारजी एवं अनेक संस्थाओं के आप अधिष्ठाता, व्यवस्थापक एवं संचालक हैं। इन क्षेत्रों एवं संस्थाओं में आपने जितने भी कार्य किए हैं वे अवगुण्ठन में नही हैं।

आपके संकल्प इतने अडिग हैं कि विरोधी तत्वों के अनेक विग्रहों, महादुर्मोच्य भयानक संकटों, शरीरिक आधि-व्याधियों तथा लोगों की दुर्जनतापूर्ण मनोवृत्तियों से भी आप टस से मस नही हुए। अनेकों तरह की आपदाओं ने आपको कर्तव्य पथ से डिगाना चाहा पर निर्भीक स्वात्म बल से आपको सदैव सफलता मिली।

आपने अनेकों चातुर्मास किए, किन्तु श्री परम पावन अतिशय क्षेत्र देवगढ़ के भयानक बीहड़ जंगल में आपने जो चातुर्मास किया वह साहसिकता की दृष्टि से चिरस्मरणीय रहेगा। डाकुओं और जंगली जानवरों के भय से व्याप्त भीषण जंगल में एक दिगम्बर संत का एकाकी रहना आश्चर्य की बात नहीं तो और क्या हो सकती है किन्तु आश्चर्य हम संसारी लोगों को ही होता है आप जैसे संतों के लिए तो क्या पहाड़, क्या बीहड़ जगल सब समान हैं।

एक चोटी के विद्वान और महान् पद पर आसीन होते हुए भी आप अत्यन्त सरल विनम्र एवं शान्त स्वभाव वाले हैं। आपके जीवन में प्रदर्शन और आडम्बर तो नाममात्र को नहीं है।



मुनि वीरसागरजी महाराज



मुनि वीर सागर का जन्म पंजाब प्रान्त के जिला सरोजपुर के समीप धर्मपुरा में अग्रवाल जाति में सेठ नारायणप्रसादजी के यहां हुआ था। आपका पूर्व नाम कल्याणमल था। आप आजीवन बाल ब्रह्मचारी रहे, आपने आदिसागरजी से प्रथम प्रतिमा धारण की थी। उत्तरप्रदेश में आपने क्षुल्लक दीक्षा ली। आचार्य शान्तिसागरजी से ऐलक एव मुनि दीक्षा ली। आपने अपने जीवन के अन्त मे समाधि धारण कर आत्म कल्याण किया।



आचार्य श्री सूर्यसागरजी महाराज



रोज का ही यह क्रम है। डालमियानगर में धक्का-मुक्की को सहते हुए नागरिक भव्य सगमरमर की समाधि पर फूल चढाये बिना अपना कारोबार शुरू नही करते। स्व० सूर्यसागरजी महाराज की यह समाधि जब से साहू श्री शातिप्रसादजी ने बनवाई है, भक्तों की बेशुमार भीड़ खिचतोसी चली आती है। स्टेशन से निकलते ही रिक्शे वाले चीख-चीख कर भक्तों को उसके बारे मे बताना नही भूलते। कहते हैं इससे शगुन अच्छा होता है और वोहनी भी अच्छी होती है, सो वे पहली सवारी वही की लेते है। ऐसे प्रभावशाली तपस्वी थे हमारे सूर्यसागरजी महाराज।

ग्राचार्यश्री का जन्म पेमसर ग्राम (शिवपुरी) में कार्तिक शु० ६ वि० सं० १६४० की शुभ मिती में श्री हीरालाल जैन पोरवाल के घर में हुआ था । आपकी माता का नाम गेंदाबाई था । माता-पिता ने आपका नाम हजारीलाल रखा । झालरापाटन में आपके चाचा रहते थे । उन्होने आपका पालन-पोषन कर "गोद" ले लिया । उस जमाने में शिक्षा का प्रचार कम था अतः आपकी शिक्षा प्रारम्भिक हिन्दी ज्ञान तक सीमित रही । गृहस्थावस्था में कुछ दिन रहने के बाद सं० १६८१ को रात्रि में एक स्वप्न के कारण संसार स्वरूप से विरक्ति हो गयी । बस, सिर्फ गुरू की तलाश थी ।

वि० स० १९८१ आसौज शु० ६ का दिन भाग्योदय का दिन था । इन्दौर में पू० आ० श्री शांतिसागरजी महाराज (छाणी) के पास आपने ऐलक दीक्षा ग्रहण की । आचार्य श्री ने आपको दीक्षा देकर "सूर्यसागर" नाम दिया और आपने सूर्य की तरह चमक कर जग का अज्ञानान्धकार दूर किया । मंगसिर कृ० ११ को गुरू से हाटपीपल्या में उसी वर्ष मुनि पद को भी दीक्षा ग्रहण की । आपकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर समाज ने आपको 'आचार्य पद' पर प्रतिष्ठित किया । आप निर्भीक वक्ता, जिनधर्म की आचार-परम्परा का प्रचार करने वाले अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य थे । जिनके उपकारो से समाज कृतकृत्य है । पू० मुनि श्री गणेशकीर्तिजी म० आपको अपने गुरुतुल्य मानकर निरतर मार्गदर्शन प्राप्त करते रहे हैं । जग-उद्धारक ऐसे आचार्यश्री के चरणों में शत-शत वदन !



आचार्यश्री आदिसागरजी महाराज (दक्षिण)

द्वारा दीक्षित शिष्य



आ० श्री आदिसागरजी महाराज



आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी
मुनि श्री वृषभसागरजी
मुनि श्री पिहिताश्रवजी
मुनि श्री वीरसागरजी
मुनि श्री अजितसागरजी
मुनि श्री श्रुतसागरजी
आर्यिका स्वर्णमतीजी
क्षुल्लिका चन्द्रमतीजी

आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज



परमपूज्य प्रातःस्मरणीय तपोनिधि स्व० १०८ श्री आचार्य महावीरकीर्ति मुनि महाराज वर्तमान युग के एक आदर्श श्रेष्ठ वीतराग साधु थे।

अगाध विद्वत्ता महान कठोर तपश्चर्या आदर्श वीतरागता बहुभाषा विज्ञता अद्वितीय थी।

चन्द्रबाद फिरोजाबाद (U. P.) (चंदवार) मे १४ वी १५ वी शताब्दी मे चौहान वशीय राजा राज्य करते थे। इन्ही के शासन काल मे जैन श्रावक राजश्रेष्ठी, प्रधानमंत्री, कोषाध्यक्ष आदि उत्तम पदो पर आसीन थे। उन्ही के शासन काल मे मोदी नामक सज्जन कोषाध्यक्ष के पद पर प्रतिष्ठित थे।

आचार्य श्री का जन्म इसी परिवार मे हुआ। इस परिवार की छठी पीढी में बशीधरजी का जन्म हुआ जो नगर के सुप्रसिद्ध सेठ अमृतलालजी रानीवाले के यहा उच्च पद पर नियुक्त हुए। आपके तीन पुत्र हुए उनमे श्री रतनलालजी के पाच पुत्र हुए। श्री महेन्द्रकुमारजी (पू० आचार्य महावीरकीर्तिजी) आपके मझले पुत्र थे। माता का नाम बूंदादेवी था। बून्दादेवी परम धार्मिक प्रसन्नवदना सुशील तीर्थभक्त महिला थी।

श्री रतनलालजी संस्कृत के पाठी थे। दैनिक पाठक्रिया और मुनियों के परम भक्त थे।

भगवान् महावीर की श्रमण परम्परा को जिन आचार्यों ने बीसवी शताब्दी में अत्याधिक आगे बढाया उनमें श्री १०८ आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज का नाम उल्लेखनीय है। आचार्य श्री गृहस्थ अवस्था में महेन्द्रकुमार के नाम से विख्यात थे।

आपका जन्म उत्तरप्रदेश के सुप्रसिद्ध औद्योगिक नगर फिरोजाबाद में हुआ। आपने वैशाख बदी ६ वि० सं० १९६७ में जन्म लेकर अपने पिता रतनलालजी और माता बूंदा देवी को अमर कर दिया। आप पद्मावती पुरवाल समाज के भूषण व महाराजा खानदान के थे। आप पाच भाईयों मे एक ही निकले। कारण, चारो भाईयो ने जो कार्य नहीं किया वही कार्य आपने सहज स्वभाव से किया।

शिक्षा :

प्रारम्भिक शिक्षा फिरोजाबाद मे हुई। दस वर्ष की अवस्था मे आपकी माताजी का स्वर्गवास हुआ तो आपके मानस मे विरक्ति का अकुर उत्पन्न हुआ। आपने दिगम्बर जैन महाविद्यालय महासभा ब्यावर मे और सर सेठ हुकमचन्द महाविद्यालय इन्दौर मे शास्त्री कक्षा तक ज्ञान प्राप्त किया आपकी बुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण और प्रतिभा अपूर्व थी। आपने न्यायतीर्थ आयुर्वेदाचार्य का अध्ययन किया। अधिकाधिक धार्मिक शिक्षा ने आपकी उदासीनता और भी अधिकाधिक बढाई, परिणामस्वरूप उभरते यौवन में ही आपने आजन्म अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण कर लिया।

व्रतनिष्ठा :

योंतो आप सोलह वर्ष की अवस्था से ही श्रावक धर्म का निर्दोष रूप से पालन करने लगे थे पर संसार शरीर भोगो से विरक्त होकर आपने परम निर्भीक प्रखर प्रभावी वक्ता १०८ आचार्यकल्प चन्द्रसागरजी महाराज से ब्रह्मचर्य प्रतिमा ली। आचार्य वीरसागरजी महाराज से संवत् १९९४ में टांकाटुंका मे क्षुल्लक दीक्षा ली और बत्तीस वर्ष की अवस्था मे श्री १०८ आचार्य आदिसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा ली। यो आपका ज्ञान चारित्र के साथ जुडा।

आचार्य आदिसागरजी महाराज ने आचारांग के अनुकूल आपका आचरण देखकर अपना उत्तराधिकारी बनाया। आचार्य बनकर अपने चतुर्विध सघ का सकुशलता से संचालन किया। भारत के अनेक प्रान्तों मे भ्रमण कर आपने दिगम्बर जैन धर्म का प्रचार किया व अनेको को मुनि, आर्यिका, श्रावक-श्राविका, ब्रह्मचारी, क्षुल्लक आदि बनाकर आत्म-कल्याण में लगाया। आचार्यश्री महान् उपसर्ग विजयी और निर्मोही साधुरत्न थे। आपकी क्षमाशीलता, साहस क्षमता का परिचय आपके जीवन की अनेक घटनाओं से मिलता है।

उपसर्ग विजेता :

एक बार आप बड़वानी सिद्धक्षेत्र पर ध्यान-मग्न थे। किसी दुष्ट पुरुष ने मधु-मक्खियों के छत्ते पर पत्थर फैंक दिया। मधुमक्खियों ने आचार्य श्री पर आक्रमण किया। लहुलुहान होकर भी आपने ध्यान नही छोडा। इसी प्रकार जब आप खण्डगिरि उदयगिरि क्षेत्र की यात्रा के लिए जा रहे थे कि पुरलिया मे तीन शराबी लोगों ने आचार्य श्री को अकारण ही मारने के लिए लाठियाँ उठाईं। सेठ चादमलजी ने अपने गुरु की रक्षा करने के लिए स्वय लाठियां खाई पर फिर भी कुछ तो आचार्य श्री को लगी। पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट ने आकर उन्हें खूब फटकारा। दुष्ट लोग क्षमा मांगकर भाग गये। इसी प्रकार सम्मेदशिखरजी सिद्धक्षेत्र पर भी अगहन में असहनीय शीत नग्न शरीर पर झेलकर अपनी अपार विरक्ति का परिचय दिया।

आचार्यश्री के समग्र शरीर पर ब्रह्मचर्य की आभा दिखती थी। आप घन्टो एक आसन से ध्यान करते थे। आचार्य श्री की निर्वाण भूमियों के प्रति अपार निष्ठा थी।

शायद इसीलिए कि आप स्वय निर्वाण के तीव्र अभिलाषी थे। जब गिरनार क्षेत्र के दर्शनकर आप शत्रुञ्जय अहमदाबाद होते हुए मेहसाना पहुँचे तब वहाँ ६ फरवरी, १६७२ को आपका समाधि-मरण हो गया। चूँकि आपको अपनी मृत्यु का आभाष होने लगा था, अतएव पहले ही सघ की सुव्यवस्था कर दी थी।

भट्टारकों के प्रति उद्गार :

आज जो प्राचीन शास्त्र ग्रन्थ पढने, देखने, दशन करने को मिल रहा है वे सब भट्टारकों की देन है क्योंकि वह एक समय था जो राजा, महाराजा, श्रावक आदि जैनी थे, जो स्मृतिया छोड़ गये, हैं, सिद्ध क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र, प्राचीन मन्दिर, मूर्तियां, अवशेष, इतिहास एव साक्षात् दक्षिण प्रान्त में विशेष कर दर्शन करने देखने से पता चलता है। उसके बाद वह समय आया जो जैन तीर्थों पर मन्दिरो पर अन्य समाज ने अधिकार कर लिया एव नष्ट कर दिया तथा जैन संस्कृति को नष्ट करने के लिए ग्रन्थो को छह मास पर्यन्त जलाये। परन्तु जो भी साहित्य सस्कृति देखने को मिल रही है वह सब भट्टारकों की देन है।

भट्टारक जैन के बादशाह हैं। जैनधर्म, सस्कृति, तीर्थक्षेत्रों की उन्होंने रक्षा की।



श्री वृषभसागरजी महाराज

पूर्व वृत्तान्त– जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र मे दक्खन भाग मे महाराष्ट्र प्रान्त है। उसमे करवीर जिले में पचगंगा के किनारे मानगाव में बाबगौडा नामक पाटिल रहते थे। उनके सावित्री नामक सुशील पत्नी थी। उनके आदगौडा नामक सद्गुणी पुत्र था।

आदगौडा की आयु के बारहवें वर्ष मे उनके मा-बाप का स्वर्गवास हुआ। इसलिये गृहस्थी का भार उनके ऊपर स्वय आ पड़ा। उसके बाद उनका विवाह एक सुशील कन्या के साथ हुवा और वे दिग्रस को सहपरिवार रहने के लिए गये।

आदगौडा को पाच पुत्र हुए। किन्तु दैवलीला के कारण उनके बीच के पुत्र की गाव के अमानुष कलह मे हत्या हुई। इसलिए वे गाव छोडकर सागली को रहने के लिए गये। उन्होने व्यापार में बहुत धन सपत्ति तथा मान कमाया। वे एक महान श्रेष्ठी कहलाने योग्य हुए। किन्तु उनके मन को शान्ति नहीं थी। आदगौडा सुख मे थे किन्तु उनके मन मे हमेशा आता था कि मेरा कमाया हुआ परिग्रह मेरे साथ नही जायेगा क्योकि विद्वानों ने कहा है कि (मराठी भाषामे)

"गाधा गिग्धा उपा मऊपा येथे चकी रहाणार।
सर्व संपत्ति मोडून अंति एकटेच जाणार।।"

ऊपर के मराठी का मतितार्थ यह है कि, सब परिग्रह यही रहेगा। साथ कुछ भी नही जायेगा। इस तरह उनको वैराग्य हुवा। अन्त मे वयोवृद्ध महान् तपस्वी, आचार्य १०८ श्री अनंतकीर्ति महाराज के पास ११ मार्च १९५१ मे उन्होने शुभ मुहूर्त मे क्षुल्लक दीक्षा ली। उस समय उनके साथ वज्रकीर्ति, अर्ककीर्ति रविकीर्ति इन तीनो ने दीक्षा ली। दीक्षा समारभ मे आदगौंडा का नामाभिधान वृषभकीर्ति हुवा। इसमें वज्रकीर्ति और रविकीर्ति का निधन हुवा। पूज्य लक्ष्मीसेन भट्टारक पट्टाचार्य महास्वामी मठ कोल्हापुर रायबाग तमूर इनके पास चार वर्ष तक रायबाग में रहकर धर्म की शिक्षा ली। तदनतर कडोली, बेलगाव, कोल्हापुर, कारनार शिरसी, लातूर, मुरुड आदि स्थानो मे उनके चातुर्मास हुए।

मिती वैशाख सुदी ७ ता० १०–५–६२ गुरुवार दिन मे शिरड शहापुरा में धर्म शिक्षा शिविर चल रहा था, उस समय कारजा निवासी सचालक वर्ग, पडित उत्कलराय विद्यार्थी तथा बहुत नगरवासी महमानों के समक्ष श्री पूज्य १०८ आदिसागर महाराज ने क्षुल्लक १०५ वृषभकीर्तिको ऐलक दीक्षा दी। उस समय उनका नामाभिधान श्री १०५ वृषभसागर रखा गया। उसके बाद कारजा और बार्शी में चातुर्मास हुए।

बार्शी में उनका चातुर्मास बड़े सानंद से हुवा । आपकी अमृतमयी वाणी ने महान् धर्मप्रभावना की । इस पीढ़ी में ऐसा चातुर्मास पहला ही हुआ । बहुत से जैनी होते हुए उनको धर्म के असली तत्वों की जानकारी नहीं थी । आपकी प्रभावना से कभी न आने वाले लोग मंदिर में आने लगे । इसका एक मात्र कारण आपका विशुद्ध चारित्र है । वे लोग आज स्वयं इकट्ठे होकर सानंद धर्मचर्चा शास्त्र आदि अध्ययन करते है । ऐसी महान आत्मा ने आत्म कल्याण किया ।

कुन्थल गिरी सिद्धक्षेत्र पर आपने ४१ दिन का समाधिमरण कर स्वर्ग को प्रयाण किया ।

११३ वर्ष की उम्र में आपने समाधि धारण की । अक्टूबर सन् १९८३ में आपकी समाधि पूर्ण हुई ।



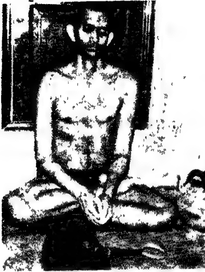
मुनि श्री पिहिताश्रवजी महाराज



आपका जन्म वारग दक्षिण भारत में सन् १८५८ में कालप्पाजी के यहाँ हुवा था । आपकी माता का नाम सावित्री था । आपकी लौकिक शिक्षा ७ वी तक ही हो पायी थी । पू० आदिसागरजी महाराज से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया । कोपरगाव मे आपने २३ वर्ष की उम्र में क्षुल्लक दीक्षा ली । १ माह के बाद आपने मुनिश्री से मुनि दीक्षा ग्रहण की । दीक्षा के पश्चात् बाहुबली, उदगांव, सांगलो आदि स्थानों में विहार कर जैन धर्म की प्रभावना करते रहे । आपने गुरु के साथ म०प्र०,बिहार, राजस्थान, गुजरात, आदि में विहार कर धर्म प्रभावना की । आपने अपने जीवन में अनेकों उपवास आदि किए । तपस्वी जीवन ही मुनियो को कर्मनाश का कारण है तथा आपने अनेक प्रकार की कठोर साधना की अन्त में समाधि पूर्वक प्राणो को त्यागा ।



मुनि श्री वीरसागरजी महाराज



वह पावन वेला, जब श्री गुलाबचन्द खेमचन्द दोशी के पुत्ररत्न प्राप्त हुआ, उस पावन वेला को क्या पता था कि मैं विश्व को आत्मोन्नति का सदेश देनेवाले पुरुष को जन्म दे रही हू। माता सौ० 'चंचल बाई' को क्या पता था कि मेरी कुख मे 'अचल' सुख के लिये मेरा पुत्र परमहस दीक्षा लेगा।

सवत् १९९२ चैत्र वदी १३ रविवार दिनाक ५-५-४० को चरित्र नायक का जन्म हुआ। जन्म समय मे अश्विनी नक्षत्र का पहला चरण था। इस हिसाब से मेष राशि, शशि स्वामी मगल, वर्ण क्षत्रिय, देवगण, अश्व योनि, आद्य नाडी आती है। (नक्षत्र नाम चुन्नीलाल) (जन्म समय रात्रि १० ३० बजे)

कुल परिचय---पूज्य महाराजजी के पूर्वज ईडर (गुजरात) के रहने वाले है। आपके पितामह कलकत्ता मे एक कुशल व्यापारी थे। दूसरे जागतिक महायुद्ध के समय वित्त हानि होने से मानसिक क्षति हो गयी। सन् १९२० मे उनका देहात हो गया। चरित्र नायक के पिताजी उस समय केवल १५ वर्ष के थे। व्यापार के लिये श्री गुलाबचन्दजी कुर्डवाडी (जि० सोलापुर, महाराष्ट्र) आये। वैसे ही व्यापार निमित्त भाबुर्डी आये। यही पूज्य महाराजजी का जन्म हुआ। आपके जन्म समय आपकी माताजी को इतना हर्ष हुआ कि वह हर्ष हर्षवायु बना। लौकिक शिक्षण—प्राथमिक शिक्षण ६ वी कक्षा तक भाबुर्डी मे प्राप्त करने के उपरात फलटण मे हाईस्कूल का शिक्षण पूर्ण किया। उच्च शिक्षा प्राप्ति के हेतु फर्ग्युसन कॉलेज, पूना गये और बी० जे० मेडिकल कॉलेज, पूना से सन् १९६४ मे 'एम बी. बी. एस.' की उपाधि प्राप्त करली।

व्यावसायिक यश—सन् १९६५ मे जि० परभणी (मराठवाडा) आये और स्वतत्र व्यवसाय प्रारम्भ किया। जो भी पेशेंट आपके हॉस्पिटल मे आते उन्हे इसका अनुभव होता कि डॉक्टर एक कुशल डॉक्टर होते हुए भी अतीव सरल परिणामी एव दयालु है। किसी पेशेंट से कभी भी ज्यादा फीस निकालने के परिणाम नही हुए और न जड सम्पत्ति के संग्रह करने का कोई भरसक प्रयत्न किया। परिणाम यह हुआ कि अधिक संपत्ति का संचय न हुआ।

वैवाहिक जीवन—सन् १९६६ में सोलापुर के श्री छगनलालजी गांधी इनकी सुपुत्री कु० शकुन्तला से विवाह हुआ। विवाहोपरांत कु० शकुन्तलाका नाम सौ० अनद्या रक्खा गया। सौ० अनद्यासुविद्य (B A. Hom.), सयमी और सरल स्वभावी थी। सासारिक जीवन निर्विघ्न और अत्यन्त सुख पूर्ण रहा। चरित्र नायक ने जिसदिन दिगबर दीक्षा ली उसी समय सौ० अनद्याबाई ने संसार त्याग दिया। यही उनकी महानता, त्याग गुणों की झलक है।

विरक्ति:—सन् १९६८ से आप (मुनिराज) अध्यात्म की ओर अग्रसर हुए। सन् १९७१ में श्री सि. क्षे. कुन्थलगिरी पर पूज्य मुनि १०८ श्री भव्यसागर महाराज के चरणों में कुछ व्रत ग्रहण किये। श्री महावीरजी, श्री गिरनार क्षेत्र, श्री बावनगजाजी आदि तीर्थक्षेत्रों के पावन दर्शन किये। उत्तरोत्तर वैराग्य भाव की वृद्धि होती रही। अंत मे जब विरक्ति चरम सीमा पर पहुंची तो आपने दिगम्बर दीक्षा लेने का निश्चय किया और परिणाम स्वरूप दिनांक १४-५-७५ अक्षय तृतीया की सुवर्ण बेला में अकलूज (जि० सोलापुर) में प० पू० १०८ श्री आदिसागरजी महाराज के करकमलो से दिगम्बर दीक्षा ग्रहण की।

एक सज्जन ने दीक्षोपरांत मुझ से प्रश्न किया कि क्या महाराज की डिग्री M B.B.S. केन्सिल हुई है। प्रश्न सीधा तो दिखता है परन्तु है कठिन। कुछ सोच विचार न करते हुए मैंने उत्तर में कहा, "हा महाराज आज भी M B.B S. (मास्टर ऑफ ब्रह्मचर्य एण्ड बैचलर ऑफ सम्यक्त्व) है जिस जीव ने अनेक रोगियो की बीमारियाँ दूर की वही M B.B.S. डॉक्टर का जीव आज संसारी जीवो का भवरोग दूर कर रहा है।

जहा तक मुझे ज्ञान है मैं कहूगा आपके विरक्ति के भाव स्वयं प्रेरित थे। ऐसी कोई अनुचित भयंकर घटना नही जिससे आपने ससार त्याग किया। आज महाराज की दिनचर्या ऐसी स्वाभाविक है कि देखनेवालों को लगता है कि महाराज २०-२५ वर्षों पूर्व से दीक्षित हैं। परिणाम अतीव शात है। चर्या निर्दोष है। प्रवचन कुशलता तो अति उच्च श्रेणी की है।

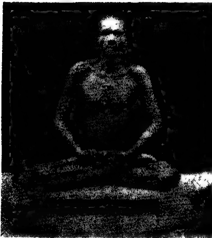


मुनि श्री अजितसागरजी महाराज

नसलापुर ग्राम के किसान परिवार मे १८८५ मे जन्म हुआ। पिता का नाम नेमाधा माता का नाम सीताबाई। इनका पुत्र तारधा लड़कपन में खेत का काम किया। युवावस्था मे शान्तिसागर अनाथाश्रम शेडवाल (बेलगाव) में रहकर कुछ अध्ययन किया। फिर आचार्य शान्तिसागरजी महाराज का प्रवचन सुनकर वैराग्य वृत्ति में दृढ हो गए। घर मे मां बाप जिनधर्म पालन करने वाले थे। वैराग्य वृत्ति बढ़ती गई। फिर चिक्कोडी जिला बेलगांव में मुनि श्री आदिसागरजी महाराज के करकमलों द्वारा क्षुल्लक दीक्षा अगीकार की। फिर परम पूज्य श्री १०८ वृषभसागरजी महाराज के करकमलों द्वारा महांतपुर गाव में मुनि दीक्षा ग्रहण की। अब तक ध्यान स्वाध्याय आदि करते हुए गाव गांव में उपदेश सुनाते हुए भ्रमण कर रहे है और भव्यजीवों को धर्मोपदेश दे रहे हैं।



मुनि श्री श्रुतसागरजी महाराज



आपका जन्म हासूर मे श्रेष्ठी श्री ब्र० बन्नाप्पा के यहा हुआ। माता का नाम श्रीमति रुक्मिणी-देवी था। आपके पिता व्यापार किया करते थे। आपके मन में ससार के प्रति वैराग्य आया तथा मुनि आदिसागरजी महाराज से वी० सं० २४९७ माघ कृष्णा ६ को चिक्कोड़ी मे मुनि दीक्षा लेकर भ० आदिनाथ के बतलाए हुए मार्ग पर चल रहे हैं। आपका पूर्व नाम ब्र० बाबूराव माणगाव था।



आर्यिका स्वर्णमति माताजी

आपका पूर्व नाम सोनाबाई था। आपके पिता का नाम श्री साक्काप्पा तथा मां का नाम श्रीमति सत्यवती था। आपने शैव लिंगायत जाति वैश्य कुल में जन्म लिया था। बीजापुर जिला में सीरगुप्पी कर्नाटक के रहने वाली थी। छोटी उम्र में आपके विचार धर्म के प्रति थे। १८ वर्ष की

उम्र में आपने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत की दीक्षा धारण की । २२ वर्ष की आयु में देशभूषणजी महाराज से ७ वीं प्रतिमा धारण की । श्रावण शुक्ला पंचमी हस्त नक्षत्र को मुनि आदिसागरजी ने आर्यिका पद में दीक्षित किया । आपके द्वारा दक्षिण मे धर्म का काफी विकास एव समय समय पर धर्म प्रभावना के कार्य हुए ।



क्षुल्लिका चन्द्रमति माताजी



अक्षय तृतीया (दिनाक १४-५-७५) का वह दिन कोई नही भूल सकता जिस दिन से सौ० अनघा चद्रकात दोशी पूज्य क्षु० चन्द्रमति माताजी के रूप में दुनिया के सामने आई । आपका जन्म दिनांक १७-४-४४ को वैजापुर मे हुआ । आपके पिताजी श्री छगनलालजी गाधी एक अच्छे व्यापारी हैं । आपके माताजो का नाम सौ० सोनुबाई है तथा आपके ३ बहिन तथा ४ भाई हैं । जन्म नाम कु० खीरनमाला तथा पाठशाला नाम कु० शकुन्तला है । लौकिक शिक्षण में आप बी० ए० ऑनर्स (Geograpby) पास है तथा H. M. D. S. यह वैद्यकीय उपाधि भी प्राप्त की ।

गार्हस्थ्य जीवन —सन् १९६५ में आपका विवाह डॉ० चन्द्रकान्त गुलाबचन्द दोशी (वर्तमान में पू० १०८ वीरसागरजी महाराज) इनके साथ हुआ था । आप रूप लावण्य सपन्न है तथा विद्वत्ता, शालीनता भी साथ है । आपकी वृत्ति पतिसेवा परायण तथा समर्पण वृत्ति है ।

आध्यात्मिक अध्ययन :—पति के साथ आपने तत्वार्थसूत्र, सर्वार्थसिद्धि, समयसार, द्रव्य संग्रह, प्रवचनसार इन कठिन से कठिन ग्रन्थों का अध्ययन किया ।

विरक्ति :— जिस वेग से आपके पति के हृदय में विरक्ति भाव जागे उसी वेग से आप भी विरक्ति में कम न थी । अतः पति के साथ ही साथ दीक्षा लेना स्वाभाविक है ।

विशेषत : आप उपदेश ऐसा देती हैं जो सामान्य जनों के गले में उतरे । आपके उपदेश से अनेक भव्य जीव स्वाध्याय रुचि संपन्न हुए । दीर्घायु तथा आत्मोन्नति की कामना के साथ आदरांजलि सर्मपित है ।



आचार्य श्री सन्मतिसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



आ० श्री सन्मतिसागरजी महाराज

मुनि श्री महेन्द्रसागरजी
,, यजेन्द्रसागरजी
,, पार्श्वसागरजी
,, योगेन्द्रसागरजी
,, ऋषभसागरजी
,, गुणसागरजी
,, चारणसागरजी
,, मेघसागरजी
,, गौतमसागरजी
,, रयणसागरजी
,, तीर्थसागरजी
,, हेमसागरजी
,, रविसागरजी



ऐलक भावसागरजी
क्षुल्लक वीरसागरजी
क्षुल्लक पूर्णसागरजी
क्षुल्लक चन्द्रकीर्तिजी
क्षुल्लक वीरसागरजी
क्षुल्लक समतासागरजी
आर्यिका विजयमतीजी
आर्यिका नेमवतीजी
आर्यिका अजितमतीजी
क्षुल्लिका दर्शनमतीजी
क्षुल्लिका जिनमतीजी
क्षुल्लिका निर्मलमतीजी

मुनि श्री महेन्द्रसागरजी महाराज



आपका जन्म भगवा जिला छतरपुर में संवत् १९७१ कार्तिक सुदी पंचमी को गोलापूरव जाति मे हुवा था। आपके पिता का नाम श्री पचमलालजी तथा माता का नाम भूरीबाई था। आपको लौकिक शिक्षा सामान्य ही रही, बाल्यकाल मे ही आपकी प्रवृत्ति धर्म के प्रति अति तीव्र थी, अत. आपने जैन ग्रन्थों की परीक्षाएं देकर अनेको विषय में योग्यता प्राप्त की, आपने आचार्य श्री सन्मतिसागरजी से क्रमश क्षुल्लक दीक्षा तथा जेठ बदी चतुर्थी को ससार को असार जानकर मुनि दीक्षा धारण की। आप जगह जगह विहार कर धर्म प्रभावना कर रहे है, धन्य है दिगम्बर मुद्रा को।



मुनि श्री यजेन्द्रसागरजी महाराज

आपका पूर्व नाम शान्तिनाथ था। दशा हुम्मड जाति मे जन्म लिया। जन्म स्थान पारसोला (उदयपुर) था। आपके पिताजी का नाम जबरलालजी तथा माताजी का नाम श्री भूरीबाई था। स० २०३९ मे आ० सन्मतिसागरजी महाराज मे खेरवाड़ा मे मुनि दीक्षा ली।



मुनि श्री पार्श्वसागरजी महाराज

मागीलालजी जैन बडजात्या का जन्म मीडा भैसलाना (जयपुर) राजस्थान में श्रेष्ठी श्री गुलाबचन्द्रजी बड़जात्या की धर्मपत्नी को कुक्षि से वि० सं० १९८८ को हुआ था। आपकी लौकिक शिक्षा सामान्य ही रही। धार्मिक ज्ञान साधारण ही था। आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज की निरन्तर एक वर्ष तक संगति व सदुपदेश सुनने से आपके मन में वैराग्य उत्पन्न हुवा तथा पौष शुक्ल

एकादशी वि० सं० २०२६ को तीर्थक्षेत्र वाराणसी (उत्तरप्रदेश) में मुनि सन्मतिसागरजी से मुनि दीक्षा ली। आप अत्यन्त सरल स्वभावी है, आप अनेको स्थलो पर विहार कर आत्म साधना के साथ धर्म प्रभावना कर रहे है।



मुनि श्री योगेन्द्रसागरजी महाराज



आपका (श्री रमेशचन्द्र शर्मा का) जन्म सन् १९६१ मार्च मे श्री फौदलप्रसादजी शर्मा के यहा नबालीपुर (M P.) मे हुवा था। आपने जन्म मे ब्राह्मण कुल मे जन्म लेकर के जैन धर्म की शिक्षा ग्रहण की। आपने लौकिक शिक्षा हायर सैकेण्डरी तक की। दिगम्बर जैन साधुओ की सगति से आपके अन्दर जिनधर्म के प्रति रुचि उत्पन्न हुई तथा आपमे मुनि संयमी जीवन व्यतीत करने की भावना जागृत हुई आपने २५-२-७९ ई० चन्देरी (बामोर) मे आ० सनमतिसागरजी से मुनि दीक्षा धारण की। आज भी आप जैनागम के सिद्धान्त ग्रथों का अन्वेषण कर रहे हैं तथा मुनि धर्म के मूलगुणों का पालन कर रहे है। आप प्रखरवक्ता तथा सरल-मना मुनि है। धन्य है आपका जीवन।



मुनि श्री ऋषभसागरजी महाराज

आपका जीवन बाल्य अवस्था से ही सत् संगति मे बीता है। आपने १६ वर्ष की उम्र में गृह त्याग किया तथा १८ वर्ष की उम्र में मुनि सन्मतिसागर जी से दिगम्बरी दीक्षा प्राप्त की है।

आपने लौकिक शिक्षा हायर सैकण्डरी तक ही प्राप्त की है। आपका त्याग धन्य है जो छोटी अवस्था में अधिक अध्ययन कर प्राणी मात्र का उद्धार कर रहे है। आपके उपदेश में जैन, अजैन, हिन्दू, मुस्लिम आदि सभी वर्ग के लोग आकर उपदेश श्रवण करते है। आपके हृदय में प्राणी मात्र का उद्धार हो यही भावना रहती है।



मुनि श्री गुणसागरजी महाराज

श्री दीपचदजी ने ओबरी जि० डूगरपुर में स० १६४० में दशा हुम्मड जाति में जन्म लिया था। शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपने कपडे का व्यापार किया। आपका मन सांसारिक कार्यों में नहीं लगा तथा मुनि कुन्थुसागरजी से क्षुल्लक दोक्षा ली। नागफणी पार्श्वनाथ में आचार्य सन्मति-सागरजी से मुनि दीक्षा दिनाक ८-५-८३ को ली।



मुनि श्री चारणसागरजी महाराज

श्री जगन्नाथजी का जन्म जेसवाल जाति में सं० १९७३ में अशोक नगर मध्यप्रदेश में हुवा था। आपने सामान्य शिक्षा प्राप्त की तथा व्यापारिक कार्य में लग गये। शुभ संयोग से मुनि श्री के दर्शन एवं प्रवचनों से प्रभावित होकर आचार्य श्री से खेरबाड़ा जि० उदयपुर में सं० २०३९ में जेष्ठ कृष्ण पक्ष में मुनि दीक्षा ले ली। आप सरल परिणामी तथा आर्षमार्ग के अनुसार मुनिचर्या में लीन हैं।



मुनि श्री मेघसागरजी महाराज

श्री धूलचन्दजी का जन्म छीतरी राजस्थान मे सं० १९७१ में हुवा था। सामान्य शिक्षा प्राप्त की। आपने दशा हुम्मड जाति में जन्म लिया। दाहोद गुजरात में सन् १०-१०-८२ को मुनि दीक्षा आ० सन्मतिसागरजी से ली। आप संघ में रहकर मुनि व्रतों को पाल रहे हैं।



मुनि श्री गौतमसागरजी महाराज

सन् १९४० में नागपुर महाराष्ट्र में जन्म लिया था। आपके पिताजी का नाम श्री छगनलालजी पहाड़िया था। आपने सामान्य शिक्षा प्राप्त करने के बाद काटोल महाराष्ट्र में व्यापार किया। आपका पूर्ण नाम नेमीचन्दजी था। सन् १९८१ नागपुर मे क्षुल्लक दीक्षा ली। मुनि दीक्षा १९८२ दाहोद में ली। आपका नाम आचार्य श्री ने गौतमसागर रखा।



मुनि श्री रयणसागरजी महाराज

सं० १९९७ में सरा (खण्डवा) में जन्म लिया था। आपकी शिक्षा मैट्रिक तक इन्दौर में हुई। युवा अवस्था में आने के बाद सामान्य धन्धा करने लगे। तारीख १४-४-८२ को बावनगजा बडवानी में आपने मुनि श्री से मुनि दीक्षा ली। आप भरा पूरा परिवार छोड़कर आत्म कल्याण के पथ में लगे हुए है। वर्तमान मे आप आचार्य श्री के साथ ही है तथा आत्म साधना कर रहे है।



मुनि श्री तीर्थसागरजी महाराज

आपका जन्म अलवर जिला राजस्थान मे सन् १९५१ मे हुआ। आपके पिताजी का नाम श्री बाबूलालजी व माताजी का नाम श्रीमती दुलारीबाई है। आपके ६ भाई एवं ३ बहिने है। आपके पिताजी १५ साल से मुनि सेवा मे रत है व धार्मिक प्रवृत्ति के हैं। आपकी भावना एकदम वैराग्य की ओर जाग्रत हुई और थोडे ही समय में आचार्य श्री विमलसागरजी के साथ रहकर आपने क्रमशः दूसरी, पांचवी व सांतवीं प्रतिमा धारण की व धार्मिक ग्रन्थो का अध्ययन किया। सावन सुदी ६ तारीख २-८-७६ को सोनागिरीजी में चन्द्रप्रभु प्रांगण में आचार्य श्री विमलसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली। आप बड़े शान्तचित्त व मृदुभाषी हैं। आपका अधिकतर समय धार्मिक ग्रन्थो का अध्ययन करने में व्यतीत होता है। बड़वानी में आपने मुनि दीक्षा आ० सन्मतिसागरजी से ले ली।



मुनि श्री हेमसागरजी महाराज



पूर्व नाम :—श्यामलाल जैन

जाति : खण्डेलवाल (लुहाड़िया)

पिता का नाम—स्वर्गीय श्री अनूपचन्द जैन

माता का नाम—कमलेश जैन

जन्म स्थान : खेरलीगंज

जन्म तिथि : दि० १०-७-५५

क्षुल्लक दीक्षा गुरु का नाम : आचार्य श्री सन्मतिसागरजी

क्षुल्लक दीक्षा ग्राम : सिहोरा

क्षुल्लक दीक्षा नाम : क्षु० पवनसागर

क्षुल्लक दीक्षा दिनाक ३०-११-७६

मुनि दीक्षा गुरु का नाम—आचार्य श्री सन्मतिसागरजी

मुनि दीक्षा का नाम : मुनि श्री हेमसागरजी

मुनि दीक्षा दिनाक २८-२-८०

मुनि दीक्षा ग्राम बुढार (म० प्र०)

लौकिक शिक्षा B. A.

धार्मिक शिक्षा—द्रव्यसंग्रह, छहढाला, सर्वार्थसिद्धि, तत्वार्थसूत्र, गोम्मटसार, परीक्षामुख, रत्नकरण्ड श्रावकाचार, समयसार, प्रवचनसार, पन्चास्तिकाय, न्याय दीपिका, पंचाध्यायी राजवार्तिक ।

वर्तमान चातुर्मास—कारजा (महाराष्ट्र)



मुनि श्री रविसागरजी महाराज



मुनि श्री रविसागरजी महाराज

परिचय अप्राप्य



ऐलक श्री भावसागरजी महाराज

श्री ऐलक १०५ भावसागरजी के बचपन का नाम नाथूलालजी जैन था। आपका जन्म आज से लगभग ५५ वर्ष पूर्व बारा सिवनी (म० प्र०) में हुआ था। आपके पिता श्री धर्मदासजी थे। जो सरकारी नौकरी करते थे। आपकी माता आनन्दबाई थी। आप गोलापूर्व जाति के भूषण हैं। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण एव हिन्दी भाषा मे हुई है। आप बाल ब्रह्मचारी रहे हैं।

स्वाध्याय करने से आपके मानस में वैराग्य भाव उठे व आपने कार्तिक सुदी तेरस विक्रम संवत् २०२५ को जबलपुर मे श्री १०८ मुनि सन्मतिसागरजी से ऐलक दीक्षा ले ली। आपने जबलपुर आरा आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म वृद्धि की।

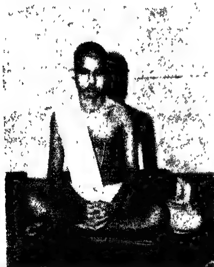


क्षु० श्री वीरसागरजी महाराज

साधु कभी विस्मय नही करते, पर क्षीणकाय हीरालाल जैन खबरा ग्रामवासी (पन्ना) रत्नत्रय पाथेय की करबद्ध याचना करता जब सम्मुख आ ही गया तो शाश्वत तीर्थराज सम्मेदगिरि की वंदना में निमीलित पलकें खोलते हुए आ० श्री सन्मतिसागरजो म० भी उसे क्षण भर बस निहारते ही रह गये । जिस तन को इद्रियों के असहयोग का अतिमेत्थम् मिल चुका हो उसकी अर्जी पर फैसला करना आसान काम न था । संयम की दुर्गम पगडडियों को नापते हुए कही दुर्बल पैर लड़खड़ा न जॉय यह दुविधा निर्णय की राह रोके अलग खडी थी । क्षण भर की शाति के बाद आचार्य श्री ने याचक की निश्छल आंखो में झांका तो अन्तस् की गहराई में उतरते ही चले गये और मिली कसमसाहट की झलक । पल भर मे दुविधा का कुहरा छट गया । सातवीं प्रतिमा के व्रत देकर प्यारेलाल के पुत्र हीरालाल को भी व्रतियों की जमात में मिला लिया गया । जल्दी ही पौष कृ० ४ सं० २०३६ को कटनी मे उसके कठिन इम्तिहान की घडी भी आ गई और आदेश से क्षण भर मे हीरालाल ने केशलोंच कर देह से अपनी निर्ममत्वता सिद्ध कर दी । फिर सब कुछ बदल गया । गाव का हीरालाल सबका हीरा बन गया । आचार्य श्री ने उसे क्षुल्लक वीरसागर नाम से अभिहित करते हुए जैनेश्वरी दीक्षा प्रदान की । गुरु की वैयावृत्ति करते हुए क्षुल्लक वीरसागर महाराज शास्त्रो के गहन अध्ययन मे निमग्न है ।



क्षुल्लक श्री पूर्णसागरजी महाराज



सत्रह वर्षीय नवयुवक अरविन्द को साधु सघ का दर्शन होते ही वैराग्य हो गया तो बस्ती के लोगो ने इसे जन्मातरों का सस्कार ही माना । सुकोमल काया साधना पथ की कठिन यात्रा से कहीं कुम्हला तो नही जायगी बस यही तर्कणा उनके चर्चा की रह गयी थी । पथरिया (दमोह) की बस्ती में अजैन भी जैन श्रावक के व्रत पालते है । वहां की गलियों मे खेलने वाला अरविन्द मुख पर विराग के भाव लेकर शाम को घर लौटता तो पिता कपूरचन्द जैन ने अच्छी तरह समझ लिया कि उनका कुल दीपक गृह त्यागकर जग दीपक बनकर रहेगा । सो गृहस्थी की चर्चा से उन्होने स्वयं ही किनारा कर लिया । माता श्यामा के

हृदय में बहू की साध थी पर वह साध साध ही रह गई। राग पर विराग को विजय हुई और १० मई ६३ को जन्मा अरविन्द २ जून ८० को बुढ़ार (म० प्र०) में आ० श्री सन्मतिसागरजी म० के चरण कमलों में जा उपस्थित हुआ। पानी की धारा भी कही रुकती है। गुरु ने सद्ज्ञान से जानकर सुपात्र को क्षुल्लक दीक्षा प्रदान करने का निश्चय कर लिया। विशाल जनसमूह के समक्ष केशलोंच की कठिन परीक्षा शुरू हुई। गुरु की गरिमा को बढाने वाला अरविन्द सफल हुआ। प्रसन्नचित्त गुरु ने 'पूर्णसागर' नाम से आपको अभिहित करते हुए शिवपथ पर अग्रसर होने का आदेश दिया। तभी से आप स्वाध्याय में लीन होकर आत्म कल्याण कर रहे है।



क्षुल्लक श्री चन्द्रकीर्तिजी



क्षुल्लक श्री चन्द्रकीर्तिजी

परिचय अप्राप्य



क्षुल्लक श्री वीरसागरजी महाराज



क्षुल्लक श्री वीरसागरजी महाराज

परिचय अप्राप्य



क्षुल्लक श्री समतासागरजी महाराज

श्री अमृतलालजी का जन्म डूंगरपुर राजस्थान मे ६० वर्ष पूर्व हुवा था। आपके पिताजी का नाम कस्तूरचन्दजी दशाहुम्मड़ जाति के थे। आपके ३ पुत्र, १ पुत्री है। १ पुत्री कु० वीणा जैन आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर आत्म साधना कर रही है। आपने भरे पूरे परिवार को छोड़कर पू० आ० सन्मतिसागरजी महाराज से क्षु० दीक्षा दिनाक ९-११-८३ को डूंगरपुर मे ही धारण की। अपने नाम के अनुसार ही आपकी वृत्ति है। धन्य है आपका जीवन।



आर्यिका विजयमति माताजी

आपका जन्म पिड़ावा (राजस्थान) जिला भालावाड में सन् १६२८ को हुवा था। आपके पिता का नाम राजमलजी था तथा माता का नाम कस्तूरीबाई था। आपका गृहस्थावस्था का नाम अहिल्याबाई था। गुरु के प्रवचनों से आपके अन्दर आत्म ज्ञान जागृत हुवा तथा मुनि सन्मतिसागरजी से राजस्थान कोटा कार्तिक सुदी ३ स० १६३२ को आर्यिका दीक्षा धारण की। आप राजस्थानी भाषा की जानकार है निरन्तर आत्म कल्याण हेतु स्वाध्याय मनन् चिन्तन मे निरत हैं।



आर्यिका नेमवती माताजी



आपका जन्म मई सन् १६३० ई० मे फफोत (टून्डला) आगरा उत्तरप्रदेश मे हुवा था। आपके पिता व्यापारी थे उनका नाम श्री प्यारेलालजी जैन तथा माता का नाम श्रीमती जयमाला देवी था। सामान्य लौकिक शिक्षा प्राप्त की थी। दिगम्बर जैन साधुओं के प्रवचन सुनकर वैराग्य हुवा तथा आ० श्री सन्मतिसागरजी से १५ अप्रेल १६७५ ई० कलकत्ता में दिगम्बरी दीक्षा ले ली। आप कठोर तपस्वी जीवन व्यतीत कर रही है, निरन्तर व्रतोपवास व धर्म साधना में तल्लीन रहती हैं। आपका पूर्व नाम विहुबाई था।



आर्यिका अजितमति माताजी

पू० माताजी का जन्म सीकर जिले में खुर नामक ग्राम में हुवा था। आपने आ० सन्मतिसागरजी महाराज से ४ वर्ष पूर्व आर्यिका दीक्षा धारण की।



क्षुल्लिका दर्शनमतिजी

आपका जन्म पमला गोनोर म० प्र० में हुवा था। आपके पिता का नाम देवचन्दजी था। आप युवा अवस्था में सन्यास धारण कर आत्म कल्याण के मार्ग में निरत हैं। दाहोद नगर गुजरात में आ० सन्मतिसागरजी महाराज से क्षुल्लिका दीक्षा ली।



क्षुल्लिका जिनमतिजी

आपका जन्म जबलपुर मे हुवा था। आपके पिता का नाम ज्वालाप्रसादजी एव माताजी का नाम श्री कस्तूरीबाई था। आपका पूर्व नाम चेनाबाई था। आ० सन्मतिसागरजी महाराज से आपने क्षुल्लिका दीक्षा ली। आप धर्म ध्यान में लीन रहती हैं तथा आत्म साधना के पथ पर साधना कर रही हैं।



क्षुल्लिका निर्मलमति माताजी



आपका पूर्व नाम मुन्नीबाई था। आपके पिता प्रतिष्ठित व्यापारी श्री कपूरचन्दजी जैन थे। तथा माता का नाम चेनबाई था। आपने छोटी अवस्था में ही क्षुल्लिका दीक्षा धारण कर ली। दीक्षा गुरु मुनि सन्मतिसागरजी से कटनी में सवत् २०३० में दीक्षा ली थी। दीक्षा लेने के बाद आप निरन्तर धर्म साधना में रत रही है।



मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी महाराज (दक्षिण)

द्वारा दीक्षित शिष्य



श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज

मुनि श्री सुबाहुसागरजी





मुनिश्री सुबाहुसागरजी महाराज

आपका जन्म विक्रम सं० १९८६ में हुलगी ग्राम जिला बेलगाँव व मैसूर प्रान्त में हुआ। आपका जन्म नाम तवनप्पा है। पिताजी का नाम बालप्पा और माताजी का नाम श्रीमती जानकीबाई है। आपको बाल्यावस्था से ही धर्मध्यान की ओर विशेष रुचि रही है। आपके यहा परिवार में कृषि-कार्य होता है। सीमंधरसागरजी महाराज का ग्राम भी आपके ग्राम से बहुत निकट है, आपकी उनकी रिश्तेदारी निकट होने से उनसे धर्मोपदेश श्रवण कर आपने भी ब्रह्मचर्य व्रत लेकर गृहत्याग दिया था। वि० सं० २०१५ अगहन शुक्ला १५ को कुन्थलगिरि क्षेत्र पर मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी से मुनि दीक्षा ग्रहण की। आप धर्मसाधन में रत है।

मुनिश्री समन्तभद्रजी महाराज

द्वारा दीक्षित शिष्य



श्री समन्तभद्रजी महाराज



मुनि श्री आर्यनन्दीजी

मुनि श्री महाबलजी

आर्यिका सुप्रभामतीजी

क्षुल्लक जिनभद्रजी

मुनि श्री आर्यनंदीजी महाराज



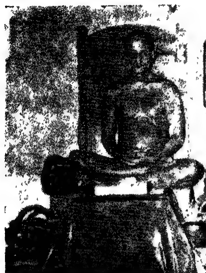
श्री शंकररावजी का जन्म तालुका पेठन नामक ग्राम में हुआ था। आपके पिता श्री लक्ष्मण रावजी अहमिन्द्र थे एव माता कृष्णाबाईजी थी। आपका गोत्र अहमिन्द्र वृषभ था, आप जाति से दि० जैन सेत-वाल थे। आपका विवाह श्रीमति पार्वतीदेवी से हुआ जो धार्मिक कार्यों मे काफी आगे रहती थी एव २ प्रतिमा धारण कर रखी थी। आपके एक भाई व दो बहने थी एवं आपके एक पुत्र व दो पुत्रिया थी जिनमें से पुत्र का स्वर्गवास हो गया। आप निजाम सरकार के कष्टम आफिस मे पेशकार थे। आपकी १९५३ मे पेंशन हो जाने के बाद आपका सम्पूर्ण समय धर्म-ध्यान में जाने लगा।

आप वैराग्य की ओर बढे एव आपने श्री समन्तभद्रजी आचार्य से कुन्थलगिरि में १३-११-१९५९ को दीक्षा ले ली व आप धार्मिक ग्रन्थो का अध्ययन करने लगे। आप हिन्दी, मराठी, अंग्रेजी, उर्दू, गुजराती, सस्कृत आदि भाषाओ के ज्ञाता थे। आपके वैराग्य का प्रमुख कारण पूर्वजन्म एव बचपन के सस्कार एव ससार की विचित्रता व स्वानुभव था।

आपने दीक्षा लेने के बाद ६० मे ६१ तक बाहुबलि कुम्भोज में चातुर्मास किया। सन् ६२ से ६९ तक आप गुरूकुल एलौरा में रहे। आपने एक से अधिक ग्रन्थो का गहन अध्ययन व स्वाध्याय किया। आप स्वभाव से मृदु व अल्पभाषी हैं और विद्वानों के बडे अनुरागी हैं। आप स्वयं एक सजीव सस्था हैं जो संस्था के माध्यम से देश, धर्म व समाज की सेवा में संलग्न है।



मुनि श्री महाबलजी महाराज



पू० मुनि श्री का जन्म कर्नाटक प्रान्त जिला बेलगाव मे खवटखोप्प नामक स्थान में दिनांक २५-१-१६०६ में हुवा था। आपका पालन नानी के यहाँ हुवा था। पिता का नाम कल्लाप्पा दुर्गणावर तथा माता का नाम गंगव्वा था। आपकी लौकिक शिक्षा सातवी तक ही हो पायी। आपका पूर्व नाम भिमाप्पा था। आपने मुनि समन्तभद्रजी महाराज मे २६-१-१९६४ को कारजा में क्षुल्लक दीक्षा ली। मुनि दीक्षा भी मुनि श्री से ली।

आपने कर्नाटक एव महाराष्ट्र में विहार कर प्राणी मात्र के लिए आत्म-कल्याण हेतु धर्म प्रवचन दिया। वर्तमान मे १०८ स्व० प० पू० आ० शान्तिसागरजी महाराज की जन्मभूमि भोजग्राम मे उनके स्मारक कार्य मे सहयोग दे रहे है। आपकी शली प्रभावकारी है। कठोर मुनि धर्म की चर्या का आप अबाधगति से पालन कर रहे हैं। ❖

आर्यिका श्री सुप्रभामती माताजी



आपका जन्म कुरड़वाड़ी (महाराष्ट्र) मे हुआ। आपके पिताश्री का नाम श्री नेमीचन्दजी है।

आपका शुभ विवाह १२ वर्ष की छोटी-सी उम्र में श्री मोतीलालजी के साथ हुआ। अभी मेहदी की लाली हल्की भी न हो पायी थी कि उतर गई। शीघ्र ही इन्होंने अपना चित्त धर्म-ध्यान की ओर लगाया एवं न्याय प्रथमा इन्टर की शिक्षा ग्रहण की। तत्पश्चात् सोलापुर में राजूमती श्राविकाश्रम में १५ साल तक अध्यापन का कार्य किया। वि० सं० २०२४ मिती कार्तिक सुदी १२ को कुम्भोज बाहुबली में आचार्य १०८ समन्तभद्रजी महाराज से आर्यिका दीक्षा ग्रहण की एवं इनका नाम सुप्रभामतीजी रखा गया।

आर्यिका श्री इन्दुमतीजी व सुपार्श्वमतीजी के सघ में प्रवेश कर आप स्वाध्याय में मग्न रहती है एव चातुर्मास मे छात्राओं को पढ़ाती हैं। ❖

क्षुल्लक श्री जिनभद्रजी महाराज



जन्मस्थान	—	मिरज (जि० सांगली)
जन्म सन्	—	१-११-१६०६ में ।
जन्म नाम	—	दादा चौदरी नाद्रे सा० ।
दीक्षा स्थान	—	१९६३ में कुम्भोज बाहुबली ।
दीक्षा गुरु	—	आचार्य समन्तभद्रस्वामी से दीक्षा ली । आप तपस्वी साधु हैं सदा पठन कार्य में लगे रहते हैं ।



मुनिश्री मुनेन्द्रसागरजी महाराज द्वारा
दीक्षित शिष्य



मुनि श्री श्रुतसागरजी महाराज



मुनि श्री श्रुतसागरजी महाराज

पू० महाराजजी का जन्म नुनि आई (आगरा U. P.) मे श्रेष्ठी श्री पन्नालालजी के यहां सं० १९३४ में माता लक्ष्मीबाई की कुक्षि से हुआ। आप जैसवाल जाति के थे। आपका पूर्व नाम कन्हैयालाल था। आपने मुनि मुनीन्द्रसागरजी महाराज से करहल मैनपुरी में मुनि दीक्षा ली। आप पू० आचार्य शान्तिसागरजी महाराज के सघ मे एक विशिष्ट साधु थे। जो शारीरिक दृष्टि से अस्वस्थ रहने पर भी अपने व्रत, नियम, चारित्र के पालन में दत्तचित्त रहते थे। आपका स्वभाव सौम्य शान्त और मनोज्ञ था। आपका यह सौभाग्य था कि आपको ऐसे महान ऋषिराज का सम्पर्क मिला। आपकी समाधि भी हुई।



आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज भिण्ड द्वारा

दीक्षित शिष्य



आ० श्री विमलसागरजी महाराज



आ० श्री निर्मलसागरजी

आ० श्री कुन्थसागरजी

मुनि श्री सुमतिसागरजी

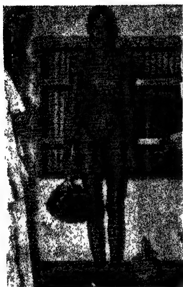
मुनि श्री अजितसागरजी

ऐलक श्री ज्ञानसागरजी

ऐलक श्री सन्मतिसागरजी

क्षुल्लक श्री धर्मसागरजी

आचार्य श्री निर्मलसागरजी महाराज



आचार्य श्री का जन्म उत्तरप्रदेश, जिला ऐटा ग्राम पहाड़ीपुर मे मगसिर बदी २ विक्रम संवत् २००३ में पद्मावती परिवार में हुआ था, आपके पिताजी का नाम सेठ श्री बोहरेलालजी एव माताजी का नाम गोमावतीजी था, दोनों ही धर्मात्मा एवं श्रद्धालु थे। देव, शास्त्र, गुरु के प्रति उनकी अनन्य भक्ति थी तथा अपना अधिक समय धार्मिक कार्यों में ही व्यतीत करते थे। उन्होंने पाच पुत्र एवं तीन कन्या को जन्म दिया। उनमें से सबसे छोटे होने के कारण आप पर माता-पिता का अधिक प्रेम रहा लेकिन वह प्यार अधिक समय तक न चल सका तथा आपकी छोटी उम्र में ही आपके माता-पिता देवलोक सिधार गये थे। आपका बचपन का नाम श्री रमेशचन्द्रजी था। आपका लालन-पालन आपके बड़े भाई श्री गौरीशंकरजी द्वारा हुआ। आपकी वैराग्य-भावना बचपन में ही बलवती हुई थी। आपके मन में घर के प्रति अति उदासीनता थी। आपके हृदय में आहारदान देने व निर्ग्रन्थमुनि बनने की भावना ने अगाध घर बना लिया था। आप जब छहढाला आदि पढते तो इस ससार के चक्र परिवर्तन को देखकर आपका हृदय कांप उठता था एवम् बारह भावना पढ़ते ही आपके भावों का स्रोत बह उठता तथा वह धर्म चक्षुओ के द्वारा प्रभावित होने लगता था। आप सोचते थे कि इन दुखों से बचकर अपने को कल्याण मार्ग की ओर लगाकर सच्चे सुख की प्राप्ति करूँ। इसी के अनन्तर शुभकर्म के योग से परम-पूज्य श्री १०८ महावीरकीर्तिजी का शुभागमन हुआ। उस समय आपकी उम्र १२ वर्ष की थी। महाराज श्री आपके घराने में से हैं। आपने उनके समक्ष जमीकन्द का त्याग किया और थोडे दिन उनके साथ रहे। फिर भाई के आग्रह से घर आना पड़ा। अब आपको घर कैद-सा मालूम होने लगा। आपके भाई ने शादी के बहुत यत्न किये लेकिन सब निष्फल हो गये। आप आचार्य श्री १०८ शिवसागरजी के सघ में भी थोडे दिन रहे। वहा से बड़वानी यात्रा के लिये कुछ लोगों के साथ चल दिये। बड़वानी में आचार्य श्री १०८ विमलसागरजी का संघ विराजमान था। आपने वहां पर दूसरी प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। उस समय आपकी उम्र १५ वर्ष की थी। फिर बाद में आप दिल्ली पहुँचे। वहाँ पर परमपूज्य श्री १०८ श्री सीमन्धरजी का संघ विराजमान था। उनके साथ आप गिरनारजी गये। वहां पर आपने सं० २०२२ मिती वैसाख बदी १४ को क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण

की। उस समय आपकी उम्र १७ वर्ष थी। वहां से विहार कर संघ का चातुर्मास अहदाबाद में हुआ। उसके बाद आपने गुरु की आज्ञानुसार सम्मेदशिखरजी के लिए विहार किया। आप पैदल यात्रा करते हुए आगरा आये वहा पर श्री परमपूज्य १०८ विमलसागरजी का संघ विराजमान था। आपने सं० २०२४ मिती आषाढ़ सुदी ५ रविवार के दिन महाव्रतों को धारणकर निर्ग्रन्थ मुनि दीक्षा धारण की तथा संघ का चातुर्मास वहीं पर हुआ। वहां से विहार करते हुए आप कुण्डलपुर आये। जहां पर आचार्य श्री से ब्र० निजात्मारामजी ने क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। वहा से विहार करते हुए आप श्री सम्मेदशिखर पधारे। वहाँ पर महाराज श्री की तीर्थराज वन्दना सकुशल हुई। बाद में आपका चातुर्मास हजारीबाग में हुआ। उसके बाद आप मधुवन आये। वहाँ पर क्षुल्लकजी ने आप से महाव्रत ग्रहण किये। बाद में आप ईसरी पचकल्याणक मे पधारे तथा वहाँ पर ५ दीक्षायें आपके द्वारा हुई। आप वहां से विहार करते हुए बाराबकी पधारे। जहा पर आपका चातुर्मास हुआ। वहां से विहार करते हुए आप मेरठ आये। मेरठ से आप सघ सहित पाडव नगरी भगवान् शान्तिनाथ, अरहनाथ, कुन्थनाथ, मल्लिनाथ की जन्मभूमि हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र पर जिस दिन भगवान् आदिनाथ ने श्रेयास राजा से प्रथम आदि काल का आहार गन्ने के रस के रूप में लिया था पधारे। संघ सहित विराजकर आपके सम्पूर्ण संघ ने गन्ने का रस लेकर उस दिन की याद को ताजा करा दिया मानो वो ही दृश्य सामने हो। मुनि श्री एक माह रहकर मीरापुर, जानसठ, मुजफ्फरनगर, खतौली, सरधना, बरनावा, बिनौली, बड़ागाँव, बड़ौत आदि इलाको मे होते हुए चातुर्मास के लिए दिल्ली कैलाशनगर में विराजे। आपने अनेको स्थानो पर चातुर्मास किए।

वर्तमान मे आप गिरनार क्षेत्र पर निर्मल ध्यान केन्द्र का निर्माण कार्य आपके सदुपदेश से बन रहा है। आप व्रतों मे दृढ़ एवं साहसी है, सरलता अधिक है, क्रोध तो देखने मे भी नही आता तथा प्रकृति शात एव नम्र है ऐसे वीतरागी निर्ग्रन्थ साधुओं के प्रति अगाध श्रद्धा है।



आचार्य श्री कुन्थसागरजी महाराज

घरकों के मातृत्व सुख की तमन्ना पूरी हुई तो छविराज फूले नही समाये। पिता बन जाने की खुशी में स० १६७२ माघ शु० पंचमी (बंसत पचमी) को धौवा ग्राम (ग्वालियर) की गलियों में उन्होंने बाजे बजवा दिये। गांव की सयानी औरतो ने बधाई गाते हुए सीख दी—लाला ! ललन का

नाम बदरी रखना बदरी। गांव की गलियों में खेलकर स्कूल पहुँचा तो पंडितजी ने पुकारा—बद्रीप्रसाद।

स्कूल की पढ़ाई खत्म हुई तो बद्रीप्रसाद का जी गांव छोड़ने को मचलने लगा। किताबों के दो अक्षर पढ़ते ही उसने जान लिया कि जिन्दगी घर में खपाने के लिये नहीं पंचपरावर्तन मिटाने के लिये मिली है। जीवन को राह मिली पर गति बाकी थी। फिर मिला नेत्रों को सुखकारी पूज्यपाद आ० श्री विमलसागरजी म० का दर्शन और जीवन को मिली गति। आचार्य श्री ने भव्यात्मा पर अनुग्रह करते हुए क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की। कुछ समय बाद सम्मेदशिखर मे समस्त परिग्रहों को समाप्त करने वाली निर्ग्रन्थ मुनि दीक्षा प्रदान कर दी और आपका नाम 'कुन्थसागर' रखा। आप भी चारित्र की सीढ़ियो में स्थिर पग बढ़ाते हुए अपने नर जन्म की सफलता में जुट गये क्योंकि जीवन का सार चारित्र है। कहा भी है—

> थोवम्हि सिक्खदे जिणइ बहुसुदं जो चरित्त संपुण्णो।
> जो पुण चरित्तहीणो कि तस्य सुदेव बहुएण॥

गुरु सेवा करते हुए आपने सतत् स्वाध्याय से जिनागम के रहस्य को हृदयङ्गम कर लिया तथा सुज्ञानदर्पण पुस्तक लिखकर अपनी विद्वत्ता से समाज को विदित कराया। जिन शासन की प्रभावना की।



मुनि श्री सुमतिसागरजी महाराज

आपका गृहस्थ नाम श्री नत्थीलालजी था। पिता श्री छिद्दुलाल एवं माता श्री चिरोंजादेवी के आप लाड़ले पुत्र थे। ग्राम श्यामपुरा, परगना अम्बाह (मुरैना) में क्वार सुदी ६ सं० १९७५ को आपका जन्म हुआ। आप जायसवाल जैन है। आपकी पत्नी का नाम श्रीमती रामश्री देवी है। तीन-भाई दो पुत्र और दो पुत्रियां आपकी हैं। भरे-पूरे परिवार को छोडकर आपने दिगम्बर दीक्षा धारण की है।

आपकी बाल्य काल से ही धर्म में लगन थी। आप अपनी काश्तकारी तथा मामुली व्यापार करते थे आपका विवाह वि० सं० १९८४ में हुआ था और थोडे दिन बाद ही आपको रामदुलारे डाकू हरण कर ले गया था। १४ दिन बाद आप उसके गिरोह से भाग आये। वि० स० २०१० में आप

गाँव से मुरैना में आकर रहने लगे और दुकान का कार्य करते रहे । पुण्योदय से श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी महाराज संघ सहित मुरैना पधारे । इसी समय आपकी धर्मपत्नी ने आपसे कहा कि आचार्य श्री को आहार देने की मेरी इच्छा है । अगर आप आज्ञा देवे तो मैं अशुद्ध जल का त्याग ले लू । आप भी लीजिये । तब आप (नत्थीलालजी) ने कहा आपसे बने तो आहार दो हमसे कुछ नहीं बनता तब आपकी धर्मपत्नी ने अशुद्ध जल का त्याग कर दिया और ज्ञानाबाई के साथ आहार दिया । फिर आपकी धर्मपत्नी ने कहा अब हम अपने मकान पर आहार बनावेगे आप महाराज को ले आवेगे । तब दूसरे दिन घर पर आहार बनाया व आप महाराज को लेकर अपने घर पर आ गये और खड़े रहे । महाराज भी खडे रहे, महाराज की निगाह आप पर पडी तो आपने कहा, महाराज मुझसे त्याग नही बनेगा । तब महाराज लौटने लगे । तब आपने सोचा कि मेरे घर से महाराज बिना आहार लिये लौट गये तो मेरा जैन कुल मे उत्पन्न होना ही बेकार है । फिर क्या था, उसी समय आपके भाव जगे और उसी समय आपने अशुद्ध जल का त्याग किया व आचार्य श्री को आहार दिया ।

आहार देने के बाद भावना हुई कि अब तो त्याग करते जायेगे । फिर पं० मक्खनलालजी की संगति मे रहने लगे व शास्त्र अध्ययन करते रहे । स० २०२१ मे श्री १०८ शान्तिसागरजी महाराज से दूसरी प्रतिमा धारण की व वि० सं० २०२३ में एक मकान खरीदा और इसी वर्ष मुरैना में गजरथ पचकल्याणक महोत्सव हुआ । इस अवसर पर श्री १०८ विमलसागरजी महाराज पधारे । इनसे आपने सातवी प्रतिमा ली और इसी तरह आप त्याग की ओर बढते गये ।

ससार को अस्थिर जानकर आपने मन मे मुनिदीक्षा लेने की धारणा बना ली । सं० २०२४ मे फागुन सुदी १२ को सोनागिरि गये वहा श्री १०८ मुनि निर्मलसागरजी से मुनिदीक्षा लेने का विचार किया । मगर श्री १०८ मुनि विमलसागरजी की आज्ञा न पाकर बाद मे रेवाडी पहुँचे । वहा पर श्री १०८ मुनि विमलसागरजी महाराज से चेत सुदी १३ वि० सं० २०२५ को ऐलक दीक्षा ली और आपका श्री १०५ वीरसागर नामकरण हुआ । वहा से विहार करके श्री गुरुजी के साथ देहली पधारे । वहां पर चातुर्मास किया इसी अवसर पर सर्वप्रथम सावन सुदी ११ को केशलोंच हुआ । केशलोंच के समय आप बडे शान्तचित्त दिखलाई दे रहे थे । थोडी ही देर में आपने केश लोंच कर डाला । इस समय आपकी जय जयकार से आकाश गूंज उठा । चातुर्मास के बाद संघ के साथ साथ आप गाजियाबाद पधारे । अगहन बदी १२ वि० सं० २०२५ को दूसरा केशलोंच हुआ उसी समय श्री गुरुजी से मुनिदीक्षा हेतु प्रार्थना की और उसी समय श्री १०८ मुनि विमलसागरजी

महाराज ने मुनिदीक्षा दे दी, फिर आपका दीक्षित नाम श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज रखा गया।

धन्य है आपकी धर्मपौरुषता को कि चन्द दिनो में ही आप सर्व परिग्रह त्याग कर भरा पूरा परिवार छोड़कर निर्ग्रन्थ मुनिपद प्राप्त कर लिया।



मुनि १०८ श्री अजितसागरजी महाराज

सं० १९५८ में ग्राम कूप जिला भिण्ड मे श्री गणेशीलालजी के घर पर श्री चुन्नीलालजी ने जन्म लिया था। आपने मिडिल शिक्षा प्राप्त करके गृहस्थ धर्म मे प्रवेश किया तथा मुनि विमलसागरजी से सं० २०१२ मे अलवर में क्षुल्लक दीक्षा धारण की तथा सं० २०१७ में भिण्ड में मुनि दीक्षा धारण की। गुरु ने आपका नाम मुनि अजितसागर रखा। आपने जैनागम के ग्रन्थो का स्वाध्याय किया तथा आत्म कल्याण में लगे हुए है।



ऐलक श्री ज्ञानसागरजी महाराज

आपका पूर्व नाम सुगनचन्दजी था। आपका जन्म वि० स० १९५६ पोष माह मे घमसा जि० ग्वालियर में हुवा था। आपके पिता का नाम श्री प्यारेलालजी था। साधारण शिक्षा के बाद व्यापार मे लग गये। स० २०११ मे विमलसागरजो से सातवी प्रतिमा ली। सं० २०१३ में क्षुल्लक दीक्षा एवं सं० २०१६ मे ऐलक दीक्षा ली तथा भारत में गुरुवर्य के साथ विहार किया।



ऐलक श्री सन्मतिसागरजी महाराज

कहावत है कि पूत के पाव पालने में ही दिखाई देते हैं। लोकोक्ति कैसी भी हो परन्तु गांव गढी (भिण्ड) के शिखरचन्द जैन के जीवन में यह कहावत यथार्थ निकली। गढी ग्राम में जैनियों के घर सिर्फ इने-गिने ही है। श्री पातीराम जैन खरोबा (गोत्र पाडे) अपनी पत्नी मथुराबाई के साथ अपने सीमित साधनों से निर्वाह करते हुए धर्म साधना करते थे। पुण्ययोग से स० १९६२ में मंगसिर कृष्णा १२ को इस दम्पत्ति को पुत्ररत्न का लाभ हुआ। जिसका नाम शिखरचन्द रखा

गया । आपके जन्म के एक वर्ष पश्चात् आपके माता-पिता सपरिवार सिरसागंज (मैनपुरी) में आकर बस गये । जहां पर आपकी शिक्षा-दीक्षा हुई । कालान्तर में माता-पिता के देहावसान के बाद आप सपरिवार (स्त्री-पुत्र-पुत्रियों सहित) खड्गपुर (प० बंगाल) में आकर बस गये । परिवर्तन संसार का नियम है । काललब्धि पाकर फलटण मे पू० आचार्य श्री विमलसागरजी म० के दर्शन करते ही आपकी मोहनिद्रा भंग हो गई और गुरु चरणों में आपने सप्तम प्रतिमा के व्रत प्रदान करने की प्रार्थना की । कार्तिक शुक्ल ११ वी० स० २४८५ को आचार्य श्री ने व्रत प्रदान करते हुए आपका नाम मंजिल के अनुरूप 'शिवसागर' रखा । उसी वर्ष फाल्गुन शुक्ला २ को क्षुल्लक दीक्षा प्रदान कर 'ज्ञानसागर' नाम रखा । वैशाख शुक्ल १३ वी० सं० २४८७ को काम्पिल्या मे आचार्य श्री ने आपको 'ऐलक' दीक्षा प्रदान करते हुए आपका नाम वृषभसागर घोषित किया । कर्मयोग से स्वास्थ्य के कारण दीक्षोच्छेद करना पड़ा और क्षुल्लक पद की दीक्षा लेनी पडी जहां आप पूर्व नाम ज्ञानसागर के नाम से प्रसिद्ध हुए । चार वर्ष बाद पुन ऐलक दीक्षा लेकर सन्मतिसागर नाम से रत्नत्रय की आराधना कर रहे हैं ।



क्षुल्लक श्री धर्मसागरजी महाराज

घमंडीलालजी का जन्म सं० १९४१ मे भिण्ड (म० प्र०) मे हुवा था । आपकी माताजी का नाम श्री पानाबाई था । पिताजी का नाम श्री शोभालालजी था । बचपन में सामान्य शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपने अपना व्यापार आदि कार्य सम्भाला । क्षुल्लक स्वरूपचन्दजी से म० १९९५ में दूसरी प्रतिमा धारण की तथा मुनि विमलसागरजी से कोटा में सं० २००४ में क्षुल्लक दीक्षा ली । आप संघ में रहकर ग्रन्थों की नकल करने तथा जिनवाणी की सेवा मे अपना समय लगाते थे ।



मुनि श्री कुन्थसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



आर्यिका शांतिमतीजी

क्षुल्लिका सुशीलमतीजी



आर्यिका शान्तिमती माताजी

आपका जन्म स्थान लखुग्रा M. P. मे है। आपके पिता का नाम नाथूरामजी तथा मां का नाम श्री फूलाबाई था। हिन्दी का साधारण ज्ञान था दीक्षा से पूर्व का नाम कलावती था। आपने मुरेना में सुमतिसागरजी से क्षुल्लिका दीक्षा एवं पोरसा मे मुनि कुन्थसागरजी से आर्यिका दीक्षा ले ली।



क्षुल्लिका श्री सुशीलमतीजी

आपका जन्म स्थान क्षत्रीग्राम है तथा माता हलकी बाई की कुक्षी से जन्म लिया था। आपके पिता का नाम सुन्दरलालजी था। आपका दीक्षा से पूर्व अवस्था का नाम रतनमाला था। स्कूल में ५ वी कक्षा तक ही शिक्षा रही। दिल्ली में मुनि कुन्थसागरजी से क्षुल्लिका दीक्षा ली।



मुनिश्री सुमतिसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री श्रेयांससागरजी
,, पार्श्वसागरजी
,, श्रुतसागरजी
,, विजयसागरजी
,, आदिसागरजी
,, वीरसागरजी
,, विनयसागरजी
,, शीतलसागरजी
,, शम्भूसागरजी
,, भरतसागरजी
,, अजितसागरजी
क्षुल्लक श्री सिद्धसागरजी

क्षुल्लक श्री आनंदसागरजी
,, कैलाशसागरजी
,, गुणसागरजी
,, चन्द्रसागरजी
,, सन्मतिसागरजी
आर्यिका चन्द्रमतीजी
,, पार्श्वमतीजी
,, राजमतीजी
,, ज्ञानमतीजी
,, ज्ञानमतीजी
क्षुल्लिका शुद्धमतीजी
क्षुल्लिका शांतिमतीजी
,, विद्यामतीजी

मुनि श्री श्रेयांससागरजी महाराज



आपका जन्म महाराष्ट्र राज्य के अन्तर्गत मुकाम-तहसील जिला वर्धा ग्राम में तारीख ३१-१२-१९२० में हुवा। आपकी जन्म भूमि वर्धा (महाराष्ट्र) है आपका नाम रत्नाकर हिरासावजी चवडे दिगम्बर जैन है आपके पिताजी का नाम श्री हिरासावजी जिनदासजी चवडे तथा माता का नाम पार्वतीबाईजी है। आपका छापाखाने का धधा नागपुर में था। आपकाछोटा भाई सुभाषचद चवडे हैदराबाद मे प्रेस चलाता है। आपको एक लडकी है, उसका नाम विजयाबाई धोपाड़े है। आपकी भाषा मराठी है। अभी आपकी उमर ५६ साल की है। कारजा में आपने २ प्रतिमा १९६२ मे ली थी और छठी प्रतिमा चापानेर में १९६५ मे धारण की, सप्तम प्रतिमा ब्रह्मचर्य की श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज से भागलपुर में तारीख २-११-७० को ग्रहण की उसके बाद ब्रह्मचारी अवस्था मे १९७२ मे ईडर (गुजरात मे) चातुर्मास किया। उसके बाद आप गुरु के पास आरा गये और वहा गुरु १०८ श्री सुमतिसागरजी महाराज से १० दसवी प्रतिमा तारीख १४-१२-७२ वार गुरुवार को मिती मार्गशीर्ष ९ को धारण की, नाम रत्नसागरजी रहा, फिर आपने गुरु के आदेश से शिखरजी आदि तीर्थों की यात्रा दक्षिण भारत, मध्यभारत, बिहार, उत्तर भारत आदि प्रदेशों मे जो भी सिद्ध क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र और निर्वाण क्षेत्र है, उनकी यात्रा की। आपके दादाजी स्व० जिनदासजी नारायणजी चवडे जैन इन्होंने अपने काल में जैन शास्त्रों का मुद्रण वर्धा प्रेस में किया था।

आप गृहस्थ अवस्था मे जो कि श्रावक के षट् कर्म है, मुनियों को आहार दान दिया करते थे, गुरु की सबोधना से और सानिध्य से उपदेश से और आगम का निमित्त पाकर दृढ़ श्रद्धा बन गई और वैराग्य धारणा से मुनि बन गये। पहिले से ही धर्म की तरफ ज्यादा लगन थी।

आपकी मुनि दीक्षा शुभ मिति वैशाख बदी २ सोमवार तारीख ८-४-७४ को देई ग्राम (राजस्थान) में श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज द्वारा हुई। दीक्षा ग्रहण का नाम श्री १०८ मुनि श्रेयांससागरजी महाराज रखा गया।



मुनि श्री पार्श्वसागरजी महाराज

श्री १०८ पार्श्वसागरजी महाराज का जन्म तहसील फिरोजाबाद में जिला आगरा उत्तर-प्रदेश में शुभ मिती कार्तिक सुदी २ को विक्रम संवत् १९७२ मे हुआ था उनका जन्म अग्रवाल वंश गर्ग गोत्र में हुआ था। उनके गृहस्थ आश्रम का नाम रामगोपाल अग्रवाल जैन था। उनके पिताजी का नाम प्यारेलालजी जैन था और माताजी का नाम द्रोपदी बाई अग्रवाल जैन था। उनकी माता का स्वर्गवास दिनाक १५-१-१९४२ में हुआ और पिताजी का कार्तिक सुदी १५ दिनाक ११-११-१९६२ में हुआ पिताजी के स्वर्गवास के बाद उन्होने मन्दिर का कार्य अपने जुम्मे रखा।

बचपन से उनकी रुचि धार्मिक कार्य में बहुत थी। उनका मुख्य कर्तव्य देवपूजा, व्रत उपवास शास्त्र स्वाध्याय और तीर्थ यात्रा करना ही थी। उन्होने ४ कक्षा तक अभ्यास किया।

सन् १९३३ मे उनकी शादी धोलपुर निवासी लाला गगारामजी की पुत्री रामश्रीदेवी के साथ हुई। शादी के बाद बहुत लम्बे समय मे एक पुत्र हुआ।

बहुत समय के बाद पत्नी और पुत्र को छोड वैराग्य हुआ उस समय पुत्र मुन्नालाल २१ साल का था।

मार्च १९६९ मे श्री १०८ मुनि श्री सुमतिसागरजी और श्री १०८ मुनि श्री ज्ञानसागरजी फिरोजाबाद आये तब उनको वैराग्य भाव हुआ। तब उन्होने पूज्य श्री १०८ आचार्य सुमतिसागरजी से दिनांक ३१-३-६९ चैत्र सुदी १३ सोमवार वीर संवत् २४९५, विक्रम सं० २०२६ के दिन दिगम्बर जैन नशियांजी फिराजाबाद मे दो प्रतिमा के व्रत और आजीवन ब्रह्मचर्य लिया। उनकी धर्मपत्नी ने भी जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्य लिया। मुनि श्री के साथ सम्मेदशिखर यात्रा को गये। अषाढ सुदी ८ सोमवार विक्रम सं० २०२६ वीर स० २४९५ दिनांक २३-६-६९ मे आचार्य श्री के पास बाराबंकी में सातवी प्रतिमा ली। फिर घर आये। कुछ दिन बाद यात्रा को गये वहाँ गुरु सुमतिसागरजी मिल गये। वहाँ विक्रम स० २०२८ असोज सुदी ८ सोमवार तारीख २७-९-१९७१ के दिन दि० जैन थूवनजी में ऐलक दीक्षा ली तथा श्री १०५ ऐलक शीतलसागरजी नाम धारण किया।

फिर वी० सं० २५००, विक्रम स० २०३१ वैसाख बदी २ सोमवार देई ग्राम जिला बूंदी (राजस्थान) पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव मे भगवान के तपकल्याणक के दिन गुरु के पास मुनि दीक्षा ली तथा नाम पार्श्वसागर रखा।

वी० संवत् २५०१ विक्रम सं० २०३२ श्रावण सुदी ७ के दिन ईडर में मुनि वर्धमानसागरजी के समाधि के उपलक्ष में जीवन पर्यन्त हेतु त्याग किया वीर सं० २५०१ विक्रम सं० २०३२ भादवा बदी २ शनिवार दिनांक २३-८-१९७५ ईडर में मुनि श्री संभवसागरजी के समाधि के उपलक्ष में १२ साल की समाधि का व्रत लिया। इसलिये उनने तारीख २३-८-१९८७ तक इस शरीर को छोड़ने का व्रत लिया है।



मुनि श्री श्रुतसागरजी महाराज



जन्म तिथि—

जन्म ग्राम—मेद्दीपुरा (जिला आगरा)

जन्म नाम—विद्याराम

पिता का नाम—सावलदासजी

माता का नाम—नेक श्रीजी

भाई-बहन—जगराम, मूलचन्द, फूलचन्द, भगवती देवी विद्याराम (मुनि श्रुतसागरजी) रामदयाल (दयासागरजी)।

शिक्षा—४ तक

व्यापार—घी

विवाह—२४ वर्ष की आयु में श्रीपालजी की पुत्री रामदुलारी अम्बा जीता मोरेना ३२ वर्ष की आयु में रामदुलारी का स्वर्गवास दूसरा विवाह शांतिबाई जो एक वर्ष बाद स्वर्गवासी हो गयी।

वैराग्य—बचपन से वैराग्य दशलाक्षरी, रतनलाल व्रत १३ वर्ष तक किया तथा ४३ वर्ष की आयु तक ब्रह्मचर्य आचार्य सुमतिसागरजी से।

क्षुल्लक—१९६९-२६ नवम्बर अगहन बदी २०२६ नाम विद्यासागर।

मुनि—२६-२-१९७२ शनिवार फाल्गुन सुदी १२ सं० २०२९ सम्मेदशिखर श्रुतसागर नाम रखा।

वर्षायोग—१० भागलपुर, ११ शिखरजी, १२. भागलपुर, १३ सोनागिरि, १४. जलेसवर (जिला-रोटा) मुवाला मुजफ्फरनगर।



मुनि श्री विजयसागरजी महाराज

जन्म स्थान—ईडर, गुजरात (साबरकाठा)

श्रावक अवस्था का नाम—देवचंद गांधी

पिता का नाम—श्री नाथालाल जैन

माता का नाम—लक्ष्मीबाई जैन

क्षुल्लक दीक्षा कब ली—कार्तिक सुदी ७ सं० २०३२ को श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज से ।

मुनि दीक्षा कब ली—भादो सुदी ३ सं० २०३२ में ली—मुनि सुमतिसागरजी महाराज से ।



मुनि श्री आदिसागरजी महाराज



पद—मुनि पद

जन्म स्थान—राजा खेडा (राजस्थान)

श्रावक अवस्था का नाम—श्री रोशनलाल जैन

पिता का नाम—श्री मवासी लाल जैन

माता का नाम—गुलाब देवी जैन

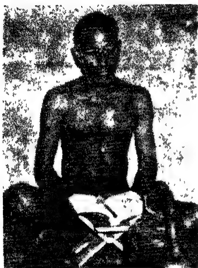
क्षुल्लक दीक्षा कब ली—जेष्ठ सुदी ५ किनसेली में मुनि सुमतिसागरजी महाराज से ।

ऐलक दीक्षा कब ली—सं० २०३१ अगहन सुदी २ किनसेली में श्री मुनि सुमतिसागरजी महाराज से ।

मुनि दीक्षा कब ली—देह गांव स० २०३० मे ली ।



मुनि श्री वीरसागरजी महाराज



सोनागिरि वैसे है तो जैनियो का तीर्थ, सो भीड़ भरी लारिया जब-तब आना यहा के वासिन्दों के लिये श्राम बात हो गई है। पर २३ अक्टूबर ७६ के दिन बे-मौसम श्रावकों का रेला उमड़ता दिखा तो गांव वालों में कुछ जानने की उत्सुकता बढ गई। उत्सुकता की खोज बढ़ी तो हर्ष का ठिकाना न रहा। विजपुरी (भिण्ड) के मोहरलाल का सपूत रामस्वरूप माताकुंवरजी की आंखों का तारा परिवार की ममता को छोड़कर आज धर्मसंघ मे प्रवेश लेने जा रहा था। निर्णय ठीक था। अब मोह जैसी कोई बात नहीं थी।

अब तक संसार चक्र में उसने क्या नही देखा था। सो निर्णय अटल ही रहा। पू० आचार्य श्री सुमतिसागरजी म० ने श्रावकों के हर्षोल्लास के मध्य क्षुल्लक दीक्षा प्रदान कर रामस्वरूप की ससार दशा को समाप्त कर दिया। विनीत शिष्य की योग्यता अपना रग लायी और गुरूवर ने २८ मार्च ७७ को बाह्य आभ्यतर दोनो परिग्रह से मुक्त करते हुए थूवनजी क्षेत्र मे मुनि दीक्षा प्रदान की और आपका नाम "वीरसागर" प्रचालित किया। धन्य है आपका साहस जो इस पंचमकाल में धीर पुरुषों के चित्त को भी दोलायमान करने वाली महाव्रत की कठिन चर्या को अंगीकार करने के भाव हुए।



मुनि श्री विनयसागरजी महाराज



आपका जन्म मिती आसोज बदी ६ सम्वत् १९७९ को ब्यावर जिला (अजमेर) राजस्थान में हुआ। आपका गृहस्थ का नाम श्री हुकुमचन्दजी पाण्डया है। आपके पिताजी का नाम श्री सुखदेवजी व माता का नाम किशनीबाई था। आपने १९४७ में फर्स्ट इयर पास की उसके बाद पिताजी का स्वर्गवास हो जाने के कारण पढाई छोड़नी पड़ी। आपकी शादी श्री हीरालालजी पाटनी किशनगढ वालों की लड़की शातादेवी के साथ हुई। आपकी माताजी का देहान्त आपके जन्म के ६ माह बाद ही हो गया था। आपमे धीरे-धीरे वैराग्य की भावना उत्पन्न होने लगी। आपके १ पुत्र हुआ। सम्वत् २०३१ में आचार्य श्री सुमतिसागरजी के साथ गिरनारजी को गये और रास्ते में ऐलक दीक्षा ली। सम्वत् २०३१ मे आपको ऐपेनडिस की बीमारी हुई जिसको आपने धैर्य के साथ सहन किया किन्तु उसका आपरेशन होने के कारण आपको दुबारा क्षुल्लक दीक्षा लेनी पड़ी। इसके बाद गुजरात में ऐलक दीक्षा ली व ऋषभसागर नाम रखा गया। उसके बाद सम्वत् २०३३ तारीख ३०-८-७६ को श्री सोनागिरजी में मुनि दीक्षा ली व आपका नाम श्री विनय सागर रखा गया।



मुनि श्री शीतलसागरजी महाराज



मध्यप्रदेश राज्य में भिण्ड जिले में मोहनी नाम का नगर है। जहाँ आपके पिता श्री परीछतजी तथा राजमति नाम की मां थी। आपके पिता व्यापार किया करते थे। स० १९७९ को आपका जन्म हुवा तथा पूर्व नाम अशर्फी-लाल रखा गया था। ३-४ वर्ष तक स्कूली शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपके पिता को ग्राम छोड़ना पड़ा इस समय आपकी उम्र १६ वर्ष की थी। आपने व्यापार शुरू किया तथा एक कुशल व्यापारी बन गये। आपका परिवार धार्मिक कार्यों मे सदैव आगे रहता था। मुनि जम्बूसागरजी के दर्शन एवं प्रवचनों को सुनकर घर त्याग करने की भावना हुई। आपने क्षुल्लक दीक्षा ले ली। किन्तु कर्म असाता से क्षुल्लक पद छोड दिया तथा परिवार में जा मिले। पुन: ४५ वर्ष की उम्र मे स० २०३१ को अजमेर मे मुनि सुमतिसागरजी से मुनि दीक्षा धारण की। आपका नाम शीतलसागरजी रखा।



मुनि श्री शम्भूसागरजी महाराज

जन्म तिथि—भादो बदी ८

जन्म स्थान—घमसा

श्रावक अवस्था का नाम—भागचन्दजी जैन

पिता का नाम—श्री गुलजारीलाल जैन

माता का नाम—विटोलाबाई जैन

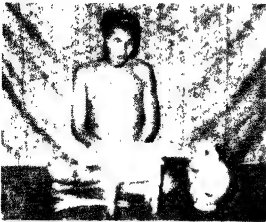
क्षुल्लक दीक्षा कब ली—शिखरजी में निर्मलसागरजी महाराज से

ऐलक दीक्षा कब ली—बाराबकी मे निर्मलसागरजी महाराज से

मुनि दीक्षा कब ली—सावन सुदी। किन से ली—श्री मुनि सुमतिसागरजी महाराज से।



मुनि श्री भरतसागरजी महाराज



आपका जन्म १६ दिसम्बर १९५० को ग्राम गूडर खनियाधाना जिला शिवपुरी में श्रीमती भागवतीबाईजी के उदर से हुआ। आपके पिताजी का नाम श्री गुलाबचन्दजी था। आपका बाल्यावस्था का नाम देवेन्द्रकुमार है। आपकी माताजी की रुचि धर्म मे अधिक होने के कारण उन्होंने सन् १९६२ मे गृह त्याग कर आचार्य श्री १०८ धर्मसागरजी महाराज से दीक्षा ली जो अब आर्यिका श्री १०५ विपुलमतीजी हैं। उन्ही माताजी के सस्कार आप पर भी पड़े। धार्मिक संस्कारों के कारण आपने ससार को नश्वर जान आचार्य श्री १०८ सुमतिसागरजी महाराज से पांचवी प्रतिमा शिखरजी मे तथा सातवी प्रतिमा पावापुरी मे धारण की। फरवरी १९७९ को श्री चंपापुरी सिद्धक्षेत्र मे आचार्य श्री सुमतिसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा धारण की एव १०५ क्षुल्लक सिद्धसागर नाम पाया। आपने सुमतिसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा ली।

❖

मुनि श्री अजितसागरजी महाराज



[परिचय अप्राप्य]

क्षुल्लक श्री सिद्धसागरजी महाराज

पद—क्षुल्लक

जन्म तिथि—पोष सुदी ५ सं० १९८०

जन्म स्थान—भिण्ड

श्रावक अवस्था का नाम—रामस्वरूप जैन

पिता का नाम—श्री महोरमल जैन

माता का नाम—कुंवर बाई जैन

क्षुल्लक दीक्षा कब ली—कार्तिक बदी अमावस्या सं० २०३३

किन से ली—श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज से ।



क्षुल्लक श्री आनंदसागरजी महाराज

पद—क्षुल्लक पद

जन्म तिथि—माघ सुदी १०

श्रावक अवस्था का नाम—मुन्नीलालजी जैन

पिता का नाम—छोटूलालजी जैन

माता का नाम—चिरोंजाबाई जैन

क्षुल्लक दीक्षा—अगहन बदी १० सेलो नामक ग्राम में—श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज से ।



क्षुल्लक श्री कैलाशसागरजी महाराज

त्यागी का नाम—कैलाशसागरजी महाराज

पद—क्षुल्लक

जन्म तिथि—फाल्गुन सुदी १२

जन्म स्थान—फडीयादरा (साबरकाठा) गुजरात

श्रावक अवस्था का नाम—कचरालालजी जैन

पिता का नाम—श्री हेमचन्दजी जैन

माता का नाम—दीवालो बाई

क्षुल्लक दीक्षा—फाल्गुन सुदी । किन से ली—श्री १०८ आचार्य सुमतिसागरजी महाराज से।



क्षुल्लक श्री गुणसागरजी महाराज

आपका जन्म सेठ शान्तिलालजी की धर्मपत्नी की कोख से सन् १९५८ में मुरैना नगरी में हुआ। आपका बचपन का नाम उमेशकुमार था। आपके दो भाई एवं दो बहनें है।

आपने हायर सैकेन्ड्री तक की लौकिक शिक्षा ग्रहण की। उसके बाद न्याय व्याकरण एवं सिद्धान्त में प्रवेश लिया। आपकी रुचि संस्कृत में अधिक है। व्याकरण के आप अच्छे जानकार है। आपने १२ वर्ष की अवस्था मे मुनि श्री विवेकसागरजी के सान्निध्य में पूर्ण केश लोंच कर लिया था।

धर्म के प्रति आपकी बाल्यकाल से ही रुचि थी। आपके बाबाजी ने भी क्षुल्लक दीक्षा ले ली जो १०५ क्षुल्लक वर्धमानसागरजी के नाम से जाने जाते है। आप १९७४ में गृह त्याग कर जयपुर नगर में क्षुल्लक सन्मतिसागरजी ज्ञानानन्द के पास पहुंच गये थे। आपने सन् १९७६ में आचार्य श्री १०८ सुमतिसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की एवं क्षुल्लक गुणसागर नाम पाया। तभी से आप क्षुल्लक सन्मतिसागरजी के साथ हैं। आपकी सौम्य छबि साक्षात् वीतरागता का प्रतीक है आप अच्छे वक्ता भी हैं। आप अपना अधिक समय धर्म ध्यान एवं अध्ययन में देते हैं।



क्षुल्लक श्री चन्द्रसागरजी महाराज

पद—क्षुल्लक

जन्म तिथि—श्रावण सुदी ६

जन्म स्थान—बरबाई (मुरैना) मध्यप्रदेश

श्रावक अवस्था का नाम—श्यामलालजी

पिता का नाम—श्री लालारामजी जैन

माता का नाम—सुमित्रादेवी जैन

क्षुल्लक दीक्षा—श्रवण सुदी ९ को—श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज से ली।



क्षुल्लक श्री सन्मतिसागरजी महाराज



यह भारत वसुन्धरा अनेक महान ऋषि मुनि एव तपस्वियो की जननी है। इस वसुन्धरा पर उन्हीं का जन्म लेना सार्थक है जिन्होंने भारत देश की गौरव गरिमा को बढ़ाया है। इसी शृंखला ग्राम बरबाई जिला मुरैना के बाबूलालजी के घर दिनाक १० नवम्बर १६४६ को मां सरोजबाई की कोख से बालक सुरेशचन्द का जन्म हुआ। सरल हंसमुख स्वभाव, साहस प्रबल, आत्म विश्वास आपमें शुरु से ही है। सभी सुख सुविधाओ से युक्त आपका घर आपको अपने मोह मे नही फंसा सका। आपने २२ वर्ष की अल्पायु मे ब्रह्मचर्य धारण कर लिया। वैराग्य सरिता मे स्नान करते हुए १ फरवरी १६७२ को आपने सम्मेदशिखरजी में मुनि सुमतिसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की आपका नाम क्षुल्लक सन्मतिसागरजी रखा।



आर्यिका श्री चंद्रमती माताजी



पद—आर्यिकाजी

जन्म तिथि—कार्तिक बदी अमावस्या सं० १८५७

जन्म स्थान—(ऋषभदेव) राजस्थान

श्राविका अवस्था का नाम—सुलोचनाबाई जैन

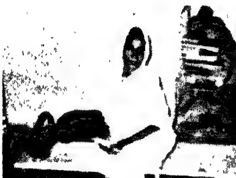
पिता का नाम—श्री अमरचन्दजी जैन

माता का नाम—ललिताबाई जैन

आर्यिका दीक्षा कब ली—माघ सुदी तीज सं० २०३२ को श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज से ।



आर्यिका श्री पार्श्वमति माताजी



पद—आर्यिका

जन्म तिथि—श्रावण सुदी ११

जन्म स्थान—आरा (बिहार)

श्राविका अवस्था का नाम—बृजमोहनी बाई जैन

पिता का नाम—श्री महेन्द्रकुमारजी जैन

माता का नाम—राज दुलारी जैन

आर्यिका दीक्षा—श्रावण सुदी ९ सं० २०३० को श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज से ।



आर्यिका श्री राजमति माताजी

ग्राम—अम्बा (मुरेना)

उम्र—४० चालीस वर्ष

दीक्षा—मुनि श्री १०८ सुमतिसागरजी महाराज से,

[विशेष धर्म प्रभावना का वर्णन]

कोटा (राजस्थान) मे जैन औषधालय व जैन पाठशाला का निर्माण

सागर में वर्णी भवन की नीव डाली गयी।

वाकल (जबलपुर) में पाठशाला खोली गयी।

पाडिचेरी में नयी जमीन नया मन्दिरजी बनाने के लिए खरीद ली गयी है और शीघ्र ही नीव लगाने का कार्यक्रम है।

वर्तमान में किराये के मकान में २ मन्दिरजी है।



बालब्रह्मचारिणी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी



पद—आर्यिका श्री

जन्म तिथि—चैत वदी ५

जन्म स्थान—पोशीना (साबरकांठा) गुजरात

श्राविका अवस्था का नाम—कचनबाई जैन

पिता का नाम—श्री साकलचंदजी

माता का नाम—मणीबाई जैन

आर्यिका दीक्षा—माघ सुदी ३ सं० २०३२ कोनसेली मे श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी महाराज से।



आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी (पोशीना-ईडर)

रामदेश के दशाहुमड़ सेठ साकलचंदजी की पुत्री का कंचन नाम रक्खा । मुनि सुमतिसागरजी का संघ पोशीना ग्राम में आया वहाँ आपने क्षुल्लिका के व्रत स्वीकार किये । उसके बाद आर्यिका पद को धारण कर वर्तमान में सच्ची साध्वी का जीवन बिता रही हैं । आप गुजराती बहनों के लिए आदर्श रूप हैं ।

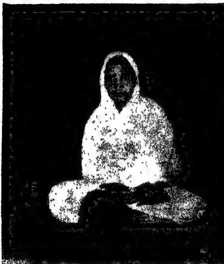


क्षुल्लिका शुद्धमति माताजी

पद—क्षुल्लिका
जन्म तिथि—आषाढ़ शुक्ला ११
जन्म स्थान—ग्वालियर
श्राविका अवस्था का नाम—ज्ञानमति
पिता का नाम—श्री उदयराज जैन
माता का नाम—प्यारीबाई जैन
क्षुल्लिका दीक्षा कब ली—श्रावण सुदी ९
किन से ली—श्री १०८ आचार्य सुमतिसागरजी महाराज से ।



क्षुल्लिका शान्तिमती माताजी



जन्म नाम—मैनाबाई ।
पिता का नाम—श्री भैयालालजी
माता का नाम—श्री रत्नीबाईजी
जन्म स्थान—पनागर (जबलपुर) म० प्र०
शिक्षा—स्वाध्यायी
दीक्षागुरू—श्री १०८ मुनि सुमतिसागरजी

सुश्री मैनाबाई का जन्म पनागर जबलपुर म० प्र० में हुआ । डगमगाते कदम स्थिरता की ओर बढ़े । दृढ़ता प्राप्त कदमो ने काल के साथ दौड़ प्रारभ करदी । ऋतुएं एक के बाद एक आईं और चली गईं । क्षण-क्षण का समय दिन और सप्ताहों मे संचित होने

लगा । सप्ताहों ने महीनों और महीनों ने वर्षो का रूप ले लिया । शैशव बीतने लगा और उम्र के चरण यौवन की ओर बढ़ने लगे । चिन्तातुर पिता ने योग्य घर-वर देखकर आमगांव निवासी श्री सिघई छदामीलालजी के साथ विवाह कर दिया । गृहस्थ जीवन सुख पूर्वक बीतने लगा । घर समृद्ध था, परिवार भरा पूरा था । ससार का जाल काल रूपी मकड़ी ने बुनना प्रारम्भ कर दिया । मातृत्व, सजग हो उठा । वर्षानुक्रम से योग्य समय में सख्या बढने लगी । दो लडके एवं चार बच्चियों की मा अपने घर आंगन में किलकारी मारते, हंसते मुस्कराते फूलों को देखकर फूली नही समाती थी, किन्तु काल की गति विचित्र है । विधि का विधान अमिट है । जन्म के साथ मृत्यु छिपी चली आई है । पतिदेव काल के अतिथि बन गये । खुशिया दुःख मे बदल गई । जीवन मे उदासी आने लगी । समय पाकर छिंदवाड़ा मे आपने आर्यिका धर्ममति माताजी से सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये । जीवन अब धर्म की शरण मे पहुच गया । संसार की वास्तविकता ने उन्हें जगा दिया और मुनि श्री सुमतिसागर (मोरेना) से क्षुल्लिका दीक्षा ले ली । तीन वर्ष तक आचार्य श्री के साथ रहकर इस पद के योग्य समस्त विधि विधान का अध्ययन एव आचरण किया । अब सुविधानुसार कभी स्वतन्त्र रूप से, कभी किसी संघ के साथ विचरण करती हुई कल्याण पथ पर बढ रही हैं ।



क्षुल्लिका विद्यामती माताजी



[परिचय अप्राप्य]

मुनि श्री निर्मलसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



श्री निर्मलसागरजी महाराज



मुनि श्री वर्द्धमानसागरजी	मुनि श्री दर्शनसागरजी
,, शांतिसागरजी	,, सन्मतिसागरजी
,, वीरभूषणजी	,, वर्धमानसागरजी
,, निर्वाणसागरजी	ऐलक श्री सुमतिसागरजी
,, विवेकसागरजी	क्षुल्लक श्री विद्यासागरजी

मुनि श्री वर्द्धमानसागरजी महाराज



जिला बांसवाड़ा (राजस्थान) के ग्राम खांदू के श्रावकों में अग्रणी श्री सुन्दरावत जयचन्दजी के यहां भाद्रपद शुक्ला १४ (अनंत-चतुर्दशी) विक्रम संवत् १९६६ को एक बालक ने जन्म लिया। बालक का नाम रतनलाल रखा गया। आपकी माता का नाम भूरीबाई था। आपके दो बड़े भाई श्री नेमीचन्द और साकरचन्द हुए। आपका गौत्र नरसिंहपुरा है। श्री जयचन्दजी एवं भूरीबाई दोनों ही अत्यन्त धार्मिक प्रकृति के थे। बालक रतनलाल पर अपने माता पिता के सस्कारों का पूरा-पूरा प्रभाव पड़ा। चूंकि आप अपने भाईयों में छोटे थे इसलिए आपको सभी का असीम स्नेह मिला।

जब आप पाच वर्ष के हुए तो आपका नाम गाव की प्रारंभिक पाठशाला में लिखा दिया गया। आप कुशाग्र बुद्धि के थे, अतः सदा कक्षा में प्रथम आते। आपने संस्कृत तथा हिन्दी मे विशारद तक शिक्षा प्राप्त की। आप बचपन से ही गृहस्थ बन्धन से मुक्त होना चाहते थे। जब आपकी अवस्था २० वर्ष की हुई तो माता-पिता ने आपके समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा। किन्तु आप पर तो रग ही दूसरा चढ चुका था। अतः आपने विवाह के बन्धन को स्वीकार न कर आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत ले लिया और २० वर्ष की अवस्था में ही घर छोड़ कर आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज के पास जा पहुचे। विक्रम सवत् १९८८ में जावरा (मालवा) मे सेठ केशरीमल मोतीलालजी द्वारा कराई गई पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर आचार्य वीरसागरजी महाराज से आठवी प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये। तब आपका नाम ब्रह्मचारी ज्ञानसागर रखा गया।

लगातार कई वर्षो तक आप आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज के संघ में रहे। आचार्य श्री के संघ में प्रथम चातुर्मास इन्दौर में किया। बाद मे आप आचार्य महावीरकीर्तिजी के संघ मे भी काफी समय तक रहे। मिति आसाढ़ सुदी १ संवत् २०२८ को सरूरपुर (मेरठ) में मुनि दीक्षा ग्रहण की। आपका नाम मुनि वर्द्धमानसागर रखा गया।

आप महान तपस्वी हैं। कांधला (मुजफ्फरनगर) चातुर्मास के समय आपने ३१ दिन का उपवास किया। इसके बाद आपने अलवर चातुर्मास मे भी ३१ दिनों का उपवास किया। १०-१० दिन के उपवास तो आप अनेक बार कर चुके हैं।

आप महान तपस्वी हैं। अपना समय स्वाध्याय मे लगाते है। आप अत्यन्त शान्त चित्त और सरल परिणामी है।



मुनि श्री शांतिसागरजी महाराज



अचरज की बात थी कि सुखराम को भी सुख की तलाश थी। अलावडा (अलवर) की चौहद्दी में छोटेलाल जैन का व्यवसाय भी ठीक था और पत्नी चन्दन देवी का स्वभाव भी। सो वे भी यह न समझ सके कि उनके बेटे को कष्ट क्या है ? संसार मे रचे-पचे वे दम्पत्ति जब भी पूछते सुखराम बात टाल जाता। चारों भाई-बहिनो ने भी दिल टटोला पर वे भी थाह न पा सके और विराग की तड़फन सुखराम के दिल में बढती ही चली गई। १५ वर्ष की आयु मे माता-पिता ने गृहस्थी के बंधन मे बाध दिया जिसका निर्वाह चालीस वर्ष की आयु तक विरक्त भाव से किया। "कामं कः सेवते सुधी.।" आखिर उपशम की घड़ी आई। आ० श्री देशभूषणजी म० से जयपुर में पहली प्रतिमा के व्रत ग्रहण कर लिये तो लगा कि सच्चा सुख कुछ अधिक दूर नही है। बारावकी मे पू० आ० श्री निर्मलसागरजी म० के चरण कमलो मे बैठकर सप्तम प्रतिमा धारण कर ली। ज्येष्ठ शु० ७ वी० सं० २४९७ में मुजफ्फर नगर मे (श्री निर्मलसागरजी ने) इस सुपात्र को निर्ग्रन्थ दीक्षा देते हुए सुख की तलाश मे भटकते सुखराम को सुखी बना दिया और आपका दीक्षा नाम 'शातिसागर' रक्खा। श्रावण शु० २ वि० स० १९७२ को जन्म लेते ही उसे जिस मंजिल की तलाश थी वह मिल गई। गुरू आदेश से आपने आगम सम्मत घोर तपश्चरण करके कर्मों की असंख्यातगुणी निर्जरा कर अपनी आत्मा को पवित्र बना डाला।

कुछ लोग आश्चर्य करने लगते है कि इस पंचम काल में जीव हीन संहनन से कर्म निर्जरा कहा तक कर पायेगा। अनत संसार मे भटकते हुए जो अब तक नहीं कर पाया वह अब क्या कर पायेगा। उन्हे आचार्य का यह कथन याद रखना चाहिए—

वरिम-सहस्सेण पुरा जं कम्म हणइ तेण काएण।
तं संपहि वरिसेह हु णिज्जरयइ हीण संहणणे ।।
भावसंग्रह—१३१।

मोक्षमार्ग में दृढ़ता से बढ़ते हुए कदमों को देखकर पू० आ० श्री जयसागरजी म० ने कार्तिक बदी १४ सं० २०३६ हस्तिनापुर की पावन भूमि मे आपको आचार्य पद प्रदान किया।

स्व-पर कल्याण में निरत रहकर आपने अब तक दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हस्तिनापुर, सम्मेदशिखर आमीन नगर सराय, रामपुर मनिहारान में चातुर्मास किये जहां अनेकों भटके हुए जोवों को सद्मार्ग पर लगाकर धर्म की प्रभावना की। आपकी बहिन ने भी (आर्यिका शांतिमती) जिन-शासन की महान् सेवा की।



मुनि श्री वीरभूषणजी महाराज



मुनिराज श्री का जन्म अगहन बदी ५ (पंचमी) सम्वत् १९७० में, मोजासोडा जिला भिन्ड म० प्र० में श्री बिहारीलालजी के परिवार मे हुआ। आपकी मातु श्री का नाम राजमनि देवी था आपके परिवार में तीन भाई एवं एक बहिन है जिसमे बडे भाई का नाम चम्पाराम है जो अभी खास परिवार ग्राम सुकाण्ड जि० भिन्ड म० प्र० में रह रहा है। महाराज ने आत्म शुद्धि हेतु सम्पूर्ण भारत की यात्रा वंदना दीक्षा से पूर्व ही पूर्ण कर ली एवं बम्बई महा-नगर में रहते हुए भांडुक में अपनी सम्पत्ति से एक जिन मंदिर बनवाया। इसके लिए आपके प्रेरणा स्रोत थे आचार्य श्री निर्मलसागरजी महाराज। प्रारम्भ से ही आपके भाव मुनि दीक्षा ग्रहण करने के थे। इसका निमित्त श्रवण

बेलगोल में रास्ते में मुनि श्री मुनिसुव्रतसागर महाराज से महन्तपुर महाराष्ट्र में मिला। तभी से दक्षिण एवं श्रवणबेलगोल की यात्रा करके आप हाल में श्री सिद्धक्षेत्र गिरनार में चातुर्मास कर रहे हैं। अभी तक आपने सिद्धक्षेत्र की २५१ वंदना सम्पन्न कर ली है। हाल में आप आचार्य श्री निर्मलसागरजी महाराज के साथ रहकर आत्म कल्याण में लगे हैं।



मुनिश्री निर्वाणसागरजी महाराज



आपके पिताजी थे लगाती कुलभूषण श्री रामप्रसादजी आपकी माताजी थी भूरीबाई। दोनों उत्तम प्रकृतिवाले थे। उन दोनों के स्वभाव का गहरा असर आप पर भी पड़ा। बचपन से ही आप जैनधर्म और उसके सिद्धांतों के प्रति श्रद्धान्वित थे। गृहस्थावस्था का आपका नाम था कुन्दनलालजी।

अठारह साल की उम्र में आपका पाणिग्रहण-संस्कार हुआ चिन्जाबाई से जो वमनी गांव (मध्यप्रदेश) की रहने वाली थी। दुर्भाग्य से शादी के बाद तीन वर्ष के भीतर ही चिन्जाबाई के प्राणपखेरू उड़ गये। होनहार को कौन रोक सकता है।

पश्चात् आपके धर्म-रत पिताजी का भी स्वर्गवास हो गया एवं आपकी माताजी का भी।

आप सांसारिक-लौकिक बंधनों से मुक्त हो गये। घर मे रहते हुए भी आप, जैसे पानी में रहते हुए भी कमल पानी से अलिप्त रहता है, वैसे विकथाओं से अलग रहकर निर्ममत्व भाव से अपना कालयापन करते थे।

त्याग के सोपान पर।—आपने ४६ वर्ष की उम्र में मुनि श्री १०८ निर्मलसागरजी से क्षुल्लक-दीक्षा अंगीकार की। दीक्षा-स्थल था कुण्डलपुर जिला दमोह (मध्यप्रदेश)।

१९६९ में तीर्थाधिराज सम्मेदशिखरजी की पारसनाथ टोंक पर आप मुनि श्री १०८ निर्मल सागरजी के सान्निध्य में निर्ग्रन्थ-दीक्षा से विभूषित हुए। मुनि-दीक्षा से अलंकृत होने से आपके प्रगतिशील जीवन में जैसे चार चाद लग गये।



मुनि श्री विवेकसागरजी महाराज

उमर के साठ बसन्त निकलते ही घर के किसी कोने में बूढ़े को बिठा देने का गांव का आम रिवाज बदस्तूर अब भी निर्विघ्न चल रहा है। इस सदर्भ मे हर बार तर्क के घेरे में फेंका गया सवाल कुण्ठित होकर निकला है। घर का उद्दाम युवा शासक साठिये की अन्तःशक्ति की ओर झाके बिना उसे साठियाया कहने में अपनी भलाई मानता है। लेकिन बकटलाल की करनी से उन्हें भी आखिर दांतों तले अंगुलिया दबानी पड़ी। नादेड जिले में सोरडवनिका गाव विरागियों का गढ है वहा श्रावक शकरलाल पत्नी सोनाबाई के साथ व्यवसाय से जीवन निर्वाह करते हुए धर्माराधना मे समय बिताते थे। सं० १९७२ मे बंकटलाल ने इन्ही के घर जन्म लेकर निजकुल के साथ-साथ जिनशासन गोरवान्वित किया। कारण छोटा सा था विराग का, पर था हृदय की गहराई तक धंस जाने वाला। "शैव" साधु की विरागी प्रवृत्ति ने इन्हे झकझोर डाला। सुमार्ग सद्गुरु की पहचान का विवेक उन्हे अच्छी तरह था। सन् ७१ मे आ० श्री विमलसागरजी म० से सप्तम प्रतिमा के व्रत लेकर कठिन परीक्षा की तैयारी शुरू की। आसोज कृ० ९ सं० २०३३ को औरंगावाद मे पू० मुनि श्री निर्मलसागरजो म० के समक्ष देह निर्ममत्व की परीक्षा देते हुए कृपासिन्धु गुरुवर से क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। आचार्य श्री ने आपके विवेक की सराहना करते हुए "विवेकसागर" नाम से पुकारा। आपको तेलगू, हिन्दी, उर्दू, गुजराती, मराठी, राजस्थानी भाषाओं का अच्छा ज्ञान है। सम्प्रति गुरु आदेश से अपनी विवेक असि को भांजते हुए कर्मों की कड़ियां काट रहे हैं।



मुनिश्री दर्शनसागरजी महाराज



मुनि श्री का जन्म भारतवर्ष की राजधानी दिल्ली में हुवा था आपके पिता का नाम श्री सूरजभानजी जैन अग्रवाल तथा मां श्री का नाम श्रीमति रतनमालाजी जैन था आपने ६ फरवरी १९७२ को मुनि श्री निर्मलसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली कुछ वर्षो के पश्चात् आपने मुनि दीक्षा ले ली ।



मुनिश्री सन्मतिसागरजी महाराज (अजमेर)



मुनि श्री सन्मतिसागरजी महाराज का जन्म राजस्थान के सुप्रसिद्ध नगर अजमेर में खण्डेलवाल जैन समाज के बज गौत्रिय परिवार मे सौभाग्यशाली श्रीमान् सेठ फूलचन्दजी की धर्मपत्नी श्रीमती जोधीबाई की कुक्षि से भाद्रपद शु० सप्तमी वि० सं० १९६८ को हुआ । दम्पत्ति ने बडे प्यार से संतान का नाम रखा "भवरीलाल" । और बगैर यह देखे कि ससार भंवर में फंसी प्राणियों की नैया को भंवरलाल कैसे निकालता है, उसे डेढ वर्ष का ही छोड़-कर संसार से विदा हो लिये । फलत: आपके पालन-पोषण का भार चाचा श्री मानमल जैन के कधों पर आ पडा । काल क्रम से आप प्रारम्भिक लौकिक और धार्मिक शिक्षा समाप्त कर निजी व्यवसाय मे लग गये । व्यापार मे न्याय नीति से धनोपार्जन कर बाजार में अपनी साख जमा ली । व्यवसाय करते हुए भी आपने जैन श्रावक के सभी आवश्यक कार्य पूजन प्रक्षाल सामायिक शास्त्र श्रवण आदि में कभी शिथिलता नहीं आने दी ।

विराग की धारा :

बचपन से ही माता-पिता का साया उठ जाने के कारण संसार की विचित्र दशा देखने का अवसर दो वर्ष की अल्पायु से आपको मिल रहा था। और यही कारण है कि भवभोगों की क्षण-भंगुरता का उपदेश लेने आपको कहीं भटकना नही पड़ा। उदासीन चित्त पिजडे में कैद पछी की तरह वैराग्य के लिये छटपटा रहा था।

कर्म महादुठ वैरी मेरो ता सेती दुख पावे।
तन पिजरे मे बध कियो मोहि यासो कौन छुडावे ॥

सो परिवार में किसी ने इतना साहस ही नही जुटा पाया कि आपको विवाह के लिये सहमत कर सके। बाल ब्रह्मचारी भंवरीलाल के जोवन की यह पहली विजय थी। मन मे मद-मद मुस्कान लिए एक दिन वह वहां जा पहुंचा जहा उसके कर्मास्त्रवों के छिद्रों मे रोक लगाने के लिये मुक्तिमार्ग के साक्षात् निदर्शक कृपालु संत पूज्य मुनि श्री विमलसागरजी म० विराजमान थे। एक उदासीन को मुनि श्री ने क्षुल्लक दीक्षा देकर वैराग्य सवर्द्धक उपदेश से भव्यो की मन पाखुडी खिला दी। उस दीक्षोत्सव को देखकर आपकी रुचि वैराग्य की ओर हो गई और व्यापार मे विमुख होकर मघ में ही रहने लगे। इसी दरम्यान एक विचित्र घटना घट गई जिसने आपके विरागी जीवन धारा मे प्रवाह ला दिया।

हुआ यह, एक बार आप क्षुल्लक शांतिसागरजी म० के साथ अजमेर की ओर वापिस आ रहे थे। मार्ग में पीसांगन ग्राम के समीप धर्म की शीतल छाया से सर्वथा अस्पृश्य, नवकार की मधुरिम ध्वनि से अस्नातित कर्ण वाले विषयासक्त दीर्घससारी साधु निदको ने क्षुल्लक श्री शीतल-सागरजी म० को कु दुकवत् किलोल करते हुए गहरे कूप में फेंक दिया। सच ही कहा है दुर्जन व्यर्थ मे शत्रुता करते हैं।

मृगमीन सज्जनाना तृण जल-सनोष विहितवृत्तीनाम।
लुब्धक धीवर पिशुना निष्कारण वैरिणो जगति ॥

धर्म की महिमा का अचित्य प्रभाव, क्षुल्लकजी म० ने कुएं की दीवार पर लटके हलाहल विष वमन करने वाले काले भुजग को रज्जु समझ कर पकड़ लिया और लटके रहे। श्रावकों ने उपसर्ग दूर कर जब आपको वहां से निकाला तो सर्प भी अदृश्य हो गया। इस घटना से जीवन और जगत के

प्रति हृदय के किसी कोने में अवशिष्ट आसक्ति पर भी विरक्ति का पूरा कब्जा हो गया। अजमेर आकर आपने अपना करोबार बन्द कर दिया। और फिर, घर छोड़ा तो ऐसा कि भूल कर भी मुख न किया। सम्यक्त्व का प्रभाव ही ऐसा है।

कालक्रम से आप नसीराबाद आये, जहां पर श्री १०८ मुनि श्री ज्ञानसागरजी म० के धर्मोपदेश से कर्मबेडियां चटकने लगी। मुनिराज से सप्तम प्रतिमा के व्रत लेकर अपनी सम्यग्-गठरी को सम्भालने में दत्तचित्त हो गये।

मुक्ति की राह :

सम्वत् २०१९ ईसरी में पंच कल्याणक प्रतिष्ठा का आयोजन हो रहा था। १०८ श्री निर्मल सागरजी म० एकान्तवादियों की दुर्मति सप्तभगी तीक्ष्ण धारा से काट-काट कर निर्मल मति में परिणित कर रहे थे। इन्ही मुनिराज के चरण सान्निध्य में आपने क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण की। दीक्षित होने के बाद आप गुरुपद कमलों का अनुगमन करते हुए धर्म-ध्यान करते रहे तथा तप संयम में अपने भाव लगाते रहे।

विक्रम सं० २०२० में गुरुदेव से बाराबंकी चातुर्मास के समय ऐलक दीक्षा प्राप्त की। सं० २०२५ में विनीत शिष्य के लिये समय आया शिवपथ मे छलाग लगाने का। देव भी तरसते हैं जिस सयम के लिये उसे पाने को शिष्य ने झोली फैला दी। खेखड़ा मे गुरु ने मुनि दीक्षा देकर उसे कृत-कृत्य कर दिया। अन्तरंग-बहिरग परिग्रह को त्याग करने की सन्मति जिसके हो जाय भला उसकी पात्रता मे सदेह की गुंजाइश ही कहा हो सकता है। सो गुरु ने इस भव्यात्मा का नाम सन्मतिसागर रखकर औरों को भी "सन्मति" देने का आदेश दिया। शिष्य ने अपने तीनों पदों की दीक्षा काल के गुरु पू० श्री निर्मलसागरजी म० के आदेश को शिरोधार्य कर जिन शासन प्रभावना के लिये अपना कदम बढ़ा दिया।

धर्मप्रचार एवं प्रभावना :

आपने देश भर में भ्रमण करके धर्मामृत की वर्षा से भव्यों के हृदय कमलों को सिंचित करते हुए प्रफुल्लित किया। समडा और बिजौरी में हजारों अजैन नर-नारियों ने आजीवन मद्य-मांस-मधु का त्याग करके जिन शासन के महत्त्व को अंगीकार किया।

परीषह जय :

श्री सम्मेदगिरि की वन्दना कर जब आप कटनी (म० प्र०) के पास पहुंचे तो एक ग्रामीण ने मधु-मक्खियो के छत्ते में पत्थर दे मारा जिससे मधु-मक्खिया आपकी देह से चिपट गई परन्तु आप अत्यन्त भावना भाते हुए जरा भी विचलित नही हुए। अत्यन्त वेदना को सहन करते हुए चलते रहे। कुछ समय बाद आप गिरकर अचेत हो गये। कटनी के श्रावक प्रमुख आपको नगर में ले आये जहा तीन दिन बाद मधु-मक्खियाँ अलग की जा सकीं परन्तु आपने उफ् तक न की। घोर उपसर्ग में भी आपका मन रत्नत्रय की आराधना में लगा रहा।

पूज्य मुनि श्री गुरु पद चिह्नों का अनुगमन करते हुए श्रावकों की सम्यग्दर्शन भावना को दृढतम् बना रहे है। धर्मवत्सलता का बीज वटवृक्ष का रूप धारण करता रहे और पूज्य श्री अपनी कृपा से श्रावक वर्ग को संसार की असारता का भान कराते रहे, यही प्रार्थना है।



मुनिश्री वर्धमानसागरजी महाराज (दक्षिण)



पू० मुनि श्री का जन्म दक्षिण भारत मद्रास के समीप में हुवा था। आपकी भाषा तेलगू है आप मुनि श्री निर्मलसागरजी से मुनि दीक्षा लेकर आत्म कल्याण के पथ पर चल रहे है वर्तमान में आप आचार्य धर्मसागरजी महाराज के संघ में विराज रहे हैं।



ऐलक श्री सुमतिसागरजी महाराज

तारादेही (दमोह) के श्री गुलझारीलाल जैन सर्राफ एक दिन खानदानी व्यवसाय को छोड़कर शिवपथ के अनुगामी बनेंगे इसका तो रत्तीभर भी गुमान उनके पिता लक्ष्मीचन्दजी को भी न था। सं० १९८३ माघ शु० १४ को इस प्रतिष्ठित सर्राफ परिवार में इस विभूति का जन्म हुआ तो माता कौशल्या देवी की चिरसाध मानो साकार हो उठी। ग्रामीण वातावरण में भला पले-पुषे अल्पशिक्षित दम्पत्ति की मनोकामना सांसारिक विषयों के अतिरिक्त हो भी कहां सकती थी। परन्तु जल्दी ही उनका यह मोहजाल टूट गया जब उन्होंने अपनी इस प्यारी संतान को भव भोगों से विरक्त पाया। विरक्ति का कारण कुछ भी रहा हो पर यह निश्चित है कि सत्संगति और सांसारिक सबंधों के स्वार्थपना की अनुभूति आपके चित्त को विराग की ओर उन्मुख करती रही। विराग का यह स्रोत स० २०१३ में पू० मुनि श्री विमलसागरजी महाराज के चरणों का आश्रय पाकर फूट ही पड़ा। जीवन मे धर्मक्रान्ति का बीज अकुरित हो उठा। पू० मुनि श्री ने इस निकट भव्य को तृतीय प्रतिमा के व्रत ग्रहण कराकर संसार भ्रमण सीमित कर दिया। सं० २०२५ में पूज्य मुनि श्री निर्मलसागरजी महाराज ने सुपात्र की योग्यता परखकर 'ऐलक' पद की दीक्षा प्रदान की और आपका नाम सुमतिसागर घोषित किया। होनहार की बात, क्षणभर पहले का गुलझारीलाल सर्राफ गुरु कृपा से रत्नत्रय का पाथेय लेकर भवबन्धन का जाल काटने के लिए घर से निकल पड़ा। तब से न जाने कितने भटकते हुए जीवो को इस विभूति ने सद्धर्मामृत का पान कराकर सन्मार्ग मे लगा दिया। निरन्तर धर्मप्रचार और धर्म साधना करते हुए आप चारों अनुयोगों के स्वाध्याय में दत्तचित्त रहते हैं।



क्षुल्लकश्री विद्यासागरजी महाराज

अनादि की भूल सुधारने का एक अवसर नरतन मे ही मिल पाता है फिर और पर्याये तो ऐसी है कि उनका न होना ही आतम हित मे है। अलबत्ता ऐसा मानकर चलने वाले भी हममें से इक्के-दुक्के ही होते हैं। संसार भोग से कुछ ऐसा तृष्णा भाव हो जाता है कि वितृष्णा की बात असुहानी लगने लगती है। नर जीवन का इससे अधिक उपहास और क्या हो सकता है। बात हर बार वही चलती है पर 'करूंगा' के इति शब्द से आत्महित की इतिश्री न जाने कितनी बार करने की गल्ती अनायास ही होती जाती है। 'संमीलने नयनयोर्नहि किञ्चिदस्ति' की भावना भाने वाले श्री

भुंवरलाल रूखवदास वोरालकर अंजनीखुर्द (वुलढाणा) अपने पिता श्री रूखवदास घोंडीवा वोरालकर माता देवकीबाई के अनेक प्रयासों के बावजूद भी जल से भिन्न कमलवत् गृहस्थी से अलिप्त से बने रहे । १८ मई १६१८ को आपके जन्म के उपरान्त परिवार में आनन्द की जो लहर दौड़ी थी वह २३ जून ७४ से क्षीण हो चली । जब आपने पू० आचार्य श्री निर्मलसागरजी महाराज से सिंदखेडाराजा में ब्रह्मचर्य प्रतिमा की दीक्षा ले ली । यही नहीं उसी वर्ष १० अक्टूबर (७४) को औरंगाबाद के राजा बाजार मंदिर में पूज्य श्री से ही क्षुल्लक दीक्षा ग्रहण कर सच्चिदानंद की प्राप्ति के लिये अपने पग बढ़ा दिये । हर जैन श्रावक परिवार में एक क्षीण धर्म की ज्योति सदैव टिमटिमाती रहती है । बस थोड़ा सा बाह्य संयोग भर का इंतजार रहता है । वह जिसे समय पर मिल पाया उसके सच्चिदानंदमय बन जाने में भला विलम्ब कहां । शास्त्रवाचन चिंतन-मनन से वैराग्य की दिशा में मन उन्मुख हुआ सो फिर रुका नहीं । क्षुल्लक विद्यासागर के रूप मे अब आज हमारे सम्मुख धर्मामृत की वर्षाकर महान उपकार कर रहे हैं । अपने दीक्षा काल से लेकर अब तक आपने औरंगाबाद, कुम्भोज, बाहुबली, हराल, अंबड, चिंचवाड वसागड़े और परभणी में चातुर्मास करके श्रावकों को रत्नत्रय के मार्ग में अग्रसर करने का महान कार्य किया है ।

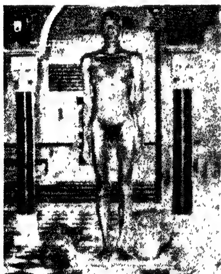


मुनिश्री जयसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री पुष्पदन्तसागरजी
क्षुल्लक श्री सुमतिसागरजी
क्षुल्लक श्री विजयसागरजी



मुनि श्री पुष्पदन्तसागरजी महाराज

आपने पू० मुनि जयसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा ली तथा आत्म कल्याण के पथ पर अग्रसर हैं।



क्षुल्लक श्री सुमतिसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक सुमतिसागरजी का जन्म सिरोंज (मध्यप्रदेश) में हुआ। आपने विक्रम संवत् १९६२ में अनुराधा नक्षत्र में मंगलवार को जन्म लिया। आपके पिता श्री मंगलजीत भल्ला थे और माता मिश्रीबाई थी। उन्होंने बड़े स्नेह से आपका नाम बदामीलाल रखा। आपके नाम का प्रभाव जीवन पर भी पड़ा। धर्म और समाज के हित में आप बाहर से बादाम के छिलके से व भीतर से अतीव गुणकारी रहे।

जब असमय में ही गृहस्थी का ग्रह आपको लगा तब आपने पर्याप्त परिश्रम करके सभी बहनो के विवाह किये। आत्मीयों की प्रेरणा से आपने अपना विवाह भी किया। दस बरस तक

दाम्पत्य जीवन का निर्वाह किया पर विवाह विराग में बाधक नहीं बना । पुत्र उत्पन्न मात्र हुआ और साथ ही अपनी मां को भी लेता गया ।

आपने घर और परिवार छोडकर, शरीर और संसार से विरक्त होकर आजीवन ब्रह्मचारी रहने का निश्चय किया और श्री १०८ मुनि नेमिसागरजी से सातवीं प्रतिमा ले ली । पूज्य गणेश-प्रसादजी, सहजानन्दजी वर्णी के सान्निध्य ने आपको आत्मबोध की दिशा में बढने के लिये प्रेरित किया । विक्रम संवत् २०२३ मे श्री १०८ मुनि जयसागरजी से आपने क्षुल्लक दीक्षा ले ली । आप सरलता और सादगी, सौजन्य और विद्वत्प्रेम के प्रतिनिधि हैं । पडित द्यानतराय के शब्दों में आप आर्जव धर्म के प्रतिनिधि है ।



क्षुल्लकश्री विजयसागरजी महाराज

बच्चों को सखा कहने वाले, उनसे घुलमिलकर उनकी बातचीत मे रम लेनेवाले और उन्हें सहज सरल स्वभाव से धर्म की शिक्षा देने वाले क्षुल्लक है विजयसागरजी ।

आपका जन्म संवत् १९६८ में कोठिया मे हुआ । आपका बचपन अतीव सुखमय बीता । १६ वर्ष की अवस्था मे आपका विवाह हुआ । एक पुत्र भी है ।

दस बरस बाद जब गृहिणी का स्वर्गवास हो गया तब आपके मन में विचार आया—यों गृहस्थी में रहकर आत्महित करना सम्भव नही । गृहस्थी तो काजल की कोठरी है । इसमें मनुष्य कितना भी सावधान होकर क्यो न रहे । पर राग-द्वेष, क्षोभ-लोभ, काम-क्रोध की रेखाये लग ही जाती हैं । यह विचार आते ही आपने बान्धवों और वैभव को छोड़ दिया ।

संवत् २०१७ में देवली में आपने मुनि श्री जयसागरजी से ब्रह्मचर्य प्रतिमा ले ली । छह वर्ष बाद आपने क्षुल्लक दीक्षा भी पिडावा में ले ली । यद्यपि आपकी लौकिक धार्मिक शिक्षा लगभग नही ही हुई थी तथापि गीत भजनो और स्वाध्याय तथा सत्संग के माध्यम से आपने जो आत्मानुभूति पायी उसे धर्म और समाज के हित मे वितरित करते रहते है ।

बड़ों को उपदेश देनेवाले तो बहुत हैं पर वे मानते नही है । जो मान सकते हैं उन्हे कोई उपदेश देता नही है । आपकी यह बात सोलह आने सही है ।



मुनि श्री पदमसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



क्षुल्लक श्री चन्द्रसागरजी



क्षुल्लक चन्द्रसागरजी महाराज

खुर्जा (U P.) में जन्म लेकर आपने खानदान को पवित्र किया । आपके पिता का नाम श्री दीनानाथजी था, तथा माताजी का नाम श्री कृष्णा बाई था । सन् १९७४ में आपने मुनि पदमसागरजी से उपदेश सुना तथा क्षुल्लक दीक्षा लेने के भाव हुए तो मुनि श्री ने क्षुल्लक दीक्षा दे दी । आप अपने व्रतों को पालन कर रहे हैं ।



मुनि श्री श्रेयांससागरजी महाराज वर्धा

द्वारा दीक्षित शिष्य



मुनि श्रेयांससागरजी महाराज

ऐलक श्री चन्द्रसागरजी

क्षुल्लक श्री विश्वनन्दीजी

ऐलक चन्द्रसागरजी महाराज



आपका जन्म सिमरया जि० ललितपुर में हुवा था । आपका नाम बच्चूलाल था । आपके पिता मोदी खुशालचन्दजी थे । परिवार जाति में जन्म लेकर जाति को उन्नत बनाया । आप ३ भाई तथा एक बहिन है । माडूमल जैन विद्यालय मे शिक्षा प्राप्त की थी । भ० महावीर स्वामी के निर्वाण महोत्सव के पावन अवसर पर मासोपवासी मुनि सुपार्श्वसागरजी से दूसरी प्रतिमा के व्रत धारण किए। सं० २०३२ मे मुनि नेमसागरजी से क्षु० दीक्षा ली स० २०३७ में फिरोजाबाद में श्रेयांससागरजी से ऐलक दीक्षा ली।

क्षुल्लक श्री विश्वनंदीजी महाराज

आपका जन्म जैनवाडी (जि० सोलापुर) सन् १९५७ में हुआ । आपका गृहस्थ अवस्था का नाम शान्तिनाथ कलवंडा पाटील रहा । आपने मुनि श्रेयांससागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली । ❖

मुनि श्री सुव्रतसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री निर्वाणसागरजी

क्षुल्लक श्री महावीरकीर्तिजी

श्री सुव्रतसागरजी महाराज



मुनि श्री निर्वाणसागरजी महाराज

पिता का नाम—बाबूलाल जैन

माता का नाम—सुन्दर बाई

जन्म स्थान—गाव तालबेहट, जिला—ललितपुर

जन्म नाम—महेन्द्रकुमार जैन

जन्म दिवस—दिनांक ५-८-५२ ई०

दीक्षा गुरु—मुनि श्री सुव्रतसागरजी

वैसाख सुदी छठ पुष्य नक्षत्र में प्रात।



क्षुल्लक श्री महावीरकीर्तिजी महाराज

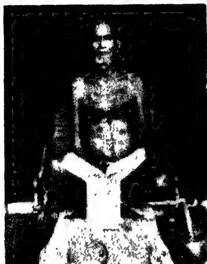


आपके पिता का नाम श्री ईश्वरीप्रसादजी तथा मां का नाम धन्नोबाई था। आपका नाम नेमीचन्द जन्म १९२३ में कार्तिक बदी त्रयोदशी के दिन हुआ था। धोलपुर में जन्म लेकर यहीं पर सामान्य लौकिक शिक्षा प्राप्त की। २५ अप्रेल सन् १९८३ को महावीर जयन्ती के दिन सम्मेदशिखरजी में मुनि श्री सुव्रतसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा धारण की। आपका नाम क्षुल्लक महावीरकीर्तिजी रखा गया।





मुनि श्री विजयसागरजी महाराज द्वारा
दीक्षित शिष्य



श्री विजयसागरजी महाराज

मुनि श्री विमलसागरजी

क्षुल्लक श्री ज्ञानानन्दसागरजी

मुनि श्री विमलसागरजी महाराज

ग्वालियर राज्य के समीप महापनो नामक ग्राम मे सेठ भीकमचन्द्रजी जैसवाल के यहां सं० १९४८ में केसरीलाल पुत्र का जन्म हुआ। इनकी माता का नाम श्रीमती मथुरादेवी था ८ वर्ष की अवस्था में इनके पिता का स्वर्गवास हो गया, इनके छोटे तीन भाई थे। इन सबका भार इन्ही के ऊपर था। आप बचपन मे ही स्वाध्याय के प्रेमी थे। सं० १९६८ में पहली शादी हुई। पत्नी का देहान्त हो जाने के कारण दूसरा विवाह सं० १९७७ मे हुआ दूसरी पत्नी का देहान्त सं० १९९२ में हो गया। आपमें वीतराग भाव जागा। सं० १९९३ में दूसरी प्रतिमा का व्रत धारण किया। परिणामों में निर्मलता आई और सं० १९९७ में श्री १०८ मुनि विजयसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। उसके

तीन महीने बाद ऐलक दीक्षा ली । सं० दो हजार में कोटा नगर में विजयसागरजी के साथ चातुर्मास किया और उसी समय दिगम्बर मुनि दीक्षा ग्रहण की । आपका नाम विमलसागरजी रक्खा गया । तप: साधना के कीर्तिमान पुरुषार्थी सन्त शिरोमणि मुनिराज है ।



क्षुल्लक श्री ज्ञानानन्दसागरजी महाराज



संसार में सब कुछ परिवर्तित हो जाता है परन्तु विराग का संस्कार लम्बी प्रक्रिया से भले गुजरे मिटता नहीं है पर संस्कार हो विराग का ही । अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी स्व० पू० श्री १०८ ज्ञानसागरजी महाराज की परम्परा मे पू० आ० श्री विद्यासागरजी म० द्वारा भला जिस जीव को विराग से संस्कारित किया गया हो उसकी महानता के बारे में कहना ही क्या ! श्री सोहनलालजी छाबड़ा, टोडारायसिंह (राज) उन उत्तम महापुरुषों मे से एक है जिन्हे ऐसे तपस्वी आचार्यो की सत्सगति मिली । स० १९९१ मे श्री सुन्दरलाल जैन के घर में आपका जन्म हुआ । माता धापूबाई ने जन्म से ही धार्मिक संस्कारों मे आपकी गहरी रुचि जाग्रत कर आपको उत्तम श्रावक बनाने की दिशा में पहल की । कालान्तर में १० नवम्बर १९७६ में पू० श्री विजयसागरजी म० के चरणों का आश्रय पाकर आपने कुन्नी ग्राम में क्षुल्लक दीक्षा का महान् व्रत धारण किया । गुरु परम्परा के अनुरूप आप ज्ञान प्रसार मे अहर्निश संलग्न है ।



मुनिश्री सम्भवसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री सुवर्णभद्रसागरजी

मुनि श्री १०८ सुवर्णभद्रसागरजी महाराज

परम ज्ञानी ध्यानी तपस्वी मुनि श्री का जन्म गुलवर्गा जिले के नदूर ग्राम में हुआ था। आपके पिता अनतप्पा और माता रत्नाबाई थी। इनका गृहस्थ अवस्था का नाम शांतिलाल है। माता पिता भाई बहिन स्त्री पुत्रादि तथा आर्थिक स्थिति उत्तम होते हुए भी आप इन सबसे सम्बन्ध त्यागकर आत्म कल्याण के मार्ग पर अग्रसर हुए।

आपने पूज्य श्री १०८ आचार्य धर्मसागरजी महाराज से ११ साल पहिले सप्तम ब्रह्मचर्य प्रतिमा ली थी। आपकी प्रबल भावना थी कि मै मुनिव्रत को ग्रहण करके दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तपादि आराधनाओ का सम्यक् प्रकार से पालन करके इस दुर्लभ नरभव को सफल करूं। तब आपने सन् ७४ मे पूज्य श्री मुनि १०८ संभवसागरजी महाराज से मुनि दीक्षा ग्रहण की और आत्म साधना मे लग गये। आपने जबलपुर में चातुर्मास किया। आपने अभी चारित्र शुद्धि व्रत में १२३४ उपवास करने का नियम लिया है। आप पहिले २ उपवास के बाद तीसरे दिन पारणा करते थे और अभी १ उपवास के बाद पारणा करते है। ३ या ४ घटे तक लगातार प्रतिदिन एक पैर से खड़े होकर उग्र तपश्चरण व ध्यान करते हैं। आप स्वभाव से सरल मृदुभाषी और अध्ययन शील हैं। आहार में मात्र एक अन्न लेकर और सर्व प्रकार के रसों का त्यागकर नीरस आहार ग्रहण करने का आदर्श पेश कर रहे हैं।



मुनिश्री कुन्थसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री वीरसागरजी
क्षुल्लक श्री कनकनन्दीजी
आर्यिका चन्द्रमतीजी
क्षुल्लिका कुलभूषणमतीजी
क्षुल्लक कामविजयनन्दीजी

मुनि श्री वीरसागरजी महाराज



आपने स० १९८५ में परसाद (उदयपुर) में जन्म लिया। आपके पिता का नाम श्री चम्पालालजी था। आपका पूर्व नाम गणेशीलालजी था। आपके २ बच्चे है। आप कपडे का काम करते थे। प्रतिदिन स्वाध्याय करते थे मन में वैराग्य आया तथा मुनि पार्श्वसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा धारण की सं० २०३५ में फाल्गुन सुदी पूर्णिमा के दिन आपने कुन्थसागरजी से तारंगाजी क्षेत्र पर दिगम्बर मुद्रा धारण की। आपका स्वभाव बड़ा सरल है नित्य ही ज्ञान ध्यान में लीन रहते हैं।



क्षुल्लक श्री कनकनन्दीजी महाराज

आपका जन्म ओडिशा प्रान्त में हुआ था। आपके पिता का नाम मोहन प्रधान एवं माता का नाम रुकमणी देवी था, आपकी जाति क्षत्रिय काश्यप वंश है। आप छात्र अवस्था से ही धर्म, रूढ़ि एवं अन्धविश्वास आदि के बारे में परीक्षा करने लगे, धर्म का स्वरूप जानने के लिये एवं विभिन्न धर्मों की परीक्षा करने के लिये आप भारत के विभिन्न धर्म संस्थापकों एवं धर्म प्रचारकों के पास गये, आपने मैट्रिक पास करके लौकिक शिक्षा का त्याग कर दिया। जैन धर्म की परीक्षा करने के लिये शिखरजी आये एवं एक दो माह परीक्षा के बाद मुनि श्री कुन्थुसागरजी एवं सिद्धान्त विशारदा श्री १०५ आ० विजयमती माताजी के पास गोम्मटसार जीवकाण्ड एवं कर्म काण्ड तक ४ वर्ष में अध्ययन करके २४ वर्ष की उम्र में पपौराजी में मुनि श्री १०८ कुन्थसागरजी महाराज से दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा नाम क्षुल्लक कनकनन्दि रखा गया।



आर्यिका चन्द्रमती माताजी

जन्म स्थान—बेलापुर ग्राम (मैनपुरी)

जन्म—अगहन बदी २ विक्रम १६८२ नाम—चन्द्रकली बाई

पिता का नाम—श्री लालारामजी

माता का नाम—कस्तूरीबाईजी

वैराग्य का कारण—संसार की असारता देखकर स्वयं वैराग्य

दीक्षा गुरु—कुन्थसागरजी

दीक्षा उम्र—३० वर्ष

वर्तमान आयु—५६ वर्ष



क्षुल्लिका कुलभूषणमती माताजी

आपका जन्म ललितपुर यू० पी० मे हुआ। आपके पिता का नाम पूरनचन्दजी था। आपने परवार जाति में जन्म सन् १६६० में लिया था। आपका पूर्व नाम श्री कान्तिबाई था आपकी

लौकिक शिक्षा १० वी तक हुई । १ जुलाई १९८० में सिद्धक्षेत्र कुन्थलगिरी पर आर्यिका श्री विजयमती माताजी द्वारा क्षुल्लिका दीक्षा ली । आप अकलूज तथा तमिलनाडू मे चातुर्मास कर धर्म-प्रभावना कर रही हैं ।



क्षुल्लक कामविजयनन्दीजी महाराज

जन्म स्थान—सागर (मध्यप्रदेश)

पूर्व नाम—श्री धन्यकुमारजी

पिताजी का नाम—खाज्जूलालजी

माताजी का नाम—श्री नोनीबाईजी

शिक्षा—११ वी तक

दीक्षा—२ दिसम्बर १९८१ को तुमुकट शहर कर्नाटक में मुनि कुन्थसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ली ।

आप युवा अवस्था में ही घर परिवार को छोड़कर निवृत्ति का मार्ग अपना कर मोक्ष मार्ग की प्राप्ति का पुरुषार्थ कर रहे है ।



मुनि श्री सन्मतिसागरजी महाराज द्वारा

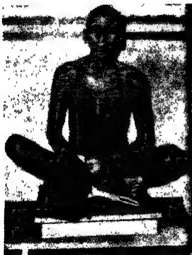
दीक्षित शिष्य



मुनि श्री ज्योतिभूषणजो



मुनि श्री ज्योतिभूषणजी महाराज



आपका पूर्व नाम अप्पाण राज्य जैन था। आपके पिता श्री चक्रवति नैनार जैन तथा माँ प्रभावति अम्मा थी। आपने तमिलनाडू मद्रास के समीप पुन्नूर ग्राम मे ७-२-१९१६ में जन्म लिया था। धार्मिक सस्कार के कारण आपने १८-११-७४ को मुनि सीमन्धरसागरजी महाराज से क्षुल्लक दीक्षा सवाई माधोपुर में एवं मुनि दीक्षा सन्मति-सागरजी से ली। आप आत्म-साधना के कठोर मार्ग में संलग्न हैं। आचार्य धर्मसागरजी महाराज के समीप रहकर आत्म कल्याण के मार्ग में लगे हुए हैं।



मुनि श्री निर्वाणसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



क्षुल्लिका धर्ममतीजी

क्षुल्लिका श्री धर्ममती माताजी

पू० साध्वीजी का जन्म कोथली में सेठ कालीशाह के यहां हुआ था । आपकी माता का नाम घुन्धुबाई था । आपने पंचम जाति गोत्र में जन्म लिया । आपकी शादी कोल्हापुर मे हुई थी, किन्तु कुछ समय के बाद ही पति का वियोग हो गया । आपकी आयु ३५ वर्ष की ही है । मुनि श्री निर्वाण-सागरजी महाराज से आपने सोनागिर सिद्धक्षेत्र पर क्षुल्लिका दीक्षा धारण की । आप धर्मनिष्ठ हैं तथा आपका त्याग मय जीवन उत्कृष्ट है ।



मुनि श्री विवेकसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री विजयसागरजी
मुनि श्री विनयसागरजी

मुनि श्री विजयसागरजी महाराज

आपका जन्म खाचरियावास (सीकर-राजस्थान) ग्राम में श्री उदयलालजी गंगवाल की धर्मपत्नी श्रीमति धापूबाईजी की मंगल कुक्षि से भादवा सुदी १० रविवार स० १९७२ को हुवा था। आपका जन्म नाम श्री जमनालाल रक्खा गया। लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक शिक्षा भी आपने बाल्यकाल मे की। बचपन के संस्कार आगामी जीवन मे भी काम आये। आपने मुनि विवेकसागरजी महाराज से रेनवाल (किशनगढ़) मे माघ सुदी पचमी सवत् २०२९ को मुनि दीक्षा धारण की। आप अहर्निश धर्म साधन कर रहे है। ❖

मुनि श्री विनयसागरजी महाराज



जयपुर जिले के 'दूदू' कस्बे के श्रावक शिरोमणि श्री गेन्दीलालजी बोहरा की धर्मपत्नी गैन्दीबाई की कोख से आपका जन्म हुवा। आपका बचपन का नाम रतनलालजो था। आप ३ भाई थे, आप सबसे बडे है। प्रारम्भ से ही धार्मिक कार्यो मे आपकी अधिक रुचि रही है। कस्बे मे शिक्षण व्यवस्था की कमी होने के कारण आप अधिक शिक्षा प्राप्त नही कर पाये। १३ वर्ष की उम्र में आपका विवाह चिरोंजाबाई के साथ हो गया। गृहस्थ जीवन मे आपने व्यापार किया। क्रमशः मुनि वर्धमानसागरजी क्षु० सिद्धसागरजी, मुनि विजयसागरजो से २-५-७ प्रतिमा धारण की। स० २०३३ में नावां में मुनि विवेकसागरजी से बैसाख बदी दूज को मुनि दीक्षा धारण की। आप जैन धर्म की अपूर्व प्रभावना कर रहे है। ❖

मुनिश्री विजयसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री विमलसागरजी

मुनि श्री विमलसागरजी महाराज

मुनि श्री विमलसागरजी का गृहस्थावस्था का नाम किशोरीलालजी था। आपका जन्म पोष शुक्ला दूज संवत् १९४८ में हुआ था। आपका जन्म स्थान महानो जिला गुना है। आपके पिता श्री भीष्मचन्दजी थे जो किराने के सफल व्यापारी थे। आपकी माता श्रीमती मथुरादेवी थी। आप जैसवाल जाति के है। आपकी धार्मिक व लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई। आपके दो विवाह हुए, आपकी दो बहिनें थी।

संसार की असारता, शरीर भोगों से उदासीनता के कारण आपमे वैराग्यभाव जाग्रत हुए इसलिए संवत् १९९६ को कापरेन ग्राम रियासत बूंदी में श्री १०८ मुनि विजयसागरजी से दीक्षा ले ली। आपने मुरैना, इन्दौर, कोटा, मन्दसोर, उज्जैन, भीलवाडा, गुनाहा, अशोकनगर, इटावा, आगरा, लखनऊ, लश्कर, दिल्ली आदि स्थानों पर चातुर्मास किये और वहा की धर्मप्राण जनता को धर्मज्ञान दिया। आप कर्मदहन और सोलह कारण व्रत करते है। कडवी तूम्बी के आहार से आप बड़वानी मे तीन वर्ष तक बीमार रहे। आपने मीठा व तेल का आजन्म त्याग किया है। आपके ऊपर भौर व मच्छ द्वारा उपसर्ग भी किया गया।



मुनि श्री मल्लिसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



क्षुल्लक श्री विजयसागरजी



क्षुल्लक श्री विजयसागरजी महाराज

क्षुल्लक विजयसागरजी का जन्म वैसाख सुदी ६ सं० १९६६ को दोसा जिला जयपुर (राजस्थान) में हुआ। आपके पिता का नाम श्री भूरामलजी तथा माता का नाम गेंदाबाई था। आपका गृहस्थ अवस्था का नाम श्री सोभागमलजी था। दिगम्बर जैन खण्डेलवाल छाबड़ा गोत्रीय होने के नाते बचपन से ही धर्म के प्रति आपकी रुचि थी। स्थानीय पाठशाला में ही हिन्दी की साधारण परीक्षा उत्तीर्ण कर आप धर्म चर्चा में लीन रहते थे। गुरु वंदना करते हुये सं० २००२ में ललितपुर में आपने परम पूज्य माताजी पार्श्वमतीजी से सप्तम प्रतिमा धारण की। सं० २००३ में जयपुर में परम पू० १०८ मुनिराज श्री मल्लिसागरजी से आपने क्षुल्लक दीक्षा धारण कर ली। धर्म-प्रचार करते हुये आपके चातुर्मास जयपुर, अलीगढ़, झालरापाटन, कटनी, द्रुग, बूंदी, सागर, खुरई आदि विभिन्न स्थानों पर हुये। रत्नकरण्ड श्रावकाचार तथा तत्वार्थ सूत्र का आपको अच्छा ज्ञान था।



मुनिश्री जम्बूसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री जयसागरजी



मुनि श्री जयसागरजी महाराज

आपका पूर्व नाम श्री दीपचन्दजी था, आपके पिता का नाम श्री केशरलालजी था, माता श्री वाग्देवी थी। आपका जन्म जयसिंहपुरा (जयपुर) राजस्थान में हुवा। आप खण्डेलवाल जाति के थे।

आचार्य जम्बूसागरजी से आपने कुन्थलगिरि सिद्ध क्षेत्र पर मुनि दीक्षा ली। आपने अनेकों स्थानों पर औषधालय और पाठशालाये खुलवाईं। अनेको स्थानों पर आपने चातुर्मास किए तथा अपने प्रवचनों से धर्म प्रचार कर रहे हैं।



मुनि श्री ज्ञानभूषणजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



आर्यिका सरस्वतीमतीजी

आर्यिका सरस्वतीमती माताजी

१०५ आ० श्री सरस्वतीमती माताजी का जन्म डबका गाँव में हुआ। आपके पिता का नाम गुपुलालजी व माता का नाम मणिबाई था। आपका जन्म नाम अंगूरीबाई रक्खा जैसे अंगूर अन्दर से नरम और ऊपर से भी नरम होता है वैसे ही माताजी का स्वभाव भी सरल प्रकृति का है। स्कूली शिक्षा नहीं मिलने पर भी आपने एक एक अक्षर स्वतः ज्ञात करके सीखा अपनी दैनिक क्रिया व स्वाध्याय अच्छी तरह करती हैं। अल्पायु में ही विवाह जतवारपुरा में हो गया। आपके पति का नाम खुशीलालजी था। शादी के सात वर्ष पश्चात् ही पति का वियोग हो गया। आपके दो पुत्र हुये उनका सर्व भार आपके ऊपर आगया। बच्चों की पढ़ाई लिखाई शादी करने के पश्चात् आपने आ० विमलसागरजी महाराज से दूसरी प्रतिमा के व्रत ले लिये। घर मे रहकर व्रतों का पालन किया। चार महिने पश्चात् हो कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी के दिन लश्कर में ही सीमन्धर महाराज से सप्तम प्रतिमा ली। परन्तु आपके मन में इससे सन्तोष नही मिला और वैराग्य भाव को वृद्धि हुई तो सं० २०३२ में ज्ञानभूषणजी महाराज से अहमदाबाद में बैसाख शुक्ला चतुर्दशी को आर्यिका दीक्षा ली। अब आप हर वक्त धर्म ध्यान में लवलीन रहती हुई अपना समय व्यतीत करती हैं आपका ध्यान उपवास आदि में विशेष रहता है बेला-तेला हर समय करती रहती हैं। धर्म-ध्यान पूर्वक इसी प्रकार समय व्यतीत करें यही हमारी भावना है।



मुनि श्री पार्श्वसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री निर्वाणसागरजी
मुनि श्री उदयसागरजी
क्षुल्लक श्री पदमसागरजी

मुनि श्री निर्वाणसागरजी महाराज



आपका जन्म भेंसलाना जिला–जयपुर संवत् १९७५ में हुवा था। आपके पिता का नाम श्री केसरीमलजी बाकलीवाल था। आपकी माताजी का नाम सुन्दरबाई था। आपका व्यापार नागपुर (महाराष्ट्र) मे था। दिनांक १–७–१९७१ को क्षुल्लक दीक्षा एव १७–२–७२ मे तीर्थराज श्री सम्मेदशिखरजी मे मुनि पार्श्वसागरजी से मुनि दीक्षा ली। आप दीक्षा लेकर अनेकों स्थानों में विहार कर धर्म प्रभावना कर रहे है।



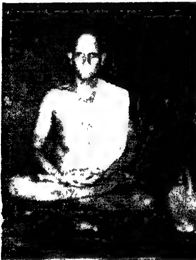
मुनि श्री उदयसागरजी महाराज

परसाद निवासी उदयलालजी का जन्म सन् १९७७ को उदयपुर जिले में हुवा था। आपके पिता का नाम कोदरलालजी तथा मा का नाम लालीबाई था। स० २०३३ में पार्श्वसागरजी से मुनि

दीक्षा ली । आप तपस्वी सन्त हैं १-१ माह के उपवास करते हैं आपकी शक्ति अपूर्व है निरन्तर आत्म साधना के मार्ग में सलग्न हैं । इस समय आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के संघ में रह कर धर्म साधना कर रहे हैं ।



क्षुल्लक श्री पदमसागरजी महाराज



आपका जन्म मडावरा जिला ललितपुर उत्तरप्रदेश में सम्वत् १९८५ मे हुआ । आपके पिताजी का नाम श्री भैयालालजी बजाज व माताजी का नाम श्रीमती बेटीबाई था । आपकी २ शादिया हुई । दोनों पत्नियों का स्वर्गवास हो गया । आपका मन १८ साल की उम्र से ही वैराग्य की ओर अग्रसर था, सन् १९७० मे आचार्य श्री विमलसागरजी से राजग्रहो मे आपने २ प्रतिमा धारण की । उसके बाद सन् १९७८ में मुनि श्री पार्श्वसागरजी से टीकमगढ़ मे क्षुल्लक दीक्षा ली । आप बहुत सरल चित्त व मृदुभाषी है । आपका अधिकतर समय धर्म ध्यान व ग्रंथों को पढ़ने में व्यतीत होता है ।



मुनि श्री शांतिसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य

क्षुल्लक श्री कुलभूषणजी

क्षुल्लक श्री कुलभूषणजी महाराज



जन्म नाम—श्री प्रेमचन्दजी
जन्म स्थान—करनावल जिला-मेरठ (यू० पी०)
गुरु का नाम—श्री शान्तिसागरजी महाराज
क्षुल्लक दीक्षा तिथि—१५ मार्च १९८१, रविवार फाल्गुन सुदी दशमी सं० २०३७ ।
पिता का नाम—स्वर्गीय डालचन्दजी जैन
माताजी का नाम—हुक्मदेवी जैन

आपका जन्म—सावण सुदी सप्तमी सम्वत् १९९६ में हुआ । दुर्भाग्यवश जब आपकी आयु ३ वर्ष की थी । तभी से इनके सिर से पितृ प्रेम का अभाव हो गया । आपकी माताजी ने आपका पालन-पोषण किया । आपके अन्दर धर्म भावना को कूट-कूट कर भर दिया । जिसका परिणाम यह हुआ कि आप १६ वर्ष की आयु से ही धर्म में लीन रहने लगे । आपकी शादी भी हो गई थी फिर भी आप संसार से विरक्त रहते थे । आपने आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज से भादवा बदी १५ जयपुर में दूसरी प्रतिमा के व्रत ग्रहण किए और पश्चात् सम्वत् २०२५ में आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज से सातवी प्रतिमा के व्रत धारण किए। तत्पश्चात् आप धर्म कार्य में अग्रसर ही होते चले आए अपने व्रतो को कठोरता से पालन करते रहे । आपके दो भाई श्री सुलेखचन्द जैन व रूपचन्द जैन एव दो बहिने श्रीमति कमलादेवी व जयमालादेवी हैं । आपने प्रवचनों के माध्यम से जैन समाज मे बहुत जागृति पैदा की । आपके व्याख्यान मुख्यतया निस्परिग्रहता और वीतरागता के विषय में होते है । आप कई नगरों का भ्रमण कर धर्म प्रभावना कर रहे हैं । ❖

मुनिश्री वृषभसागरजी महाराज द्वारा
दीक्षित शिष्य



ऐलक श्री वीरसागरजी

ऐलकश्री वीरसागरजी महाराज

आपका गृहस्थावस्था का नाम सिद्धगौड़ाजी पाटील था। आपका जन्म आज से ५० वर्ष पूर्व सन् १९२४ मे सिरगुर (बेलगाव) मैसूर मे हुआ। आपके पिता का नाम रामगौड़ाजी पाटील था। जो कृषि कार्य करते थे। आपकी माता का नाम बालाबाई था। आप चतुर्थ जाति के भूषण हैं। आपका गोत्र पाटील है। आपकी लौकिक एवं धार्मिक शिक्षा ५ वीं तक हुई। आपका विवाह कृष्णबाई पाटील जैन से हुआ। आपके परिवार में एक भाई एवं दो बहिने तथा एक पुत्र व दो पुत्रियां है।

पांच बच्चो के स्वर्गवास से एवं स्वाध्याय व मुनि उपदेश से आपके मानस में वैराग्य धारा बही। इसलिये चैत्र शुक्ला तेरस सन् १९६७ को बड़वानी में मुनिश्री १०८ वृषभसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली तथा बाद में बड़ौत में ऐलक दीक्षा भी मुनि वृषभसागरजी से ली। आपने दिल्ली, बड़ौत, चिपकोड़ा आदि स्थानों पर चातुर्मास किये। आपने गृहस्थावस्था में दुष्काल के कारण एक साथ १७ उपवास किये। आपने नमक, शक्कर, हल्दी का त्याग कर रखा है।



मुनिश्री सीमन्धरसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री सिद्धसागरजी
क्षुल्लक श्री सुमतिसागरजी
आर्यिका राजुलमतीजी

मुनि श्री सिद्धसागरजी महाराज

आपका गृहस्थ अवस्था का नाम मोतीलाल था आपका जन्म कसवां (कोटा) राजस्थान में हुआ। आपके पिता श्री छीतरमलजी अग्रवाल समाज के भूषण हैं और सिंघल गोत्रज हैं। आपकी माता गुलाबबाई है। आपके यहां श्रावण शुक्ला अष्टमी सवत् १६७६ में मोतीलाल ने जन्म लिया। आपने बचपन से ही शारीरिक और मानसिक विकास पर दृष्टि रखी। आप स्वभाव से दयालू और धार्मिक हैं। जीवविज्ञान का अध्ययन आपने महज इसलिये छोड़ दिया कि उसमे मेंढ़क की चीरफाड़ करनी पड़ती थी।

आपने मोटर मैकेनिक का व्यवसाय आरम्भ किया। युवावस्था में भी आप विषयवासनाओं से विरक्त रहे। बीस वर्ष की अवस्था में ब्र० कन्हैयालालजी एक लड़की वाले को लेकर आये तब आपने कहा मैं तो विवाह नही करूंगा पर आपकी पुत्री का विवाह करा दूंगा और रामचन्द्रजी के पुत्र घीसालालजी से विवाह करा दिया। आपने तीर्थों की यात्रा की, जिनेन्द्र पूजन शास्त्र स्वाध्याय आहार दान का लाभ लिया।

अशोक नगर में मुनि श्री विमलसागरजी भिंड के धर्मोपदेश से प्रभावित होकर आपने ७ वीं प्रतिमा ग्रहण की। १० वर्ष ब्रह्मचारी रहे। अनन्तर सन् १६७२ में तीर्थराज सम्मेदशिखरजी पर मुनि श्री १०८ सीमन्धसागरजी के समीप चन्द्रप्रभु चैत्यालय में मुनि दीक्षा स्वीकार कर ली। आपने मुनि होकर प्रथम चातुर्मास रांची किया और द्वितीय चातुर्मास टिकैतनगर में किया। आपके चातुर्मासों में बड़ी धर्म प्रभावना हुई।



क्षुल्लक श्री सुमतिसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक सुमतिसागरजी का पहले का नाम नन्हे राम था । आपका जन्म विक्रम संवत् १९६७ में भाद्रपद शुक्ला पंचमी को घोघा परगना जौरा जिला मुरैना (म० प्र०) में हुआ । आपके पिता श्री भिंगुरियारामजी थे, जो दुकानदारी करते थे । आपकी माताजी का नाम चन्द्रादेवी था । जाति पल्लीवाल है । आपकी लौकिक व धार्मिक शिक्षा साधारण ही हुई आपके परिवार में चार भाई व एक बहिन थी । विवाह विक्रम स० १९८० मे भागीरथी देवी के साथ हुआ । आपको एक पुत्र और दो पुत्रियों के पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था पर तीनों सन्ताने जन्म के साथ ही मरण को प्राप्त हो गई थी । संवत् २००१ में आपकी धर्मपत्नी का भी स्वर्गवास हो गया ।

सन्तान का अभाव, गृहणी का वियोग देख आपकी रुचि धार्मिक हुई । आपने शास्त्र, स्वाध्याय, जिनेन्द्रपूजन, सामायिक में मन लगाया । आपने २६-२-६५ को एटा (उ० प्र०) में श्री १०८ मुनि सीमन्धरजी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली । बीमारी के कारण आप विशेष आगे नहीं बढ सके । आपने बाल ब्रह्मचारी की अवस्था में लश्कर, ग्वालियर आदि स्थानों पर चातुर्मास किये व क्षुल्लक अवस्था में छतरपुर, दिल्ली, बड़ौत, आदि स्थानो पर चातुर्मास किये । शास्त्र स्वाध्याय पर आप विशेष बल देते है । आपने यथावसर घी, नमक, तेल, आदि रसों का भी त्याग किया ।



आर्यिका राजुलमती माताजी

श्री १०५ राजुलमतीजी का गृहस्थावस्था का नाम ज्ञानमती था । आपका जन्म आज से ५५ वर्ष पूर्व छोदा (ग्वालियर) में हुआ । आपके पिता श्री खूबचन्द्रजी व माता श्री आनन्दीबाई थी । आप पल्लीवाल जाति की भूषण है । आपकी धार्मिक एव लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई । आपका विवाह छोदा निवासी श्री सीतारामजी से हुआ था । आपके दो पुत्रियाँ हुई । दो देवर भी हैं । आपके पति की मृत्यु हो जाने से आपको यह संसार नश्वर जान पडा ।

आपने सन् १९६५ मे गिरनारजी पर सीमंधर स्वामी से क्षुल्लिका दीक्षा ले ली । आपने गिरनार, अहमदाबाद, हुमच, कुन्थलगिरि गजपथा आदि स्थानों पर चातुर्मास किये ।



मुनिश्री सन्मतिसागरजी महाराज (अजमेर द्वारा)

दीक्षित शिष्य



क्षुल्लक श्री वीरसागरजी

क्षुल्लिका निर्माणमतीजी

क्षुल्लक श्री वीरसागरजी महाराज

आपका जन्म ग्राम खभरा पोस्ट सलेहा जिला पन्ना में हुआ था। आपका नाम हीरालाल था आपके पिताजी का नाम प्यारेलाल सिंघई जैन गोलालारे जाति के थे और माताजी का नाम दुलारी था। आपके २ भाई थे, बड़े भाई का नाम फूलचन्द, छोटे भाई का गयाप्रसाद, आपकी २ बहिनें थीं आपका जन्म स्थान देहाती था इसलिये कम पढे लिखे थे और किराना गल्ले का व्यापार करते थे परन्तु वहां पर गुजर बसर न चलने से अपने भाई के पास पन्ना आकर रहने लगे यहां पर सत् संगति मिलने पर धर्म की तरफ कुछ श्रद्धा हुई फिर कुछ कारण वश जबलपुर आकर रहने लगे आपका जन्म सम्वत् १९७४ पौष बदी ७ रविवार को हुआ था आपके ३ लडके व २ लडकिया हैं आपकी धर्मपत्नी ने भी क्षुल्लिका के व्रत धारण कर लिये है जिनका नाम वर्तमान मे श्री १०५ क्षुल्लिका निर्वाणमती है। आपने जबलपुर में श्री १०८ मुनि टोडरमलरायजी मे २ प्रतिमाएं ली और उन्हीं के साथ श्री सम्मेदशिखरजी की यात्रा की थी। वंदना करते हुए श्री १००८ चन्द्रप्रभुजी की टोंक पर सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण किए यानी ब्रह्मचर्य व्रत लिया फिर वहाँ मे वापिस कटनी में श्री १०८ मुनि सन्मतिसागरजी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। ❖

क्षुल्लिका निर्माणमती माताजी

आपका गृहस्थ अवस्था का नाम केसरबाई था। इनके पिता का नाम काशीप्रसाद था। आपकी शादी हीरालालजी के साथ सम्पन्न हुई। आपने दूसरी प्रतिमा १०८ श्री विमलसागरजी महाराज से ली। पांचवी प्रतिमा १०८ श्री सन्मतिसागरजी महाराज से सम्मेदशिखरजी में ली तथा सातवी प्रतिमा १०८ श्री महावीरकीर्ति महाराज से गिरनारजी में ली, आपने क्षुल्लिका दीक्षा सं० २०३६ फागुण सुदी २ को सम्मेदशिखरजी में मुनि श्री १०८ सन्मतिसागरजी से ली। ❖

मुनिश्री कुन्थसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री श्रुतसागरजी

मुनि श्री शांतिसागरजी

मुनि श्री चन्द्रसागरजी

क्षुल्लक श्री वर्धमानसागरजी

क्षुल्लक श्री आदिसागरजी

आर्यिका सुपार्श्वमतीजी

आर्यिका शांतिमतीजी

मुनिश्री श्रुतसागरजी महाराज (मोरेना)

जन्म तिथि—भादो कृष्ण ३ सं० १७७१ वीर सं० २४४०

पिता का नाम—श्री टेकचन्द्रजी

माता का नाम—सरस्वती बाई

जन्म स्थान—ग्राम होहंना जिला ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

मुनि दीक्षा—जेष्ठ शुक्ला स० २०३१ श्रुतपंचमी

दीक्षा नाम—श्री श्रुतसागरजी मोरेनावाले

दीक्षा गुरु—श्री १०८ मुनि कुन्थसागरजी महाराज

जाति—पल्लीवाल दिगम्बर

आप मुरेना २० वर्ष की अवस्था में आ गये थे । आप वहां दुकानदारी करते थे । धर्मध्यान, मुनियों की संगति करना तथा धार्मिक तत्व चर्चा ही आपका विशेष गुण था । इसी प्रकार धर्मध्यान करते हुये, ससार शरीर से विरक्त रहे । आप क्रमशः प्रतिमाएं धारण करते रहे । एक बार आपको

सर्प ने काट खाया किन्तु धर्म में विश्वास था । आपने किसी प्रकार का औषधि उपचार नहीं कराया और धैर्य धारण कर महावीरजी चले गये, दूसरे दिन चतुर्दशी का व्रत था इस प्रकार आप अपने आप निर्विष हो गये । तब तीसरे दिन अन्न जल ग्रहण किया । इसप्रकार गृहस्थ में रहते हुए भी जीवन के साठ वर्ष बिता दिये । एक समय शास्त्र स्वाध्याय करते हुए आप पंच परिवर्तन का स्वरूप पढ रहे थे । उसको पढ़कर आपकी आत्मा दुःखो से कांप गई और निर्णय लिया कि तुरन्त मुनि दीक्षा धारण कर और आत्म कल्याण के मार्ग पर चलूं । जेष्ठ शुक्ल स० २०३१ को मुनि दीक्षा धारण कर वीतराग मुद्रा धारण कर ली और अब आत्म चिन्तन करते हुये मोक्ष मार्ग के पथ पर अग्रसर हैं ।



मुनि श्री शान्तिसागरजी महाराज

आपका जन्म पोरसा (ग्वालियर) मे हुआ, माता सुखदेवीजी की कूख से जन्म लिया। आपके पिता का नाम श्री समंनलालजी था । आपका पूर्व नाम श्री उग्रसेनजी था। आपको संस्कृत तथा हिन्दी का सामान्य ज्ञान था। आपने अहिक्षेत्र मे क्षुल्लक एवं ऐलक दीक्षा कुन्थसागरजी महाराज से ली एवं हस्तिनापुर मे मुनि दीक्षा लेकर आत्म कल्याण कर रहे है । जगह जगह आप पाठशालाएँ खुलवा कर ज्ञान प्रचार का कार्य कर रहे है ।



मुनि श्री चन्द्रसागरजी महाराज



धन्य है वे महापुरुष जिन्होंने भवभोगो मे मुख मोडकर दुर्द्धर तप को अंगीकार करके शिवमहल की ओर अपना पग बढ़ाया । बाल ब्रह्मचारी श्री गंगारामजी जैन की जीवन गाथा भी उन्ही में से एक है । फुलावली (भिण्ड) ग्राम से विराग की बासुरी बजाता हुआ सि० सूरजपाल का पुत्र जब कभी साधुओं की सगति मे भिण्ड की ओर जाता था तो माता जवाहरबाई उसके लौटने तक शंकित ही बनी रहती कि कही लाडला उन्हीं की जमात में न मिल जाय । श्रुत पचमी सं० १९५८ को जब उसने अपनी कूख से जन्म दिया था तभी से वह एक मुनहले संसार में खोयी रहती थी और गगाराम था सो मन ही मन उस घरोदे को उकसता

हुआ सुनहलापन कम कर रहा था। ब्रह्मचर्य व्रत लेकर तो उसने उनकी रही—सही आशाओं पर तुषारापात ही कर दिया। जो भी सुनता, गगाराम की ही चर्चा करता। फिर एक दिन, आसौज शु० ५ सं० २०३० का ही दिन था, मोरेना जाकर पूज्य आचार्य श्री कुन्थसागरजी महाराज के चरणों में बैठकर कर्मदल पर पहला प्रहार किया। विजयी गगाराम का व्यक्तित्व चन्द्रमा की शीतल किरणों से सराबोर हो उठा और आचार्य श्री ने विनीत शिष्य को क्षुल्लक शातिसागर कहकर उसे आत्म शाति की राह दिखायी। हृदय तृप्त न हुआ तो आचार्य श्री ने (मंगसिर ५ सं० २०३०) दो मास बाद "अम्बाह" में एक खण्ड वस्त्र को छोड़कर समस्त बाह्य परिग्रह से मुक्त कर दिया। गुरु आदेश से आप उत्कृष्ट श्रावकाचार का पालन करने लगे प्रतिपल इस चिना के साथ कि मोक्षमार्ग में बाधक इस लगोटी मात्र परिग्रह से मुझे आचार्य श्री कब छुटकारा दिलायेंगे। विशुद्ध भावों की आरोह की ध्वनि गुरुचरणो मे निरन्तर दस्तक देती रही तो "पोरसा" की पुण्यभूमि मे उसी वर्ष (माघ सुदी स० २०३०) आचार्य श्री कुन्थसागरजी म० ने श्रावक वर्ग के जयघोष के बीच उसे निसग करके श्रेयोमार्ग की अतिम अवरोधक बाधा भी हटा दी। जगत का कोलाहल समाप्त हुआ। शानि का हृदय अनुपम शांति मे भर गया। गुरु चरणों की रज मस्तक पर लगाकर नम्रीभूत हो बैठा तो मुख पर चन्द्रमा के धवल प्रकाश की तरह सतोष की किरणें विराजमान थी। आचार्य ने असिधारा पर चलने का आदेश देते हुए "मुनि चद्रसागर" कहकर आपको पुकारा। तभी से आप चद्रमा की तरह निर्मल रत्नमय कीर्ति फैलाते हुए गुरु पदानुगमन कर रहे है।



क्षुल्लक श्री वर्धमानसागरजी महाराज



उत्तरप्रदेश में बिचपुरी (धौलपुर) आबादी की दृष्टि से एक छोटा सा कस्बा भले ही हो, धर्मगंगा प्रवाहित करने में कभी छोटा नही रहा। श्रावकों की इस छोटी सी बस्ती में मृदुस्वभावी श्री हरिविलासजी अपनी पत्नी रौनाबाई के साथ मनोयोग पूर्वक चतुर्विध सघ की वैयावृत्ति करने में ही अपने जीवन की कृत-कृत्यता मानते रहे हैं। इस दम्पत्ति के सं० १९९९ में निजगुणावतार रूप एक पुत्ररत्न हुआ जो आज जिन-मार्ग की प्रभावना करता हुआ पू० वर्धमानसागरजी

महाराज के नाम से हम सबका आराधनीय बन चुका है। राग और विराग ये दो प्रबल अन्त:प्रेरणा के बिना संभव नहीं हैं और जिनकी सुगति होनी होती है उन्हें बाह्य निमित्त भी शीघ्र मिल जाते हैं। १०८ मुनि श्री कीर्तिसागरजी महाराज से आपने प्रथम दो प्रतिमाएँ ग्रहण कर अपने हृदय में विराग का जो बीजारोपण किया वह सन् १९७४ में पू० आचार्य कुंथुसागरजी महाराज के चरण कमलों का आश्रय पाकर वट वृक्ष के रूप में स्फुटित हो उठा। आचार्यश्री ने आपको क्षुल्लक दीक्षा प्रदान करते हुए 'वर्धमानसागर' कहकर सम्बोधित किया। तभी से आप ज्ञान-ध्यान तप में अनुरक्त हो भव्यों को अपने सदुपदेश से संसार सागर से तार रहे हैं। इस वर्ष आपका चातुर्मास ईडर में हुआ जहां पर अनेक नवयुवकों ने अणुव्रत ग्रहण किये।



क्षुल्लक श्री आदिसागरजी महाराज



पंचत्व पर विजय पाने की उमंग पंचाराम जैन भिण्ड के मन में कैसे आई इसे कोई नही जानता। पर कहते हैं कि हलवाई का कार्य पिता श्री दुर्जनलाल जैन से मिला तो रस परिपाक की क्रिया देखकर तत्काल कर्म रस परिपाक का आभास हो गया और इनका मन कांप उठा। मन ही मन संसार से छुटकारा पाने के लिये उपाय सोचने लगे परन्तु भवित-व्यता के बिना कुछ भी सभव नही हो पाया। माता शिवसुन्दरी जिन धर्म की परमभक्त उदार मृदुभाषी महिला थी तो भी पुत्रमोह वश दीक्षा जैसी बात उसे अप्रिय ही लगी। पुण्ययोग से एक दिन वह भी आया जब असार संसार के रिश्तों की समझ का मोह भंग हुआ। २७ जून, ७८ को भवतारण-हार पू० आ० श्री कुन्थुसागरजी महाराज के चरणकमलों ने टूंडला की भूमि को पवित्र किया और स० १९८१ कार्तिक कृष्णा सप्तमी को जन्मे पचाराम का भी लम्बा अंतराल समाप्त हुआ। विशाल जनसमुदाय के समक्ष गुरू ने सुयोग्य शिष्य को क्षुल्लक पद की जैनेश्वरी दीक्षा प्रदान कर मोक्ष महल की सीढ़ियों का दरवाजा खोल दिया। तभी से आप क्षुल्लक आदि सागर के रूप में इस कलिकाल में भटके हुए मोही जीवों की मोह निद्रा को भग करते हुए निरन्जन बनने के सद् प्रयास में लगे हुए हैं।



आर्यिका सुपार्श्वमती माताजी

आपके पिता का नाम श्री सुन्दरलालजी था। मां का नाम श्रीमति हलकीबाई था। आपका पूर्व नाम रतनबाई था। आपकी धर्म के प्रति रुचि बालकपन से ही थी। १३ वर्ष की उम्र में शादी हो गई थी। धर्म की ओर अपने मनोभाव बढ़ाये तथा वि० सं० २०२३ में दिगम्बरी दीक्षा श्री कुन्थुसागरजी से धारण की।

सं० २०३२ दिल्ली में आपने क्षुल्लिका दीक्षा ली तथा सं० २०३४ में आर्यिका दीक्षा लेकर अपना जीवन सफल कर लिया।

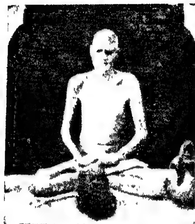


आर्यिका शान्तिमती माताजी

आपके पिता का नाम श्री नाथूरामजी था। जैसवाल गोत्र में जन्म लिया। आपका नाम कलावती था। १६ वर्ष की उम्र में शादी हो गई थी। आपके ५ सन्ताने थी। बचपन से संयम के प्रति रुचि थी। पर योग नहीं मिल पाया। सं० २००४ मे आपके पति का आकस्मिक निधन हो गया। आपके मन में वैराग्य आया और आपने आर्यिका दीक्षा ली और आत्म साधना कर रही है।



आचार्य श्री सूर्यसागरजी महाराज द्वारा
दीक्षित शिष्य



आ० श्री सूर्यसागरजी महाराज

मुनि श्री गणेशकीर्तिजी
क्षुल्लक पूर्णसागरजी

मुनिश्री गणेशकीर्तिजी महाराज



पूज्य वर्णीजी का जन्म विक्रम संवत् १९३१ की आश्विन कृष्ण चतुर्थी को असाटी वेश्य के मध्यम वर्ग परिवार मे हुआ था। इनके पिताजी का नाम हीरालाल एवं माताजी का नाम उजयारी बहु था। लोग इन्हे गणेश नाम से पुकारने लगे। बुन्देलखण्ड के गांव में लोग कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को व्रत रखते हैं। इसी कारण से इनका नाम गणेशप्रसाद रखा गया। परन्तु यह कौन जानता था कि यह "गणेश" सचमुच गण+ईश होगा। किन्तु इन्होंने अपने

नाम को सार्थक कर दिखाया । इनका लालन पालन विशेष सावधानी से किया गया । जब ७ वर्ष के हुए तो पिताजी ने इनका नाम गांव के स्कूल में लिखा दिया । इनका शिक्षा केन्द्र घर और स्कूल के अतिरिक्त राममन्दिर भी था । ७ वर्ष की अल्प अवस्था में आपने विवेक और बुद्धि द्वारा गुरु से विद्या को पैतृक सम्पत्ति स्वरूप प्राप्त किया ।

"होनहार विरवान के, होत चीकने पात" वाली कहावत के अनुसार आपमें शुभ लक्षण दृष्टि-गोचर होने लगे । गुरु की सेवा करना अपना परम कर्तव्य समझते थे । गुरुजी को हुक्का पीने की आदत थी, अतः हुक्का भरने में जरा भी आनाकानी नही करते थे । निर्भीकता आपमें कूट कूट कर भरी थी । निडर हो आपने एक दिन तम्बाकू के दुर्गुण अपने गुरुजी को बता दिये और हुक्का फोड़ डाला । गुरुजी नाराज होने की अपेक्षा प्रसन्न हुए और तम्बाकू पीना छोड दिया ।

वह विक्रम संवत् १९४१ था जबकि १० वर्ष की अवस्था में जैन मंदिर के चबूतरे पर शास्त्र प्रवचन से प्रभावित होकर "रात्रि भोजन त्याग" की प्रतिज्ञा ली और सनातन धर्म छोड़कर जैनधर्म स्वीकार किया ।

इच्छा तो नहीं थी किन्तु जातीय विवशता थी अतः वि० सं० १९४३ में १३ वर्ष की अवस्था में यज्ञोपवीत संस्कार हो गया । सं० १९४६ में आपने हिन्दी मिडिल प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण कर लिया, परन्तु दो भाईयों का वियोग अध्ययन में बाधक बन बैठा । अब आपका विद्यार्थी जीवन समाप्त हो गया और गृहस्थावस्था में प्रवेश किया । वि० सं० १९४९ में १९ वर्ष की आयु में मलहार ग्राम की सत्कुलीन कन्या आपकी जीवन सगिनी बनी किन्तु स्वयं की इच्छा से नहीं ।

विवाह के पश्चात् ही पिताजी का स्वर्गवास हो गया, किन्तु पिताजी का भी अन्तिम उपदेश यही था बेटा यदि जीवन में सुख चाहते हो तो जैन धर्म को न भूलना । आत्मा दुःखी तो थी ही और गृहभार का भी प्रश्न सम्मुख था, अतः पास के गांव मे मास्टरी करना शुरू कर दिया । आपका लक्ष्य तो अगाध ज्ञानरूप समुद्र में गोता लगाना था अतः आप मास्टरी छोड़ पुनः विद्यार्थी जीवन मे प्रविष्ट हुए और यत्र तत्र नीर पिपासु चातक की तरह विद्या की साधना को चल पडे ।

वह पुण्य बेला संवत् १९५० थी जबकि सिमरा ग्राम में पूज्य माता सिंघेन चिरोंजाबाईजी से भेंट हुई थी । माता चिरोंजाबाईजी के दर्शन कर मन आनन्द विभोर हो उठा । माताजी के हृदय से भी पुत्रवात्सल्य उमड़ पड़ा और स्तनों से एकदम दुग्धधारा प्रवाहित हो पड़ी । वर्णीजी को चिन्तातुर

देख माताजी ने कहा बेटा चिन्ता छोड़ो और आज से तुम मेरे धर्म पुत्र हुए और जो करना चाहो करने के लिए स्वतन्त्र हो । माताजी के वचन सुनकर वर्णीजी का हृदय पुलकित हो उठा ।

माता सिंघेनजी की भी इच्छा थी अतः माताजी की आज्ञा पाकर विद्यासिद्धि के लिए निश्चित होकर निकल पड़े । रास्ते में सामान चोरी चला गया, केवल पांच आने पैसे और छतरी शेष थी । चिन्ता में पड गये, क्या किया जाय छतरी तो आपने छः आने में बेच दी और एक-एक पैसे के चने खाकर इस सन्त ने दिन व्यतीत किये । इसी बीच एक दिन रोटी बनाने का विचार किया किन्तु बर्तन न थे । पत्थर पर आटा गूंथा और कच्ची रोटी मे दाल भिगोकर और ऊपर से पलाश के पत्ते लपेटकर मन्दी आंच में डाल दी । रोटी और दाल बनकर तैयार हुई फिर सानन्द भोजन किया ।

एक बार अध्ययन काल में आप खुरई पहुंचे तब पं० पन्नालालजी न्याय दिवाकर से धर्म का मर्म पूछा । पण्डितजी चिल्लाकर बोले अरे तू क्या धर्म का मर्म जानेगा । तू तो केवल खाने को जैन हुआ है । इस प्रकार के वचन आपने धैर्यपूर्वक सुने ।

एक बार आप गिरनारजी जा रहे थे, मार्ग में बुखार और तिजारी ने सताया । पैसे भी पास में नही । तब रास्ते मे सड़क बनाने वाले मजदूरों के साथ मिट्टी खोदना प्रारम्भ किया, लेकिन एक टोकरी मिट्टी खोदी कि हाथ में छाले पड गये । मिट्टी खोदना छोड़कर ढोना स्वीकार किया परन्तु वह भी आपसे न हुआ अतः दिन भर की मजदूरी न तो तीन पैसे और न नो पैसे मिले किन्तु दो पैसे मिले । दो पैसे का आटा लिया, दाल को पैसे कहां । अतः नमक की डली से रूखी रोटी खानी पड़ी ।

विद्याध्ययन हेतु वि० सं० १९५२ में बनारस पहुंचे । किसी ने पढाना स्वीकार नही किया, नास्तिक कहकर भगा दिया । आपने निश्चय किया कि मैने यहां एक जैन विद्यालय न खोला तो कुछ नही किया । आपने अपने कठिन परिश्रम से स० १९५२ में स्याद्वाद महाविद्यालय की स्थापना कराई ।

वि० स० १९५३ मे आपकी धर्म पत्नी का स्वर्गवास हो गया किन्तु लेशमात्र भी खेद न हुआ । एक शल्य टली कह कर प्रसन्न हुए ।

सामाजिक क्षेत्र मे भी लोगो ने आपकी परीक्षा की, किन्तु अडिग रहे, अन्त में शत्रुओं को परास्त होना पड़ा । मूर्ति अगणित टाकियों से टांके जाने पर ही पूज्य होती है । आपत्ति और जीवन के सघर्षों से टक्कर लेने पर ही मनुष्य महात्मा बनता है । कर्तव्यशील व्यक्ति अनेक कष्टों को सहकर

आपने लक्ष्यों को पूर्ण कर ही विश्रान्ति लेते है । फलतः विद्योपार्जन के लिए सं० १९५२ से १९८४ तक कई स्थानों में फिरे किन्तु पुनः बनारस जाकर पं० अम्बादासजी शास्त्री को अपना गुरु बनाया और वहीं से न्यायाचार्य प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर पारितोषिक प्राप्त किया ।

विद्वता के साथ-साथ सयम की साधना ने आपको पूज्य सन्त बना दिया और बड़े पंडितजी के नाम से प्रख्यात हुए । जितना प्रेम विद्या से था उससे भी कहीं अधिक जिनेन्द्र भक्ति से था । यही कारण है कि आपने विद्यार्थी जीवन में सं० १९५२ में गिरनारजी और सं० १९५९ में शिखरजी जैसे पवित्र ८ तीर्थों की वंदना पैदल की थी ।

संवत् १९६२ में श्री ग० दि० जैन संस्कृत विद्यालय की स्थापना सागर में कराई और संरक्षक पद को विभूषित किया । सं० १९७० में आप बड़े पंडितजी से सन्त वर्णीजी बने । सं० १९९३ में सागर से बडा मोटर द्वारा जा रहे थे कि ड्राईवर से झगड़ा हो गया । तब से मोटर में बैठना दूर रहा रेल आदि में भी बैठना छोड़ दिया ।

सं० २००१ में दशम प्रतिमा धारण की और फाल्गुन कृष्णा सप्तमी सं० २००४ को क्षुल्लक हो गये अब लोग इन्हे बाबाजी के नाम से पुकारने लगे ।

स० १९९३ में फाल्गुन मास में ७०० मील की पैदल यात्रा तय करते हुए बीच के तीर्थ स्थानों को भी वन्दना करते हुए शिखरजी पहुचे । आपका लक्ष्य भगवान पार्श्वनाथ के चरणों में जीवन बिताने का था । कुछ समय रहे भी फलस्वरूप उदासीनाश्रम की स्थापना हो गई । किन्तु २००१ में बसन्त की छटा से बुन्देलखण्ड ने आपको मोह लिया और एक बार फिर आपने बुन्देल वासियों को दर्शन दिये ।

वि० सं० २००२ में जबलपुर में आम सभा में अपनी चादर आजादी के पुजारियों की सहायतार्थ समर्पित कर दी । उस चादर के उसी क्षण तीन हजार रुपये मिले । सभा में आश्चर्य हो गया, अरे यह क्या ! इस तरह आपके जीवन की सैंकड़ों घटनाएं है जिनका उल्लेख शक्य नहीं है । सं० २००२ से लेकर २००९ तक आपने बुन्देलखण्ड का भ्रमण किया और सैंकड़ों विद्यालय, पाठशालायें, स्कूल और कालेज खुलवाकर अज्ञानरूपी अन्धकार को नष्ट कर दिया । यही कारण है कि आज जैन समाज में सैंकड़ों विद्वान देखे जा रहे हैं ।

सं० २००९ में आपने सागर में चातुर्मास किया । चातुर्मास के पश्चात् आपने ७०० मील की लम्बी यात्रा ७९ वर्ष की अवस्था में की और शिखरजी पहुंचे । आपकी इच्छा थी कि वृद्धावस्था

में पार्श्वप्रभु की शरण में रहे। आपकी इच्छा पूर्ण हुई। सं० २००९ से अन्तिम समय तक आप पार्श्व प्रभु के चरणों में रहे और यहीं पर अपनी देह विसर्जित की। हर समय आपके दर्शनों को हजारों की सख्या में लोग आते रहते थे और वहा सदा मेला सा लगा रहता था।

सन् १९५६ में भारत के राष्ट्रपति ने शिखरजी में आपसे भेंट की। दर्शन कर अत्यन्त प्रसन्न हुए। संवत् २०१२ मे स्याद्वाद विद्यालय बनारस तथा सं० २०१३ में गणेश विद्यालय सागर की स्वर्णजयन्ती आपके सान्निध्य में मनायी गई। धर्म प्रेमीबन्धु वर्णीजी के दर्शन कर तथा उनके उपदेश सुन आनन्द विभोर हो गये। सन्त विनोबा ने भी आपसे कई बार भेंट की और वर्णीजी को अपना बड़ा भाई मानकर चरण स्पर्श किये। सं० २०१६ में आचार्य तुलसी गणी ने आपके दर्शन कर प्रसन्नता प्राप्त की थी।

पूज्य वर्णीजी मनसा, वाचा, कर्मणा एक थे। उन जैसा निःस्पृही और पारखी व्यक्ति देखने में नहीं आया। जो भी आपके पास आया सम्मान पाया विरोधी भी नतमस्तक हुए।

अन्तिम समय तक ८७ वर्ष की अवस्था में भी आपकी ज्ञानेन्द्रियां सतर्क थी। दो माह की लम्बी बीमारी के कारण शरीर शिथिल पड़ गया था। दैनिकचर्या मे कभी शिथिलता नही आने पाई थी। आहार की मात्रा आधा पाव जल तथा थोड़ा सा अनार का रस ही रह गया था। अन्तिम दो दिनों में उसका भी त्याग कर दिया। ३ सि० १९६१ को यम सल्लेखना ली और सब प्रकार के परिग्रह का परित्याग कर दिया। ५ सितम्बर को प्रातः आपके चेहरे पर नई मुस्कान थी। इसी दिन आपने त्यागियों और विद्वानो के समक्ष मुनि दीक्षा ग्रहण की और आपका नाम गणेशकीर्ति रखा गया। आपकी परिचर्या में विद्वान, त्यागी, सेठ, साहूकार आदि सभी सदा तत्पर रहे। ५ सितम्बर को रात्रि के डेढ़ बजे पूज्य श्री सदा के लिए विलग हो गये।

यद्यपि पूज्य श्री का भौतिक शरीर चिता की ज्वलन्त ज्वालाओं में विलीन हो गया है तथापि उनकी आत्म शक्ति द्वारा निखर कर विश्व में सर्वत्र व्याप्त हो गये है। वे धन्य थे। उनके अभाव से ऐसा जान पड़ता है, मानों जैन समाज का सूर्य अस्त हो गया।

राजनीति न्याय और धर्म को जीवन से पृथक् नहीं मानते हैं। आपके मतानुसार धर्म का राष्ट्र और समाज से निकटस्थ सम्बन्ध है।

आप इस बीसवी सदी के उन महान् आध्यात्मिक सन्तों में से एक हैं जिन्होंने भौतिकता की सारहीनता को स्वयं के जीवन-अध्याय से दिखाकर कहा कि "भारत की समृद्धि तो उसकी आध्यात्मिक

विभूति है ।" आत्मा के कल्याण के लिए मुनिश्री पदार्थों से मोह के त्याग पर बल देते थे। आवश्यकता से अधिक संचय के कट्टर विरोधी थे और स्वयं तो इतने निष्परिग्रही थे कि संघ के व्यामोह से ही अलग थे ।

जिनका जीवन जैनधर्म को अर्पित हो गया आज जिनका जीवन लाखों भारतीयों के लिए श्रद्धास्पद बन गया । क्या जैन, क्या हिन्दू, क्या मुसलमान सभी के पूज्य सन्त बन गये । मानव की पीड़ा से जिनका हृदय करुणा जल से भर गया और संतप्त प्राणियों के लिए सुख और शान्ति का सिंहनाद करते जो बड़े से बड़े नगर और छोटे से छोटे गावों में विहार कर रहे है । "श्रीनगर" की पर्वतीय यात्रा कर आपने "मुनि इतिहास" में एक नवीन अध्याय जोड़ दिया । आपमें धर्म सहिष्णुता जो सम्यक्दर्शन का एक अग है, इतनी उत्कट रूप से समाहित है कि "कल्याण" मासिक के विद्वान धार्मिक नेता श्री हनुमानप्रसादजी पोद्दार ने आपका सम्मान कर अपने निवास स्थान पर मुनि श्री के प्रवचन करवाये थे ।

भारत के उच्चकोटि के राजनैतिक, साहित्यकार और दार्शनिक लोग तथा विदेशी विद्वान आपके व्यक्तित्व और विलक्षण प्रतिभा से अत्यन्त प्रभावित हुए है । डा० मंगलदेव शास्त्री, रूसी विद्वान चेपिशेव, बौद्ध भिक्षु सोमगिरी, बालयोग प्रेम वर्णी, निरजन नाथ आचार्य, पीठाधीश्वर स्वामी नारदानन्द, श्रीमती डा० वागल, डा० कृष्णदत्त वाजपेयी आदि सैंकड़ों लोग आपके प्रभाव में आये और अत्यन्त श्रद्धा देते थे ।

श्रीनगर की पर्वतीय यात्रा के दौरान आप हिमालय की कन्दराओं में रहने वाले साधुओं के सम्पर्क में आये जो आपके त्यागमय जीवन से अत्यन्त प्रभावित हुए । आपके तप:पूत जीवन से धर्म और ज्ञान की लक्षलक्ष किरणें प्रस्फुटित होकर इस विषम परिस्थिति और युग के संक्रमण काल में धर्म जय का नारा उद्घोष कर रही हैं ।



क्षुल्लक श्री पूर्णसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक पूर्णसागरजी महाराज जिला सागर के अन्तर्गत रामगढ़ (दमोह) के रहने वाले हैं। जन्मतिथि आश्विन बदी १४ वि० सं० १९५५ है। पिता का नाम परमलालजी और माता का नाम जमुनाबाई है और जाति परिवार है। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा प्राइमरी तक हुई है और महाजनी हिसाव किताब का इनको अच्छा अनुभव है।

विवाह के होने के बाद ये कुछ दिन अपने घर ही कार्य करते रहे। उसके बाद दमोह के श्रीमान् सेठ गुलाबचन्दजी के यहां और सिवनी के श्रीमंत सेठ पूरणशाहजी व उनके उत्तराधिकारी श्रीमंत सेठ वृद्धिचन्दजी के यहां कार्य करने लगे। प्रारम्भ से धार्मिक रुचि होने के कारण घर में ही ये श्रावक धर्म के अनुरूप दया आदि आचार का उत्तम रूप से पालन करते थे।

पत्नी वियोग के बाद ये घर में बहुत ही कम समय तक रह सके और अंत में श्री १०८ आचार्य सूर्यसागरजी महाराज के शिष्य होकर गृहत्यागी का जीवन बिताने लगे। इस समय आप ग्यारहवीं प्रतिमा के व्रत पाल रहे हैं। दीक्षा तिथि आश्विन बदी १ विक्रम स० २००२ है। अपने कर्तव्य पालन करने में ये पूर्ण निष्ठावान हैं और मध्ययुगीन पुरानी सामाजिक परम्परा के पूरे समर्थक है।



मुनिश्री गणेशकीर्तिजी महाराज द्वारा
दीक्षित शिष्य



ऐलक श्री पन्नालालजी
क्षुल्लक श्री मनोहरलालजी वर्णी
क्षुल्लक श्री चिदानन्दजी

ऐलक श्री पन्नालालजी



जैन समाज के पांच दशक पिछले इतिहास की ओर देखे तो ज्ञान और चारित्र के मार्ग मे विरले ही सत दृष्टिगोचर होते हैं जिन्होंने अज्ञानान्धकार में उन्मग्न समाज को पथ प्रदर्शन करने की कृपा की। जमाना ही ऐसा था कि रूढियों से घिरो सामाजिक मर्यादाएँ विवेक की तीक्ष्णता को जंग लगाती चली जा रही थी। ऐसे समय में ज्ञान और चारित्र की मशाल थामे हुए यदि कोई समाज की तंद्रा को भंग करने का अति साहस करता है तो निश्चय ही वह अवतरित विभूति ही है। ऐलक पन्नालालजी म० ज्ञान चारित्र के धनी तो थे ही महान् समाजोद्धारक के रूप मे भी विख्यात थे। साधु की चर्या समाज पर आश्रित रहती है प्रतिदान में साधु समाज को धर्मामृत पान कराता है। अलबत्ता इसकी आलोचना यदा-कदा होती रहती है। परन्तु ऐ० पन्नालालजी उनमें से न थे। स्व कल्याण के साथ साथ परकल्याण की भावना का दरिया आपके हृदय मे लहरा रहा था। फलतः आपने तद् समयानुसार विलुप्त हो रही ज्ञान परम्परा के साधनभूत जिनवाणी की रक्षा में अपना ध्येय निश्चित किया। आपके ही सद् प्रयास से (सं० १९७१) झालरापाटन, (सं० १९७९)

बम्बई (सं० १९९२) ब्यावर में सरस्वती भवनों की स्थापना की गई । अनेक स्थानों पर औषधालय तथा पाठशालाएँ भी स्थापित करायीं । धर्म विरुद्ध सामाजिक रूढियों के प्रति समाज को जागरूक कर सद्मार्ग दिखाया । ऐसे अनगिनत समाजोद्धार के कार्य कर सामाजिक मर्यादाओं को स्वस्थ-रूप प्रदान किया ।



क्षुल्लक श्री मनोहरलालजी वर्णी "सहजानन्द"



श्री १०५ क्षुल्लक मनोहरलालजी वर्णी का जन्म कार्तिक कृष्णा १० वि० सं० १९७२ को झांसी जिले के दुमदुमा ग्राम में हुआ है । इनके पिताजी का नाम श्री गुलाबराय और माता का नाम तुलसाबाई है । जन्म का नाम मगनलालजी और जाति गोलालारे है । प्राईमरी स्कूल की शिक्षा के बाद संस्कृत शिक्षा का विशेष अभ्यास इन्होंने श्री गणेश जैन विद्यालय सागर में किया और वहां से न्याय-तीर्थ परीक्षा पास की है । प्रकृति से भद्र देख वहां पर इनका नाम मनोहरलाल रखा गया था ।

विवाह होने के बाद गृहस्थी में ये बहुत ही कम समय तक रह सके । पत्नी वियोग हो जाने से ये सांसारिक प्रपन्चों से विरक्त हो गये और वर्तमान में ग्यारहवी प्रतिमा के व्रत पालते हुए जीवन संशोधन में लगे हुए हैं । इनके विद्यागुरु पूज्य गणेशप्रसादजी वर्णी महाराज ही हैं । वर्तमान में ये सहजानन्द महाराज तथा छोटे वर्णी जी इन नामो से भी पुकारे जाते हैं ।

इन्होने सहजानन्द ग्रन्थमाला नाम की एक संस्था स्थापित की है । इसमें इनकी निर्मित पुस्तकों का प्रकाशन होता है । इन्होने एक अध्यात्म गीत की भी रचना की है । इसका प्रारम्भ "मैं स्वतन्त्र निश्चल निष्काम" पद से होता है । आजकल प्रार्थना के रूप में इसका व्यापक प्रचार व प्रसार है । अध्यात्म शास्त्र समयसार के ये अच्छे ज्ञाता व वक्ता हैं ।

'वर्णी' एक चिरपरिचित सा नाम, कानों में मीठा रस घोलता हुआ आंखों के समक्ष आज भी गुरु शिष्य की ऐसी साकार प्रतिमा स्थापित कर देता है कि परोक्ष में श्रद्धावनत माथा बारम्बार उनकी जय बोल उठता है। रुचियां सदृश हों तो सगति का मेल फल और भी मीठा हो जाता है अपने लिए भी और समाज के लिए भी। गांव का रहने वाला मनोहर गुरु गणेश वर्णी के चरणों का आश्रय पाकर समाज के लिए सहज आनन्द का स्रोत बन उठा। वि० स० २००२ में वाराणसी में पूज्य क्षुल्लक श्री गणेशवर्णीजी से सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये तो गुरु ने आपका नाम 'सहजानंद' रखा जिसे आपने अपने वक्तृत्व-कर्तृत्व से सार्थक कर दिखाया। विराग की धारा ने गति पकड़ी तो सं० २००५ मे सुरम्य क्षेत्र हस्तिनापुर में पूज्य वर्णीजी से ही क्षुल्लक पद की दीक्षा अंगीकार कर ली। गुरु शिष्य की इस जोड़ी ने सात दशक तक श्रावक वर्ग पर जितना उपकार किया वह शब्दों से व्यक्त नही किया जा सकता।

क्षुल्लक मनोहरजी सहजानद के ज्ञान का क्षयोपशम उत्कृष्ट था। अपने जीवनकाल में ५०० से अधिक ग्रन्थों का निर्माण कर जिनशासन के रहस्य को जन-जन तक पहुंचाने का महान कार्य किया। सहारनपुर, हस्तिनापुर मेरठ मे शिक्षा संस्थाएँ स्थापित करायी तथा आत्मविज्ञान परीक्षा बोर्ड की स्थापना की। वर्णी प्रवचन पत्रिका में जैनसिद्धान्त पर सुबोध शैली में हजारों लेख लिखकर समाज में स्वाध्याय की प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया। आज भी वर्णी पत्रिका का प्रकाशन व सम्पादन प० सुमेरचन्द्रजी द्वारा बराबर हो रहा है। आपका अधिकांश समय मेरठ मुजफ्फरनगर में व्यतीत हुआ। दो वर्ष पूर्व ही समाधिपूर्वक आपका स्वर्गवास मेरठ में हो गया।



क्षुल्लक श्री चिदानन्दजी महाराज



श्री १०५ क्षुल्लक चिदानन्दजी महाराज का गृहस्थावस्था का नाम दामोदरदासजी था। आपका जन्म अगहन सुदी पचमी विक्रम सवत् १९६७ मे दरगुवां जिला छत्तरपुर मध्यप्रदेश मे हुआ था। आपके पिता का नाम जवाहरलालजी व माता का नाम भुजबलीबाई था। आपके पिता घी के एक सफल व्यापारी थे जाति गोलापूरब गोत्र शाह है। आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण हुई। आपने विवाह नही किया, बाल ब्रह्मचारी ही रहे।

ब्रह्मचारी श्री मोतीलालजी के उपदेश से आपमें वैराग्य प्रवृत्ति की जागृति हुई। आपने विक्रम संवत् २०७४ में क्षुल्लक श्री १०५ गणेशप्रसादजी वर्णी से क्षुल्लक दीक्षा ले ली। आपने कई स्थानों पर पाठशालाएं खुलवाई। खडेरी, दिल्ली आदि स्थानों पर चातुर्मास कर उपदेश द्वारा धर्म प्रभावना की।

आपको मोक्षशास्त्र, छहढाला, सहस्रनाम स्तोत्र का विशेष ज्ञान था। संस्कृत के आपको हजारो श्लोक याद थे।

आपने देश और समाज की जो सेवा की उसे देश और समाज कदापि नही भूलेगा। आपके सम्मान में चिदानन्द स्मृति ग्रन्थ प्रकाशित हुआ जो आपके यशोकृतित्व का प्रतीक है।



आर्यिका स्वर्णमती माताजी द्वारा

दीक्षित शिष्य

आर्यिका वीरमतीजी



आर्यिका वीरमती माताजी



आपका पूर्व नाम पदमावती था। पिता का नाम श्री दादा पटङणकुरे एवं माताजी का नाम उसनाबाई था। आपके माता-पिता नसलापुर ग्राम में रहते थे।

संसार को असार जानकर २ मई १९७६ छपरा में स्वर्णमती माताजी से आर्यिका दीक्षा ली। आप मुनि सिद्ध-सेनजी महाराज के साथ तीर्थराज की वंदना को गईं। आपको धर्म पर अटूट श्रद्धा है।



मुनिश्री सिद्धसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



आर्यिका ज्ञानमतीजो

आर्यिका ज्ञानमतीजी माताजी

बाराबंकी जिले मे गणेशपुर (बरसाघाट) मे सं० २००३ में श्रेष्ठी श्री अजितप्रसादजी के यहाँ जन्म लिया। आपको मातुश्री का नाम विट्टोबाई था। युवा अवस्था में टिकैतनगर मे आपकी शादी हुई थी। आपके पति श्री सन्तूलालजी बड़े ही धर्मात्मा बन्धु थे। आपकी तीन पुत्रिया थी। पति का अल्प समय में ही आपको वियोग सहना पड़ा तथा ३० वर्ष की उम्र में आपको वैधव्य प्राप्त हो गया। आपको मुनि सिद्धसागरजी का सान्निध्य मिला तथा आपने परिवार को छोड़कर आर्यिका दीक्षा ली। अभी आप आचार्य धर्मसागरजी महाराज के पास हैं तथा धर्मवृद्धि कर रही है।



मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी महाराज (दक्षिण) द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री सुबलसागरजी

क्षुल्लिका शान्तिमतीजी

मुनिश्री सुबलसागरजी महाराज



श्री १०८ मुनि सुबलसागरजी का गृहस्थ अवस्था का नाम परगोड़ाजी पाटील है । आपका जन्म नन्दगाव (बेलगांव) मे हुआ था । आपके पिता श्री शिवगोड़ाजी पाटील है, जो खेती करते हैं । आपकी माता का नाम गान्धारीदेवी है । आप जाति से चतुर्थ बीसपन्थी है । आपकी लौकिक शिक्षा लगभग बिल्कुल नही हुई । धार्मिक शिक्षा आपने स्वाध्याय के बल पर स्वयं ही प्राप्त की । आपके परिवार में चार भाई एक बहिन है । आपका विवाह हुआ । आपको एक पुत्र व चार पुत्रियों के पिता होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । अन्त में सबको छोडकर मुनिदीक्षा ग्रहण की ।



क्षुल्लिका शान्तिमती माताजी



आपका जन्म फाल्गुन सुदी सन् १९३० में मोहनगढ़ (टीकमगढ़) में हुवा था । आपके पिता का नाम धर्मदास मोदी तथा माता का नाम भूरीबाई था । आठवीं कक्षा तक आपने लौकिक शिक्षा प्राप्त की । आपकी शादी हुई, ४ बच्चे थे भरा पूरा परिवार त्याग कर आपने अपने मन में वैराग्य के अंकुर बढ़ाये तथा मुनि सुपार्श्वसागरजी से क्षुल्लिका दीक्षा ली तथा आत्म साधना कर रही हैं ।



आचार्य श्री सुबलसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



श्री सुबलसागरजी महाराज



मुनि श्री विजयसेनजी

मुनि श्री धर्मसेनजी

क्षुल्लक श्री भव्यसेनजी

आर्यिका सुमतिमतीजी

आर्यिका बाहुबलीमतीजी

आर्यिका सुव्रतामतीजी

आर्यिका कुन्थुमतीजी

आर्यिका जिनमतीजी

मुनि श्री विजयसेनसागरजी महाराज

गृहस्थ नाम—श्री पायगौडाजी

जन्म स्थान—गुण्डवाड

पिता का नाम—श्री रामगौड़ाजी

माता का नाम—श्री सत्यवतीदेवीजी

आयु—६२ वर्ष

व्यवसाय—खेती

लौकिक शिक्षण—तीसरी कक्षा

क्षुल्लक दीक्षागुरु—प० पू० श्री १०८ वीरसेनसागरजी

मुनि दीक्षागुरु—प० पू० श्री १०८ आ० सुबलसागरजी

दीक्षा नाम—श्री १०८ विजयसेनसागरजी । आप सरल स्वभावी हैं तथा संघ में रहकर ज्ञान अध्ययन मे लीन रहते है ।



मुनि श्री धरसेनसागरजी महाराज

गृहस्थ नाम—श्री बसगौडाजी

पिता का नाम—श्री शिवगौडाजी

माता का नाम—श्री गान्धारीदेवीजी

व्यवसाय—खेती

क्षुल्लक दीक्षा—उदयपुर

मुनि दीक्षा—सदलगा (बेलगॉव कर्नाटक)

दीक्षा गुरु—श्री १०८ आ० सुबलसागरजी महाराज

दीक्षा नाम—श्री १०८ धरसेनसागरजी

आयु—६३ वर्ष

आप आ० सुबलसागरजी के गृहस्थावस्था के तीसरे नं० के भाई हैं, आप ज्ञान, ध्यान, तप में लीन रहते हुए संघ मे विराजमान है ।



क्षुल्लक श्री भव्यसेनजी महाराज



गृहस्थ अवस्था का नाम –श्री भूपालजी
जन्म स्थान –सदलगा (जि० बेलगांव) कर्नाटक
पिता का नाम—श्री रामचन्दजी
माता का नाम—श्री रत्नाबाईजी
आयु –५५ वर्ष
शिक्षा – तीसरी तक
दीक्षा गुरु—पू० आ० सुबलसागरजी महाराज
दीक्षा नाम—क्षुल्लक भव्यसेनजी

दीक्षा तिथि—८–११–८१ रविवार कार्तिक शुक्ला एकादशी। आप सरल स्वभावी है निरन्तर साधु सेवा में लीन रहते हैं।



आर्यिका सुमतिमतीजी



जन्म स्थान – सदलगा (कर्नाटक, बेलगाव)
जन्म सन् – १९५८
पिता का नाम—श्री थारीसाजी
माता का नाम—श्री चम्पाबाईजी
पूर्व नाम—सुशीला जैन
लौकिक शिक्षा—दसवी
दीक्षा स्थान –सम्मेदशिखर
दीक्षा गुरु—आ० सुबलसागरजी महाराज

आपने १६ वर्ष की उम्र में आ० सुबलसागरजी से ब्र० व्रत ग्रहण किया तथा पू० आचार्य श्री से ही दीक्षा लेकर आत्म कल्याण के पथ पर अग्रसर है।



आर्यिका बाहुबली माताजी



जन्म स्थान—रामनेवाडी

जन्म सन्—१९६०

पिता का नाम—श्री अन्नासाहबजी

माता का नाम—श्री सोनाबाईजी

दीक्षा गुरु—आ० सुबलसागरजी

दीक्षा स्थान—गणेश बाड़ी

आपकी बड़ी बहिन भरतमती माताजी हैं। आपने कई ग्रन्थो का स्वाध्याय किया है।



आर्यिका सुव्रता माताजी



गृहस्थ अवस्था का नाम—कमलश्री

जन्म स्थान—सदलगा (जि० बेलगाव) कर्नाटक

पिताजी का नाम—अण्णासावजी

माताजी का नाम—सौ० सुकुमाजी

लौकिक शिक्षा—१० वी

आयु—२७ वर्ष

दीक्षागुरु—आ० सुवलसागरजी महाराज

दीक्षा स्थल—२६-३-१६७८ तीर्थराज सम्मेदशिखरजी। दीक्षा लेने के बाद गुरुवर्य के साथ विहार कर रही है तथा आत्म कल्याण कर रही है।



क्षुल्लिका कुन्थुमती माताजी



गृहस्थ अवस्था का नाम—अनन्तमती
जन्म स्थान—सदलगा (जि० बेलगांव) कर्नाटक
पिता का नाम—श्री भरमूलालजी
माता का नाम—श्री सोनाबाईजी
लौकिक शिक्षा—दसवी
आयु—२५ वर्ष
क्षु० दीक्षा गुरु—प० पू० श्री १०८ आ० सुबलसागरजी
दीक्षा नाम—श्री १०५ कुन्थुमतीजी
दीक्षा तिथि—१२-१२-८०

आप हसमुख शान्त स्वभावी है तथा अनशनादि तपश्चर्या अधिक करती है। आप त्याग मार्ग को अपना कर आत्म उत्थान के मार्ग में सलग्न हैं।

क्षुल्लिका जिनमती माताजी



पूर्व अवस्था का नाम—कु० शान्ता जैन
जन्म स्थान—सदलगा (जि० बेलगाव)
पिता का नाम—श्री तात्यासाबजी
माता का नाम—श्री पद्मावतीजी
लौकिक शिक्षा—दसवी
आयु—२५ वर्ष
क्षु० दीक्षा गुरु—श्री १०८ सुबलसागरजी महाराज
दीक्षा नाम—क्षु० जिनमतीजी
दीक्षा स्थान—फलटण

आप सरल स्वभावी है संघ में ज्ञान अध्ययन में तत्पर रहती है छोटी उम्र में गृह त्याग कर आत्म कल्याण कर रही हैं। धन्य है आपका जीवन।



मुनिश्री पार्श्वसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



मुनि श्री उदयसागरजी
मुनि श्री बाहुबलीसागरजी
मुनि श्री अमृतसागरजी
मुनि श्री वासुपूज्यसागरजी

मुनि श्री उदयसागरजी महाराज

मुनि श्री १०८ उदयसागरजी महाराज का जन्म सन् १९६३ मे उदयपुर जिले के धरियावद ग्राम मे हुआ था। आपका जन्म नाम श्री भमकलालजी सरिया था तथा जाति हुमड़ है। पिताश्री का नाम श्रीरतनचन्द्रजी एवं मातुश्री का सरदारीबाई था। आपके पांच भाई हैं। धर्म शिक्षा सामान्य है, एव लौकिक जीवन व्यावसायिक रहा है।

क्षुल्लक दीक्षा श्रावण बदी २ को धरियावद में ग्रहण की तथा आ० पार्श्वसागरजी से परसाद मे माह सुदी ६ को मुनि दीक्षा धारण की और आपका नामकरण उदयसागरजी हुआ। आपकी समाधि चावण्ड (उदयपुर) मे चैत बदी ५ को सायकाल ६.५५ बजे हुई।



मुनि श्री बाहुबलीसागरजी महाराज

आपका जन्म सवत् १९७१ पोष सुदी १२ के दिन बुधवार को हुआ। दीक्षा पूर्व का नाम श्री दूलीचन्दजी था तथा जाति चित्तौडा थी। आपके पिता का नाम नेमचन्दजी एवं मातुश्री का नाम गुलाबबाई था। धर्म शिक्षा सामान्य थी। दूसरी प्रतिमा आदिसागरजी (कुरावड़ वाले) से धारण की। सातवी प्रतिमा आ० श्री धर्मसागरजी महाराज से दिल्ली मे धारण की। आपने क्षु० दीक्षा देपुरा मे सन् १९७७ मे बैसाख सुदी २ को धारण की तथा आनन्दसागरजी नामकरण हुआ तथा मुनि दीक्षा सिद्धवर-कूट मे धारण की, दीक्षा नाम बाहुबलीसागरजी रक्खा गया। यहीं आपकी समाधि हुई।



मुनि श्री अमृतसागरजी महाराज

आपका जन्म सावन बदी १ सवत् १६६६ को हुआ तथा जन्म नाम हीरालालजी था। जाति चित्तौडा थी। आपके पिताश्री का नाम नेमचन्दजी एवं मातुश्री का नाम गुलाबबाई है। तीन पुत्र व चार पुत्रियां हैं। धर्म शिक्षा आपकी सामान्य ही रही है। दूसरी एवं पाँचवी प्रतिमा आदिसागरजी (कुरावड़ वाले) से ग्रहण की। संवत् २०२७ मे फाल्गुन सुदी ११ को शिखरजी मे मुनि श्री १०८ विमलसागरजी महाराज से सातवी प्रतिमा धारण की। ऐलक दीक्षा देपुरा में बैसाख सुदी २ सन् १६७७ को आ० श्री १०८ पार्श्वसागरजी महाराज से एवं मुनि दीक्षा अकलूज महाराष्ट्र में श्रावण सुदी ७ सन् १६८२ को धारण की। आप अभी गुरु के सान्निध्य में ही हैं।



मुनि श्री वासुपूज्यसागरजी महाराज

जन्म स्थान—महोवा (पन्ना M P.)

जन्म सम्वत् --२०११ को गोलालारे जाति में

पिताजी का नाम—श्री कल्लूलालजी मिवई

माताजी—श्री रामबाईजी

आपका पूर्व नाम—श्री दयाचन्दजी

शिक्षा—११ वी

दीक्षा स्थल—सागवाड़ा (राजस्थान)

दीक्षा गुरु—मुनि पार्श्वसागरजी से १६७७ में आपने छोटी उम्र मे चारों अनुयोगो का गहन अध्ययन किया है। समयसार, प्रवचनसार, गोम्मटसार, नियमसार आदि ग्रन्थों की गाथाएँ कण्ठस्थ कर ली है। वर्तमान मे आप धवलराज ग्रन्थ का स्वाध्याय कर रहे है। वर्तमान आयु २६ वर्ष की है। आप निरन्तर ज्ञान ध्यान में लीन रहते हैं।



मुनि श्री नमिसागरजी महाराज द्वारा

दीक्षित शिष्य



क्षुल्लक श्री निर्वाणसागरजी



क्षुल्लक श्री निर्वाणसागरजी महाराज

आपका जन्म बेलगाँव, ताल्लुका अथनी (कर्णाटक) में हुआ था। आपका नाम निगप्पा था। आपके पिताजी का नाम सिंघप्पा और माता का नाम श्रीमती सत्यव्वा था। आपका विवाह हो गया था पर सब छोड़कर आपने अचानक श्री १०८ नमिसागरजी महाराजसे सन् १९८२ मे जैसगपुर-उद्‌गाँव के बीच में स्थित कुञ्जवन मे क्षुल्लक दीक्षा ले ली और अभी आप ओटो-कडलूर में श्री १०५ आर्यिका सि० वि० विजयमती माताजी के संघ मे है।

आप शान्त और गम्भीर स्वभाव वाले हैं।



आर्यिका विशुद्धमती माताजी

(आ० श्री शिवसागरजी की शिष्या)

द्वारा दीक्षित शिष्य



आर्यिका विशुद्धमती माताजी



क्षुल्लिका विनयमती माताजी

ब्र० सूरजबाई का जन्म हिरनोदा (फुलेरा) राजस्थान मे हुआ। आपने सं० २०३६ मे जोबनेर में पू० आर्यिका विशुद्धमती माताजी से क्षुल्लिका दीक्षा ली। आपके पिता का नाम श्री जीवनलालजी था तथा मा का नाम सौ० कपूरीबाई था। आप सरल एवं तपस्वी साध्वी है। ❖

आर्यिका अनन्तमतीमाताजी द्वारा

दीक्षित शिष्य



क्षुल्लिका कुन्थमतीजी



क्षुल्लिका कुन्थमती माताजी

आपका जन्म मालेगांव नासिक मे हुआ था । आपके पिता श्री बैजुलालजी पाटोदी हैं व माता श्री आशादेवी है । आप खण्डेलवाल जाति के भूषण हैं व पहाडिया गोत्रज है । आपकी धार्मिक एवं लौकिक शिक्षा साधारण ही हुई । आपका विवाह भी हुआ परन्तु आपको २० वर्ष की अवस्था मे वैधव्य प्राप्त हो गया ।

उपदेश श्रवण के कारण आपमें वैराग्य प्रवृत्ति जागृत हुई । आपने श्री १०५ आर्यिका अनन्तमतीजी से कन्नड (औरंगाबाद) में सन् १९६८ में दीक्षा ले ली । आपने गजपथा, कन्नड आदि स्थानों पर चातुर्मास कर धर्म वृद्धि की ।



स्वयं दीक्षित

मुनि श्री वीरसागरजी महाराज

मुनि श्री सिद्धसागरजी महाराज

मुनि श्री वर्द्धमानसागरजी महाराज

मुनि श्री कुन्थुसागरजी महाराज (गुजरान)

मुनि श्री नेमिसागरजी महाराज

क्षुल्लक श्री जम्बुसागरजी

मुनिश्री वीरसागरजी महाराज



जन्म स्थान – गंज बासौदा

जन्म तिथि —सम्वत् १९७६ वैसाख मास

दीक्षा तिथि—माघ कृष्ण १ सं० २०१९

आपका जन्म ग्राम बासौदा में सम्वत् १९७६ में वैसाख मास के प्रथम पक्ष रविवार में हुआ था आपके पिता का नाम श्री सोमतरायजी एवं मातुश्री का नाम श्रीमती हरखोबाई था। आपका गृहस्थ अवस्था का नाम श्री गुलाबचन्दजी भण्डारी था आपकी बासौदा मे किराने की दुकान थी आप शतरज के विशेष खिलाडी थे। आपके दीक्षा लेने के २ मुख्य कारण है—एक तो श्री १००८ पार्श्वनाथ भगवान की फोटू में एक नया चमत्कार हुआ देखकर तथा दूसरे आपने नगर से बाहर कुछ हरिजनों को एक मरे हुये बैल की खाल निकालते हुये देखा, देखकर आत्मा ससार से भयभीत सी हो गयी आपने सोचा इस बैल की चमडी तो कम से कम मनुष्य के काम में आ ही जाती है लेकिन बगैर आत्म कल्याण किये मनुष्य की चमड़ी तो किसी भी काम की नहीं

आपकी जीवन दिशा बदल गई आप उसी दिन शाम की गाडी से कानपुर होते हुये श्री सम्मेदशिखरजी की यात्रा को चल पडे । बुधवार की रात को सम्मेदशिखरजी के पर्वत पर भगवान के चरणों की वन्दना करते हुये जब आप श्री १००८ देवाधिदेव श्री पार्श्वनाथ स्वामी की टोंक पर पहुंचे वहाँ वीतरागता उमड़ पड़ी । भगवान श्री के चरणों में माथा टेक कर उन्ही को अपना सर्वोपरि गुरु मानकर पचों के समक्ष दिगम्बर मुद्रा धारण की उस दिन माघ कृष्णा १ गुरुवार सम्वत् २०१६ था समस्त पंचो ने आपको श्री १०८ वीरसागरजी नाम से सुशोभित किया ।



मुनि श्री सिद्धसागरजी महाराज



आपका जन्म नाम श्री सिद्धाप्पा था । पिता का नाम मल्लप्पा था । माता का नाम चित्रव्वा था । जन्म ई० सन् १८२८ वैसाख शुक्ला २ को हुवा था । वैराग्य का कारण पूर्व संस्कार तथा शास्त्र श्रवण है ।

कोल्हापुर जिले मे नांदणी मे भट्टारक जिन-सेनजी थे 'मुगल साम्राज्य भारत भर मे फैला हुवा था दिगम्बर मुनि प्राय: नहीं थे, दिगम्बर परम्परा विलुप्त सी दिखती थी किन्तु सत्य धर्म का लोप कोई भी राज्य सत्ता नही कर सकती है श्री सिद्धप्पाजी वहाँ से नांदणी मठ में आए अपने वैराग्य भाव श्री भट्टारकजी से कहे तथा वैशाख शुक्ला तीज सन् १८९५ मे श्री जिनसेन भट्टारकजी से क्षुल्लक दीक्षा नांदणी कोल्हापुर में ग्रहण की । आपका नाम क्षुल्लक सिद्धसागरजी रक्खा । वहाँ से विहार कर तीर्थराज शिखरजी के दर्शनों को आये तथा पर्वतराज पर श्री चन्द्रप्रभुजी की टोंक पर आपने मुनि दीक्षा ली सन् १८९६ में ललित कूट पर स्वय वस्त्रों का त्याग कर दिगम्बर मुनि बन गये । वहाँ से आपने भारत के सभी स्थानों पर विहार किया । सन् १९०९ में ध्यानमग्न अवस्था में शरीर का मोह छोडकर पंचपरमेष्ठी का स्मरण करते हुए इह लोक की यात्रा समाप्त की । धन्य है वे मुनिराज ।



मुनि श्री वर्धमानसागरजी महाराज

ब्र० चुन्नीलालजी देशाई ने अंतिम समय में समाधि के समय मुनिपद को धारण करके ईडर में इस नश्वर शरीर का त्याग किया। पिता का नाम कालीदास–माता उगमबाई राजकोट के रहने वाले थे। श्वेताम्बर स्थानकवासी धर्म को छोडकर दिगम्बर हुये थे। स्वाध्याय प्रेमी होने के कारण आपने अनेको ग्रन्थों का सम्पादन किया था और स्वतन्त्र ग्रन्थों की भी रचना की है। एक समय आप सोनगढ़ के ट्रस्ट के ट्रस्टी भी थे, परन्तु सैद्धांतिक मतभेद होने के कारण आपने सोनगढ के एकांतता का बहुत विरोध किया। आपकी प्रवचन शैली बहुत ही आकर्षक और व्यवस्थित थी।



मुनि कुन्थुसागरजी (गुजरात)

वीर संवत् १९६४ फाल्गुन सुदी १२ के दिन कडियादरा ग्राम में हेमचन्द सेठ की पत्नी दीवालीबाई की कूख से आपका जन्म हुआ, थोड़ी सी अंग्रेजी भी पढ़े, गुजराती ७ वी कक्षा तक पढी। आपने कडियादरा और विजयनगर में पाठशाला का निर्माण कराया। गाँव की हाई स्कूल और अस्पतालों में तन, मन, धन से सेवा की। बहुत से त्यागियों के संम्पर्क में रहे। तीर्थ क्षेत्रों की ६ बार यात्रा की। व्रत-नियमानुसार चलते थे वृद्धावस्था में उद्यापन भी कराये हैं। अपने ग्राम में ही २०३२ को सपत्ति, परिवार को छोड़कर क्षुल्लक दीक्षा ली तथा ऋषभदेवजी मे ऐलक दीक्षा ली। तारगा में कार्तिक सुदी १५ के दिन मुनि दीक्षा ली।



मुनि श्री नेमिसागरजी महाराज

यह बुन्देल भूमि सदैव से ही वीर प्रसूति होने के कारण बन्दनीय रही है। इसने ऐसे ऐसे महान् योग्य नररत्न उत्पन्न किये हैं जिनसे न केवल बुन्देलभूमि अपितु पूरा देश अपने आपको गौरवान्वित समझने लगता है।

इसी बुन्देल भूमि के मध्यप्रदेशान्तर्गत जिला टीकमगढ़ से पूर्व दिशा मे ६ मील की दूरी पर स्थित एक छोटे से ग्राम पठा में स्थित श्री सिं० रामचन्द्रात्मज मुन्नालाल जैन वैद्य के घर यशोदादेवी की कूख से विक्रम संवत् १९६० फाल्गुन शुक्ला १२ रविवार पुष्य नक्षत्र शुभ तिथि में आपका जन्म हुआ। जो आगे चलकर दिगम्बर मुनि के रूप में प्रगट हुये।

"ललना के पाँव पलना में दिखते है" इस कथन के अनुसार ही यह जन्म से ही प्रखर बुद्धि के थे। माता पिता ने बालक का नाम हरिप्रसाद रखा और हरि नाम से सम्बोधन करने लगे। ३-४ वर्ष की अवस्था में ही आप तोतली भाषा में महामंत्र, तीर्थंकरों के नाम स्वर व्यंजन आदि का उच्चारण करने लगे थे। अनन्तर बालक हरि ने अपने बाल्यकाल से पूज्य-बाबा गोकुलप्रसादजी कुण्डलपुर श्री पूज्य १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णी की महति कृपा के द्वारा श्री पूज्य पं० मोतीलालजी वर्णी के सान्निध्य मे श्री वीर दिगम्बर जैन विद्यालय अतिशय क्षेत्र पपौराजी में प्रथम छात्र रहकर विशारद कक्षा तक अध्ययन किया।

बाल्यकाल में ही आपके पिताजी स्वर्गस्थ हो गये जिससे घर का सम्पूर्ण कार्यभार आपके ऊपर आ गया फिर भी आप अध्ययन कार्य मे रत रहे तथा घर पर रहकर ही आपने वैद्य शास्त्री, गणित, ज्योतिष, कविता, सामुद्रिक, धार्मिक शिक्षा-यन्त्र, मंत्र, तन्त्र, प्रतिष्ठा, संगीत आदि में दक्षता प्राप्त की। वैद्यक कार्य तो आपने अपने पूज्य पिताजी से धरोहर के रूप में पाया था।

बालक हरि पं० हरिप्रसाद के रूप में समाज के आगे आये तथा पूज्य प्रतिष्ठाचार्य गुरुवर्य पं० मोतीलालजी वर्णी के साथ आपने प्रतिष्ठा कार्य कराना प्रारम्भ किया। इसी क्रम मे आपने रेशदीगिरि, खटौरा, ऊँचा, केवलारी, छिंदवाड़ा, चांदखेड़ी, अंदेश्वर क्षेत्र इत्यादि स्थानों पर गजरथ महोत्सव पच कल्याणक प्रतिष्ठा कराई। समाज ने आपको पपौराजी के मेले के शुभावसर पर पू० गणेशप्रसादजी वर्णी एवं पं० मोतीलालजी वर्णी के सान्निध्य में प्रतिष्ठाचार्य पद से विभूषित किया।

बाल ब्रह्मचारी के रूप में रहकर आपने मात्र १५ वर्ष की अवस्था में नैष्ठिक प्रथम-द्वितीय श्रावक प्रतिमा ग्रहण कर विवाह का त्याग कर दिया तथा धार्मिक, सामाजिक, लौकिक, व्यावहारिक आदि कार्य करते हुये जैन समाज से सम्मानित होने पर भी उदासीनता पूर्वक अपना जीवन-यापन करने लगे।

आपने वि० स० १९९६ माघ कृष्णा १ गुरुवार शुभ मिति मे पटना (सागर) के जलयात्रा महोत्सव पर १०८ मुनि श्री पद्मसागरजी महाराज के द्वारा सप्तम प्रतिमा के व्रत अंगीकार किये। महाराज श्री ने आपके गुणों को देखकर आपका विद्यासागर नामकरण किया। वि० सं० २०१६ फाल्गुन शुक्ला १ से पंचकल्याणक महोत्सव लोहरदा (देवास) मे सम्पन्न होना निश्चित किया गया इसी समय गुरुजी को साथ ले वहाँ पहुंचे और वहाँ फाल्गुन शुक्ला ३ सोमवार के दिन श्री भगवान नेमिनाथ स्वामी के दीक्षा महोत्सव के साथ ही श्री १०८ आचार्य योगीन्द्रतिलक मुनि शांतिसागरजी महाराज तथा पं० नाथूलालजी शास्त्री संहिता सूरि प्रतिष्ठाचार्य के सान्निध्य मे गुरुजी द्वारा दीक्षा

संस्कार क्षुल्लक ग्यारहवीं प्रतिमा याचना पूर्वक ग्रहण की। इसी समय समस्त समाज की स्वीकृति पूर्वक नामकरण श्री १०५ क्षुल्लक नेमिसागर पद प्राप्त किया।

क्षुल्लक नेमिसागर की अन्तःप्रेरणा आगे बढ़ रही थी तथा वह चाहते थे कि मैं अपने आपको कब मुनि रूप में देखूं। इसी उद्देश्य से गुरुवर्य पूज्य १०८ आचार्य योगीन्द्रतिलक मुनि शान्तिसागरजी को पत्र लिखा। विनय की गई कि पत्र द्वारा ही स्वीकृति दी जाये। सेवा में उपस्थित होने में समय लगेगा। अतः गुरुदेव ने पत्र द्वारा स्वीकृति प्रदान कर दी। फलतः श्री १००८ दि० जैन सिद्ध क्षेत्र अहारजी (टीकमगढ़) के वार्षिक मेला महोत्सव के समय श्री वीर नि० सं० २४९४ वि० स० २०२४ शुभमिती मार्गशीर्ष शुक्ला १३-१४-१५ गुरु, शुक्र, शनि दिनाक १४-१५-१६ सितम्बर १९६७ को श्री मदनकुमार कामदेव एवं विश्ववद्य केवली के चरण युगल पादुका के समक्ष श्री गुरुजी का फोटो विराजमान कर श्री ब्र० पं० रेशमबाईजी पिडावा (राज०) तथा श्री गेदालालजी सोनी खण्डेलवाल जैन, अमावदा (बडनगर) द्वारा उक्त युगल टोंक चरण निर्माण स्थल पर सम्पन्न प्रतिष्ठा ध्वजारोहण के आदि समारोह समय क्षेत्रीय कमेटी की सम्मति पूर्वक एवं बाहर से प्राप्त विद्वानों की लिखित स्वीकृति तथा समस्त प्रान्तीय समाज की स्वीकृति पूर्वक दिनांक १८-१२-१९६७ को ऐलक दीक्षा ग्रहण की एवं दि० १५-१२-१९६७ को पूजा विधि कर पात्रादि विधि तथा दिनाक १६ को निर्ग्रन्थ दिगम्बर मुनि दीक्षा सहर्ष स्वीकार की। इस प्रकार आप श्री पूज्य १०८ आचार्य योगीन्द्र तिलक शान्तिसागरजी के पट्ट शिष्य है। ऐसे तपोनिधि लोकोपकारी परम पवित्र आत्मा महान् साधक आध्यात्मिक संत समयसारादि महाग्रन्थो के अनुभवी विद्वान् पूज्य श्री नेमिसागरजी के पवित्र चरणों में शत-शत वन्दन है।

आपने सतत् अध्ययन कर जो ज्ञानार्जन किया उसे आप निरन्तर लिपि बद्ध करते रहे जिसके आधार स्वरूप आपकी लेखनी द्वारा लिखित प्रतिष्ठा एवं वैद्यक सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ हस्त-लिखित उपलब्ध हैं जिनका प्रकाशित होना अति महत्वपूर्ण एवं जनोपयोगी है। आपके द्वारा लिखित पाडुलिपियां शुद्ध एवं अति स्वच्छ है। अक्षर तो इतने सुन्दर है कि मानों छापे के ही हो। महाराजजी की ८५ वर्ष की वृद्ध अवस्था होने पर भी वे अपने लेखन कार्य में सदा सलग्न रहते है।



क्षुल्लक जम्बूसागरजी महाराज

श्री १०५ क्षुल्लक जम्बूसागरजी का पहले का नाम श्री हजारीलालजी था । आपके पिता का नाम श्री हुब्बलालजी था । आपकी माता श्रीमती चिरौंजाबाईजी थी । आप गोलसिंघारे जाति के भूषण थे । आपका जन्म स्थान भिण्ड (मध्यप्रदेश) था । आप बचपन से ही धर्म-प्रेमी थे ।

आपने ज्येष्ठ शुक्ला छठ विक्रम संवत् २०२६ को चौरासी (मथुरा) में क्षुल्लक दीक्षा ले ली । आप कई जगहों पर भ्रमण करके जनता को धर्म लाभ दे रहे हैं ।



आचार्य योगीन्द्रतिलक शान्तिसागरजी महाराज

आचार्य श्री शान्तिसागरजी का जन्म वीर निर्वाण सवत् २४०९ (सन् १८८४ ई०) मे बम्बई ग्राम में सतारा जिला के इसलामपुर तालुका में दूधगाँव नामक प्रान्त मे हुआ । दक्षिणी भारत की चतुर्थ पंचम नामक उच्च एवं श्रेष्ठ जातियों में आप अतिश्रेष्ठ चतुर्थ जाति के रत्न हैं । आपकी माता का नाम श्रीमती हीराबाई था; आपके पिता श्री रामगोडा पाटील दूधगाँव के प्रधान पद पर सम्मानित थे । नवी वर्ष की अवस्था मे शिक्षा ग्रहण हेतु आप स्कूल में प्रविष्ठ किए गये । पाँच वर्ष तक आपका शिक्षा अध्ययन निर्बाध गति से चलता रहा किन्तु दुर्भाग्य वश आपकी माता श्री का देहान्त हो जाने के कारण आपको बाध्य होकर अपनी शिक्षा त्यागनी पड़ी । जब आप चौदह वर्ष के थे, आपको गृहस्थी के झंझटो मे चला आना पडा । पन्द्रहवें वर्ष में आपका विवाह श्रीमती रुक्मणी-बाई के साथ हुआ । इस प्रकार आप पूर्ण रूपेण गृहस्थ के रूप मे अपनी जीवन यात्रा प्रारम्भ करने चले किन्तु विधि की विडम्बना कुछ और ही थी । विधाता ने आपको किसी और ही कार्य हेतु इस धरा पर अवतरित किया था । दु ख दैन्य एवं नाना प्रकार के सकटो से भटकती हुई मानवता का कल्याण आपके द्वारा होना ही था । विवाह के दो वर्ष भी व्यतीत न हो पाये कि कुटिल काल के कठोर करों ने आपकी धर्म पत्नी को इस संसार से सदैव के लिए छीन लिया । आपके पिताजी, कुटुम्बी जनो तथा इष्ट मित्रो ने बहुप्रलोभन देकर आपको पुर्नविवाह हेतु उकसाना चाहा परन्तु मानवता का पुजारी अपने हृदय मे जो सेवा भाव के बीज बो चुका था, अनुकूल परिस्थिति पाकर अब उसमें अंकुर निकल चले थे । सन्मार्ग के अनुसरण में आपने पुनः विवाह को अपने मार्ग का कटक ही समझा और इस प्रकार विश्वकल्याण की भावना से ओत-प्रोत इन्होंने अपने जीवन को इस पुण्य लक्ष्य की प्राप्ति हेतु पूर्णन. स्वतः बना लिया ।

धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा एवं भक्ति लिये इस मुनि ने सर्व प्रथम श्री बाहुबलिजी के दर्शन किये वहीं परम सौभाग्य से आपको आचार्य श्री १०८ शान्तिसागरजी महाराज के दर्शन हुए जिनके उपदेश ने आपकी कोमल भावनाओं पर अमिट प्रभाव छोड़ा। आपने गुरुजी के सन्मुख यह प्रतिज्ञा की कि आप आजीवन जिन धर्म के प्रारम्भिक व्रतों एव नियमो का पालन पूर्ण निष्ठा के साथ करते रहेंगे। तत्पश्चात् आपने शेडवाल की जैन पाठशाला मे तीन वर्ष तक शास्त्र अध्ययन कर ज्ञानोपार्जन किया। इस प्रकार ज्ञान गरिमा से परिपूर्ण मुनिजी द्वितीय बार श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी महाराज के दर्शन लाभ हेतु गये और अपने गुरु के उपदेशानुसार सातवी प्रतिमा धारण की। तत्पश्चात् आप गुरु के सघ मे सम्मिलित किये गये। सघ मे नित्य प्रति आप जिनवाणी का स्वाध्याय करते—आचार्य के उपदेशामृत का पान करते तथा अनेक विद्वानों के व्याख्यानों एव धार्मिक ज्ञान से परिपूर्ण आदेश को सुनते। विक्रम सवत् १९८४ मे सघ ने श्री सम्मेदशिखरजी की यात्रा करके चतुर्मास कटनी मे सम्पन्न किया जिसमें आप भी थे। बाद मे सघ के साथ विहार करते करते चातुर्मास ललितपुर मे हुआ वहाँ पर भी आप थे। वहाँ से ही आप एकलविहारी हो गये और सघ को छोड़कर श्रवण बेलगोला की यात्रा को निकले। अनेक-स्थानों पर धर्मोपदेश देते हुए आप अपने अभीष्ट स्थान पहुँचे, जहाँ आपको श्री १०८ आचार्य वृषभसेन (आदिसागर) के दर्शन हुए। उनका वैराग्यपूर्ण उपदेश सुनकर आपने ग्यारहवीं प्रतिमा की पहली अवस्था क्षुल्लकव्रत धारण किया। चार मास के उपरात आपने दूसरी अवस्था ऐलक व्रत और भेष धारण किया तथा अगले चार मास बीत जाने पर आप अष्ट कर्मों को क्षय करने वाले मुनि पद पर सुशोभित एवं सम्मानित हुए। दीक्षा का उत्सव जैन समाज द्वारा संवत् १९८५ मे श्रवण बेलगोला मे बड़े ही समारोह से हुआ जहाँ आपने आचार्य श्री १०८ वृषभसैनजी से दश भक्ति आदि मुनि क्रिया सीखी। तदुपरान्त आपने विहार किया तब से आपने कई स्थानों पर चतुर्मास सम्पन्न किये। इसी काल मे आपने श्री शिखरजी की पुनः यात्रा भी की।



मुनिश्री मल्लिसागरजी महाराज



आप नादगांव (नासिक) के रहने वाले हैं, आपके पिता का नाम दौलतरामजी सेठी और माता का नाम सुन्दरबाई था। आप खण्डेलवाल हैं। गृहस्थावस्था में आपका नाम मोतीलाल था, पाँच वर्ष की अवस्था मे आपके माता पिता ने विद्याभ्यास के लिये पाठशाला में भेजा, आपने अल्पकाल ही में विद्याभ्यास कर लिया। २५ वर्ष की अवस्था मे (नादगांव में) श्री १०५ ऐलक पन्नालालजी ने चातुर्मास किया। उस वक्त आपने कार्तिक सुदी ११ सं० १९७६ के दिन दूसरी प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। आपने शादी भी नही की, क्योंकि आप अल्पवय से ही वैराग्य रूप थे और आप ऐलक पन्नालालजी के साथ ही रहने लगे तथा आपने गृह का भार त्याग दिया। उनके साथ मे रहकर विद्याध्ययन भी किया। सम्वत् १९६० मे प्रथम चातुर्मास फीरोजपुर छावनी (पंजाब) दूसरा चातुर्मास स० १९८१ में देवबन्द। तीसरा चातुर्मास रामपुर, चौथा चातुर्मास वर्धा में किया पश्चात् गुरू की आज्ञा से अलग होकर बारा (सिवनी मे किया) वहा से ग्रामों में भ्रमण करते हुए गिरनारजी मऊ (गुजरात) ईडरराज्य में अगहन सुदी ७ सम्वत् १९८४ के दिन श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी छाणी महाराज के पाद मूल में आपने सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। वहा से तीर्थराज शिखरजी की यात्रा के लिये विहार किया, वहां पर दक्षिण सघ भी उपस्थित था, उनके भी दर्शन किये। सम्वत् १९८५ का चातुर्मास आपने श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी दक्षिण वालो के सघ कटनी (मुडवारा) में किया सम्वत् १९८६ का चातुर्मास कानपुर, पावापुर लस्कर आदि स्थानो मे भ्रमण करते हुए पूर्ण किया। सम्वत् १९८७ का चातुर्मास श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी छाणी के पादमूल में इन्दौर मे किया तथा भाद्रपद शुक्ला ७ शनिवार को पाच हजार जनता के समक्ष क्षुल्लक दीक्षा के व्रत ग्रहण किये। वहा से विहार कर सिद्धवर कूट आये। वहा श्री १०८ आचार्य शान्तिसागरजी छाणी के चरण कमल में दिगम्बरी दीक्षा की याचना की। मिति मगसर बदी १४ सम्वत् १९८७ बुधवार (वीर सम्वत् २४५७) के दिन दिगम्बरी दीक्षा धारण की।

उस समय केश लौच करते हुए आप जरा भी विचलित न हुए। दीक्षा संस्कार की सब विधि मन्त्र सहित श्री १०८ आचार्यवर्य शान्तिसागरजी छाणी के कर-कमलों द्वारा हुई। आपका समाधि-मरण मांगीतुंगी में आ० महावीरकीर्तिजी के सान्निध्य में हुवा। 

मुनि श्री आनन्दसागरजी



मुनि श्री आनंदसागरजी महाराज पू० श्री १०८ सूर्यसागरजी के शिष्य थे। आपका स्वर्गवास दिल्ली में ही हुआ था। अब भी बाल आश्रम दरियागंज के सामने मुनि श्री के नाम से छात्रावास चल रहा है। आपने कई पुस्तकें आत्म-प्रमोद, इष्टोपदेश, छहढाला, समयसार पद सग्रह, अनुपम पत्र आदि पुस्तकें लिखी हैं।



मुनि श्री चन्द्रसागरजी महाराज



[आपका जीवन परिचय प्राप्त नहीं हो सका]



मुनि श्री सुधर्मसागरजी महाराज



आपका समाधिमरण गजपन्था में आचार्य श्री विमलसागरजी के सान्निध्य मे हुआ था ।

[विशेष परिचय अप्राप्य]



मुनि अभिनन्दनसागरजी महाराज



आपने ३० वर्ष की उम्र मे मुनि दीक्षा ली । आपने कई ग्रन्थो की हिन्दी टीका की । इन्दौर में आपने समाधि युक्त मरण किया तथा आत्म कल्याण किया ।



मुनि श्री सिद्धसागरजी महाराज

आपका जन्म राजस्थान मे पचेवर में हुवा था । आपका गौत्र गंगवाल था । आचार्य कल्प श्री चन्द्रसागरजी के सान्निध्य मे रहकर आत्म साधना करते थे तथा अन्त समय में मुनि दीक्षा लेकर समाधि मरण किया । आप श्री पूनमचन्दजी भरिया गंगवाल के दादाजी थे ।



ऐलक श्री धर्मसागरजी महाराज



आपका जन्म कुरावड़ राजस्थान में हुवा था तथा आपने आ० कुन्थसागरजी से दीक्षा ली थी। आपने मेवाड़ प्रान्त को अपनी वाणी से धर्मामृत का पान कराया तथा इसी प्रान्त में समाधि ग्रहण की।



मुनि श्री पिहिताश्रवजी महाराज

आपका जन्म दक्षिण भारत मे हुवा था। आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज ने कुन्थलगिरि में जब समाधि ग्रहण की थी, उस समय आपने मुनि दीक्षा ली थी तथा समाधि में पूर्ण जीवन समर्पित किया तथा कुछ समय बाद आपने भी समाधि युक्त मरण किया। ❖

मुनि श्री विजयसागरजी महाराज



आपने पू० मुनि श्री सुबलसागरजी से मुनि दीक्षा लेकर आत्म कल्याण किया।



मुनि श्री पारससागरजी महाराज



आपने पू० आचार्य शान्तिसागरजी की वैयावृत्ति की तथा आचार्य श्री की समाधि से पूर्व समाधिमरण आचार्य श्री के सानिध्य मे किया । आपने मुनि आदिसागरजी से दीक्षा ली थी ।



आर्यिका सुमतिमती माताजी

आपका जन्म खटाऊ जिला सतारा बम्बई प्रान्त में हुआ । आपकी इस समय आयु ६५ वर्ष की है । सातवी प्रतिमा तीस वर्ष को आयु मे चारित्र चक्रवर्ती शांतिसागरजी महाराज से ली और क्षुल्लिका के व्रत आचार्य पायसागरजी महाराज से और गत वर्ष अर्जिका की दीक्षा आचार्य देशभूषणजी महाराज से ली आप दीर्घ तपस्वी, कष्ट सहिष्णु और बड़ी धर्मनिष्ठ हैं ।



क्षुल्लिका राजमती माताजी

आपका जन्म दक्षिण भारत मे हुआ । आपने पच्चीस वर्ष की आयु में दीक्षा ली । हिन्दी संस्कृत की अच्छी विदुषी और कुशल वक्ता हैं । आपके पति ने भी मुनि दीक्षा अंगीकार करली है ।



क्षुल्लिका विशालमती माताजी

आपका जन्म ग्राम चोंकाक जिला कोल्हापुर दक्षिण प्रांत मे हुआ। चार वर्ष की छोटी आयु में आपका विवाह हुआ तो आप मंडप मे बाहर निकल गई और फेरे नही हुए। एक वर्ष के पश्चात् उस लड़के का स्वर्गवास हो गया। माँ ने कहा पुत्री विधवा हो गई। चौदह वर्ष की आयु में परम पूज्य आचार्य शाँतिसागरजी महाराज मे ब्रह्मचर्य दीक्षा ले ली। ट्रेनिंग पास कर अध्यापिका का कार्य करने लगी। आपकी समाज सेवा मे बड़ी रुचि रही 'महिला वैभव' नाम की मासिक पत्रिका की सम्पादिका रहीं और एक 'कन्याकुमार पाठशाला' की स्थापना की। वोरगांव में आचार्य पायसागरजी से क्षुल्लिका दीक्षा धारण की। आप बड़ी कष्ट सहिष्णु सहनशील और कुशल वक्ता हैं।



क्षुल्लिका गुणमती माताजी

आपका जन्म अग्रवाल वश में गुहाने के प्रसिद्ध रईस ला० हुकमचन्दजी के यहाँ हुआ। आप के पिताजी ने ब्रह्मचर्य दीक्षा ले ली। उनकी धार्मिकता के कारण आज आपका समस्त परिवार धार्मिक, शिक्षित और श्रद्धालु है। सदैव धर्म के कार्यों मे प्रयत्नशील रहती हैं। बचपन मे बडे लाड चाव से पालन पोषण होने के कारण आप का नाम 'चावली' रक्खा गया। दुर्भाग्य से थोडी आयु में विधवा हो गई। थोडे ही समय मे धार्मिक विषयो में उत्तम योग्यता प्राप्त करली। आपने गुहाने में ज्ञान वनिताश्रम खोला जिससे नारी जाति का बडा उपकार हुआ। बहुत वर्षों से आप दिल्ली रहने लगीं। आपके चारित्र और ज्ञान प्रचार की तीव्र रुचि के कारण दिल्ली महिला समाज पर बड़ा ही प्रभाव पड़ा। जैन महिलाश्रम दिल्ली की आप अधिष्ठातृ थी।

पाँच वर्ष हुए परम पूज्य आचार्य वीरसागरजी महाराज से क्षुल्लिका दीक्षा धारण की आपने दरियागंज मे ज्ञान महिला विद्यालय स्थापित किया। जिससे समाज का बड़ा उपकार हुआ। आप अस्वस्थ होते हुए भी चारित्र का पालन दृढता से करती है।



क्षुल्लिका चन्द्रसैनाजी

आपका जन्म अग्रवाल जैन वंश में लखनऊ में हुआ। आपकी आयु इस समय ६० वर्ष की है। गतवर्ष जयपुर में आपने आचार्य देशभूषणजी महाराज से क्षुल्लिका दीक्षा धारण की आप वयोवृद्ध, सहनशील धर्मनिष्ठ महिला हैं।



क्षुल्लिका वृषभसैनाजी

आपका जन्म जयपुर में खंण्डेलवाल जैन वंश में हुआ। गतवर्ष जयपुर में आपने आचार्य देशभूषणजी महाराज से क्षुल्लिका दीक्षा धारण की। आप चरित्रपरायणा और धर्मनिष्ठ महिला हैं। ❂

क्षुल्लक सुमतिसागरजी महाराज

आपका जन्म कानपुर में अग्रवाल वैष्णव परिवार मे हुआ। आचार्य देशभूषणजी महाराज के उपदेश से प्रभावित होकर आपने जैन धर्म की क्षुल्लक दीक्षा अंगीकार की है। आप बड़े निर्भीक, श्रद्धालु दृढ श्रद्धानी, जिनेद्रभक्त और स्वाध्याय प्रेमी हैं। ❖

आर्यिका गुणमति माताजी



जन्म स्थान—महेगाव सवत् १९७०

पिता का नाम—श्यामलालजी

माता का नाम—मथुरादेवी

पूर्व अवस्था का नाम—आनन्दीबाई

दीक्षा गुरु—मुनि कीर्तिसागरजी

समाधिमरण—शिखरजी सावन सुदी पूर्णिमा।



आर्यिका शान्तिमती माताजी



पूर्वनाम—कलावती
जन्म स्थान—लखनऊ सन् १९०२
पिता का नाम—नाथूरामजी
जाति—जैसवाल
दीक्षागुरु—आचार्य कुन्थसागरजी
दीक्षा स्थल—पपौरा सन् १९७२ में।



आर्यिका कृष्णामती माताजी

श्री पण्डिता कृष्णाबाईजी का जन्म फाल्गुन बदी १३ वि० सं० १९५७ को पिता रामेश्वर-लालजी गर्ग के घर माता सीतादेवी के कूख से फतेहपुर में हुआ था। जाति अग्रवाल है। साधारण शिक्षा के बाद इनका विवाह हो गया था। वैधव्य प्राप्त हो जाने के कारण आपने अपने जीवन लक्ष्य को बदल दिया और ज्ञानवर्द्धन के साथ धर्म और समाज सेवा का व्रत जीवन मे उतारा। आपके महान् एव सरल हृदय मे बालकों की समुन्नति एवं विधवाओ असहायों के सरक्षण की बलवती भावना रही। परिणामतः आपने अपने सद्द्रव्य का उपयोग महिलाश्रम की स्थापना संचालन में में किया जिससे हजारो महिलाओ का कल्याण हुआ।

लाखो का दान और जिनमन्दिरों के निर्माण में भी आपका योगदान युगों युगों तक चिर-स्मरणीय रहेगा। आपने अन्त में आर्यिका दीक्षा लेकर ममाधिमरण किया।



क्षुल्लिका जयप्रभामती माताजी

पूर्व नाम—ब्र० आदेशकुमारी जैन

जन्म स्थान—आरा (बिहार) सन् १९५२

पिता श्री—चन्द्ररेखाकुमारजी

माता श्री—सत्यवती जैन

शिक्षा—बी. ए., बी. एड , टीचर एवं शास्त्री

शिक्षा स्थल—ब्र० चन्दाबाई आश्रम बिहार

ब्रह्मचर्य दीक्षा—तीर्थराज सम्मेदशिखरजी पार्श्वनाथ टौक सन् १९७३ में।

धार्मिक संस्कार—बचपन से ही थे

दीक्षा गुरु—आर्यिका विजयमती माताजी

दीक्षा स्थान—पुन्नूरमलई (मद्रास) तमिलनाडू दिनांक ४-१०-८४ को

आप बाल ब्रह्मचारिणी थी। दीक्षा लेकर इस बाल अवस्था में आत्म कल्याण के पथ पर अग्रसर हैं। धन्य है आपका जीवन जो उत्कृष्ट मार्ग पर चलकर आत्मावलोकन कर रही हैं।



क्षुल्लिका विजयप्रभामती माताजी

पूर्वनाम—कु० सन्ध्या जैन

जाति—परिवार जाति

जन्म स्थान—जबलपुर ११-१-१९६०

पिता श्री—मदनलालजी नायक

माताजी—ललिताबाई

शिक्षा—बी. ए.

दीक्षा गुरु—आर्यिका विजयमती माताजी

आपके ६ बहिनें तथा २ भाई हैं। ३ वर्ष से माताजी के साथ रहकर धार्मिक शिक्षा प्राप्त की तथा माताजी से ही क्षुल्लिका दीक्षा लेकर आत्म साधना में लीन हैं। अभी भी आप धर्म ग्रन्थों की पढ़ाई कर रही हैं।

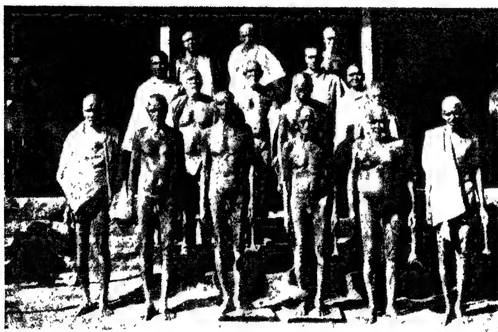




१९-२० वीं सदी के दिगम्बर जैनाचार्य चारित्र चक्रवर्ती तपोनिधि
समाधिसम्राट, परम तपस्वी १०८ आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज ससंघ



१०८ आचार्य श्री पायसागरजी महाराज ससघ



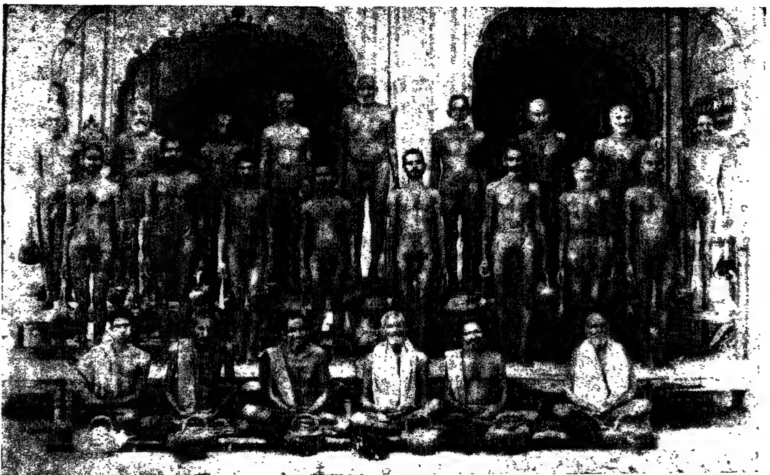
१०८ पू० श्री वर्धमानसागरजी महाराज (दक्षिण) ससघ



पू० १०८ आचार्य श्री वीरसागरजी महाराज ससंघ



पू० १०८ आचार्य श्री शिवसागरजी महाराज ससंघ



पू० १०८ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज ससंघ



पू० १०८ आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज, आचार्यकल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज एवं मुनिश्री अजितसागरजी महाराज एवं समस्त साधुवृन्द

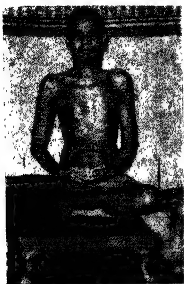


पू० १०८ आचार्य श्री महावीरकीर्तिजी महाराज ससंघ



पू० १०८ आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज ससंघ

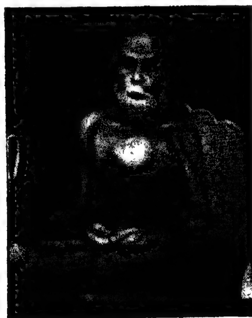
अन्य कई पू० मुनिराज, आर्यिका एवं क्षुल्लक, क्षुल्लिकाओं आदि के जीवन परिचय प्राप्त नहीं हो सके उनके परिचय नहीं दिये गये हैं जिनके केवल फोटो प्राप्त हो गये हैं उनके नाम सहित फोटो यहाँ दिये जारहे हैं :—



मुनिश्री कुन्थुसागरजी



मुनिश्री सीमन्धरसागरजी



मुनिश्री समाधिसागरजी, सूरत



[अज्ञात]



[अज्ञात]

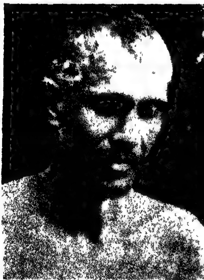


मुनिश्री चन्द्रकीर्तिजी



मुनिश्री जयसागरजी





[अज्ञात]



[अज्ञात]

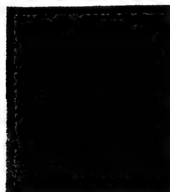


[अज्ञात]



[अज्ञात]





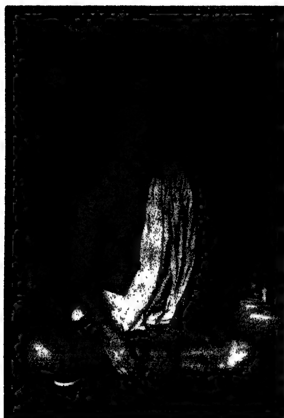
मुनिश्री मल्लिसागरजी


[अज्ञात]


[अज्ञात]


[अज्ञात]


[अज्ञात]



क्षुल्लक सुमतिसागरजी



क्षुल्लक विद्यासागरजी



[अज्ञात]



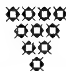
क्षुल्लक पार्श्वकीर्तिजी



क्षुल्लक वीरसागरजी



क्षुल्लक वर्धमानसागरजी

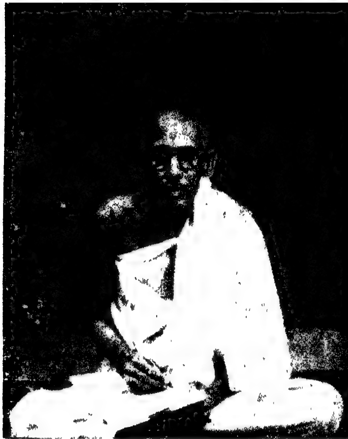




क्षुल्लक दयासागरजी



क्षुल्लक वीरसागरजी



[अज्ञात]



क्षुल्लक नेमिसागरजी



क्षुल्लक श्री धर्मसागरजी



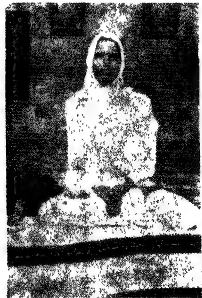
क्षुल्लिका शीतलमतीजी



क्षुल्लिका सुमतिमतीजी



क्षुल्लिका गुणमतीजी

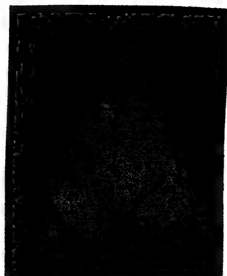


क्षुल्लिका पार्श्वमतीजी



[अज्ञात]





[अज्ञात]



क्षुल्लिका ज्ञानमतीजी



भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी
मूलबिद्री



भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी
श्रवणबेलगोला





भट्टारक श्री लक्ष्मीसेनजी
कोल्हापुर



भट्टारक श्री लक्ष्मीसेनजी
नांदणी



ब्र० कपिलजी कोटड़िया



ब्र० शीतलप्रसादजी





ब्र० पंकज जैन B. Sc.
भावनगर

ब्र० कमलाबाई श्रीमहावीरजी



चारित्र, ममता तथा लोक कल्याण की भावनाओं को एक साथ अपने आपमें आत्मसात् किये हुए ब्रह्मचारिणी श्री कमलाबाई जैन उन गिनीचुनी विभूतियों में से हैं जिन्होंने एक परम्परावादी परिवार मे जन्म लिया। बाल्यावस्था मे ही विवाह होजाने के शीघ्र बाद वैधव्य की पीड़ा को भोगा। अपने दुख को भूल उन्होने श्री महावीरजी के मुमुक्षु महिलाश्रम में अध्ययन करने के बाद स्वय आदर्श महिला विद्यालय की स्थापना कर एक महान अनुकरणीय कार्य किया है। राजस्थान के कुचामन सिटी कस्बे में श्री रामपालजी पाटोदी के यहां श्रावण शुक्ला ६ वि० स० १६८० को जन्मी श्री कमलाबाई स्वय करुणा की मूर्ति है। यद्यपि उन्होने स्वय किसी बालक को जन्म नहीं दिया, किन्तु आज सैकड़ो बालिकाओ को उनके मातृत्व की छाया मे पोषण-सरक्षण मिल रहा है। आपकी सेवाओ के लिये कई बार आपका सम्मान-अभिनन्दन कर समाज तथा जन-प्रतिनिधियों ने आभार भी व्यक्त किया है किन्तु यह सब तो मात्र सामान्य श्रद्धा-प्रदर्शन ही है, आपकी सेवाओ का मूल्याकन तो आने वाली पीढिया ही कर सकेंगी। आप शतायु हो और देश तथा समाज की सरचना मे आपका मार्गदर्शन अनवरत मिलता रहे यही वीर प्रभु से कामना है।



ब्र० इच्छाबेन (भावनगर)

आपका जन्म भावनगर (गुजरात मे) सन् १६०२ में हुआ था। आपके पिताजी का नाम श्री छगनलालजी एवं माता का नाम जडावबाई था। आप ३ बहिनें थी। आपकी शादी भावनगर में ही श्री कान्तिलालजी के साथ हुई, २ पुत्र तथा २ पुत्रिया हुईं। आपका समाधिमरण पूर्वक स्वर्गवास वोरीबली (बम्बई) में तारीख २६-१२-६६ को हुवा था। आप श्री १०८ धर्मकीर्तिजी मुनिराज की गृहस्थावस्था की धर्मपत्नी थी। धर्म ध्यान व व्रत उपवासादि में अपना समय व्यतीत करती थीं। बड़े पुत्र धनसुखलालजी धामी के पास रहती थी। अन्त में आपने सब प्रकार के परिग्रह का त्याग कर ६५ वर्ष की आयु में समाधिमरण किया। क्षुल्लक शीतलसागरजी ने आपको अन्त समय तक सम्बोधित किया। आचार्य महावीरकीर्तिजी महाराज से व्रत अंगीकार किये थे। आप चारित्र शुद्धि नामक व्रतों के उपवास कर रही थीं।



ब्र० श्री कौशलजी



मई सन् १९४१ में सुसम्पन्न एवं प्रतिष्ठित घराने में माता शकुन्तलावती की कोख से ननिहाल में उक्त बालिका का जन्म हुआ। माता स्वास्तिका मेटल वर्क्स जगाधरी वालों की बहन है। पिता पानीपत में कपड़े का बड़ा व्यापार करते हैं तथा बड़ा जमींदारा है। पहले कई सन्तानों के निधन होने के कारण मां-बाप को सदा आशंका बनी रहती कि कहीं उनकी लाडली बच्ची को कुछ हो न जाये। जन्म से मां के धार्मिक संस्कारों की छाया में पनपी यह बालिका सदैव सफाई प्रिय, तड़क-भड़कीले वस्त्रों से उपेक्षित तथा सात्विक वृत्ति परायण थी। पूर्व संस्कारवश कभी इसने अपने होश में रात्रि मे अथवा बिना देव दर्शन किये भोजन ग्रहण नही किया। किसी की तनिक सी पीड़ा देख करुणा से भर विह्वल हो जाती। घर में सर्व भौतिक साधनों की सुलभता होने पर भी अपने में खोई-खोई सी कुछ अनमनी सी रहती, मानों किसी अनदेखी वस्तु को पाने की चाह सीने में छिपाये हो। एक वर्ष में दो-दो कक्षाओं को सरलता से उत्तीर्ण कर विद्याध्ययन में तीव्रगति से आगे-आगे पढ़कर शिक्षकवर्ग को आश्चर्यान्वित कर दिया तथा बोर्ड की परीक्षायें सहजता से श्रेष्ठ अंकों मे पास कर ली। बुद्धि की इस कुशाग्रता व कुशलता के कारण ही पिता ने "कौशल" नाम रख दिया। पढ़ने की तीव्र लगन व सरल स्वभाव एवं सेवाभाव आदि गुणो के कारण शीघ्र ही यह सभी की लाडली बन गयी।

छुट्टियो के दिन थे। तेज गर्मी थी। पानीपत मे कुछ माताओं को लघु सिद्धान्त प्रवेशिका का प्रशिक्षण शुरु किया था। इसकी मां ने सोचा कि यह बिटिया घर मे कभी बाहर नही निकलती है, इस शिक्षण के निमित्त घर से बाहर जायेगी और धर्म भी सीख लेगी तथा तत्पश्चात् मुझे भी समझा देगी। इस आशय से माता शिक्षण कक्षा में इसे भी अपने साथ ले जाने लगी। उसको क्या पता था कि इस बालिका का सीखना शब्दो में नही जीवन में है। कौन जाने कि आज दिन वह अपनी लाडली बिटिया को अपने हाथों ही प्रभु को सौंपने ले आई है। असाधारण बुद्धि व ज्ञान पिपासा लख सभी कह उठे थे। कहा कि "यह कोई महानात्मा है"। पन्द्रह सोलह वर्ष की अल्प आयु में इसने मन ही

मन अखण्ड ब्रह्मचर्य का संकल्प कर मा की कोख को गौरवान्वित किया। कला के क्षेत्र में सिद्धान्त कौमुदी सहित सस्कृत की परीक्षाओं तथा कढाई-सिलाई की कलाओं मे पारंगत हो प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्णता उपलब्ध की।

जैन धर्म की प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर सम्पूर्ण जैन वाङ्मय का स्वयं मंथन किया। साथ-साथ जिनेन्द्रजी के प्रवचनों का सकलन करती। तत्पश्चात् अपनी सुध-बुध खोकर बृहद् जैनेन्द्र सिद्धान्त कोष के सम्पादन मे जुट गयी। जिनेन्द्रजी ने कहा कि 'मैं अनुभव करता हूँ कि भगवान ने इस बृहद् ग्रन्थ निर्माण के अर्थ ही इस देवी को भेजा है। इसको पाकर मैं अपने को धन्य मानता हूं।" वे सो जाते, कभी कभी बीच मे उठकर देखते कि यह देवी बैठी लेखन मे तल्लीन है। मानों इसने संकल्प किया था, ग्रन्थ पूरा होने पर ही मैं चैन लूंगी। अनवरत कार्य से अस्वस्थ होने पर भी लेखन में शिथिलता न आई। तब श्री जिनेन्द्रजी ने जिनवाणी व जिनदेव के समक्ष ग्रन्थ के लेखन का सम्पूर्ण श्रेय इस देवी को देने का संकल्प किया। जबकि यह साधिका तो मात्र देव-शास्त्र व गुरु की भक्ति को ही अपना सर्वस्व समझती रही थी।

आप द्वारा लिखित पुस्तकें :

अनुभव लहरी, हम कैसे जियें, अपनी ओर, बिन्दु मे सागर, अन्तर्यात्रा के सूत्र, राह के पत्थर को सीढी बनाइये, हृदय के पट खोल, पत्थर में भगवान, जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश के बहु भाग, जैन सिद्धान्त सूत्र, जैन दर्शन दीपिका, कौशल उवाच, धर्म दश पैडि चढिके, परतों के पार, मुक्ति के ये क्षण, आध्यात्मिक साप सीढी, अर्हत् सूत्र, मन्त्रानुशासन, अक्षर साधना, प्रेम पियष, आत्म जागरण, प्रयोग साधना, विश्व के आधार धर्म, WAY TO HAPPINESS.



ब्र० लाडमलजी वर्णी

श्री ब्रह्मचारी लाडमलजी भौंसा राजस्थान में प्रतिष्ठित सम्मान्य ब्रह्मचारी हैं। आप मूल रूप से चौरू (जयपुर) के रहने वाले है। चौरू जयपुर से दक्षिण की ओर फागी-मौजमाबाद के पास है। आपके पिता का नाम स्वरूपचन्दजी था। आप दि० जैन खण्डेलवाल जाति के रत्नस्वरूप हैं। आपका जन्म माघ शुक्ला २ विक्रम संवत् १९६२ को हुआ।

आपने आग्रह करने पर भी विवाह नहीं किया और बाल ब्रह्मचारी रहे और वि० सं० १९८० में चौरू से जयपुर आ गये तबसे जयपुर में ही रहते हैं। चौरू और जयपुर दोनों ही जगह आपके मकानात हैं। चौरू में आपके बड़े भाई रहते है। जमीन जायदाद के मालिक हैं।

आपने जयपुर में कपड़े का व्यापार किया जिसमें ३० हजार रुपये का आपको थोड़े ही दिनों में लाभ हो गया। उस समय आपने इतना ही परिग्रह प्रमाण रख छोड़ा था। अतः आगे व्यापार करना बन्द कर दिया और उस पूंजी मे से पांच हजार रुपया आपने मूल निवास स्थान चौरू औषधालय खोलने को दे दिया और श्री चन्द्रसागर दिगम्बर जैन औषधालय की स्थापना कर दी जो अब तक चल रहा है और अच्छी स्थिति में है। पांच हजार रुपयों से भी अधिक आपने चौरू मे श्री जिन मन्दिरों के जीर्णोद्धार उत्सवादि में लगा दिये तथा ५०००/- अन्य धर्मकार्यों में लगा दिये।

वि० सं० १९९४ में आपने प्रातः स्मरणीय स्व० चन्द्रसागरजी महाराज से दूसरी प्रतिमा के व्रत ले लिये और मुनि संघ की सेवा मे लीन हो गये। ७ वर्ष तक मुनिराज चन्द्रसागरजी महाराज की सेवा में ही बिताकर धर्माराधन और ज्ञानार्जन किया। संवत् २००१ में जब १०८ श्री चन्द्र-सागरजी महाराज का समाधिमरण बड़वानी में हुआ तब तक आप बराबर साथ रहे और खूब वैयावृत्ति की।

आपने संवत् २००० मे ही श्री चन्द्रसागरजी महाराज से सातवी प्रतिमा के व्रत ले लिये थे। आपका प्रत्येक धर्म कार्य में सहयोग रहता है। फुलेरा में जब पंचकल्याणक महोत्सव हुआ तब आपने उसमें बड़ा भारी सहयोग देने के साथ श्री १०८ श्री मुनिराज वीरसागरजी महाराज (ससंघ) की सेवा-वैयावृत्य में बड़ा भारी योग दिया और संघ की सम्मेदशिखरजी तीर्थराज की वंदना कराने में पर्याप्त प्रयत्न किया और परिश्रम उठाया। १० वीं प्रतिमा आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से ली। वर्तमान में आचार्य धर्मसागरजी महाराज के संघ में धर्म साधन में रत रहते हुए जिनवाणी की सेवामें संलग्न हैं।



ब्र० सूरजमलजी निवाई





श्री ब्र० सूरजमलजी बाबाजी का जन्म वि० सं० १९७६ मंगसिर बदी एकम रविवार को प्रातःकाल की मंगल बेला में जामुनिया (भोपाल) मध्यप्रदेश में हुआ था। आपके पिता का नाम धर्मनिष्ठ श्रावक श्री मथुरालालजी तथा माता का नाम महताब बाई था।

आपके बड़े भाई का नाम श्री गोपीलालजी (गप्पूलालजी) तथा ६ बहनें थी। श्री रम्भाबाई, श्री शक्करबाई, श्री बतासीबाई, श्री रामप्यारीबाई, श्री धापूबाई एवं ब्र० कस्तूरबाईजी। जब आपकी ३ वर्ष की उम्र थी तभी पिताजी का स्वर्गवास हो गया तथा १० वर्ष की उम्र मे माताजी का वियोग हो गया। मां के स्वर्गवास होने के बाद आप बड़ी बहिन धापूबाईजी के पास अजिनाश चले गये तथा वहां पर लौकिक शिक्षण प्रारम्भ किया।

मुनिसंघ दर्शन—आप अजिनाश में विद्या अध्ययन कर रहे थे। उस समय वि० सं० १९९४ में खातेगांव में परम पू० मुनि श्री जयकीर्तिजी के दर्शन किये तथा महाराजजी के दर्शनों से प्रभावित होकर महाराजजी की सेवा में रह गये। महाराजजी का विहार इन्दौर की ओर हुआ तथा इन्दौर में पू० मुनि श्री जयकीर्तिजी का समाधिमरण हो गया। इस समय इन्दौर में पू० आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज विराजमान थे अत. अब आप आचार्य श्री के चरण सान्निध्य में आ गये। सं० १९९५ में आचार्य श्री वीरसागरजी का चातुर्मास खातेगांव में हुआ तब आपने आचार्य श्री से दूसरी प्रतिमा के व्रत धारण किए। ३ माह पश्चात् आप सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण कर आत्म साधना की ओर अग्रसर हुए।

संहितासूरि:—आपने अपने जीवन काल में लगभग ७० से अधिक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कराई साथ ही सेकड़ों स्थानों पर वेदी प्रतिष्ठा एवं विधान आदि धार्मिक कार्य करा कर धर्म की महती प्रभावना की।

प्रतिष्ठाकारक के रूप में आपका नाम अग्रणी है आपको मरसलगंज पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर संहितासूरि की उपाधि से अलकृत किया गया।

उपाधियां:- आपको कई प्रसंगों पर अनेकानेक जगह उपाधियों तथा अभिनन्दन पत्र समर्पित किये गये।

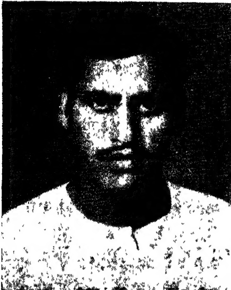
व्यक्तित्व:—आपका व्यक्तित्व अनूठा है। यद्यपि स्कूली शिक्षा आपको बहुत कम मिली है किन्तु आपका ज्ञान वारिधि अथाह है। धर्म चिन्तन की अथक लगन जैसी आप में है वैसी बिरले ही में दिखाई पड़ती है साहित्यसेवा, पत्रकारिता, समाज सेवा आदि क्षेत्रों में आपकी त्यागमयी सेवा भावना आपके चिन्तम मनन के विशिष्ट पहलू रहे हैं।

शान्तिवीर नगर श्री महावीरजी के आप अधिष्ठाता हैं तथा संस्था को आप भली भांति मार्ग दर्शन देकर उसकी उन्नति में प्रयत्नशील है। आप साधु सेवा में रहकर, धर्म ध्यान करते हुए आत्म साधना में लीन हैं।



ब्र० धर्मचन्दजी शास्त्री





शारीरिक आकार प्रकार से विद्यार्थी सदृश व स्वभावत मक्खन से मृदु और बालमन से सरल सौम्य श्री बाल ब्रह्मचारी धर्मचन्द्र शास्त्री का जन्म १३ दिसम्बर १६५१ सं० २००८ को सागर (M. P.) जिले में महका नामक ग्राम मे हुआ था ।

आपके पिता श्री अयोध्याप्रसादजी जैन धर्म-निष्ठ प्रतिष्ठित व्यक्ति थे । ६ वर्ष की आयु में आपके पिता का वियोग हो गया ।

शिक्षा:—प्रारम्भिक शिक्षा, टडा गोद चले जाने से वहां पर १० वी कक्षा तक हुई । आचार्य संघ में रहकर शास्त्री एव आचार्य आदि की परीक्षाएं दीं । ज्योतिषाचार्य, आयुर्वेदाचार्य, संहिता सूरि आदि की भी परीक्षा दी ।

त्याग भावना एवं सयमित जीवन:—होनहार विरवान के होत चीकने पात वाली कहावत के अनुसार आप गुरु भक्ति करना अपना परम कर्तव्य समझते हैं ।

१६ वर्ष की उम्र मे सन् १६६६ जयपुर में आप आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के चरणों मे आकर साधु सेवा एव वैयावृत्त करने लगे तथा धार्मिक अध्ययन शुरु किया । गुरु महाराज के आशीर्वाद मे अपने ज्ञान का विकास किया ।

ब्रह्मचर्य दीक्षा:—सन् १६६६ मे आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज से जयपुर में आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया ।

तीर्थ यात्रा:—पू० मासोपवासी मुनि श्री सुपार्श्वसागरजी महाराज की सम्मेदशिखरजी की यात्रा में संघके साथ पैदल चले । जयपुर से शिखरजी एवं जयपुर से श्रवणबेलगोला एवं बुन्देल-खड की यात्रा की ।

मुनि श्री दयासागरजी महाराज को ससघ बुन्देलखंड की सम्पूर्ण यात्रा कराई तथा सिद्धवरकूट, ऊन, बावनगजा, पावागढ़, तारगाजी आदि की वंदना कराई संघ में ७ मुनि ५ माताजी २ क्षुल्लकजी थे ।

मुनि श्रेयांससागरजी महाराज को ससघ बिहार के सभी तीर्थों की वंदना कराते हुए तीर्थराज सम्मेदशिखरजी की वंदना कराई, संघ में २ मुनि ३ माताजी २ क्षुल्लकजी थे। संघ को अजमेर से मधुबन तक लेकर गये।

सामाजिक कार्यो का श्री गणेश:—श्री दिगम्बर जैनाचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के अभिवन्दन ग्रंथ का सम्पादन कर जैन समाज एवं जिनवाणी व साहित्य की अनुपम सेवा की। यह ग्रथ अपने आप में एक महान् ग्रंथ है जिसने जैन समाज में सर्व श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया है।

भा० दि० जैन महासभा के वृहत् इतिहास का भी सम्पादन किया है जिसमें लगभग ६० वर्ष प्राचीन संस्था का लेखा जोखा है। आप वर्तमान में अन्य कई ग्रंथों के प्रकाशन एवं सम्पादन कार्य में लगे हुए हैं।

आपने अभी "साधुओं का जीवन परिचय" ग्रंथ का सम्पादन कार्य किया है, यह भी जैन समाज के लिये एक महान उपलब्धि है। आपकी मौलिक रचनाएं भी हैं जो शीघ्र ही छपकर सामने आ रही हैं। स्याद्वाद गंगा के आप सहयोगी सम्पादक भी रहे।

सामाजिक सम्मान:—आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के अभिवन्दन ग्रथ विमोचन एवं समर्पण समारोह के शुभ अवसर पर पारसोला ग्राम में ४० हजार जन समुदाय के मध्य में भा० दि० जैन महासभा की ओर से आपको युवारत्न की उपाधि से अलंकृत किया गया। दिल्ली सीताराम बाजार जैन मन्दिर में जैन समाज की ओर से आपको धर्म युवारत्न की उपाधि से अलंकृत किया गया।

सन् ८५ जनवरी में आ० कुन्दकुन्द की तपस्थली पुन्नोरमलै में पू० आ० विजयमति माताजी के सान्निध्य में दक्षिण भारत की जैन समाज ने श्री इन्द्रध्वज महामण्डल आराधना के उपलक्ष में आपका अभिनन्दन किया।

वर्तमान में आप आचार्य श्री धर्मसागरजी महाराज के सघ में रहकर आत्मसाधना कर रहे हैं।

वीरेन्द्र गोधा
गोधा सदन, जयपुर

